संक्षिप्त ऑक्सफ़ोर्ड
हिंदी-साहित्य परिचायक

संक्षिप्त ऑक्सफ़ोर्ड हिंदी-साहित्य परिचायक

लेखक, रचनाएँ, अंतःकथाएँ, साहित्यशास्त्र,
(छंद, अलंकार आदि), कविसमय,
न्याय, प्राचीन भौगोलिक नाम,
अनूदित रचनाएँ, आदि

गंगाराम गर्ग, एम्. ए.

ऑक्सफ़ोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस
१९६३

ऑक्सफ़ोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, एमेन हाऊस, लंदन इ. सि. ४
ग्लास्गो न्यु यॉर्क टोरॉन्टो मेलबोर्न वेलिंग्टन बंबई कलकत्ता मद्रास
कराची लाहौर ढाका केप टाउन साल्सबेरी नैरोबी
इबॉदन अक्रा कुआला लुंपूर हाँग काँग

CONCISE OXFORD COMPANION TO HINDI LITERATURE
SANKSHIPT OXFORD HINDI-SAHITYA PARICHAYAK
BY GANGARAM GARG

गंगाराम गर्ग १९२४
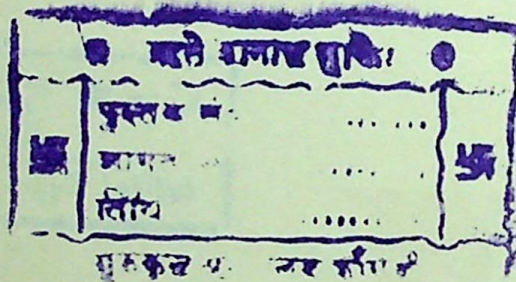
PRINTED BY OFFSET (FROM ART-PULLS SUPPLIED BY THE PALIWAL PRESS, HARDWAR) BY S. M. BALSAVER AT USHA PRINTERS, TULLOCH ROAD, BOMBAY 1, AND PUBLISHED BY JOHN BROWN, OXFORD UNIVERSITY PRESS, APOLLO BUNDER, BOMBAY 1.

भूमिका

प्रस्तुत ग्रंथ की सार्थकता इसी में है कि यह सामान्य पाठक का हिंदी-साहित्य से परिचय करा दे, यद्यपि इसमें साहित्यिक सामग्री के संकलन व संग्रह से आगे नहीं बढ़ा जा सका है।

साधारणतः ग्रंथों के बड़े संस्करण पहिले निकलते हैं, बाद में उनके संक्षिप्त रूप। किंतु यहाँ बात इससे विपरीत है। आरंभ में लेखक का विचार एक बृहद्-ग्रंथ लिखने का था और सामग्री का संग्रह भी उसी के अनुसार किया गया था। पर प्रकाशक के अनुरोध से निम्न दो आधारों पर मूल ग्रंथ को संक्षिप्त कर दिया गया है—(१) *केवल उसी सामग्री को लिया गया है, जो सामान्य पाठक के लिये अधिक उपयोगी है,* और (२) *उस सामग्री को भी संक्षेप में रखा गया है।*

उक्त सामग्री को वर्णमाला के क्रम से रखते हुए योजना की मूलभूत *तीन* बातों की ओर ध्यान रखा गया है।

उनमें से एक के अंतर्गत वे लेखक, साहित्यकार, साहित्यिक रचनाएँ और साहित्यिक संप्रदाय आते हैं, जो इतिहास और वर्त्तमान की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। एक लेखक के नाम के नीचे उसका समय, निवास-स्थान व उसकी प्रमुख रचनाएँ दी गई हैं। प्रमुख लेखकों के नाम के नीचे उनकी संक्षिप्त जीवनी, साहित्यिक गतिविधि तथा संक्षिप्त आलोचना भी दी गई है। प्रमुख रचना वा कृति के नाम के नीचे सामान्यतया यह संकेत है कि वह किस प्रकार की है। कुछ बड़ी रचनाओं के संक्षिप्त कथानक भी दिये गये हैं। ऐसी रचनाओं की संक्षिप्त आलोचना भी दी गई है। लेखकों व रचनाओं के विषय में कहीं भी मौलिक साहित्यिक मूल्यांकन का प्रयास न करके बहुधा विवाद-ग्रस्त लेखकों व रचनाओं के विषय में प्रशंसात्मक टिप्पणी देते हुए केवल उनकी प्रचलित व रूढ विशेषताओं को ही गिना दिया गया है। वर्त्तमान से संबद्ध वे ही लेखक लिये गये हैं, जो ख्याति अर्जित कर चुके हैं या प्रकाश में आ

रहे हैं। जिन नवोदित प्रतिभाओं से मैंने अनजाने में किनारा किया है, उनसे मैं क्षमाप्रार्थी हूँ और पाठकों से निवेदन करता हूँ कि संग्रह के इस दुर्गम क्षेत्र में हुई भूलों पर वे ध्यान नहीं करेंगे।

दूसरी के अंतर्गत हिंदी-साहित्य की अंतःकथाएँ ली गई हैं। हिंदी-साहित्य ऐसी अनेक कथाओं से भरा पड़ा है, जिनके ज्ञान के बिना पाठक उन संदर्भों को भली प्रकार हृदयंगम नहीं कर सकता, जिनमें उनका निर्देश हुआ है। इसलिये काव्य में अधिकता से प्रयुक्त और आवश्यक अंतःकथाओं को संक्षेप में रख दिया गया है।

तीसरी के अंतर्गत साहित्य-क्षेत्र में बहुधा वर्णित ऐसी रूढ़ियों का संक्षिप्त निरूपण है, जिनको उक्त दो वर्गों में स्थान नहीं दिया जा सका। कुछ साहित्यिक शब्द, छंद, अलंकार, कवि-समय, काव्य-न्याय, जो हिंदी-साहित्य के पाठक के लिये अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, यहाँ चुन लिये गये हैं। इनके अतिरिक्त साहित्य में यत्र-तत्र वर्णित ऋषियों, मुनियों, शूरचरित्र-नायकों, शासकों, राजनीतिज्ञों, दार्शनिकों, कला-कोविदों, संगीतज्ञों, योग की भाषा के शब्द, प्राचीन भौगोलिक नाम व अन्य प्रसिद्ध स्थानों का संक्षेप में विवरण है। हिंदी में अनेक देशी, विदेशी लेखकों की रचनाओं के अनुवाद हुए हैं, परंतु उनमें से प्रमुख लेखक ही लिये जा सके हैं। अत्यंत प्रसिद्ध अनूदित रचनाओं का पृथक् से उल्लेख भी हुआ है। हिंदी की प्रमुख संस्थाओं तथा पत्र-पत्रिकाओं का भी निर्देश कर दिया गया है।

इस कार्य को करते हुए लेखक ने इस बात का पूर्ण ध्यान रखा है कि यह ग्रंथ कोई इतिहास, साहित्य-शास्त्र, अलंकार, छंद वा पौराणिक गाथाओं का कोश नहीं, अपितु हिंदी-साहित्य के परिचायक के रूप में है।

इस ग्रंथ को लिखने में मुझे जिन ग्रंथों से सहायता मिली, उनके लेखकों तथा प्रकाशकों के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। स्थानाभाव से यहाँ उन सब लेखकों तथा सैकड़ों ग्रंथों का निर्देश नहीं किया जा सका है, तथापि उन कतिपय प्रधान ग्रंथों और उनके लेखकों का उल्लेख करना मैं अपना विशेष कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनसे कहीं-कहीं अक्षरशः तथा भाव के रूप में विशेष सहायता ली है। आचार्य

रामचंद्र शुक्ल-कृत *हिंदी-साहित्य का इतिहास*, डा० रामकुमार वर्मा-कृत *हिंदी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास* (बृहद् तथा संक्षिप्त रूप), डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी-कृत *हिंदी-साहित्य की भूमिका*, बा० गुलाबराय-कृत *हिंदी-साहित्य का सुबोध इतिहास*, श्री कृष्णशंकर शुक्ल-कृत *आधुनिक हिंदी-साहित्य का इतिहास*, श्री शिवनारायण श्रीवास्तव-कृत *हिंदी-उपन्यास*, श्री ब्रजरत्नदास-कृत *हिंदी-नाटय साहित्य*, बा० गुलाबराय-कृत *हिंदी नाटय विमर्श* और *काव्य के रूप*, डा० माताप्रसाद गुप्त-कृत *हिंदी-पुस्तक-साहित्य*, नगेंद्रनाथ वसु-कृत *विश्व-कोष*; *हिंदी शब्द सागर* (बृहद् तथा संक्षिप्त), वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद्, आरण्यक, *वाल्मीकि रामायण*, *महाभारत*, पुराण, श्री चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा-कृत *भारतीय चरितांबुधि*, श्री सि० वि० चित्राव-कृत *भारतवर्षीय प्राचीन चरित्र कोश* (मराठी भाषा में), गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित 'कल्याण' के अनेक अंक; श्री जगन्नाथप्रसाद 'भानु'-कृत *छंदः प्रभाकर*, श्री परमानंद शास्त्री-कृत *पिंगल-पियूष*; *साहित्य दर्पण*, मिश्रबंधु-कृत *साहित्य पारिजात*, लाला भगवानदीन 'दीन'-कृत *अलंकार मंजूषा*, आचार्य रामचंद्र शुक्ल 'रसाल'-कृत *काव्य-मीमांसा* और *रस-मीमांसा*, सेठ अर्जुनदास केडिया-कृत *भारती भूषण*, राजेंद्र द्विवेदी-कृत *साहित्यशास्त्र का पारिभाषिक शब्द-कोश*, श्री श्रीकृष्ण शुक्ल-कृत *हिंदी पर्य्यायवाची कोश*, श्री जॉन डाउसन-कृत *हिंदू क्लासिकल डिक्शनरी* (*Hindu Classical Dictionary* by John Dowson), सर पॉल हार्वे-कृत *ऑक्सफ़ोर्ड कंपेनियन टु इंग्लिश लिटरेचर* (*Oxford Companion to English Literature* by Sir Paul Harvey), श्री जोजफ टी० शिप्ली-कृत *डिक्शनरी ऑव् वर्ल्ड लिटरेचर* (*Dictionary of World Literature* ed. by Joseph T. Shipley), श्री नंदलाल दे-कृत *दी ज्योग्रफिकल डिक्शनरी ऑव् एनशंट ऐंड मेडिईवल इंडिया* (*The Geographical Dictionary of Ancient and Mediaeval India*)।

ऑक्सफ़ोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस की ओर से प्रो० जॉन बर्टन-पेज, स्कूल ऑव् ओरिअंटल ऐंड ऐफ़्रिकन स्टडीज़, लंदन विश्वविद्यालय, प्रो० इंदुप्रकाश पांडे, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, एलिफ़न्स्टन कॉलिज, बंबई, प्रो० ए० सी० कामाक्षी राव, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, क्रिस्टयन कॉलिज, मद्रास, और मेरी ओर से प्रो० वागीश्वर, अध्यक्ष, संस्कृत तथा हिंदी विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय और प्रो० वंशीधर, भू० पू० अध्यक्ष, संस्कृत तथा हिंदी विभाग, उसमानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, ने संपूर्ण पुस्तक के प्रूफ़ का अवलोकन कर अत्यंत उपयोगी सुझाव दिये हैं, जिनसे पुस्तक और अधिक उपयोगी बन सकी है। इन महानुभावों के अतिरिक्त महापंडित राहुल सांकृत्यायन, श्री प्रभाकर माचवे, श्री भवानीशंकर त्रिवेदी, प्रो० रामनाथ, प्रो० पीतांबरनारायण शर्मा, प्रो० वीरेंद्रकुमार, अंबाला, श्री वेंकटेश्वर शास्त्री आदि ने भी समय-समय पर अच्छे सुझाव दिये हैं। इन सबके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। पर यहाँ मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि त्रुटियों का उत्तरदायित्व केवल लेखक पर ही है। प्रेस-कापी तैयार करने तथा प्रूफ़ देखने में मेरी धर्मपत्नी शांति गर्ग और मेरे सुपुत्र वेदप्रकाश ने मेरा हाथ बटाया है।

लेखक ने इस ग्रंथ में सर्वत्र ईसवी सन् को ही अपनाया है। यह लिखने की आवश्यकता ही नहीं कि ५७ वर्ष जोड़कर ईसवी सन् को सुगमता से विक्रमी संवत् में परिणत किया जा सकता है। इसी प्रकार ईसवी सन् में से ६२२ वर्ष घटाकर उसको हिजरी सन् में बदला जा सकता है। शक संवत् ईसवी सन के ७८ वर्ष पश्चात् प्रारंभ हुआ। परिणत करने में कहीं-कहीं कुछ मास का अंतर पड़ सकता है, किंतु वह नगण्य है।

ग्रंथों के शीर्षक इटैलिक्स अक्षरों में लिखे गये हैं। जिन इटैलिक्स शब्दों के नीचे रेखा अंकित है, उन रचनाओं का पृथक् से निर्देश भी हुआ है। शीर्षकों के अतिरिक्त काले अक्षरों में छपे शब्दों का तात्पर्य है कि उनका पृथक् से निर्देश है।

गंगाराम गर्ग

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार
जून १९५८ ई०

संक्षेप सूची

अग्नि०	अग्निपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
अध्या० रा०	अध्यात्म रामायण (गीता प्रेस)
अनू०	अनूदित (हिंदी में)
आ० का०	आविर्भाव काल
आदि०	आदिपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
आ० रा०	आनंद रामायण
आश्व० गृह०	आश्वलायनगृह्यसूत्र (निर्णयसागर प्रेस)
ई०	ईसवी सन्
ई० पू०	ईसा पूर्व
ऋ०	ऋग्वेद
ऐ० ब्रा०	ऐतरेय ब्राह्मण (निर्णयसागर प्रेस)
क० उ०	कठ उपनिषद् (विद्या प्रकाश प्रेस)
कालि०	कालिकापुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
कूर्म०	कूर्मपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
के० उ०	केन उपनिषद् (विद्या प्रकाश प्रेस)
ग	गुरु (ऽ)
गणेश०	गणेशपुराण (मोदवृत्त प्रेस)
गरुड०	गरुडपुराण (निर्णयसागर प्रेस)
ग० सं०	गर्ग संहिता (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
गो० ब्रा०	गोपथ ब्राह्मण (नारायण प्रेस)
गोपाल	गोपालचंद्र गिरिधरदास
छां० उ०	छांदोग्य उपनिषद् (विद्या प्रकाश प्रेस)
ज	जगण (।ऽ।—लघु गुरु लघु)
जै० अ०	जैमिनी अश्वमेध
त	तगण (ऽऽ।—गुरु गुरु लघु)
तै० उ०	तैत्तिरीय उपनिषद् (विद्या प्रकाश प्रेस)
तै० ब्रा०	तैत्तिरीय ब्राह्मण (राजेंद्रलाल मित्र)
तै० सं०	तैत्तिरीय संहिता (आनंदाश्रम)
दे०	देखो
दे० यथा०	देखो यथास्थान
देवी० भा०	देवी भागवत (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
न	नगण (।।।—सर्व लघु)
नारद०	नारदपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
	१— पूर्वभाग २— उत्तरभाग
नृसिंह०	नृसिंहपुराण (गोपालनारायण प्रेस)
पद्म०	पद्मपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
	सृ०— सृष्टिखंड भू०— भूमिखंड
	स्व०— स्वर्गखंड ब्र०— ब्रह्मखंड
	पा०— पातालखंड उ०— उत्तरखंड
	क्रि०— क्रियायोग सारखंड
पर्य्याय०	पर्य्यायवाचीशब्द
बृ० उ०	बृहदारण्यक उपनिषद् (विद्या प्रकाश प्रेस)
बृहद्दे०	बृहद्देवता (राजेंद्रलाल मित्र)
ब्रह्म०	ब्रह्मपुराण (आनंदाश्रम)
ब्रह्मवै०	ब्रह्मवैवर्तपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
	१— ब्रह्मखंड २— प्रकृतिखंड
	३— गणपतिखंड ४— कृष्णजन्मखंड
ब्रह्मांड०	ब्रह्मांडपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
	१— प्रक्रियापाद २— अनुषंगपाद
	३— उपोद्घातपाद ४— उपसंहारपाद
भ	भगण (ऽ।।—गुरु लघु लघु)
भवि०	भविष्यपुराण (मोदवृत्त प्रेस)
	ब्राह्म०— ब्राह्मपर्व मध्यम०— मध्यमपर्व
	प्रति०— प्रतिसर्गपर्व उत्तर०— उत्तरपर्व
भा०	भागवत (गीता प्रेस)
म	मगण (ऽऽऽ—सर्वगुरु)

म० — **महाभारत** (चित्रशाला प्रेस, नीलकंठ की टीका सहित। जहाँ कुंभकोणम् में प्रकाशित महा भारत से लिया गया है, वहाँ 'कुं' का संकेत है।)

आ०— आदिपर्व　स०— सभापर्व
व०— वनपर्व　वि०— विराटपर्व
उ०— उद्योगपर्व　भी०— भीष्मपर्व
द्रो०— द्रोणपर्व　क०— कर्णपर्व
श०— शल्यपर्व　सौ०— सौप्तिकपर्व
स्त्री०— स्त्री पर्व　शां०— शांतिपर्व
अनु०— अनुशासनपर्व
आश्व०— आश्वमेधिकपर्व
आश्र०— आश्रमवासिकपर्व
मौ०— मौसलपर्व
महा०— महाप्रस्थानिकपर्व
स्व० स्वर्गारोहणपर्व

मत्स्य० — **मत्स्यपुराण** (नवलकिशोर प्रेस)
मनु० — **मनुस्मृति** (निर्णयसागर प्रेस)
मा० — **मात्रिक**
मार्क० — **मार्कंडेयपुराण** (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
य — **यगण** (ISS—लघु गुरु गुरु)
यो० वा० — **योग वासिष्ठ** (नवलकिशोर प्रेस)
र — **रगण** (SIS—गुरु लघु गुरु)
र० का० — **रचनाकाल**
ल — **लघु** (।)
ल० — **लगभग**
लिंग० — **लिंगपुराण** (नवलकिशोर प्रेस)
लि० का० — **लिपि काल**
व० — **वर्ण, वर्णिक**

वराह० — **वराहपुराण** (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
वर्त० — **वर्तमान**
वायु० — **वायुपुराण** (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
१— पूर्वार्ध　२— उत्तरार्ध
वामन० — **वामनपुराण** (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
वा० रा० — **वाल्मीकि रामायण** (रामनारायणलाल)

बा०— बालकांड
अर०— अरण्यकांड
सुं०— सुंदरकांड
उ०— उत्तरकांड
अयो०— अयोध्याकांड
कि०— किष्किंधाकांड
यु०— युद्धकांड

वि० — **विक्रमी**
विष्णु० — **विष्णुपुराण** (नवलकिशोर प्रेस)
विष्णुधर्म० — **विष्णुधर्मोत्तर** (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
श० ब्रा० — **शतपथ ब्राह्मण** (अच्युतग्रंथमाला कार्यालय)
शिव० — **शिवपुराण** (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)

विद्या०— विद्येश्वरसंहिता
रुद्र०— रुद्रसंहिता
सृ०—सृष्टिखंड　स०—सतीखंड
पा०—पार्वतीखंड　कु०—कुमारखंड
यु०—युद्धखंड
शत०— शतरुद्रसंहिता
कोटि०— कोटिरुद्रसंहिता
उमा०— उमासंहिता
कै०— कैलाससंहिता

वा० — वायवीयसंहिता
१— पूर्वखंड २— उत्तरखंड
सं० संवत् (विक्रमी)
स सगण (।।ऽ—लघु लघु गुरु)
सांब० सांबपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
स्कंद० स्कंदपुराण (श्रीवेंकटेश्वर प्रेस)
१— माहेश्वरखंड
१— केदारखंड
२— कौमारिकाखंड
३— अरुणाचलमाहात्म्य
१— पूर्वार्ध २— उत्तरार्ध
२— वैष्णवखंड
१— वेंकटाचलमाहात्म्य
२— पुरुषोत्तम (जगन्नाथ) क्षेत्रमाहात्म्य
३— बदरिकाश्रममाहात्म्य
४— कार्तिकमासमाहात्म्य
५— मार्गशीर्षमासमाहात्म्य
६— भागवतमाहात्म्य
७— वैशाखमासमाहात्म्य
८— अयोध्यामाहात्म्य
९— वासुदेवमाहात्म्य
३— ब्रह्मखंड
१— सेतुमाहात्म्य
२— धर्मारण्यखंड
३— ब्रह्मोत्तरखंड
४— काशीखंड
१— पूर्वार्ध
२— उत्तरार्ध
५— आवंत्यखंड
१— अवंतीक्षेत्रमाहात्म्य
२— चतुरशीतिलिंगमाहात्म्य
३— रेवाखंड
६— नागरखंड
७— प्रभासखंड
१— प्रभासक्षेत्रमाहात्म्य
२— वस्त्रापथक्षेत्रमाहात्म्य
३— अर्बुदखंड
४— द्वारिकामाहात्म्य
ह० वं० हरिवंशपुराण (लक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस)
१— हरिवंशपर्व
२— विष्णुपर्व
३— भविष्यपर्व

अ

अंक—१ **रूपक** का एक भेद । यह करुण रस प्रधान एकांकी है । इसका नायक साधारण और आख्यान इतिहास-प्रसिद्ध होता है । स्त्रियों का विलाप बहुत होता है । इसमें **मुख** और **निर्वहण** संधियाँ ही होती हैं । संस्कृत में इसका उदाहरण *शर्मिष्ठाययाति* है । २ नाटक का एक प्रमुख विभाग । प्राचीन संस्कृत, यूनानी और अंग्रेज़ी नाटकों में अंकों की संख्या ५ से ८ तक रहती थी । इब्सेन (१८२८-१९०६ ई०) ने अंक-संख्या ४ की थी जो पीछे ३ ही रह गई । हिंदी-नाटकों में भारतेंदु-काल तक ५ अंक चलते रहे । जयशंकर प्रसाद ने ३ अंक वाला विभाजन अपनाया है । अब कुछ नवीन नाटककार (ड्रिंकवाटर, गॉल्ज़वर्दी आदि) अंक-विभाजन करना छोड़ कर, नाटक को केवल दृश्यों और घटनाओं में विभाजित करते हैं ।

अंकमुख (अंकास्य)—दे० *अर्थोपक्षेपक* ।

अंकावतार—दे० *अर्थोपक्षेपक* ।

अंग—वर्त्तमान भागलपुर के आस-पास का प्रदेश । इसकी राजधानी चंपापुरी थी । **रोमपाद** और **कर्ण** यहीं के राजा थे । शिव ने **कामदेव** का दहन यहीं किया था *(वा० रा० बा० २३.१४)* ।

अंगद—१ **बालि** के पुत्र और राम-सेना के एक प्रधान वीर *(वा० रा० कि० १८)* । बालि के वध के पश्चात् राम ने इनको ही युवराज बनाया था *(२६)* । रावण से युद्ध करने से पूर्व राम ने इन्हें अपना दूत बनाकर उसे समझाने के लिये भेजा था *(वा० रा० यु० ४१)* । २ लक्ष्मण के ज्येष्ठ पुत्र का नाम *(वा० रा० उ० १०२)* ।

अंगराज—**अंग** देश के राजा, **कर्ण** ।

अंगिरा—ब्रह्मा के एक मानसपुत्र और एक प्रजापति *(मत्स्य० १९४)* । ये *अथर्ववेद* के प्रादुर्भावकर्त्ता कहे जाते हैं, इसीसे इनका नाम 'अथर्वा' भी है । इनकी तपस्या के कारण अग्नि तक का तेज कम होने लगा । यह देख इन्होंने पूर्ववत् अग्नि को अंधकार का नाश करने के लिये कहा । अग्नि के वरदान से इन्हें **बृहस्पति** नामक पुत्र प्राप्त हुआ *(म० व० २१७-१८)* । स्मृति *(विष्णु० १.७)*, स्वधा, सती *(भा० ६.६)* और श्रद्धा *(३.२४.२२)* आदि इनकी पत्नियाँ थीं । इन पत्नियों से इन्हें अनेक पुत्र और पुत्रियाँ प्राप्त हुईं । ये ज्योतिष-शास्त्र के महान् आचार्य थे । *अंगिरा संहिता* इन द्वारा रचित प्रसिद्ध धर्म-ग्रंथ है ।

अंचल—दे० *रामेश्वरप्रसाद शुक्ल 'अंचल'* ।

अंजना (**अंजनी**)—**पूर्वजन्म** में पुंजकस्थली नामक अप्सरा, जो शापवश कुंजर नामक वानर की पुत्री बनी । एक अन्य स्थान पर ये गौतम ऋषि की कन्या कही जाती हैं *(शिव० शत० २०)* । ये केसरी नामक वानर की पत्नी थीं *(भवि० प्रति० ४.१३)* । वायु की आराधना करके इन्होंने हनुमान नामक पुत्र को प्राप्त किया *(स्कंद० २.१.४०)* ।

अंतर्लापिका—वह पहेली जिसका उत्तर उसी पहेली के अक्षरों में निहित हो । उ०—कौन जाति सीता सती, दई कौन कहँ तात । कौन ग्रंथ बरण्यो हरि, *रामायण* अवदात ।। इस दोहे में पहिले पूछा है कि सीता कौन जाति थी ? उत्तर '*रामा*=स्त्री' । फिर पूछा कि उनके पिता ने उन्हें किनको दिया ? उत्तर '*रामाय*=राम को' । फिर पूछा कि किस ग्रंथ में हरण लिखा गया गया है ? उत्तर हुआ '*रामायण*' ।

अंत्याचरी—वह छंद-पाठ जो पूर्व पठित या कथित छंद के अंतिम वर्ण से प्रारंभ हो। जैसे, यदि प्रथम वक्ता ऐसा छंद पढ़े जिसके अंत में म् वर्ण आता हो, तो द्वितीय वक्ता को म् वर्ण से आरंभ होने वाला कोई छंद कहना होता है। विद्वानों एवं विद्यार्थियों में इसका विशेष प्रचलन है।

अंत्यानुप्रास—दे० *अनुप्रास*।

अंधक—कश्यप और दिति का पुत्र एक दैत्य जिसके सहस्र सिर थे। यह अंधक इस कारण कहलाता था कि यह आँखों से देखते हुए भी मद के मारे अंधों की नाईं चलता था। स्वर्ग से पारिजात लाते समय यह शिव द्वारा मारा गया। इसी से शिव को 'अंधकारि' कहते हैं *(वामन० ३७)*।

अंधगज न्याय—सात अंधे हाथी को टटोल कर उसके प्रत्येक अंग को हाथी मानने लगे। अतएव अज्ञानी मूर्ख व्यक्ति जब अपूर्ण ज्ञान को अपनी बुद्धि के अनुसार पूर्ण ज्ञान समझ बैठता है, तब इस उक्ति का प्रयोग होता है।

अंधचटक न्याय—"अंधा और चिड़िया"। दैवयोग से अंधे के हाथ में एक चिड़िया आ जाना। दे० *काक तालीय न्याय*। 'अंधे के हाथ बटेर लगना' एक मुहावरा भी प्रचलित है।

अंधपंगु न्याय—"अंधा और लंगड़ा"। एक अंधे ने एक लंगड़े को अपने कंधों पर बिठाया और लंगड़े ने अंधे को मार्ग दिखाया। इस प्रकार दोनों ने ही सुख से कठिन मार्ग को पार कर लिया। परस्पर साहाय्य अथवा सहकार्य द्वारा किसी कठिन कार्य की सिद्धी लेने में इस उक्ति का प्रयोग होता है।

अंधपरंपरा न्याय—"अंधों की परंपरा"। एक अंधे का दूसरे अंधे के पीछे जाना और दूसरे का तीसरे के पीछे जाना। इस प्रकार सत्य और वास्तविक बात को न जानते हुए एक दूसरे की बात पर विश्वास कर लेना। अतएव सत्य ज्ञान की उपलब्धि जहाँ न होती हो, वहाँ इस उक्ति का प्रयोग होता है।

अंबदेव सूरि (आ० का० १२१४ ई०)—एक जैन कवि और *संघपति समरा रासा* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

अंबर—जयपुर राज्य। इसकी राजधानी अंबरीषनगर थी, जिसे मांधाता-पुत्र अंबरीष ने बसाया था। अंबरीषनगर को अब आमेर कहते हैं।

अंबरीष—सूर्यवंशी नाभाग के पुत्र एक राजा जो परम वैष्णव और प्रसिद्ध वीर थे। कार्त्तिक मास की एकादशी का व्रत करके एक दिन ये व्रत पूर्ण करने ही जा रहे थे कि दुर्वासा अनेक मुनियों के साथ आ पहुँचे। राजा ने व्रत की पारणा न कर दुर्वासा से भोजन करने के लिये प्रार्थना की। दुर्वासा स्नान करने चले गये। वहाँ उन्हें देर लग गई। उस दिन द्वादशी अल्प समय के लिये थी, अतः राजा ने दुर्वासा के लौटे बिना ही चरणामृत पी लिया। लौटने पर मुनि क्रोधित हुए और उन्होंने अपना बाल तोड़ कर कृत्या नामक एक भयानक राक्षसी को उत्पन्न किया। यह राक्षसी राजा का भक्षण करने के लिये झपटी। अपने भक्त के रक्षार्थ विष्णु ने चक्र फेंक कर कृत्या को भस्म कर दिया। फिर वह चक्र दुर्वासा को दंड देने

के लिये उनके पीछे-पीछे चला । अंत में दुर्वासा ने अंबरीष की शरण ली और क्षमायाचना की (*भा० ९.-४५*) ।

अंबा—काशिराज की ज्येष्ठ कन्या जिसे भीष्म स्वयंवर-सभा से हर लाए थे (*म० आ० १०२*)। भीष्म अंबा का विवाह **विचित्रवीर्य** से करना चाहते थे किंतु अंबा राजकुमार शाल्व को पहिले ही वरण कर चुकी थी, अतः भीष्म ने अंबा को शाल्व के पास भेज दिया । शाल्व ने यह कह कर अंबा को अस्वीकार कर दिया कि इसका हरण हो चुका है । भीष्म भी आजन्म ब्रह्मचर्यव्रतधारी होने से इसे ग्रहण नहीं कर सके। निराश होकर अंबा भीष्म के गुरु परशुराम के पास पहुँची । अंबा के कारण परशुराम और भीष्म में घोर युद्ध हुआ किंतु कोई भी विजयी न हो सका । इसके उपरांत अंबा ने भीष्म के वध के लिये शंकर की घोर आराधना की । एक बार जब यह गंगा में स्नान करने गई, तो गंगा ने शाप से इसे नदी बना दिया । शंकर के वरदान से यह अगले जन्म में **शिखंडी** बनी और भीष्म के वध का कारण हुई (*म० उ० १७३-९६*) । **उदयशंकर भट्ट** ने *अंबा* नामक एक नाटक भी लिखा है ।

अंबालिका—काशिराज की कनिष्ठ कन्या जिसे भीष्म अपने भाई **विचित्रवीर्य** के लिये स्वयंवर-सभा से हर लाए थे । विचित्रवीर्य की मृत्यु हो जाने पर **व्यास** से नियोग कर इसने एक पुत्र को जन्म दिया । रतिप्रसंग के समय व्यास के विकृत श्याम वर्ण के भय से इसका रंग पीला पड़ गया था, अतः पुत्र का रंग भी पीला हो गया । पीला होने से पुत्र का नाम पांडु पड़ा (*म० आ० १०२-६*) ।

अंबिका—काशिराज की मध्यम पुत्री जिसे भीष्म **विचित्रवीर्य** के लिये स्वयंवर-सभा से हर लाए थे । विचित्रवीर्य की मृत्यु हो जाने पर **व्यास** से नियोग कर इसने धृतराष्ट्र नामक पुत्र को जन्म दिया । रतिप्रसंग के समय व्यास के विकृत श्याम वर्ण से भयभीत होकर इसने आँखें मूंद लीं, अतः धृतराष्ट्र जन्मांध हुए। जब इसकी सास सत्यवती ने इसे पुनः व्यास के पास जाने को कहा, तो इसने अपने स्थान पर अपनी एक दासी को भेज दिया, जिससे विदुर का जन्म हुआ (*म० आ० १०२-६*) ।

अंबिकादत्त व्यास (१८५८-१९०० ई०)—सनातन धर्म के प्रमुख उपदेशक, व्रज-भाषा के उत्कृष्ट कवि, संस्कृत के विद्वान् और *अवतार-मीमांसा* (धर्म संबंधी), *बिहारी विहार* (बिहारी के दोहों के भाव को विस्तृत करने के लिये एक काव्य-ग्रंथ), *पावस-पचासा* (पुरानी चाल की कविता पर), *गद्य-काव्य-मीमांसा* (गद्य-ग्रंथ), *ललिता नाटिका* (कृष्ण-लीला संबंधी), *गो संकट नाटक* (अकबर द्वारा गो-वध बंद किये जाने की कथावस्तु पर) *कलियुग और घी* (प्रहसन), *भारत सौभाग्य नाटक*, *शिवराज विजय* (शिवाजी के जीवन से संबंधित संस्कृत-उपन्यास) आदि ग्रंथों के रचयिता । इन्होंने कुछ कविता खड़ी बोली में भी की है ।

अंबिका वन—१ एक पौराणिक वन जहाँ पुरुष स्त्री हो जाते थे । २ ब्रज के एक वन का नाम ।

अंशावतार—जो पूर्ण अवतार न हो । यथा—**नर**।

अंशुमान्—एक सूर्यवंशी राजा जो सगर के पौत्र, असमंजस् के पुत्र और दिलीप के पिता

थे । **सगर** के अश्वमेध का घोड़ा ये ही ढूंढ़ कर लाए थे ।

अकंपन—रावण का दूत एक राक्षस *(वा० रा० अर० ३१)* । लंका-युद्ध में यह हनुमान द्वारा मारा गया *(वा० रा० यु० ५६)* ।

अकबर (१५४२-१६०५ ई०)—सर्वप्रसिद्ध मुग़लवंशी भारत-सम्राट् (१५५६-१६०५) जिनका नाम जलालुद्दीन था । ये काव्य-रसिक और कलाप्रेमी थे । इनके नवरत्न **रहीम, बीरबल, तानसेन, अबुलफ़ज़ल** आदि थे । अकबर विशेष पढ़े-लिखे न होकर भी अनेक विषयों के ज्ञाता थे । इन्होंने ब्रज-भाषा में कविता भी की है ।

अकरम फ़ैज़ (आ० का० ११२३-४८ ई०)—एक मुसलमान लेखक जिनके विषय में खोज हो रही है । इनकी रचनाएँ भी अभी तक अप्राप्त हैं ।

अकृतव्रण—परशुराम के परमप्रिय शिष्य । ये बड़े साधु स्वभाव के अत्यंत गुरु-भक्त मुनि थे । बालकपन में ये सिंह, बाघ आदि हिंसक पशुओं के बीच में पले थे । उनके बीच रहते हुए भी इन्हें एक भी व्रण (घाव) नहीं हुआ । अतः इनका यह नाम पड़ा *(ब्रह्मांड० ३.२५)* ।

अक्रमातिशयोक्ति—दे० *अतिशयोक्ति* ।

अक्रूर—श्वफल्क (सुफलक) के पुत्र *(भा० ६. २४)* । कंस ने बलराम और कृष्ण को मथुरा बुलाने के लिये इन्हें ब्रज भेजा था । ये अपने उत्तरदायित्व पर उनको मथुरा ले आए । मार्ग में जब इन्होंने यमुना में डुबकी लगाई तो इन्हें जल में बलराम और कृष्ण के दर्शन हुए *(भा० १०.३९, ह० वं० २.२६)* । पांडु की मृत्यु का समाचार सुन कर कृष्ण ने इन्हें हस्तिनापुर भेजा था । वहाँ इन्होंने धृतराष्ट्र का पांडवों के प्रति कटु व्यवहार देखा और लौट कर कृष्ण से सब समाचार कह दिया *(भा० १०.४९)* । इनके पास स्यमंतक मणि थी । लोगों का ऐसा संशय था कि कृष्ण के पास स्यमंतक मणि है । अक्रूर ने मणि दिखा कर लोगों का संशय दूर कर दिया *(१०.५६-५७)* ।

अक्षयकुमार—रावण का एक पुत्र । लंका में अशोक वाटिका उजाड़ते समय हनुमान ने इसका वध किया था *(वा० रा० सुं० ४७)* ।

अक्षयपात्र—पांडवों के वनवास के समय सूर्य द्वारा युधिष्ठिर को दिया गया एक पात्र । इस पात्र में पकी भोजन-सामग्री अक्षय बनी रहती थी जब तक कि द्रौपदी उसमें से परोसती रहती थी । दुर्योधन की प्रार्थना पर दुर्वासा मुनि ने द्रौपदी से उस समय भोजन माँगा जब द्रौपदी और पांडव भोजन कर चुके थे । दुर्योधन जानता था कि दुर्वासा महाक्रोधी हैं और भोजन न मिलने पर अवश्य पांडवों को शाप देदेंगे । इस संकटकाल में द्रौपदी ने कृष्ण को स्मरण किया । कृष्ण ने आकर पात्र में थोड़ा-बहुत लगा हुआ साग खाकर दुर्वासा और उनके १० हज़ार शिष्यों को आमंत्रित किया । मुनि जब आए तो उन्हें अपने आप सहसा पूर्ण तृप्ति अनुभव हुई, मानों भोजन कर चुके हों । यह देख दुर्वासा अपने शिष्यों के साथ पांडवों से बिना पूछे ही वहाँ से चले गये *(म० व० २६२-६३)* ।

अक्षयवट—प्रयाग और गया में स्थित बरगद के दो वृक्ष । पौराणिक लोग इनका क्षय प्रलय में भी नहीं मानते ।

अक्षर अनन्य (आ० का० १६५३ ई०)—वेदांत के एक बड़े पंडित और संत-कवि । योग

और वेदांत पर *राजयोग*, *विज्ञानयोग*, *ध्यानयोग*, *सिद्धांतबोध*, *विवेकदीपिका*, *ब्रह्मज्ञान*, *अनन्य प्रकाश* आदि के रचयिता। इन्होंने *दुर्गा-सप्तशती* का हिंदी पद्यों में अनुवाद भी किया। ये कुछ समय के लिये दतिया-नरेश पृथ्वीचंद के दीवान रहे। बाद में ये विरक्त होकर पन्ना में रहने लगे, जहाँ पन्ना-नरेश छत्रसाल इनके शिष्य हुए।

अखरावट—**मलिक मुहम्मद जायसी** (१४९३-१५४३ ई०) की अवधी भाषा में एक रचना जिसमें 'ककहरे' (वर्णमाला) के क्रम से दार्शनिक सिद्धांतों का विवेचन किया गया है।

अगस्त्य—वेदों के मंत्रद्रष्टा एक प्रसिद्ध ऋषि। उर्वशी को देख कर मित्रावरुण उस पर मुग्ध होगये। फलस्वरूप वसिष्ठ और अगस्त्य की उत्पत्ति हुई *(बृहद्दे० ५.१३४)*। इनका जन्म कुंभ से हुआ था *(मत्स्य० ६१ आदि)*। जब असुर समुद्र में जा छिपे तो इन्होंने समुद्र को पी लिया था। एक बार विंध्याचल पर्वत को बड़ी ईर्ष्या हुई कि सब देवता सूर्य, चंद्र आदि सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते हैं, किंतु मेरी नहीं करते। ईर्ष्या से उसने ऊपर को बढ़ना प्रारंभ कर दिया। बढ़ते-बढ़ते उसने सूर्य को भी ढक लिया। जब संसार में अंधकार छा गया, तो देवताओं ने अगस्त्य से प्रार्थना की। अगस्त्य विंध्याचल के पास गये। विंध्याचल ने अपने गुरु अगस्त्य के चरणों में गिर कर नमस्कार किया। अगस्त्य ने विंध्य को उसी प्रकार लेटे रहने को कहा। तब से आज तक विंध्याचल ज्यों का त्यों पड़ा हुआ है *(पद्म० सृ० १९, म० व० १०२-५, देवी भा० १०.३-७)*। अग (पर्वत) को स्थंभन करने से इनका नाम अगस्त्य पड़ा *(वा० रा० अर० ११)*। अपने पूर्वजों के उद्धार के लिये इन्होंने स्वयं-रचित लोपामुद्रा (दे० यथा०) से विवाह किया। इन्होंने **इल्वल** (आतापि) और **वातापि** को खा कर पचा लिया था। इल्वल की संपत्ति इन्होंने लोपामुद्रा को दी थी *(म० व० ९६-९९)*। इन्होंने नहुष (दे० यथा०) को अजगर हो जाने का शाप दिया था। इन द्वारा रचित *अगस्त्य संहिता* भी है। विंध्य पार करके ये दक्षिण चले गये। दक्षिण भारत में आर्य संस्कृति के प्रसार का श्रेय इन्हीं को है। ये तमिल भाषा के प्रथम व्याकरण-ग्रंथ के रचयिता माने जाते हैं, यद्यपि इनका यह ग्रंथ अप्राप्त है। इनका एक आश्रम **रामगिरि** (रामटेक) स्थान पर था। अगस्त्य के पर्य्याय०—मैत्रावरुणि, और्वशेय, कुंभज, घटोद्भव, कुंभसंभव, कुंभ-योनि, समुद्रचुलुक, पीताब्धि।

अगिया—**विक्रमादित्य** के दो वेतालों में से एक। दे० *अगिया कोइलिया*।

अगिया कोइलिया—दो वेताल जिन्हें विक्रमादित्य ने सिद्ध किया था और जो स्मरण करते ही उनकी सेवा में उपस्थित हो जाते थे। इनकी कथा *वेतालपच्चीसी* और *कथा सरित् सागर* में है।

अगिया वेताल—विक्रमादित्य के दो वेतालों में से एक। दे० *अगिया कोइलिया*।

अग्नि—एक प्रसिद्ध वैदिक देवता। दक्ष प्रजापति की कन्या स्वाहा इनकी पत्नी थी। एक बार अग्नि की पाचन-शक्ति क्षीण हो गई। इन्हें अस्वस्थ देख ब्रह्मा ने इन्हें कहा—'तुम खांडववन का भक्षण करो, उसमें बहुत सी जड़ी बूटियाँ हैं। उनके भक्षण से तुम्हारा भोजन पचने लगेगा।' अतएव अग्नि ने खांडव-वन को भस्म करना चाहा, किंतु इंद्र ने वन नहीं जलने दिया। अग्नि ने कृष्ण और अर्जुन

से सहायता माँगी। उन्होंनें इनसे अस्त्र माँगे। तब अग्नि ने जलाधिपति वरुण से अक्षय तूणीर, गांडीव धनुष, कपिध्वज नामक दिव्य रथ और सुदर्शन चक्र माँगा। वरुण ने सभी वस्तुएँ लाकर देदीं। तब अग्निदेव ने खांडव-वन को भस्म करना प्रारंभ कर दिया। इंद्र घनघोर वर्षा करके अग्नि बुझाने लगे। जब अग्नि का कोप बढ़ता ही गया, तब इंद्र और अर्जुन में भयंकर युद्ध हुआ। शीघ्र ही अर्जुन ने देवता, असुर, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, सर्प आदि की सेनाओं को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। उसी समय आकाशवाणी हुई, जिससे इंद्र स्वर्ग लौट गये। इस अग्निकांड से केवल छः प्राणी बच सके— नागराज तक्षक-पुत्र अश्वसेन, मय दानव और चार शार्ङ्ग पक्षी। १५ दिन तक वन जलता रहा। इस असाध्य कार्य से प्रसन्न होकर इंद्र ने अर्जुन को सब प्रकार के अस्त्र देदिये (*म० आ० २२२–३४*)। अग्नि के पर्य्याय०— वह्नि, धनंजय, ज्वलन, जातवेद, पावक, अनल, वायुसख, आशुशुक्षणि, हिरण्यरेत, हुतभुक्, दहन, हव्यवाहन, विभावसु, वैश्वानर, वसंदर, हुताशन, धूम्रकेतु, शिखि।

अग्निपुर—माहिष्मती नगरी का एक नाम।

अग्निशर्मन्—एक ऋषि जो अपने क्रोध के लिये प्रसिद्ध है। अब तक भी बड़े उग्र क्रोधी की तुलना इससे की जाती है।

अग्रदास (आ० का० १५७५)—गलता (जयपुर) निवासी एक राम-भक्त कवि, नाभादास के गुरु, तुलसीदास के समकालीन और *हितोपदेश उपाख्यान बावनी* (*कुंडलिया रामायण*), *ध्यान मंजरी*, *रामध्यान मंजरी* आदि के रचयिता। *हितोपदेश उपाख्यान बावनी* कुंडलिया छंद में लिखने के कारण *कुंडलिया रामायण* के नाम से प्रसिद्ध हो गई, यद्यपि इसमें राम-कथा लिखने का प्रयास नहीं किया गया है। *रामध्यान मंजरी* में राम, उनके भाइयों और अयोध्या की शोभा का वर्णन है। अग्रदास की शैली नंददास की शैली से मिलती जुलती है। ये रामानंद की शिष्य-परंपरा में थे।

अग्रवन—आगरे का प्राचीन नाम। यह ब्रज-मंडल का एक वन था।

अघ—**बकासुर** और **पूतना** का भाई। कंस ने इसे बलराम और कृष्ण के मारने के लिये भेजा था। यह चार योजन लंबी सर्पदेह धारण कर इस प्रकार मार्ग में लेट गया कि कृष्ण, गोप और उनकी गाएँ इसके मुख में चली गई। परिस्थिति को ताड़ कर कृष्ण ने अपना शरीर इतना विशाल कर दिया कि इसका मुख फट गया और यह तत्काल मृत्यु को प्राप्त हुआ (*भा० १०.१२*)।

अघासुर—दे० *अघ*।

अघोर—एक शैव संप्रदाय। श्मशान में रहने वाले, चिता की राख शरीर पर मलने वाले, कपालमालाधारी शिव इसके उपास्य हैं। घृणित वस्तुओं के प्रति स्वाभाविक घृणा की भावना पर विजय पाने के लिये इस संप्रदाय के अनुयायी उन्हीं वस्तुओं (मलमूत्र, कच्चे मांस आदि) का सेवन करते हैं।

अचलदास खीची री वचनिका—शिवदास चारण का डिंगल में एक काव्य (१५५८ ई०), जिसमें गागुरण के खीची शासक अचलदास की उस वीरता का वर्णन है जो उन्होंने माँडू (मांडवगढ़) के बादशाह के साथ युद्ध में दिखाई

थी । शैली सीधी-सादी है, पर डिंगल-साहित्य की एक अच्छी रचना मानी जाती है ।

अज—राजा दशरथ के पिता, एक सूर्यवंशी राजा ।

अजगव (आजगव, पिनाक)—शिव का धनुष जो पृथु के जन्म के समय आकाश से गिरा था ।

अजमुख—दे० *दक्ष प्रजापति* ।

अजातशत्रु—१ युधिष्ठिर का एक नाम। २ मगध-नरेश बिंबसार का पुत्र ।

अजातशत्रु—**जयशंकर प्रसाद** का एक नाटक (१९२२ ई०) ।

मगध-सम्राट् बिंबसार की छलना और वासवी दो रानियाँ थीं । छलना के कुचक्रों द्वारा ही उसका पुत्र अजातशत्रु सम्राट् बना और बिंबसार अपना अधिकार छोड़ कर गौतम बुद्ध के उपदेश से भगवान् की उपासना में दिन व्यतीत करने लग गया । वासवी दहेज में कोशल-नरेश से मिले हुए काशी प्रांत की आय अपने पति के लिये सुरक्षित रखना चाहती थी । इसी से कोशल और मगध में युद्ध हुआ । कोशल-नरेश प्रसेनजित् के पुत्र विरुद्धक ने भी अपने पिता के विरुद्ध उपद्रव कर दिया । उसने शैलेंद्र डाकू बन और काशी जाकर मल्लिका के पति कोशल-सेनापति बंधुल की हत्या कर दी । इसके दो कारण थे, एक तो मल्लिका के प्रति वह आकर्षित था और दूसरे कोशल राज्य के प्रलोभन-वश वह अजातशत्रु का मित्र बना था । वासवी की पुत्री पद्मावती का विवाह कौशांबी-नरेश उदयन से हुआ था । उदयन की वासवदत्ता और मागंधी दो अन्य रानियाँ थीं । मागंधी के षड्यंत्र से उदयन पद्मावती की हत्या करने को प्रस्तुत हुआ पर सहसा रहस्य खुल गया । मागंधी काशी जा कर वेश्या बनी, जिसपर शैलेंद्र डाकू आसक्त हो गया । एक दिन शैलेंद्र श्यामा (मागंधी) वेश्या का गला दबा कर उसे मृत समझ कर चला गया, किंतु बुद्ध के यत्न से वह जीवित हो गई और भिक्षुणी बन गई । प्रसेनजित् और उदयन ने मगध पर आक्रमण करके अजातशत्रु को बंदी कर उसे कोशल भेज दिया । वहाँ कोशल-कुमारी बाजिरा अजातशत्रु पर आसक्त हो गई और उसने अजातशत्रु को मुक्त करना चाहा, कितु उसी समय वासवी और कोशल-नरेश ने वहाँ जाकर अजातशत्रु को मुक्त कर दिया । बाजिरा से अजातशत्रु का विवाह करवा कर वासवी दोनों के साथ मगध लौटी । बंधुल की हत्या में प्रसेनजित् का भी कुछ हाथ था, किंतु मल्लिका ने उसे क्षमा कर दिया और उसीके प्रयत्न से विरुद्धक तथा उसकी माता को भी राजा ने क्षमा कर दिया । अजातशत्रु के पुत्र उत्पन्न हुआ । तब वह पिता के महत्त्व को समझने लगा और बिंबसार के संमुख जाकर उसने क्षमायाचना की ।

नाटक की कथा की गति जटिल प्रवाहों व घुमावों के साथ बढ़ती है । षड्यंत्रों का ताँता-सा बँधा रहता है । इसमें पात्रों की भी बहुलता है । प्रतीत होता है कि *अजातशत्रु* द्वारा लेखक बुद्ध की महिमा वर्णन करना चाहता है, पर इसमें उसे पूर्ण सफलता नहीं मिली है । नाटक भी रंगमंच के अयोग्य है । प्रारंभिक रचना होने के कारण इसमें *चंद्रगुप्त*, *स्कंदगुप्त* व *ध्रुवस्वामिनी* की-सी प्रौढ़ता नहीं है ।

अजामिल—कान्यकुब्ज देश का एक ब्राह्मण जो पहिले बड़ा सदाचारी था, पर एक वेश्या के संसर्ग से बड़ा दुराचारी हो गया । भोग-विलास

और मद्यपान करते-करते भगवान् को यह बिलकुल भूल गया। मृत्यु के समय, यमराज के दूतों की भयंकर आकृति देख कर, यह अत्यंत भयभीत हो, अपने पुत्र 'नारायण' को पुकारने लगा। भगवान् के नामोच्चारण में इतनी शक्ति है कि वे प्रसन्न हो, स्वयं उपस्थित हो गये। इस प्रकार पापी अजामिल भगवान् का नामोच्चारण कर नरक में जाने से बच गया (*भा० ६.१-२*)।

अजीगर्त—एक निर्धन ब्राह्मण जिसने १०० गौओं के बदले अपने मध्यम पुत्र शुनःशेप को राजा **हरिश्चंद्र** के यज्ञ में बलि देने के लिये बेच दिया था (*ऐ० ब्रा० ७. १५-१७*)। इसका नाम ऋचीक भी मिलता है (*वा० रा० बा० ६१*)।

अज्ञातवास—किसी स्थान पर इस रूप में निवास कि कोई पता न पा सके। पांडवों ने विराट के यहाँ एक वर्ष का अज्ञातवास किया था। अज्ञातवास के समय द्रौपदी को भी एक वर्ष तक सैरंध्री का कार्य करना पड़ा था। सैरंध्री के वेश में द्रौपदी केशों के शृंगार में अत्यंत चतुर थी। युधिष्ठिर ने 'कंक' नामक ब्राह्मण बन कर राजमंत्री और सभासदों को पाँसे के खेल से प्रसन्न करने का कार्य स्वीकार किया। भीम 'वल्लभ' नाम से पाचक बने। अर्जुन ने 'बृहन्नला' नाम से अपने को नपुंसक घोषित किया और विराट-पुत्री उत्तरा और अंतःपुर की कन्याओं को संगीत और नृत्य कला की शिक्षा दी। नकुल 'ग्रथिक' नाम से अश्वपाल बने। सहदेव ने 'तंत्रिपाल' नाम से गौवों की सेवा का कार्य किया। अज्ञातवास के पश्चात् विराट-पुत्री उत्तरा का विवाह अर्जुन-पुत्र अभिमन्यु से होना स्थिर हुआ। तब संपूर्ण रहस्य खुल गया। अज्ञातवास की अवधि समाप्त हो जाने पर पाँचों पांडव और द्रौपदी प्रकट हो गये। दे० *कीचक*। (*म० वि० ७-१२*)।

अज्ञेय (१९११ ई०–)—कवि, उपन्यासकार और कहानी-लेखक। इनका पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' है। इनकी मुख्य रचनाएँ *भग्नदूत, चिंता, इत्यलम्, हरी घास पर क्षण भर* (काव्य-संग्रह) *शेखर एक जीवनी* (दो भाग, कई आलोचकों की दृष्टि में इस रचना में लेखक की आत्म-कथा का आभास है), *नदी के द्वीप* (उपन्यास), *जयदोल* (कहानी-संग्रह) आदि हैं। हिंदी-काव्य में **प्रयोगवाद** नामक धारा के ये अभिभावक माने जाते हैं। इनके उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक चित्रण पर अधिक महत्त्व दिया गया है।

अणीमांडव्य—दे० *मांडव्य*।

अतद्गुण—एक अर्थालंकार जिसमें कारण उपस्थित होने पर भी दूसरे के गुण के ग्रहण न करने का वर्णन किया जाता है। उ०—राखिय मेलि कपूर में, हींग न होति सुगंध। यहाँ हींग कपूर के साथ रह कर अपना गुण नहीं त्यागती और उसका गुण नहीं लेती।

अतिकाय—रावण का एक विशाल काय, वीर पुत्र जो लंका-युद्ध में लक्ष्मण द्वारा मारा गया (*वा० रा० यु० ७१*)।

अतिबरवै—विषमनि रवि अतिबरवै, समकल निधि साज (विषम पाद १२, सम पाद ९, मा० छंद, अंत जगण)। उ०—कवि समाज को बिरवा, भल चले लगाय।/ सींचन की सुधि लीजो, कहुँ मुरझि न जाय॥

अतिशयोक्ति—वह अर्थालंकार जिसमें किसी वस्तु वा घटना का चमत्कारपूर्ण वर्णन वास्त-

विकता से बढ़कर किया जाता है। उ०—गिरिराज का भाल गगन का चुंबन कर रहा है। इसके सात भेद हैं—

१ *रूपकातिशयोक्ति*—में केवल उपमान द्वारा उपमेय का बोध कराते हुए लोकसीमोल्लघन होता है। उ०—कनकलतानि इंदु, इंदु माहि अरविंद, भरें अरविंद ते बुंद मकरंद के। यहाँ शरीर और मुखादि के सौंदर्य का वर्णन करने के लिये उन्हें क्रमशः कनकलता, इंदु आदि ही कह दिया गया है, वर्णनीय विषय शरीर, मुखादि का नाम ही नहीं दिया गया।

२ *सापह्नवातिशयोक्ति*—में अतिशयोक्ति अपह्नुति से मिली रहती है। उ०—तुम्हारी वाणी में ही अमृत है, जो उसे चंद्रमा मे बतलाते हैं, वे भ्रांति में हैं।

३ *भेदकातिशयोक्ति*—में भेद न होने पर भी भेद का कथन किया जाता है। अन्य, और आदि शब्द इसके वाचक होते हैं। उ०—औरै रीति औरै रंग औरै साज औरै संग,/औरै बन औरै छन औरै मन ह्वै गये।"

४ *संबंधातिशयोक्ति*—में असंबंध में संबंध और संबंध में असंबंध दर्शाना। उ०—श्री रघुनाथ के हाथन सांमुहे कल्पलता सनमान करै को।

५ *अक्रमातिशयोक्ति*—में हेतु और कार्य साथ ही होते हैं। उ०—अजामील के प्रान, इत निकसे हरि नाम जुत।/ उत वह बैठि विमान, तब लगि पहुंच्यौ हरि-सदन॥ यहाँ हरि नाम लेते हुए पापी अजामिल के प्राणों का निकलना कारण है, तथा उसका विमान में बैठ कर बैकुंठ धाम पहुँचना कार्य है। इन दोनों का एक साथ वर्णन किया गया है।

६ *चपलातिशयोक्ति*—में हेतु के ज्ञान मात्र से कार्य हो जाता है। उ०—तब सिव तीसर नैन उधारा। चितवत काम भयो जरि छारा॥

७ *अत्यंतातिशयोक्ति*—में फल हेतु के पहिले हो जाता है। उ०—उदय भयौ पीछे ससी, उदयगिरि के सृंग।/ तुव मन सागर राग की, प्रथमहि बढ़ी तरंग॥ यहाँ भी चंद्रोदय कारण से पहिले ही समुद्र की तरंग का बढ़ना कार्य हो गया है।

अतुकांत—वह पद्य जिसमें पदांत में तुक न हो। हिंदी में स्वच्छंद कविता के युग में **श्रीधर पाठक** और **अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'** का ध्यान इस ओर गया। हरिऔध ने *प्रिय-प्रवास* अतुकांत छंदों में ही लिखा।

अत्यंतातिशयोक्ति—दे० *अतिशयोक्ति*।

अत्युक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें सुंदरता, शूरता, उदारता आदि का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन हो। उ०—ते सिरजा सिव राज दए कविराजन को गजराज गरुरे। सुंडन सो पहिले जिन सोखि के फेरि महामद सो नद पूरे॥—*भूषण*।

अत्रि—ब्रह्मा के मानसपुत्र *(भा० ३.१२ आदि)*, एक वैदिक ऋषि और प्रजापति जिनकी पत्नी अनसूया थीं *(३.२१-२४)*। अनसूया से इन्हें दत्तात्रेय, दुर्वासा और सोम नामक पुत्र प्राप्त हुए *(४.१)*। वनवास के समय राम इनके आश्रम में पधारे थे। इनका आश्रम **चित्रकूट** के निकट था। एक बार राहु ने सूर्य और चंद्र को ग्रस कर सर्वत्र अंधकार कर दिया। देवताओं की प्रार्थना पर अत्रि ने चंद्रमा बनकर अंधकार का नाश किया था। ये धर्मशास्त्र के प्रवर्त्तक थे। इनके बनाए धर्मशास्त्र का नाम *अत्रि संहिता* है।

अदन—यहूदी, ईसाई और इस्लाम मतों के अनुसार स्वर्ग का वह नंदनवन जहाँ ईश्वर ने **आदम** को बनाकर रखा था।

अदिति—पुराणानुसार दक्ष की पुत्री और कश्यप की पत्नी। ये देवताओं की माता थीं *(ऋ० १०.६२.२)*। विष्णु ने इन्हीं के गर्भ से जन्म ग्रहण किया था *(म० अनु० ८३)*। **नरकासुर** ने इनके दो कुंडल छीन लिये थे। कृष्ण ने नरकासुर का वध कर कुंडल अदिति को लौटा दिये थे *(म० उ० ४८)*।

अद्भुत—पीत वर्ण और आश्चर्य कारक वस्तु से उत्पन्न होने वाला, गंधर्व देवता वाला रस। विस्मय स्थायी-भाव, आश्चर्यजनक वस्तु आलंबन; उसकी आश्चर्य कारी दशाएँ उद्दीपन; स्तंभ, स्वेद, रोमांचादि अनुभाव; वितर्क और हर्षादि इसके संचारी-भाव हैं। उ०—अखिल भुवन चर अचर सब, हरि मुख में लखि मातु। चकित भई गद्गद वचन, विकसित दृग पुलकातु॥ यहाँ भगवान् आलंबन, मुख में भुवनों का दीखना उद्दीपन; नेत्र विकास, गद्गद वचन, रोमांच, चकित हो जाना आदि अनुभाव; त्रास, भ्रांति, हर्ष आदि संचारी-भाव और विस्मय स्थायी-भाव हैं।

अद्वैतवाद—वह सिद्धांत जिसमें ब्रह्म ही को जगत् का अभिन्ननिमित्तोपादान कारण मान कर संपूर्ण प्रत्यक्षादि सिद्ध विश्व को ब्रह्म में आरोपित किया जाता है, अर्थात् यह संसार मिथ्या है तथा ब्रह्म से ही सकल (जड़, चेतन) विश्व की उत्पत्ति हुई है। इसके अनुयायी कहते हैं कि जैसे रस्सी के स्वरूप को न जानने से सर्प का भ्रम होता है, वैसे ही ब्रह्म के रूप को न जानने से संसार दिखाई देता है। वस्तुतः उसकी कोई सत्ता नहीं है। अंत में अज्ञान दूर हो जाने पर केवल ब्रह्म ही ब्रह्म प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त अद्वैतवादियों का कथन है कि जीवात्मा की भी ब्रह्म से भिन्न कोई सत्ता नहीं है। माया के कारण उसकी पृथक् प्रतीति होती है; वस्तुतः वह ब्रह्म ही है। अद्वैतवाद का सिद्धांत एक सुप्रसिद्ध श्लोक द्वारा निम्न शब्दों में प्रकट किया गया है—*श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथकोटिभिः। / ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव नापरः॥*

अधिक—एक अर्थालंकार जिसमें आधेय और आधार का उत्कर्ष कहा जाता हो। प्रथम में 'आधेय' की अधिकता होती है। उ०—जिनके अतुल विलोकियत पानिप पारावार।/ उमडि चलत तिन दृगन भरि तो मुख रूप अपार॥ द्वितीय में 'अधार' की अधिकता रहती है। उ०—तुम पूछत कहि मुद्रिके, मौन होति यहि नाम,/ कंचन की पदवी दई तुम बिन या कहं राम।

अधिरथ—धृतराष्ट्र का सारथि। इसकी पत्नी राधा ने कर्ण को पाला था *(म० आ० ६७, १३७)*।

अधिराज—**करुष** (१) का एक नाम।

अध्यात्म रामायण—ब्रह्मांडपुराणांतर्गत सप्तकांडात्मक ग्रंथ विशेष। यह *वाल्मीकि रामायण* के आधार पर संस्कृत में एक रामायण है। इसके लेखक अज्ञात हैं। कुछ लोग **वेदव्यास** को इसके रचयिता मानते हैं। तुलसीदास-कृत *रामचरितमानस* का आधार यही रामायण है।

अनन्य—दे० *अक्षर अनन्य*।

अनन्वय—एक अर्थालंकार जिसमें एक ही वस्तु को उपमेय और उपमान दोनों के रूप

में वर्णन किया जाता है। उ०—तेरे दृग से दृग अली तेरेई अभिराम।

अनसूया—अत्रि ऋषि की पत्नी *(भा० ३. २१-२४)*। इन्होंने घोर तपस्या की और शंकर के वरदान से दत्तात्रेय, दुर्वासा और सोम नामक पुत्र प्राप्त किये *(४. १)*। वनवास के समय राम जब अत्रि-आश्रम में गये, तब अनसूया ने सीता को उपदेश दिया था *(वा० रा० अयो० ११७-१६)*।

अनातोले फ्रांस—दे० *फ्रांस, अनातोले*।

अनाहद (अनाहत)—१ योगी जब समाधिस्थ होता है तो उसके शून्य अथवा आकाश (ब्रह्मरंध्र के समीप के वातावरण) में एक प्रकार का संगीत होता है जिससे वह मस्त होकर ईश्वर की ओर ध्यान लगाए रहता है। यह संगीत ब्रह्मरंध्र में निरंतर होता रहता है। २ शब्दयोग में वह शब्द वा नाद जो दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों कानों की लवें बंद करके ध्यान करने से सुनाई देता है।

अनिरुद्ध—कृष्ण-तनय प्रद्युम्न के पुत्र *(भा० १०. ६०)*। इनका विवाह रुक्मी-पौत्री रोचना से हुआ था *(१०. ६१)*। बाणासुर-पुत्री उषा (दे० यथा०) से इनका गंधर्व विवाह हुआ था *(१०. ६२-६३)*।

अनुकूला—भीत न गंगा, जहँ अनुकूला (भ त न ग ग=११ (५, ६) व० छंद)। उ०—अंगद रक्षा रघुपति कीन्ही,/ सोध न सीता जल थल लीन्ही।

अनुप्रास—एक शब्दालंकार जहाँ वे ही व्यंजन-वर्ण बार-बार आकर काव्य-रचना की शोभा को बढ़ा देते हों। यह पाँच प्रकार का है—

१ *छेकानुप्रास*—में अनेक व्यंजनों की उसी क्रम से एक बार आवृत्ति हो। उ०—विश्व बदर इव, घृत उदर, जोवत सोवत सूप॥ यहाँ दर दर, वत वत अनेक वर्णों की एक-एक आवृत्ति हुई है।

२ *वृत्यानुप्रास*—में एक या अनेक वर्णों की दो या दो से अधिक बार आवृत्ति हो। उ०—चंदन चंदक चांदनी, चंद साल नववाल। नित ही चित चाहत चतुर, ये निदाघ के काल॥

३ *श्रुत्यनुप्रास*—में तालु आदि एक ही स्थान से उच्चरित व्यंजनों का सादृश्य होता हो। उ०—ता दिन दान दीन्ह धन, धरणी। गाय न जाय कछुक कुल करनी॥

४ *अंत्यानुप्रास*—छंद के पदांत में वर्ण साम्य होने पर होता है। उ०—बंदौ खल जस सेस सरोषा, सहस बदन बरनै पर दोषा।

५ *लाटानुप्रास*—में शब्दों का अन्वय भेद से भिन्न तात्पर्य निकलता हो। उ०—पूत कपूत तो क्यों धन संचय।/ पूत सपूत तो क्यों धन संचय। यदि पुत्र सपूत है, तो धन जोड़ने की आवश्यकता नहीं है, और यदि कपूत है, तो भी धन जोड़ने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह जोड़ा हुआ धन खो देगा।

अनुभाव—अलंकार-शास्त्र के अनुसार रस के चार अंगों में से एक। आंतरिक भावों को सूचित करने वाले बाह्य अंग विकार। जैसे—क्रोध में मुँह लाल हो जाना। आश्रय की ही चेष्टाएँ अनुभाव होती हैं; आलंबन की चेष्टाएँ उद्दीपन होती हैं। प्रत्येक रस के पृथक्-पृथक् अनुभाव होते हैं। इनके चार भेद हैं—*कायिक* (कटाक्ष आदि कृत्रिम आंगिक चेष्टाएँ), *मानसिक* (अंतःकरण की वृत्ति से उत्पन्न आदि),

आहार्य (आरोपित या कृत्रिम वेष रचना) और *सात्विक* (शरीर के अकृत्रिम अंगविकार)। इस प्रकार रति आदि स्थायी-भावों से सारी चेष्टाएँ अनुभाव की कोटि में आती हैं। स्त्रियों के अयत्नज, स्वभावज और अंगज अलंकार (दे० *नायिकालंकार*) तथा पुरुषों के सात्विक गुण (दे० *यथा०*) भी इसी में गिने जाते हैं।

अनुमितिवाद—रस की व्याख्या के ४ संप्रदायों में से एक। दे० *रस संप्रदाय*।

अनुराग बाँसुरी—**नूरमुहम्मद** (आ० का० १७४४ ई०) का एक काव्य जिसमें शरीर, जीवात्मा और मनोवृत्तियों आदि को लेकर पूरा अध्यवसित रूपक खड़ा किया गया है। इसमें स्पष्ट रूप से इस्लाम का प्रचार है ('संख-नाद की रीति मिटावै')। लेखक ने इसमें अपनी बोली को 'मुहम्मदी जन की बोली' कहा है।

अनूपदेश—दक्षिण मालवा।

अनूपलाल मंडल (१९०० ई०–)—बिहार निवासी उपन्यासकार। *समाज की वेदी पर*, *ज्योतिर्मयी*, *मीमांसा* आदि के रचयिता।

अनूपशर्मा (१९०० ई०–)—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *सिद्धार्थ* (१९३७, प्रबंध-काव्य) और *वर्द्धमान* (महावीर के जीवन पर लिखित एक महाकाव्य) हैं। ये दोनों काव्य संस्कृत-छंदों में लिखे गये हैं।

अन्नपूर्णा—अन्न की अधिष्ठात्री देवी। दुर्गा का एक रूप।

अन्योन्य—वह अर्थालंकार जिसमें दो एक ही क्रिया को परस्पर करते हों। उ०—रात्रि चंद्रमा से शोभित होती है और चंद्रमा रात्रि से।

अपभ्रंश—जब साहित्यिक **प्राकृत** बोलचाल की प्राकृत से पृथक् हो गई, तब बोलचाल की भाषा स्वतंत्र रूप से विकसित होने लगी और वह अपभ्रंश कहलाई। इसको तीसरी प्राकृत भी कहा जाता है। साहित्यिक लोग भी अशिक्षित या कम पढ़े लोगों की भाषा को अपभ्रंश अर्थात् बिगड़ी हुई भाषा कहते थे। कालांतर में इसमें भी साहित्य की रचना होने लगी। **हेमचंद्र** ने इसका व्याकरण भी रच दिया। गुजरात के जैनाचार्यों ने इस भाषा को अपनाया। इस भाषा का जैन धर्मकथा-साहित्य बहुत समृद्ध है। जिस प्रकार महाराष्ट्री, **शौरसेनी**, **मागधी**, **अर्द्धमागधी**, और **पैशाची** प्राकृत मानी गई हैं, उसी प्रकार ये सब भाषाएँ अपभ्रंश भी मानी गई हैं, यद्यपि कुछ विद्वान् इस मत से सहमत नहीं हैं। शौरसेनी अपभ्रंश से ही ब्रज-भाषा की उत्पत्ति हुई।

दंडी (ल० ५०० ई०) ने *काव्यादर्श (१.३६)* में अभीरादि की साहित्य में प्रयुक्त भाषा को अपभ्रंश कहा है (*आभीरादिगिरः काव्यष्वपभ्रंश इति स्मृताः*)। रुद्रट (ल० ९००) ने अपभ्रंश को प्राकृत और संस्कृत के समकक्ष स्थान दिया है और इसके अनेक भेद माने हैं (*प्राकृत संस्कृत मागधपिशाच भाषाश्च सूरसेनी च। / षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादपभ्रंशः॥* (काव्यालंकार २.१२)। *काव्यालंकार* के टीकाकार नमिसाधु (ल० १०६९) ने अपभ्रंश को प्राकृत ही कहा है और इसके उपनागर, आभीर और ग्राम्य ये तीन भेद माने हैं। इस प्रकार उपनागर नागरिकों की, आभीर आभीरों की और ग्राम्य ग्रामीण की बोलियाँ थीं। *प्राकृत सर्वस्व* के कर्त्ता आचार्य मार्कंडेय ने तीन प्रकार की अपभ्रंश भाषाएँ मानी हैं—**नागर**, **ब्राचड़** और **उपनागर**।

अपभ्रंश भाषाओं का समय ५०० ई० से १५०० ई० तक माना जा सकता है।

अपर्णा—पार्वती। दक्ष प्रजापति के यज्ञ में भस्म होने के पश्चात् सती हिमालय और मेना की पुत्री बनीं। अपने पूर्व-पति की प्राप्ति के लिये इन्होंने वृक्षों के पत्ते भक्षण कर तपस्या प्रारंभ की, किंतु अपनी उद्देश्य-प्राप्ति में असफल रहीं। बाद में इन्होंने पत्ते भी खाना त्याग दिया। पत्ते खाना त्यागने से इनका नाम अपर्णा पड़ा। कालांतर में इन्हें शिव की प्राप्ति हुई *(ब्रह्मांड० ३.१०.१-२१, ह० वं० १.१८)*।

अपह्नुति—वह अर्थालंकार जिसमें प्रस्तुत मुखादि में मुखत्व का निषेध करके अप्रस्तुत चंद्रादि का आरोप किया जाए। इसके छः भेद हैं—

१ *शुद्धापह्नुति*—में नकार भाव वाले शब्द लाकर किसी का निषेध करके उसे दूसरा ठहराया जाता है। उ०—बंधु न होय मोर यह काला। यहाँ बंधु विभीषण में बंधुत्व का निषेध करके मृत्युपन का आरोप किया जा रहा है।

२ *हेत्वपह्नुति*—में उपमेय का निषेध एवं उपमान का स्थापन युक्तिपूर्वक किया जाए। उ०—ये नहिं फूल गुलाब के, दाहत हियो अपार,/ बिनु घनस्याम अराम में लागी दुसह दवार।—*पद्माकर*।

३ *पर्यस्तापह्नुति*—में उपमान के धर्म का निषेध उपमेय में स्थापित करने के लिये किया जाए। उ०—है न सुधाधर में, सुधा है तो अधर में,/ सुकरमै सराहौ प्यारी रसना हमारी के।—*दूलह*।

४ *भ्रांतापह्नुति*—में किसी वस्तु का अनिश्चित वर्णन करते हुए भ्रांति के बहाने से किसी अन्य द्वारा वह कथन दूसरा ठहराए जाने पर सत्य वस्तु कहकर उसका चमत्कारपूर्ण स्पष्टीकरण होता है। उ०—कह प्रभु हँसि जनि हृदय डराहू। लूक न, असनि, केतु नहिं राहू।। / ये किरीट दसकंधर केरे। आवत बालि-तनय के प्रेरे।। यहाँ तथ्य का कथन करके राम रावण के मुकुटों के संबंध में वानरों की शंका का निवारण कर रहे हैं।

५ *छेकापह्नुति*—जिसमें किसी शब्द से खुलते हुए असली भेद को छिपाने के लिये वक्ता उसकी दूसरी व्याख्या कर देता है। उ०—आँखें अति शीतल भई दीन्हों ताप निवारी। क्यों सखि पीतम के लखे, ना सखि ससिहिं निहारि।

६ *कैतवापह्नुति*—में छल, मिसि, व्याज आदि शब्दों की सहायता से प्रकृत वस्तु का निषेध करके उसमें अन्य की स्थापना की जाती है। उ०—गग महीप महाराज की, निसित असित असि व्याज। / हनत कुपित जमराज नित तिनके सत्रु-समाज।।

अप्रस्तुत—१ उपमान। २ जो प्रस्तुत न हो। ३ अप्रासंगिक। अप्रधान। गौण। दे० *प्रस्तुत*।

अप्रस्तुत प्रशंसा—एक अलंकार जिसमें किसी अप्रस्तुत वस्तु के कथन द्वारा प्रस्तुत का प्रतिपादन किया जाता है। उ०—सब पक्षियों में वह चातक ही धन्य है, जो इंदु को छोड़ किसी से याचना नहीं करता। यहाँ अप्रस्तुत चातक के वर्णन द्वारा किसी प्रस्तुत मनस्वी याचक की प्रशंसा की गई है।

१ *सारूप्य निबंधना*—में अप्रस्तुत विशेष से प्रस्तुत का वर्णन होता है। उ०—मान सहित विष खाय के संभु भये जगदीस ।/ बिन आदर अमृत भख्यो, राहु कटायो सीस ।

२ *कार्य निबंधना*—जहाँ अप्रस्तुत कार्य का कथन करके प्रस्तुत कारण को प्रकट किया जाता है। उ०—सहि उपमान जु रहत चुप, ता नर सो वर धूरि। जो पादा हत झट उठत, चढ़त हतक-सिर भूरि ।।

३ *कारण निबंधना*—में प्रस्तुत कारणों से कार्य निकलता है । उ०—लई सुधा सब धीनि विधि तो मुख रचिने काज;/ सो अब याही सोच सखि, होत छीन दुजराज ।

४ *सामान्य निबंधना*—में विशेष प्रस्तुत के लिये सामान्य प्रस्तुत कहा जाता है। उ०—पछितै हैं कारज परे, पै हैं विषम विषाद ।/ हे नृप ! गज को भार जे, देत गधे पर लाद ।।

५ *विशेष निबंधना*—में समान अप्रस्तुत के वर्णन से प्रस्तुत बोध होता है। उ०—स्वारथ सुकृत न स्रम वृथा देखु विहंग विचार ।/ बाज पराये पानि पर तू पच्छीहिं न मारि।। यहाँ सदृश अप्रस्तुत बाज से सदृश प्रस्तुत राजा जयसिंह की प्रतीति होती है ।

अप्सरा—कल्प के प्रारंभ में देवताओं द्वारा सृष्टि की गई देवांगनाएँ। किसी-किसी पुराण में अप्सराओं को कश्यप की कन्याएँ बताया है। जब पृथ्वी पर कोई व्यक्ति देवत्व की प्राप्ति के लिये विशेष तपस्या करता है, तब देवराज से प्रेरित होकर अप्सराएँ विघ्न डालती हैं । **रंभा, मेनका, घृताची, तिलोत्तमा** आदि प्रसिद्ध अप्सराएँ हैं ।

अफ़लातून (४२७-३४८ ई० पू०)—प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक जो **सुक़रात** के शिष्य और **अरस्तु** के गुरु थे । ये जहाँ प्रसिद्ध दार्शनिक थे, वहाँ महान् राजनीतिज्ञ भी । इन्होंने आदर्श समाज स्थापित किया और समाज-सुधार के निमित्त कई पुस्तकें लिखीं । इनमें *अफ़लातून की सामाजिक व्यवस्था* और *प्रजातंत्र* नामक पुस्तकें अत्यंत प्रसिद्ध हैं ।

अबूजेहल—मुहम्मद के चचा । इनके विरोध के कारण **मुहम्मद** को मक्का छोड़ना पड़ा था।

अबूबक्र—इस्लाम के प्रथम खलीफा और **मुहम्मद** की पत्नी आयशा के पिता ।

अब्दुर्रहमान (आ० का० १०१० ई०)—मुलतान निवासी, एक मुसलमान कवि और *संनेह रासक* (संदेश रासक) के रचयिता। इनके इस ग्रंथ में वियोगिनी का संदेश विविध ऋतुओं के उद्दीपन से वर्णित है । इनकी कविता पर भारतीय आदर्शों का बड़ा प्रभाव है। *संनेह रासक* में रासक नामक छंद का प्रयोग हुआ है । बाद में रासक शब्द गेय पदों का पर्याय हो गया। यह काव्य अपभ्रंश में हैं।

अब्दुर्रहीम खानखाना (१५५३-१६२६ ई०)—अकबर के अभिभावक प्रसिद्ध मुग़ल सरदार बैरमखाँ के पुत्र, हिंदी के प्रसिद्ध कवि, जो 'रहीम' के नाम से प्रसिद्ध हैं। अकबर के समय में ये प्रधान सेनापति और मंत्री थे और अनेक बड़े-बड़े युद्धों में भेजे गये थे । इन्होंने मुग़ल-साम्राज्य के लिये अनेक प्रदेश जीते थे। इस कारण जागीर में इन्हें बड़े-बड़े सूबे और गढ़ मिले थे । ये बड़े दयालु और दानी थे। दानशीलता में तो इनकी तुलना कर्ण से की जाती है। इनकी सभा विद्वानों और कवियों

से सदा भरी रहती थी। गंग कवि को इन्होंने एक बार ३६ लाख रुपये दिये थे। तुलसीदास से इनकी विशेष घनिष्टता थी। युद्ध में धोखा देने के अपराध में एक बार जहाँगीर के समय में इनकी सारी जागीर ज़ब्त करली गई और ये क़ैद कर लिये गये थे। क़ैद से छूटने पर इनकी आर्थिक दशा कुछ दिनों तक बड़ी दयनीय रही। इस प्रकार इन्होंने अपने जीवन में बड़े उतार-चढ़ाव देखे।

रहीम सतसई या *दोहावली*, *बरवैनायिका भेद*, *शृंगार सोरठा*, *मदनाष्टक*, *रासपंचाध्यायी* आदि इनके ग्रंथ हैं। नगर शोभा, फुटकल बरवै, फुटकल कवित्त सवैयै इनकी अन्य रचनाएँ हैं। इनका एक पूर्ण संग्रह *रहीम रत्नावली* के नाम से निकला है। यद्यपि रहीम अपने दोहों के लिये ही प्रसिद्ध हैं, तथापि इन्होंने बरवै, कवित्त, सवैया, सोरठा, पद में भी रचना की है। ये तुर्की, फ़ारसी, अरबी और संस्कृत भाषाओं के भी विद्वान् थे। इन्होंने फ़ारसी का एक दीवान भी बनाया था और *वाक़यात-बाबरी* का तुर्की से फ़ारसी में अनुवाद किया था। कुछ संस्कृत श्लोकों की रचना भी की थी।

रहीम में जीवन की सच्ची परिस्थितियों के मार्मिक रूप ग्रहण करने की अद्वितीय क्षमता थी। इनके दोहों में कोरी नीति नहीं, जीवन की अनुभूति है। *बरवैनायिका भेद* में बड़े सरस बरवै हैं। ये बरवै अवधी भाषा में हैं। रहीम ही बरवै छंद के जन्मदाता माने जाते हैं। तुलसीदास के समान रहीम भी ब्रज और अवधी—पश्चिमी और पूर्वी—दोनों काव्य-भाषाओं में समान कुशल थे।

अबुलफ़ज़ल (१५५१-१६०२ ई०)—अकबर के मंत्री, इतिहासकार और फारसी भाषा में *अकबर नामा* तथा *आईन-ए-अकबरी* (अनू० १६३४) के रचयिता।

अभयदेव सूरि (१०१५-७८ ई०)—एक जैन आचार्य तथा *जय तिहुअण स्तोत्र* (अपभ्रंश में) और संस्कृत-ग्रंथों की टीकाओं के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

अभिज्ञानशाकुंतल—**कालिदास** का संस्कृत भाषा में एक प्रसिद्ध नाटक (अनू०)। यद्यपि इस नाटक की कथा का आधार *महाभारत* है, तथापि कालिदास ने *शाकुंतल* की कथा को परिमार्जित एवं सुंदर बनाने के लिये उसमें कुछ परिवर्तन किये हैं। कालिदास के *शाकुंतल* की कथा से मिलती जुलती कथा *पद्म० स्व०* में पाई जाती है। दे० *शकुंतला*, *नाटक*।

अभिधा—शब्द की वह मुख्य शक्ति जिसके द्वारा किसी शब्द का वह अर्थ प्रतीत होता है, जिसमें उसका संकेतग्रह हो चुका होता है। किसी शब्द को सुनकर पहिले यही अर्थ उपस्थित होता है, जैसे बैल शब्द को सुनकर पहिले सींगों वाले उस विशेष पशु का ही बोध होता है।

अभिनय—अवस्था का अनुकरण। राम आदि पात्रों की अवस्था, स्वरूप, कार्य आदि का नट या अभिनेता द्वारा अनुकरण। यह चार प्रकार का होता है—१ *आंगिक*—शरीर-चेष्टा आदि का अनुकरण, २ *वाचिक*—बातचीत का अनुकरण, ३ *आहार्य*—भूषण, वस्त्र आदि का अनुकरण, और ४ *सात्विक*—स्तंभ आदि सात्विक भावों द्वारा किया गया अनुकरण।

अभिनवगुप्त (आ० का० ९९३ और १०१५ ई० के मध्य)—कश्मीर निवासी, एक प्रसिद्ध

आलंकारिक और संस्कृत के विद्वान्। *भैरवस्तोत्र, प्रत्यभिज्ञाविमर्शिनी, वहतीवृत्ति, तंत्रलोक, बोधपंचक* और *लोचन* (आनंदवर्द्धन-कृत प्रसिद्ध ध्वनि ग्रंथ *ध्वन्यालोक* की टीका) के रचयिता।

अभिमन्यु—अर्जुन और सुभद्रा का पुत्र (*म० आ० २२१*)। महाभारत-युद्ध में इसने चक्र-व्यूह में प्रवेश कर **शल्य** के बंधु को, दुर्योधन-पुत्र लक्ष्मण आदि को मार दिया तथा अनेक कौरव वीरों को परास्त कर दिया। यह देखकर द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, कृतवर्मा आदि ने मिलकर अभिमन्यु को श्रांत कर दिया। दुःशासन-पुत्र ने श्रांत अभिमन्यु को गदाप्रहार से मूच्छित कर दिया। जब यह सुध में आ रहा था, तो दुःशासन-पुत्र ने एक और गदाप्रहार किया जिससे यह मृत्यु को प्राप्त हुआ। **जयद्रथ** ने भीम आदि को रोके रखा जिससे वे अभिमन्यु का सहायता न कर सके (*म० द्रो० ३३-४६*)। इस प्रकार अभिमन्यु की मृत्यु का मुख्य कारण जयद्रथ था। अभि-मन्यु का विवाह विराट-तनया **उत्तरा** से हुआ था। अभिमन्यु के पर्य्याय०—सौभद्र, पार्थ-नंदन आदि।

अभिव्यंजनावाद (*Expressionism*)—चित्र-कला, साहित्य आदि में **प्रभाववाद** (*Impression-ism*) के विरुद्ध वह विद्रोह, जो सहृदय के हृदय को बाह्य जीवन से हटाकर आंतरिक जीवन की ओर ले जाता है। एक अभिव्यंजना-वादी चित्रकार **प्रकृति** का अनुकरण सर्वथा उसी रूप में नहीं करता; वह अपने भाव को प्रकट करने के लिये प्रकृति के रूप में अदल-बदल भी कर देता है। इसके लिये वह यहाँ तक भी बढ़ जाता है कि उसके वस्तुचित्रण में ऐसी आकृतियाँ और रंगों का प्रयोग हो, जो बाह्य प्रकृति में नहीं पाये जाते।

क्रोचे (*Benedetto Croce;* १८६६ ई०-) का मत है कि काव्य में अभिव्यंजना (*express-ion*) ही सब कुछ है। सौंदर्य स्वयंप्रकाश ज्ञान (*intuition*) की सफल अभिव्यक्ति है और वह बौद्धिक और नैतिक मान्यताओं से पूर्णतया स्वतंत्र है। वह स्वयं पर्याप्त है और पूर्ण है। 'स्वयंप्रकाश ज्ञान का अभिप्राय है मन में आप से आप—बिना बुद्धि की क्रिया या सोच-विचार के—उठी हुई मूर्त्त भावना, जिसको वास्त-विकता-अवास्तविकता का कोई सवाल नहीं। यह मूर्त्त भावना या कल्पना आत्मा की अपनी क्रिया है जो दृश्य जगत् के नाना रूपों और व्यापारों को (अर्थात् मन में संचित उनकी छाया और संस्कारों को) द्रव्य या उपा-दान की तरह लेकर हुआ करती है। मनुष्य की आत्मा द्रव्य की प्रतीति मात्र करती है, उसकी सृष्टि नहीं करती। स्वयंप्रकाश ज्ञान का साँचे में ढलकर व्यक्त होना ही कल्पना है, और कल्पना ही मूल अभिव्यंजना है जो भीतर होती है और शब्द, रंग आदि द्वारा बाहर प्रकाशित की जाती है। यदि सचमुच प्रकाशज्ञान हुआ है, भीतर अभिव्यंजना हुई है, तो वह बाहर भी प्रकाशित हो सकती है।'—*रामचंद्र शुक्ल*। क्रोचे आगे कहते हैं कि साधारणतः लोग कवि के शब्दों, गायकों के स्वरों, चित्रकार के खींचे हुए आकारों को ही अभिव्यंजना समझा करते हैं। पर कला की वास्तविक अभिव्यंजना तो है कल्पना, जो एक आध्यात्मिक क्रिया है। शब्द, रंग, भौतिक रूप आदि तो कल्पना को, आध्यात्मिक वस्तु को, प्रकाशित करने वाली 'भौतिक अभिव्यंजना' है।

रामचंद्र शुक्ल ने अभिव्यंजनावाद को वक्रोक्तिवाद का विलायती उत्थान बताया है, पर कई आलोचकों की दृष्टि में अभिव्यंजनावाद

और वक्रोक्तिवाद में पर्याप्त अंतर है।

एक आदर्शस्वरूप अभिव्यंजनात्मक नाटक में एक मुख्य पात्र होता है, जिसमें आंतरिक संघर्ष दिखाया जाता है। यह संघर्ष मुख्यतः मानसिक, मनोवैज्ञानिक अथवा आध्यात्मिक होता है। संसार और उसके प्राणी सुप्रकट नाटकीय प्रतीकों में रूपांतरित कर दिये जाते हैं और पात्र की तीव्र दृष्टि के माध्यम द्वारा दिखाये जाते हैं। इस प्रकार जब किसी पात्र के मस्तिष्क के भीतर का संसार घूमता है, तो रंग-मंच भी तेज़ी से घूमना प्रारंभ कर देता है। बहुधा पदार्थ और प्राणी स्वप्नसम (*dream-like*), विकृत और अवास्तविक प्रतीत होते हैं। पात्र व्यक्तित्व-प्रधान की अपेक्षा वर्गगत होते हैं। उनके नाम अंक और संख्या (जैसे 'श्री शून्य' या केवल 'पुरुष' और 'स्त्री') रख दिये जाते हैं। भाषा कटी-फटी और संक्षिप्त, और कार्य शृंखला-रहित होता है।

अभिव्यक्तिवाद—रस की व्याख्या के ४ संप्रदायों में से एक। दे० *रस संप्रदाय*।

अभिसारा (अभिसारि)—पश्चिम पाकिस्तान में हज़ारा नामक ज़िला। इसे अर्जुन ने जीता था। डा० स्टाइन (Stein) ने झेलम और चनाब नदियों के बीच के पहाड़ी प्रदेश को अभिसारा माना है।

अभिसारिका—काम के वशीभूत होकर गुप्त रूप से नायक से मिलने के लिये जाना अभिसार कहलाता है। अभिसार के लिये जाने वाली नायिका को अभिसारिका कहते हैं।

अमरकंटक—मेकल पर्वत का एक भाग जहाँ से नर्मदा और सोन नदियाँ निकली हैं।

अमरनाथ—इस्लामाबाद से ६० मील ऊपर कश्मीर में स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थ जहाँ श्रावण की पूर्णिमा को बर्फ़ के बने हुए शिवलिंग के दर्शन होते हैं।

अमरसिंह (वर्त्त० ४०० ई० ?)—*अमरकोश* (संस्कृत के एकार्थक तथा अनेकार्थक शब्दों का संग्रह) के रचयिता।

अमरावती—विश्वकर्मा द्वारा सुमेरु पर्वत पर रचित स्वर्ग में इंद्र की राजधानी। पर्य्याय०—देवपुरी, इंद्रपुरी आदि।

अमरु (आ० का० ८५० ई०)—संस्कृत के एक कवि और *अमरु शतक* (अनू०, इसके १०० श्लोकों में प्रेमी के आनंद, निराशा, क्रोध और भक्ति आदि के मनोविकारों का चित्रण है) के रचयिता।

अमृत—१ एक पेय जिसके पान करने वाला अमर हो जाता है। जब पृथु के भय से पृथ्वी गौ बनी तब देवताओं ने इंद्र को बछड़ा बना कर गौ से अमृत निकाला, पर दुर्वासा के शाप से अमृत समुद्र में गिर गया। देवताओं और दैत्यों ने **समुद्रमंथन** कर इसे निकाला। दे० *राहु* तथा *मोहिनी*। अमृत के पर्य्याय०—पीयूष, सुधा आदि। २ योग के भाषानुसार ब्रह्मरंध्र में स्थित सहस्र-दल-कमल के मध्य में एक योनि जिसका मुख नीचे की ओर है। इसके मध्य में चंद्राकार स्थान है जिससे सदैव अमृत का प्रवाह होता है। यह इड़ा नाड़ी द्वारा बहता है। यदि योगी इस अमृत का प्रवाह कंठ को बंद करके रोक ले तो इसका उपयोग शरीर की वृद्धि ही में होता है। इसे महारस भी कहते हैं।

अमृतधुनि—अमृतधुनि दोहा प्रथम, चौबिस कल सानंद;।/आदिअंत पद एक धरि, स्वच्छ-चित रच छंद ॥/स्वच्छचित रच छंदद्ध्वनि लखि पदछलि धरि ।/साजज्जमक तिबा-जज्झमक सुजामम्मद्धरि ॥/पदद्धरि सिर विद्वज्जन कर युद्धद्ध्वनि गुनि ।/चित्तत्थिर करि सुद्धिद्धरि कह यों अमृतधुनि ॥ इसमें प्रथम एक **दोहा** रहता है। प्रतिपद में २४ मात्राएँ होती हैं। आदि-अंत में जो पद हों, वे एकसे ही हों। यह ६ पादों का होता है, अतः इसे षट्पद कहते हैं। इनमें से अंतिम चार पादों में प्रत्येक पाद में तीन-तीन बार आठ-आठ मात्राओं वाला वृत्त्यनुप्रास होता है। प्रथम-पाद के प्रारंभ में जो शब्द होता है, वही अंतिम में होता है। दोहे के चतुर्थ पाद की पुनरावृत्ति छंद के तृतीय पाद के आरंभ में होती है। इस छंद का प्रयोग वीर रस में होता है। इस छंद का उदाहरण इसके उपर्युक्त लक्षण में ही है।

अयोध्या—अवध (कोसल) प्रदेश। इस प्रदेश की दक्षिणीय सीमा सई नदी थी। इस प्रदेश की राजधानी का नाम अयोध्या था, जो राम की जन्मभूमि थी। अयोध्या और इसके आस-पास वे स्थान अब भी दिखाए जाते हैं जहाँ राम का जन्म हुआ था, दशरथ ने पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया था, राम ने अश्वमेध यज्ञ किया था, दशरथ ने श्रवण को मारा था, आदि। जैन तीर्थंकर आदिनाथ का जन्म भी अयोध्या में हुआ था। बौद्धकाल में यह प्रदेश उत्तर कोसल और दक्षिण कोसल दो भागों में बँटा था। इन दोनों भागों को सरयू नदी विभाजित करती थी। उत्तर कोसल की राजधानी श्रावस्ती और दक्षिण की कुशावती थी। दे० *साकेत*।

अयोध्याप्रसाद खत्री—मुज़फ्फरपुर निवासी हिंदी-लेखक जिन्होंने *खड़ी बोली आंदोलन* (१८८८ ई०) नामक पुस्तक लिखकर खड़ी बोली के आंदोलन में सहयोग दिया था।

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (१८६५-१९४७ ई०)—कवि। जन्म निज़ामाबाद, आज़मगढ़। सरकारी नौकरी से पेन्शन पाकर १९२३ में हिंदू विश्वविद्यालय, काशी में हिंदी का अध्यापन करने लगे। ये **हिंदी-साहित्य-सम्मेलन** के सभापति रह चुके थे। इन्हें उर्दू, फारसी, संस्कृत और अंग्रेज़ी साहित्य का अच्छा ज्ञान था। इनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं—*प्रिय-प्रवास* (१९१४), *वैदेही-वनवास* (१९४०), (दोनों महाकाव्य), *चोखे चौपदे*, *चुभते चौपदे*, *बोलचाल*, *रसकलश*, *पद्यप्रसून*, *कल्पलता*, *पारिजात*, *ऋतु-मुकुर*, *काव्योपवन*, *प्रेम-पुष्पोपहार*, *प्रेम-प्रपंच*, *प्रेमांबु-प्रस्रवण*, *प्रेमांबुवारिधि* (स्फुट काव्य-संग्रह), *ठेठ हिंदी का ठाठ*, *अधखिला फूल* (उपन्यास), *हिंदी-भाषा और साहित्य का विकास* तथा *कबीर वचनावली*। *वेनिस का बाँका* अनूदित उपन्यास है। *रिपवानविंकल* (हिंदी में) उर्दू-रिपवानविंकल का अनुवाद और कहानी है। *नीति निबंध* अनूदित निबंधों का संग्रह है। पद्य में *उपदेशकुसुम* के तीन भाग *गुलिस्ताँ* के आठवें अध्याय के अनुवाद हैं और *विनोदवाटिका गुलज़ारदबिस्ताँ* का रूपांतर है।

इनके उपन्यासों में भाषा-वैचित्र्य ही प्रधान है। चरित्र-चित्रण केवल नाम मात्र को है। उपन्यासों में ठेठ हिंदी का अच्छा नमूना मिलता है। *वेनिस का बाँका* संस्कृतनिष्ठ भाषा में है। इन्होंने ब्रज-भाषा और खड़ी बोली दोनों में ही कविता की है। ब्रज-भाषा-कविता में ये रीति-काल के कवि के रूप में आते हैं।

इनकी कीर्त्ति का स्तंभ *प्रिय-प्रवास* (खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य) संस्कृत के छंदों में लिखा गया है। विशेष दे० गिरजादत्त शुक्ल-कृत *महाकवि हरिऔध*।

अरइल—प्रयाग में वह स्थान जहाँ गंगा में यमुना मिलती है। यथा—की कालिंदी बिरह सताई। चलि प्रयाग अरइल बिच आई—*जायसी*।

अरण्य—वन। ६ पवित्र अरण्य इस प्रकार हैं—सैंधव, दंडकारण्य नैमिष, कुरुजंगल, उपलावृत्त, अरण्य, जंबुमार्ग, पुष्कर और हिमालय।

अरण्यरोदन न्याय—वन में रुदन करने से कोई नहीं सुनता, अतएव जहाँ कोई सुननेवाला न हो, वहाँ इस उक्ति का प्रयोग होता है।

अरविन (Irwin), लॉर्ड—भारत के गवर्नर-जनरल और वाइसरॉय (१९२६-३१ ई०)।

अरव्हिग (Irving), (१७८१-१८५९ ई०)—एक अमरीकी लेखक जिनके *रिपवान विंकल* नामक उपन्यास का अनुवाद हो चुका है।

अरसात—सात भकार रचो रगणा इक सुंदर वृत्त बने अरसात है (७ भ र=२४ व० छंद)। उ०—भाव भला उसके मन के किस भाँति कहूँ वह है न बखानता।

अरस्तु (३८४-३२२ ई० पू०)—अफलातून के शिष्य एक प्रसिद्ध दार्शनिक जिनकी प्रमुख रचनाएँ *एथिक्स* (आचार-शास्त्र), *पोलिटिक्स* (राजनीति-शास्त्र) और *पोएटिक्स* (काव्य-शास्त्र) हैं।

अरिल्ल—सोलह कल लल अंत अरिल्ला। रचो 'ज' हीन 'य' वांत सुरिल्ला॥ (१६ (अंत ल ल अथवा य) मा० छंद)। सारी रचना में जगण कहीं नहीं होना चाहिये। उ०—तीरंथ पय कर पान सुधीरा, पत्रविहीन न सीह करीरा।/ले हरिनाम मुकुंद मुरारी, राधा-वल्लभ कुंज-बिहारी॥

अरिष्टासुर—एक असुर जो वृषभ (बैल) का रूप धारण कर वृंदावन में आकर ब्रजवासियों को भयभीत करने लगा। अंत में कृष्ण ने इसके शृंग पकड़ कर इसका वध कर दिया। इसे वृषभासुर भी कहते हैं (*भा० १०. ३६*)।

अरुंधती—कश्यप की पुत्री और वसिष्ठ की पत्नी। ये आदर्श पत्नी मानी जाती हैं। ये आकाश में अपने पति के समीप नक्षत्र-रूप में हैं (*ब्रह्मांड० ३.८.८६–८७*)।

अरुंधती दर्शन न्याय—अरुंधती नाम का एक तारा है जोकि अत्यंत छोटा है। इसे देखने के लिए इसके पास के किसी बड़े तारे को देखकर इसका दर्शन तुरंत हो सकता है। एवं किसी स्थूल वस्तु को पहिले दिखाकर फिर उस स्थूल वस्तु की सहायता से सूक्ष्म वस्तु का परिज्ञान कराने में इस उक्ति का प्रयोग होता है।

अरुण—कश्यप और विनता (दे० यथा०) के पुत्र। इनका शरीर केवल कमर से ऊपर तक का है। इन्होंने अपनी माता को दासी होने का शाप दिया था (*म० आ० १६*)।

अर्जुन—इंद्र और कुंती के औरस तथा पांडु के क्षेत्रज पुत्र (*म० आ० १२३*)। ये द्रोणाचार्य के प्रिय शिष्य और परम कृष्ण-भक्त थे। पांडवों में ये सब से अधिक वीर थे (*१३३*)। स्वयंवर में घूमते चक्र के बीच मछली की आँख बेध कर इन्होंने द्रौपदी को वरा था। कृष्ण की बहिन सुभद्रा का इन्होंने हरण किया था। सुभद्रा से इन्हें अभिमन्यु नामक पुत्र प्राप्त हुआ (*म० आ० २१९-२०*)। पांडवों के वनवास के समय वेदव्यास ने इन्हें बतलाया कि नारायण के सहचर 'नर' वीर अर्जुन ही हैं। वेदव्यास के परामर्श से अर्जुन ने अस्त्रों की प्राप्ति के लिये इंद्र की भक्ति की। इंद्र ने इनको शिव की आराधना करने के लिये कहा। शिव ने किरात (भील) का रूप धारण किया और देखा कि मूक नामक दैत्य शूकर बनकर तपस्वी अर्जुन को मार डालने की घात में है। किरात के मना करने पर भी अर्जुन ने मूक का वध कर ही दिया। किरात ने कहा—'तुम्हें अपनी शक्ति का बहुत गर्व हो, तो मुझ पर बाण चलाओ।' अर्जुन के बाण समाप्त हो गये। तब शिव प्रकट हो गये और उन्होंने अर्जुन को पाशुपतास्त्र दिया। इंद्र आदि अनेक देवताओं ने भी इन्हें नाना प्रकार के अस्त्र दिये (*म० व० ३८-४१*)। महाभारत-युद्ध से पूर्व अर्जुन और दुर्योधन कृष्ण के पास सहायता के लिये पहुँचे। दुर्योधन ने कृष्ण की नारायणी सेना ली और अर्जुन ने कृष्ण को लिया। युद्ध में कृष्ण इनके सारथि थे (*म० उ० ७*)। युद्ध प्रारंभ होने से पूर्व युद्धक्षेत्र में प्रतिपक्षी रूप में अपने संबंधियों को सामने देख अर्जुन युद्ध से विरक्त होने लगे। यह देख कृष्ण ने इन्हें कर्त्तव्य-पालन का उपदेश दिया जो *भगवद्गीता* के नाम से प्रसिद्ध है (*म० भी० २५ ४२*)। युद्ध में **शिखंडी** को आगे करके अर्जुन ने भीष्म को मारा था (*१०७-२२*)। कर्ण को भी इन्होंने मारा था। **जयद्रथ** का वध कर अर्जुन ने अभिमन्यु के खून का बदला लिया था (*म० द्रो० ८५-१४६*)। इनके धनुष का नाम गांडीव था। इनकी उलूपी (*म० आ० २१४*) तथा चित्रांगद (*२१५*) आदि और भी पत्नियाँ थीं। एक बार ये यादव स्त्रियों को ले जा रहे थे, तो भीलों ने इन्हें पराजित कर दिया था (*म० मौ० ६-७*)। अंत में ये भी अपने अन्य भाइयों के साथ हिमालय में महाप्रस्थान के लिये चले गये (*म० महा०*)। अर्जुन के पर्य्याय०—जिष्णु, धनंजय, फल्गुन, किरीटी, गुडाकेश, गांडीवधर, पार्थ, कपिध्वज, सव्यसाचि, नर आदि।

अर्थप्रकृति—कथावस्तु के वे प्रधान मूल तत्त्व जिनके द्वारा कथा का विकास होता है। ये पाँच हैं—*बीज, बिंदु, पताका, प्रकरी,* और *कार्य*। इनमें बीज तो **प्रारंभ**, नाम की अवस्था से मिलता है। जिस प्रकार बीज में फल छिपा रहता है, उसी प्रकार नाटक के इस बीज में भी नाटक का फल निहित रहता है। बिंदु में तेल की बूँद का रूपक है। यह पानी के ऊपर फैल कर विस्तार का घातक बन जाता है। पताका और प्रकरी में क्रमशः बड़ी और छोटी अवांतर कथाएँ होती हैं, जो मूलकथा को आगे बढ़ाने में सहायक होती है; और कार्य अंतिम फल को कहते हैं। दे० *अवस्था*।

अर्थांतरन्यास—वह अर्थालंकार जिसमें सामान्य का विशेष से या विशेष का सामान्य से अथवा कारण का कार्य या कार्य का कारण से साधर्म्य वा वैधर्म्य दिखलाते हुए समर्थन किया जाये। उ०—बड़े न हूजै गुनन बिनु, बिरद-बड़ाई पाय। कनक धतूरे सों कहत, गहनों गढ़ो न

ज जाय ॥—*बिहारी*। यहाँ सामान्य का विशेष से समर्थन किया गया है, जो साधर्म्यपूर्वक है।

अर्थालंकार—दे० *अलंकार* ।

अर्थोपक्षेपक—नाटक में सूच्यवस्तु की सूचना देने के साधन। (वह सामग्री जो विरोधक (रस में बाधक) अथवा गौण होने के कारण मंच पर घटती हुई न दिखलाई जाकर, पात्रों द्वारा सूचित करा दी जाती है जिससे कि कथानक की पूर्त्ति हो सके, सूच्य कहलाती है।) ये साधन पाँच होते हैं—

१ *विष्कंभक*—वह दृश्य जिसमें दो पात्र कथोपकथन द्वारा पहिले पूर्वघटित या बाद में होने वाली घटना की सूचना देते हैं। ये पात्र प्रधान नहीं, मध्यम, या मध्यम और नीच होते हैं। यह नाटक के पहिले या दो अंकों के बीच में आ सकता है। यह दो प्रकार का होता है—एक शुद्ध (जिसमें पात्र मध्यम श्रेणी के होते हैं और संस्कृत बोलते हैं) और दूसरा संकर (जिसमें पात्र मध्यम और नीच श्रेणी के होते हैं और संस्कृत के साथ प्राकृत भी बोलते हैं)। अब ये भेद कुछ निरर्थक से हो गये हैं।

२ *प्रवेशक*—प्रवेशक और विष्कंभक में यह भेद है कि प्रवेशक दो अंकों के बीच में ही आता है। इसके पात्र सब निम्न श्रेणी के होते हैं जो प्राकृत बोलते है।

३ *चूलिका*—इसमें बिना दृश्य बदले नेपथ्य से सूचना देदी जाती है।

४ *अंकावतार*—इसमें पहिले अंक की कथा समाप्त होने के पूर्व ही बीजारोपण कर दिया जाता है, जिससे दोनों अंकों की कथा बराबर चलती रहती है और पात्रगण केवल बाहर जाकर पुनः दूसरे अंक में चले आते हैं।

५ *अंकमुख* (अंकास्य)—इसमें एक अंक के अंत में बाहर जाते हुए पात्र द्वारा अगले अंक में होने वाली कथा की सूचना दिलाई जाती है।

अर्द्धकुक्कुटीन्याय—"आधी आधी मुर्गी"। मुर्गी का आधा अगला भाग पकाने के लिए रखना और पिछला आधा भाग अंडे देने के लिए रखना। अर्थात् किसी वस्तु का आवश्यकता से अधिक लाभ उठाने का हास्यास्पद यत्न करना।

अर्द्धजरतीयन्याय—"आधी वृद्धा स्त्री"। वृद्धा स्त्री का मुख आकर्षक कहकर स्वीकार करना और शेष शरीर त्याज्य समझ कर फेंक देना, जोकि असंभव है। सारे शरीर को स्वीकार करना चाहिए या सारे को ही त्याग देना चाहिए। कोई योजना यदि पूर्णतः आकर्षक न हो, उसे पूर्णरूप से त्याग कर देने या पूर्णरूपेण स्वीकार कर लेने में इस उक्ति का प्रयोग होता है।

अर्द्धमागधी—एक प्राकृत भाषा जिसका प्रचार कोसल (अवध) में था। मगध (जिसकी भाषा मागधी थी) और शौरसेनी प्रांत (जिसकी भाषा शौरसेनी थी) के मध्य में बोली जाने के कारण इस भाषा का नाम अर्द्धमागधी पड़ा। जैनों ने इस भाषा को अपनाया था।

अर्द्धसम-मात्रा-छंद—प्रथम-तृतीय और द्वितीय-चतुर्थ पादों में समान मात्रा-संख्या (आंशिक समानता) वाले छंद।

अद्‌र्धसमवृत्त—प्रथम-तृतीय और द्वितीय-चतुर्थ पादों में समान वर्ण-संख्या, गुरु लघु क्रम या समान गणों (आंशिक समानता) वाले वर्णिक छंद ।

अर्बुद—**आबू** नामक पर्वत ।

अलंकार—वह योजना जो शब्द या अर्थ की शोभा को बढ़ाते हुए काव्य का उपकार करती है । इसके दो भेद हैं—

१ *शब्दालंकार*—वे अलंकार जो शब्द की शोभा बढ़ाते हुए काव्य का उपकार करते हैं। इसके मुख्य छः भेद हैं—१ **अनुप्रास**, २ **यमक**, ३ **पुनरुक्तवदाभास**, ४ **वक्रोक्ति**, ५ **वीप्सा** और **श्लेष** (शब्द) ।

२ *अर्थालंकार*—वे अलंकार जो अर्थ की शोभा को बढ़ाते हुए काव्य का उपकार करते हैं। उ०—श्री राधा रति के समान सुंदरी है । यहाँ केवल राधा अत्यंत सुंदरी है कहना था, परंतु अर्थ की चमत्कारिता से राधा की सुंदरता का महत्त्व बढ़ गया है । अर्थालंकारों की संख्या १०० से भी अधिक है । मुख्य अर्थालंकारों का इस कोश में यथास्थान निर्देश है ।

कुछ आचार्य शब्द और अर्थ प्रकार के अलंकारों के परस्पर मिश्रण से उत्पन्न होने वाली एक तीसरी श्रेणी भी मानते हैं । यह मिश्रण **संसृष्टि** और **शंकर** के रूप में होता है ।

अलंकार-शास्त्र-संप्रदाय—'काव्य की आत्मा क्या है' इस तथ्य की गवेषणा करते हुए अलंकार-शास्त्र के विभिन्न आचार्यों ने विभिन्न निष्कर्ष निकाले। काव्य की इन विभिन्न व्युत्पत्तियों के कारण अनेक संप्रदायों का जन्म हुआ। रस, अलंकार, गुण, वक्रोक्ति, ध्वनि और औचित्य को काव्य का सर्वस्व स्वीकार करने से अलंकार-शास्त्र के इन छः प्रमुख संप्रदायों का जन्म हुआ—

१ **रस संप्रदाय**—भरतमुनि, विश्वनाथ, जगन्नाथ ।

२ **अलंकार संप्रदाय**—भामह, उद्‌भट, रुद्रट ।

३ **गुण संप्रदाय**—दंडी, वामन ।

४ **वक्रोक्ति संप्रदाय**—कुंतक ।

५ **ध्वनि संप्रदाय**—आनंदवर्द्धन, अभिनवगुप्त ।

६ **औचित्य संप्रदाय**—क्षेमेंद्र ।

अलंकार संप्रदाय—एक संप्रदाय जिसके आचार्यों ने अलंकार को ही काव्य का सर्वस्व स्वीकृत किया । भामह और उनके टीकाकार उद्‌भट तथा रुद्रट नामक संस्कृत-आचार्य इस संप्रदाय के प्रमुख कर्णधार हैं । पीछे से दंडी ने भी अलंकारों की मान्यता किसी न किसी रूप में स्वीकृत की किंतु तत्पश्चात् 'कामिनी के शरीर में आभूषणों का जो स्थान है, वही कविता में अलंकारों का'—इस मत को मानने वालों की संख्या बढ़ती गई । हिंदी-साहित्य के रीतिग्रंथों में अलंकारवाद की ही प्रधानता रही । **केशवदास** और **चिंतामणि** आदि इसी कोटि के कवि और आचार्य हैं ।

अलकनंदा—**बदरिकाश्रम** से कुछ ऊपर वसुधारा से निकलने वाली गंगा की एक प्रधान सहायक नदी । गढ़वाल की राजधानी श्रीनगर इसी के किनारे पर स्थित है ।

अलका—**कुबेर** की पुरी । **रावण** ने जब कुबेर की राजधानी लंका ले ली, तब कुबेर ने

अलकापुरी बसाई थी।

अलखनामी—**गोरखनाथ** के अनुयायी साधु जो अलख-अलख पुकार कर भिक्षा माँगते हैं।

अलबेली अलि—(र० का० १७१८-४३ ई०)—विष्णुस्वामी संप्रदाय के अनुयायी एक कवि और *समय-प्रबंध पदावली* के रचयिता।

अलर्क—१ दंश नामक असुर जिसने **भृगु** की पत्नी का हरण किया था। इसका उद्धार भृगुवंशी परशुराम द्वारा हुआ। २ राजा कुवलयाश्व और मदालसा के पुत्र। कुवलयाश्व की मृत्यु के उपरांत काशिराज सुबाहु ने अलर्क की राजधानी का घेरा डाल दिया। तत्त्वदर्शी अलर्क असंख्य प्राणियों की हत्या करने को पाप समझ कर, काशिराज को अपना राज्य दे देने को तैयार हो गये। अलर्क के इस कार्य से काशिराज बहुत प्रभावित हुआ और वह युद्ध से निवृत्त होकर अपनी राजधानी को लौट गया।

अलाउद्दीन खिलजी—खिलजीवंशी भारत-सम्राट् (१२९५-१३१५ ई०)। दे० *पद्मावत*।

अली—इस्लाम के चौथे खलीफ़ा और **मुहम्मद** के दामाद। इनकी पत्नी का नाम फ़ातिमा था।

अली मुहिब खाँ 'प्रीतम'—कवि और *खटमल बाईसी* (१७३० ई०) के रचयिता। *खटमल बाईसी* हिंदी की हास्यरस की प्रथम लाक्षणिक पुस्तक है।

अवंती—१ मालवा का प्राचीन नाम। दे० *मालव*। २ मालवा की राजधानी (*मचा० ४३*)। इसे उज्जयिनी भी कहते थे।

अवतार—१ पुराणों के अनुसार परमात्मा या किसी देवता का मानव, पशु आदि के रूप में अवतीर्ण होना। **विष्णु, शेष** आदि ने अनेक अवतार धारण किये। २ अवतार राम की कथा सब दोष गंजनी।/नहिं ता समान आन है, त्रयताप भंजनी (२३ (१३, १०) मा० छंद)। अंत में रगण कर्णमधुर होता है।

अवध (अवधपुरी)—दे० *अयोध्या*।

अवधनारायण—आधुनिक उपन्यासकार और *विमाता* (१९२३ ई०, करुण रस प्रधान), *सेकंडहैंड लेडी* आदि के रचयिता।

अवधी—**अर्द्धमागधी** प्राकृत से उत्पन्न वह भाषा जो अयोध्या के आस-पास चार-पाँच ज़िलों में बोली जाती है। *पद्मावत* में इसका ठेठ और *रामचरितमानस* में इसका साहित्यिक रूप है। आजकल **द्वारिकाप्रसाद मिश्र** की *कृष्णायन* नामक रचना इसी भाषा में लिखी गई है। अवधी को कोसली भी कहते हैं।

अवधूत (अवधू)—वह साधु जो पूर्ण वैराग्य लेकर अपने को संसार के बंधनों से मुक्त कर लेता है।

अवस्था—कथावस्तु में वर्णित घटना चक्र को विकास की दृष्टि से आरंभ से फलागम तक पाँच भागों में बाँट दिया गया है। ये पाँच भाग कार्य की पाँच अवस्था कहलाती हैं, जो इस प्रकार हैं—*आरंभ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति* और *फलागम*। पहिली अवस्था में कार्य की भूमिका रहती है, किसी फल के लिये इच्छा होती है; दूसरी में इच्छा-पूर्त्ति के लिये यत्न होता है; तीसरी में प्राप्ति की

संभावना होने लगती है; और चौथी में प्राप्ति की संभावना मात्र न रहकर निश्चितता आ जाती है; फलागम में फल की प्राप्ति होती है।

अवहट्ट—दे० *प्राचीन हिंदी*।

अशोक—१ मौर्यवंशी प्रसिद्ध भारत-सम्राट् (२७२-२३२ ई० पू०)। इन्होंने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया और उसके प्रसार के लिये बौद्ध भिक्षुओं को विदेश में भेजा। २ एक वृक्ष। कवि-प्रसिद्धि है कि इसमें फल नहीं होते और सुंदरियों के पदाघात से यह पुष्पित हो जाता है। शुभ अवसरों पर इसकी पत्तियों के बंदनवार लगाए जाते हैं। **कामदेव** के पंच-पुष्प बाण में अशोक का फूल भी है। अशोक के फूल कई प्रकार के होते हैं।

अशोक-वाटिका (अशोक-वन)—लंका का प्रसिद्ध उद्यान, जिसमें हरण के उपरांत सीता रहती थीं।

अश्मक—१ ट्रावनकोर का प्राचीन नाम। २ महाराष्ट्र।

अश्लीलता—लज्जास्पद वा घृणास्पद शब्दों के प्रयोग से रचना को दूषित करने वाला काव्यदोष। व्रीडा, जुगुप्सा और अमंगलसूचक शब्दों के प्रयोग से इसके तीन भेद होते हैं।

अश्वघोष (ई० द्वितीय शती)—संस्कृत-कवि। *बुद्धचरित* (महाकाव्य) तथा *सौंदरनंद* (अनू०, इस महाकाव्य में बुद्ध के भाई नंद का अपनी प्रिय पत्नी सौंदरी को त्याग कर बौद्ध धर्म में दीक्षित होने का वर्णन है) के रचयिता।

अश्वत्थामा—१ द्रोणाचार्य और कृपी का पुत्र जो महाभारत-युद्ध में कौरवों की ओर से लड़ा। इसका घटोत्कच से घोर युद्ध हुआ था। इसने अपने पिता के हत्यारे धृष्टद्युम्न को, शिखंडी को तथा द्रौपदी के पाँचों पुत्रों को मारा था (*म० सौ० ५, ८*)। द्रौपदी के हठ करने पर भीम ने इसे पकड़ लिया। भीम ने गुरु-पुत्र समझ कर इसका वध तो नहीं किया, पर इसके मस्तक में से मणि निकाल ली जिसे बाद में युधिष्ठिर ने अपने शीष पर धारण किया (*११*)। इसने **उत्तरा** के गर्भ पर भी अस्त्र फेंका था। इसपर कृष्ण ने इसे तीन हज़ार वर्ष तक भटकने और कोढ़ी होकर दुर्गम वन में पड़े रहने का शाप भी दिया (*१३, १६*)। कहा जाता है कि यह अमर है। २ पांडव पक्ष के मालवराज इंद्रवर्मा के हाथी का नाम। इसी हाथी के मरने का समाचार द्रोणाचार्य को इसी प्रकार सुनाया गया था कि उन्होंने अपने पुत्र अश्वत्थामा को मृत समझा और उसके वियोग में अपना शरीर त्याग दिया।

अश्वपति—मद्रराज और **सावित्री** के पिता।

अश्वमेध—प्राचीनकाल का एक प्रधान यज्ञ जिसमें घोड़े के मस्तक पर जयमाल बाँध कर उसे समस्त भूमंडल पर घूमने के लिये छोड़ देते थे। घोड़े के साथ कुछ वीर पुरुष चलते थे। जब किसी प्रदेश के राजा को अश्वमेध यज्ञ करने वाले का आधिपत्य स्वीकार न होता तो वह उस घोड़े को बाँध लेता तथा घोड़े के साथ चलने वाले वीर सैनिकों से युद्ध करता था। वे वीर उस अश्व बाँधने वाले को पराजित कर तथा अश्व को छुड़ा कर आगे बढ़ते थे। इस प्रकार घोड़ा समस्त भूमंडल का चक्कर काटकर लौटता था। यह यज्ञ प्रबल प्रतापी राजा ही करते थे।

अश्विनीकुमार—विवस्वत् (सूर्य) तथा संज्ञा (दे० यथा०) के दो पुत्र। ये सदैव रूपवान् तथा युवक रहते हैं। ये देवताओं के वैद्य भी हैं (*ऋ० ७.६७.१०*)। इन्होंने च्यवन ऋषि को नवयौवन प्रदान किया था (*म० व० १२४*)। दधीचि नामक एक ऋषि को ब्रह्मविद्या प्राप्त थी। इंद्र ने ऋषि से कहा था कि यदि तुम किसी को ब्रह्मविद्या सिखलाओगे तो तुम्हारा सिर धड़ से अलग हो जायगा। अश्विनीकुमारों ने ऋषि से कहा—'हम आपका सिर अलग कर उसके स्थान पर घोड़े का सिर जोड़ देते हैं। आप हमें ब्रह्मविद्या का उपदेश दीजिये। जब आपका सिर कट जाएगा तब हम पुनः आपका पहिला सिर जोड़ देंगे।' ऐसा ही हुआ (*ऋ० १.११६.१३*)। इनके संयोग से पांडु-पत्नी माद्री के नकुल और सहदेव दो पुत्र उत्पन्न हुए। दे० *उपमन्यु*। अश्विनीकुमार के पर्य्याय०—नासत्य, नासिक्य।

अष्टक—१ वह कविता जिसमें आठ श्लोक हों। २ *ऋग्वेद* का एक विभाग जिसमें प्रत्येक अष्टक में आठ अध्याय होते हैं।

अष्टछाप—निम्न आठ सर्वोत्तम पुष्टि-मार्गी कवियों का मंडल जिसे गोसाईं विट्ठलनाथ ने स्थापित किया था—**सूरदास, कुंभनदास, परमानंददास, कृष्णदास, छीतस्वामी, गोविंदस्वामी, चतुर्भुजदास** और **नंददास**। इनमें प्रथम चार **वल्लभाचार्य** के और अंतिम चार **विट्ठलनाथ** के शिष्य थे।

अष्टयाम—रीतिकाल के अनेक कवियों ने नख-शिख की भाँति अष्टयाम भी लिखे हैं। इनमें नायक की आठ पहर की दिनचर्या का वर्णन कविता में किया जाता था।

अष्टवसु—देवताओं का एक गण। इसके अंतर्गत आठ देवता हैं—धर, ध्रुव, सोम, विष्णु, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास। अग्नि-पुराणानुसार इनके नाम इस प्रकार हैं—धर, अप्, ध्रुव, सोम, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास। जब इन्होंने वसिष्ठ की नंदिनी नामक गौ का हरण कर लिया, तब वसिष्ठ ने इन्हें मनुष्य योनि में उत्पन्न होने का शाप दिया था (दे० *गंगा*)।

अष्टावक्र—कहोड के पुत्र एक ऋषि। पिता के शाप से इनका शरीर आठ स्थान से टेढ़ा हो गया था। कहोड बंदी नामक एक विद्वान् से शास्त्रार्थ में हार गये और नियमानुसार समुद्र में डुबो दिये गये। अष्टावक्र ने भी बंदी से शास्त्रार्थ किया। इस बार बंदी पराजित हो गया। प्रतिज्ञानुसार बंदी जल में डुबो दिया गया। वास्तव में बंदी वरुण-पुत्र था। वरुण के यहाँ यज्ञ हो रहा था। इस युक्ति से बंदी विद्वानों को वरुणलोक भेज देता था। बंदी के डूबने पर कहोड आदि सभी ब्राह्मण वरुण से सम्मानित हो जल से बाहर निकल आए। कहोड ने अष्टावक्र को समंगा नदी में स्नान करने को कहा जिससे इनके टेढ़े-मेढ़े अंग सीधे हो गये (*म० व० १३४*)। अष्टावक्र-आश्रम हरिद्वार से ८ मील राहुग्राम अथवा रायल नामक स्थान पर है। अष्टवक्र नदी भी इसी स्थान के समीप बहती है। पौड़ी (गढ़वाल) में भी अष्टावक्र-आश्रम बतलाया जाता है।

अष्टिग्राम—मथुरा ज़िले में रावल नामक स्थान जहाँ राधा का जन्म हुआ था। राधा उस समय अपने नाना के घर थी।

असंगति—एक अर्थालंकार जिसमें कारण कहीं

होता है और उसका कार्य कहीं उत्पन्न हो जाता है। उ०—दृग उरुझत, टूटत कुटुम, जुरति चतुर चित प्रीति।/परति गांठ दुरजन हिये, दई नई यह रीति॥ यहाँ असंगतियों की परंपरा-सी है।

असंभव—एक अर्थालंकार जिसमें दिखाया जाए कि जो बात हो गई है उसका होना असंभव था। उ०—किन जान्यो लुटि जाइ हैं, गोरी अर्जुन साथ।

असमंजस्—राजा सगर और केशिनी का पुत्र। यह बड़ा क्रूर था। अतः सगर ने इसे अपने देश से निकाल दिया (*भा० ६.८*)।

असी—१ एक नदी जो काशी के दक्षिण में गंगा से मिलती है। तुलसीदास अपने जीवन के अंतिम भाग में इसपर निवास करते थे। यथा—संवत् सोरह सै असी, असी गंग के तीर।/श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर॥ २ **पिंगला** नाड़ी का एक नाम।

असुरसेन—एक राक्षस। कहते है कि इसके शरीर पर गया नामक नगर बसा है। उ०—असुर सेन सम नरक निकंदनि।/साधु बिबुध कुलहित गिरिनंदिनि।—*तुलसी*।

अहद—सूफ़ीमत में ईश्वर के लिये प्रयुक्त शब्द।

अहमद (आ० का० १६२१ ई०)—कवि और *सामुद्रिक* तथा *गुण सागर* (कोक-शास्त्र) के रचयिता।

अहल्या—ब्रह्मा की मानसपुत्री और गौतम की परमसुंदरी पत्नी (*वा० रा० उ० ३० आदि*)। एक दिन गौतम की अनुपस्थिति में इंद्र ने गौतम का रूप धारण कर अहल्या को धर्म-भ्रष्ट किया। इसपर गौतम ने अहल्या को शिला (*स्कंद० १.२.५२*) हो जाने का और इंद्र को 'सहस्र छिद्र' (*म० अनु० ४१ आदि*) हो जाने का शाप दिया। बहुत प्रार्थना करने पर उन्होंने अहल्या को आश्वासन दिया कि रामचंद्र के चरणस्पर्श से तुम्हारा उद्धार होगा (*वा० रा० बा० ४८-४६, उ० ३०*)। जनकपुरी जाते समय राम ने इनका उद्धार किया था। अहल्या की गणना प्रातः स्मरणीय पाँच महिलाओं में होती है (दे० *पंचकन्या*)।

अहल्याबाई (१७३५-६५ ई०)—एक वीर महिला। इनका विवाह मालवदेश के राजा खांडेराव से हुआ था। १६ वर्ष की ही अल्प अवस्था में ये विधवा हो गई थीं। इनकी ३० वर्ष की अवस्था में इनके श्वशुर का देहांत हो गया। एक महीने के पश्चात् इनके पुत्र का भी देहांत हो गया। अब राज्य का समस्त भार इनके सिर पर पड़ा। ये सभा के सामने आने जाने लगीं। राजपुरोहित गंगाधर ने इनके विरुद्ध कई षड्यंत्र रचे किंतु इन्होंने उन सबको विफल कर दिया। पहिले इंदौर एक छोटा-सा गाँव था, परंतु इन्होंने उस स्थान को एक समृद्धिशाली नगर बना दिया। ये दान-शीला, अतिथि-परायणा और देव-द्विज भक्ति परायणा थीं। इनके बनाए अनेक देवमंदिर, धर्मशाला और कूप आज भी वर्त्तमान हैं। गया में इन्होंने विष्णुपद मंदिर बनवाया। एक बार जयपुर के माधोजी सिंधिया के सेना-पति जिड़वा दादा ने इनके सेनापति तुकाजी पर सहसा आक्रमण कर दिया। इन्होंने १५ हज़ार सैनिक भेजकर जिड़वा दादा को परा-जित कर दिया था।

अहिच्छत्र—नंदलाल दे के अनुसार बरेली से २० मील पश्चिम की ओर रामनगर नामक स्थान। यहाँ उत्तर **पंचाल** अथवा रोहिलखंड की राजधानी थी। *हिंदी शब्दसागर* के अनुसार—१ दक्षिण पंचाल की राजधानी। २ दक्षिण पंचाल। यह देश कंपिल से चंबल तक था। इसे अर्जुन ने जीतकर द्रोण को गुरु-दक्षिणा में दिया था।

अहिरावण (महिरावण)—रावण का एक मित्र जो राम-लक्ष्मण को उठा कर पाताल में ले गया था। यह उनको देवी की बलि देना चाहता था किंतु हनुमान ने ठीक समय पर पहुँच कर इसका वध कर दिया और राम-लक्ष्मण की रक्षा की *(आ० रा० सारकांड ११)*।

आ

आंडाळ (जन्म ७१६ ई०)—एक तमिल कवयित्री। ये संत पेरियाळवार की पुत्री थीं। इन्होंने विष्णु को अपना प्रेमी और अपने आपको उनकी प्रेमिका माना है। इनके गीतों में विष्णु से मिलन की उत्कट अभिलाषा है। इनके एक गीत में विष्णु से इनका स्वप्न में विवाह वर्णित है। यह गीत विवाह के अवसरों पर वैष्णव-ब्राह्मणों के घरों में अब तक गाया जाता है।

आँसू—**जयशंकर प्रसाद** का एक प्रसिद्ध काव्य (१९२६ ई०)। पहिले संस्करण में यह लौकिक प्रेम-पूर्ण काव्य था। बाद में इसे आध्यात्मिकता का पुट देदिया गया। सुख-दुःख से तटस्थता, समरसता का इसमें एक जीवन-संदेश भी देने का प्रयास किया गया है।

आकाशगंगा—१ बहुत से छोटे-छोटे तारों का एक विस्तृत समूह जो आकाश में उत्तर-दक्षिण फैला है। इसकी शाखाएँ भी कुछ इधर कुछ उधर फैली दिखाई पड़ती हैं। २ पुराणानुसार वह गंगा जो आकाश में है। दे० *त्रिपथगा*।

आकाशभाषित—नाटक के अभिनय में एक संकेत जिसमें अभिनेता आकाश की ओर देख कर 'क्या कहा ?' कहकर स्वयं ही प्रश्न करता है तथा स्वयं ही उसका उत्तर देता है।

आक्षेप—एक अर्थालंकार। ऐसी क्रिया वा ऐसा कथन करना जिससे कार्य में बाधा डालने का तात्पर्य सिद्ध हो। इसके तीन भेद हैं—

१ *उक्ताक्षेप*—जिसमें अपने कहे हुए का निषेध करना होता है। उ०—तव मुख विमल प्रसन्न अति, रह्यो कमल-सो फूलि;/नहिं नहिं पूरन चंद सो, कमल कह्यो मैं भूलि।

२ *निषेधाक्षेप*—जिसमें प्रथम कथन का निषेध न होकर आभास मात्र होता हो। उ०—हौं न कहति तुम जानिहौ लाल ! बाल की बात;/अंसुवा उडगन परत हैं, होन चहत उत्पात।। यहाँ निषेध से उक्त कथन में विश्वास उत्पन्न होता है।

३ *व्यक्ताक्षेप*—जिसमें प्रकट में तो कहना हो किंतु युक्ति से निषेध रहता हो उ०—पान-पीक की लीक दृग, डगमगात सब गात। रमहु रमन ! मन रमत जहं, कत सकुचत बत रात ?।।

आखिरी कलाम—**मलिक मुहम्मद जायसी** (१४९३-१५४३ ई०) की अवधी भाषा में एक पुस्तिका जिसमें मुसलमानी सिद्धांतों के आधार पर **क़यामत** तथा उसके बाद होने वाले अल्लाहताला के इन्साफ का उल्लेख है।

आख्यानक-गीति—एक पद्यबद्ध सरल कहानी जिसमें युद्ध, वीरता, पराक्रम, प्रेम तथा घृणा आदि का विस्तृत वर्णन होता है। *आल्हाखंड*, भगवानदीन-कृत *वीर पंचरत्न* और सुभद्राकुमारी चौहान-कृत *झाँसी की रानी* इस दिशा में सफल कृतियाँ हैं।

आख्यायिका—गद्य में लिखी गई एक विशेष प्रकार की कथा। इसमें कवि का अपना वंश-वर्णन होता है और कहीं-कहीं दूसरे कवियों के पद्य भी उद्धृत कर दिये जाते हैं। दंडी ने कहा है कि—आख्यायिका वह है जो केवल नायक द्वारा कही जाए और कथा नायक के अतिरिक्त और दूसरे किसी के द्वारा भी कही जा सकती है। फिर वे यह कहते हैं कि कहने वाले के आधार पर कोई भेद करना ठीक नहीं। *जातक*, *बृहत्कथा*, *पंचतंत्र* आदि आख्यायिका के उदाहरण हैं। दे० *कथा*।

आचार्य—१ **वेदांत शास्त्र में वे विद्वान् जिन्होंने वेदांत पर नये दृष्टिकोण से स्वतंत्र भाष्य लिखे और इस प्रकार वेदांत में एक नई शाखा की स्थापना की। जैसे**—शंकराचार्य, रामानुजाचार्य आदि। २ साहित्य-शास्त्र में वे लेखक जिन्होंने प्रामाणिक लक्षण ग्रंथों या समालोचना ग्रंथों का निर्माण किया। जैसे मम्मट, विश्वनाथ, भिखारीदास, रामचंद्र शुक्ल आदि।

आजगव—दे० *अजगव*।

आज़मशाह—मुग़ल सम्राट् औरंगज़ेब (१६५८-१७०७ ई०) के तृतीय पुत्र। इन्होंने *बिहारी सतसई* को सात शतकों में विभाजित किया और उसके दोहों को वर्त्तमान क्रम में रखा। इन्होंने ब्रज-भाषा में कुछ कविता भी की है।

आतापि (इल्वल)—एक असुर। दे० *वातापि*।

आतापी—दे० *आतापि*।

आत्मकथा—लेखक द्वारा लिखित अपना जीवन-चरित्र। साधारण **जीवन-चरित्र** से इसमें कुछ विशेषता होती है, क्योंकि मनुष्य अपने विषय में सब से अधिक जानता है। लेखक को स्वाभाविक आत्मश्लाघा की दूषित प्रवृत्ति से बचना चाहिये। शील-संकोच के कारण पाठक को सत्य और उसके अनुकरण के लाभ से वंचित रखना भी वांछनीय नहीं कहा जा सकता। पर अनावश्यक आत्म-विस्तार कुछ अधिक अवांछनीय है। आत्म-कथाएँ कई रूपों में हो सकती हैं—संबद्ध रूप में (जैसे श्यामसुंदर की *आत्मकथा* आदि) अथवा स्फुट निबंधों के रूप में (जैसे सिया-रामशरण गुप्त के 'बाल्य-स्मृति' आदि *झूठ-सच* के कुछ लेख)। महादेवी वर्मा के *अतीत के चलचित्र* और *स्मृति की रेखाएँ* नाम की कृतियों के लेख आत्मकथा और निबंध के बीच की विधाएँ हैं। पुराने हिंदी-साहित्य में **बनारसी-दास**-कृत *अर्द्धकथानक* ही आत्मकथा का उदाहरण है। इसमें लेखक ने अपनी न्यूनताओं की ओर भी संकेत किया है। श्यामसुंदरदास की *आत्मकहानी* राजेंद्रप्रसाद की *आत्मकथा*, स्वामी श्रद्धानंद की *कल्याण मार्ग का पथिक*, भाई परमा-नंद की *आप बीती*, राहुल सांस्कृत्यायन की *मेरी जीवन यात्रा* (२ भाग), वियोगी हरि की आत्मकथा *मेरा जीवन प्रवाह*, आदि आत्मकथाएँ

उल्लेखनीय हैं। महात्मा गांधी तथा जवाहरलाल नेहरू की आत्मकथाओं के अनुवाद क्रमशः *आत्मकथा* और *मेरी कहानी* नामों से प्रकाशित हुए हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी-कृत *बाणभट्ट की आत्मकथा* बाणभट्ट द्वारा लिखी हुई अपनी आत्मकथा नहीं है, किंतु यह आत्मकथा के रूप में एक ऐतिहासिक उपन्यास है।

आत्मदेव—एक ब्राह्मण जो संतानहीन था। किसी सिद्ध ने इसे एक फल देकर कहा—'इसे तुम अपनी पत्नी को खिला देना, इससे उसके एक पुत्र होगा।' ब्राह्मण की पत्नी धुंधुली ने प्रसव आदि की वेदना से बचने के लिये अपनी बहिन के सुझाव पर वह फल गौ को खिला दिया। धुंधुली और उसकी बहिन में यह निश्चय हुआ कि जब उसके प्रसव होगा, वह अपना बच्चा धुंधुली को देदेगी। इस प्रकार धुंधुली को एक पुत्र प्राप्त हुआ। उसका नाम धुंधुकारी रखा गया। गौ के भी एक मनुष्याकार बच्चा हुआ। वह सर्वांग सुंदर, दिव्य और निर्मल था। बालक के गौ के-से कान देखकर उसका नाम 'गोकर्ण' रखा गया। धुंधुकारी दुष्ट स्वभाव का था और वह गोकर्ण को बहुत सताया करता था। यह देखकर गोकर्ण संसार से निवृत्त हो गया और उसने ईश्वर-भक्ति से मोक्ष प्राप्त किया (*पद्म० उ० १९६*)।

आत्रेयी—**अत्रि** की एक पुत्री और महर्षि अंगिरा की पत्नी। अपने पति के उग्र स्वभाव को शांत करने के लिये इन्होंने नदी का रूप धारण किया, जिसमें आप्लावन करने से अंगिरा का स्वभाव शांत हो गया (*ब्रह्म० १४४*)।

आदम—मुसलमानों तथा ईसाइयों के मतानुसार सृष्टि के आदि-पुरुष। यथा—आदम आदि सुद्धि नहीं पावा—*कबीर*। शैतान के बहकाने पर इन्होंने निषिद्ध फल खा लिया था, अतः परमात्मा ने इन्हें स्वर्ग से नीचे गिरा दिया। इनकी पत्नी का नाम हौवा था।

आदर्शवाद (*Idealism*)—एक साहित्यिक रचना अथवा उसका लेखक आदर्शवादी कहलाता है यदि वह रचना (क) नैतिक और सौंदर्य विषयक मूल्यों पर बल देती है, (ख) मनुष्य के आध्यात्मिक और उसके भौतिक जीवन और मृत्यु के ऊपर उसके अलौकिक और विश्वव्यापी महत्त्व को अपना विषय बना लेती है (इस रूप में आदर्शवाद प्रकृतिवाद का विरोधी है), (ग) उसमें पात्रों का चित्रण इस प्रकार से किया जाता है कि उनकी परिष्कृत और सौम्य प्रकृति प्रकट हो और उनके साधारण, भद्दे और घृणित स्वभाव की अवहेलना हो (इस रूप में यह यथार्थवाद का विरोधी है), (घ) उसमें कथावस्तु के रहस्योद्घाटन के समय भविष्य के प्रति आशा और श्रद्धा उत्पन्न हो। 'ख' और 'घ' रूपों में विशेष रूप से यह वाद प्रतीकवादी आंदोलन (*Symbolist Movement*) के उन कुछ पहलुओं का चित्रण करता है, जो प्रकृतिवाद (*Naturalism*) और यथार्थवाद की प्रतिक्रिया में उत्पन्न हुए थे।

आदित्य—कश्यप तथा अदिति के पुत्र जो प्राचीनतम देवताओं में हैं।

आदिनाथ—**नाथ संप्रदाय** के सर्व-प्रथम आचार्य जो परवर्त्ती संतों द्वारा शिव मान लिये गये हैं।

आनंद-रघुनंदन—**विश्वनाथसिंह** (रीवा-नरेश १७२१-४० ई०) का नाटक। इसमें केवल

पद्यात्मक संवाद ही नहीं है प्रत्युत गद्य को भी आवश्यक स्थान दिया गया है।

आनंदवर्द्धन (आ० का० ८५५-८४ ई०)—कश्मीर निवासी, संस्कृत के एक प्रसिद्ध शास्त्रज्ञ। *काव्यलोक, ध्वन्यालोक* (अनू०) और *सहृदयलोक* इनकी मुख्य प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

आनकदुंदुभि—दे० *वसुदेव*।

आनर्त्त—१ गुजरात और मालवे का एक भाग। २ उत्तर गुजरात।

आबू—सिरोही (राजस्थान) में अरावली पर्वत की शृंखला में एक चोटी। वसिष्ठ ऋषि का आश्रम यहीं था (*म० व० ८२*)। कामधेनु की विश्वामित्र से रक्षा करने के लिये वसिष्ठ ने यज्ञकुंड से परमार नामक एक वीर को उत्पन्न किया था। यह परमार राजपूतों के परमार वंश का आदि-पुरुष था। यहाँ पर अंबा भवानी का प्रसिद्ध मंदिर है। जैनियों की पांच पवित्र पहाड़ियों में यह एक है और ऋषभदेव और नेमिनाथ के मंदिर यहीं पर स्थित हैं।

आभार—तू अष्ट जामै जपै राम को नाम ना भूल तौहँ गुरुदेव आभार (८ त=२४ व० छंद)। इसका उदाहरण उपर्युक्त लक्षण में ही है।

आभीर—१ गुजरात का दक्षिण-पूर्वी भाग। *विष्णु०* के अनुसार आभीरों का देश सिंधु नदी के पूर्व में था। *ब्रह्मांड* के अनुसार सिंधु नदी आभीरों के देश में से होकर बहती थी। *म०* के अनुसार आभीर लोग समुद्र-तट के निकट और गुजरात में सोमनाथ के समीप सरस्वती नामक नदी के किनारे निवास करते थे। सर हेनरी एलियट का कथन है कि तापती से लेकर देवगढ़ तक भारत का पश्चिमी तट आभीर कहलाता था। दे० *अपभ्रंश*।

आम—दे० *सहकार*।

आमुख—नाटक की प्रस्तावना। नाटक में वह दृश्य जहां पर नटी, विदूषक या पारिपार्शिवक सूत्रधार के साथ अपने कार्य से संबद्ध इस प्रकार का वार्त्तालाप करते हैं, जिससे नाटक की कथा की सूचना मिल जाए। इसके पाँच भेद होते हैं—*उद्घात्यक, कथोद्घात, प्रयोगतिशय, प्रवर्त्तक* और *अवगलित*। आजकल कुछ लोग किसी ग्रंथ की भूमिका के लिये 'आमुख' शब्द का प्रयोग करने लग गये हैं।

आरंभ अवस्था—दे० *अवस्था*।

आरभटी वृत्ति—दे० *वृत्ति*।

आरसीप्रसाद सिंह (१९११ ई०-)—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *कलापी* (१९३८), *कलेजे के टुकड़े, आरसी* (काव्य-संग्रह), *पंचपल्लव, खोटा सिक्का* कहानी (कहानी-संग्रह) आदि हैं।

आरुणि—दे० *उद्दालक आरुणि*।

आर्या—आदौ नीजे बारा, दूजे नौ नौ कलान को जुध रौ, चौथे तिथि आर्यासो, विषमगणौ-जन सु गंतक रौ (विषम १२, सम क्रमशः १८, १५, मा० छंद)। उ०—रामा रामा रामा,/आठौ यामा जपौ यही नामा।/त्यागौ सारे कामा,/पैही वैकुंठ विश्रामा॥

आर्यावर्त्त—भारत का उत्तरीय भाग जो हिमालय और विंध्य पर्वतों के मध्य में स्थित है (*मनु संहिता २.२२*)।

आर्ष-प्रयोग—शब्दों का वह व्यवहार या प्रयोग जो व्याकरण के नियमानुकूल न हो, परंतु प्राचीन ऋषि-प्रणीत ग्रंथों में प्राप्त हो । ऐसे प्रयोगों का अनुकरण नहीं किया जाता, यद्यपि इन्हें अशुद्ध भी नहीं माना जाता ।

आलंबन—काव्य व नाटक आदि में वे नायक-नायिकादि जिनके आश्रय में किसी रस का स्थायी-भाव उद्‌बुद्ध होता हो । यथा—राम (आश्रय) के हृदय में रति नामक स्थायी-भाव को उद्‌बुद्ध करने के लिये सीता आलंबन-विभाव है ।

आलम—अकबर (१५४२-१६०५ ई०) के समकालीन एक मुसलमान कवि और *माधवानल-काम कंदला* के रचयिता ।

आलम और शेख़—(र० का० १६८३-१७०३ ई०)—कवि । कहा जाता है कि आलम जाति के ब्राह्मण थे और औरंगजेब के पुत्र मुअ-ज़्ज़म (सम्राट् बहादुरशाह) के आश्रित थे । शेख़ एक रंगरेज़िन थी जिसके प्रेम में फँस कर आलम मुसलमान हो गये । शेख़ एक अच्छी प्रत्युत्पन्नमति कवयित्री थी । *आलम केलि* में आलम और शेख़ की रचनाएँ संकलित हैं । ये उत्कृष्ट शृंगारिक कवि हैं ।

आल्हा—आठ आठ पंद्रह पर यति कर भाषौ वीर छंद अभिराम (३१ (१६, १५) मा० छंद, अंत ग ल) । उ०—खट खट खट खट तेगा बाजै, बाजै छपक छपक तलवार । इसका अन्य नाम वीर भी है ।

***आल्हाखंड*—जगनिक** (११७३ ई०) का पूर्वी हिंदी और आल्हा छंद में एक काव्य, जिसकी कोई हस्तलिखित प्रति प्राप्त न हो सकी । १८८० में चार्ल्ज़ एलियट ने अनेक लोगों के मुख से सुनकर इसके गीतों का संकलन किया । जॉर्ज ग्रियर्सन ने भी इसी प्रकार का एक संग्रह तैयार करवाया था । *आल्हाखंड* के कुछ खंडों का अनुवाद अंग्रेज़ी भाषा में हुआ है ।

इसमें कालिंजर के परमाल (शुद्ध नाम परमार्दिदेव) के दो सामंत—आल्ह, ऊदल की अपूर्व वीरता का वर्णन है । १२ वर्ष की ही अवस्था में इन वीरों ने अपने पिता दस्सराज (देशराज) और चचा बच्छराज के घातक राजा करिंगराय (कलिंगराय) को युद्ध में मारकर बदला लिया था । दिल्ली-नरेश पृथ्वीराज ने इन वीरों के घोड़े माँगे थे पर इनके इनकार कर देने पर पृथ्वीराज ने महोबे पर चढ़ाई कर दी । एक ओर पृथ्वीराज की सेनाएँ डटी थीं तो दूसरी ओर परमार्दिदेव और जयचंद की । भाई-भाई का यह युद्ध 'महोबे का महाभारत' के नाम से प्रसिद्ध है ।

आल्हा में ५२ लड़ाइयों का वर्णन मिलता है । इनमें २३ मुख्य ये हैं—१ महोबे की लड़ाई । २ माँडोगढ़ की लड़ाई । ३ सिरसा की पहिली लड़ाई । ४ नैनागढ़ की लड़ाई, आल्हा का विवाह । ५ पथरीगढ़ की लड़ाई, मलखान का विवाह । ६ चंद्रावलि की चौथ की लड़ाई । ७ दिल्ली की लड़ाई । ८ नर-वरगढ़ की लड़ाई, ऊदल का विवाह । ९ इंदल-हरण की लड़ाई । १० बलख-बुखारे की लड़ाई, इंदल का विवाह । ११ लाखन राना का विवाह । १२ गाँजर की लड़ाई । १३ लाखन का गौना । १४ सिरसागढ़ की दूसरी लड़ाई । १५ भुजरियों की लड़ाई । १६ नदिया बेतवा की लड़ाई । १७ ऊदल-हरण की लड़ाई । १८ बेला के गौने की पहिली लड़ाई । १९ बेला के गौने की दूसरी लड़ाई । २० बेला ताहर की लड़ाई । २१ चंदन

बगिया की लड़ाई। २२ चंदन खंभ उखाड़ने की लड़ाई। २३ बेला का सती होना।

आल्हा-ऊदल के अतिरिक्त इसमें मलखान, लाखन, ब्रह्माजित् और ताल्हन सैयद आदि की वीरता का भी वर्णन है।

गीति-काव्य होने से यह काव्य मौखिक-परंपरा पर ही रहा है, अतः इसकी भाषा अपने मूलरूप से सर्वथा परिवर्तित हो गई, यहाँ तक कि कई नवीन शस्त्रास्त्रों (बंदूक, पिस्तौल आदि) के नाम भी इसमें आ गये हैं। यद्यपि इस रचना ने साहित्य में कोई प्रमुख स्थान नहीं बनाया, तथापि यह जन-समूह की निधि है। आज भी वर्षा ऋतु में पूर्वी भारत के हिंदी भाषा-भाषी क्षेत्रों (पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यभारत और मध्य प्रदेश के उत्तरीय भाग) में *आल्हा* के गीत गूंजते हैं।

आवृत्ति दीपक—वह अर्थालंकार जिसमें एक ही शब्द, या अर्थ, या शब्द और अर्थ दोनों की आवृत्ति होती है। इसके तीन भेद हैं—

१ *शब्दावृत्ति*—जिसमें एक ही शब्द अनेक बार अन्यान्य अर्थों में आता हो। उ०—पनिहारी पानी भरत, तू कत भरत उसास। डग न भरत मग रुकि रह्यौ, कहु पंथी! किहि आस? यहाँ 'भरत' शब्द का क्रमशः पानी भरना, उच्छ्वास मारना और पग आगे बढ़ाना अर्थ है।

२ *अर्थावृत्ति*—जिसमें एकार्थ वाचक अनेक शब्दों की आवृत्ति होती हो। उ०—नैन सकुचैं न, नैन नैसुक न लाजें री।—*दूलह*। यहाँ सकुचाने और लजाने के अर्थ सम हैं।

३ *शब्दार्थवृत्ति*—जिसमें एक ही शब्द एक ही अर्थ में व्याहृत होता हो। उ०—विषयिन के संतोष नहिं, नहिं लोभिन के लाज। बार-बधुन के नेह नहिं, नहिं नदियन के पाज॥ यहाँ 'नहिं' क्रियापद एक ही अर्थ में चार बार प्रयुक्त हुआ है।

आस्तीक (आस्तिक)—एक ऋषि जो जरत्कारु और तक्षक की बहिन से उत्पन्न हुए थे। इन्होंने ही जनमेजय से नाग-यज्ञ बंद करने की प्रार्थना की। परिणाम-स्वरूप यज्ञ बंद हुआ और तक्षक की जीवन रक्षा हुई। इस प्रकार इन्होंने नाग जाति का सर्वनाश होने से बचाया (*मा० आ० ४८, ५१, ५३, ५८*)।

इ

इंदुमती—विदर्भराज की कन्या जिसने राजा अज को स्वयंवर में अपना पति बनाया था। पूर्वजन्म में यह हरिणी नामक अप्सरा थी जो तृणबिंदु ऋषि की तपस्या भंग करने के लिये भेजी गई थी। ऋषि के शाप से यह विदर्भ-राज के यहाँ उत्पन्न हुई और पारिजात पुष्प को देखने से पुनः स्वर्ग चली गई।

इंदुवदना—भौजि सुनु गंग छवि इंदुवदनासी (भ ज स न ग ग=१४ व० छंद)। उ०—भौजि! सुनु गागरि न पैहहु उतारी।/ बंधु मम नाम जब ताइँ न उचारी॥

इंद्र—कश्यप और अदिति के पुत्र जो वृष्टि के देवता हैं। ये देवताओं और स्वर्ग के राजा हैं। इनका वाहन **ऐरावत** और अस्त्र वज्र है। इनकी पत्नी का नाम **शची** और पुत्र का नाम **जयंत** है। इनकी सभा का नाम सुधर्मा है जिसमें देवता, गंधर्व और अप्सराएँ रहती हैं। इनकी नगरी **अमरावती** और उद्यान **नंदन** है। **उच्चैःश्रवा** इनका घोड़ा और मातलि

सारथि है। **वृत्रासुर, नमुचि**, शंबर, विरोचन आदि इनके शत्रु हैं। अहल्या (दे० यथा०) का सतीत्व भंग करने पर गौतम ने इन्हें 'सहस्र-छिद्र' हो जाने का शाप दिया। सीता-स्वयंवर के अवसर पर राम के दर्शन करके गौतम के शाप से ये मुक्त हुए थे। पर्वतों के पंख इन्होंने ही काटे थे। मेघनाद (दे० यथा०) ने इन्हें पराजित कर दिया था। दे० *शिवि*, नहुष। इंद्र के पर्य्याय०—मघवा, पाकशासन, शक्र, पुरंदर, वज्री, वासव, सहस्राक्ष, पुरुहुत, सुरपति, शचीपति, देवराज, शतक्रतु, महेंद्र, कौशिक।

इंद्रजित्—इंद्र को जीतने वाला, **मेघनाद**।

इंद्रद्युम्न—१ द्रविड़ देश का एक राजा। उचित सत्कार न करने पर अगस्त्य ने इसे शाप द्वारा हाथी बना दिया था। प्रसिद्ध 'गज-ग्राह' की कथा का गज यही है। दे० *गज*। २ मालव देश का एक राजा जिसने जगन्नाथ का मंदिर बनवाया था।

इंद्रप्रस्थ—प्राचीन दिल्ली नगर जो यमुना नदी के तीर पर फिरोज़शाह कोटिला और हुमायूँ के मक़बरे के मध्य में बसा हुआ था। पुराने क़िले का एक प्रसिद्ध नाम इंद्रपत भी है। वनवास करने से पूर्व पांडवों की यही राजधानी थी। *महाभारत* में इसको 'बृहस्थल' भी कहा है। यह **खांडववन** का भाग था और इसका नाम 'खांडवप्रस्थ' भी था।

इंद्रवंशा—है इंद्रवंशा जहं तात जोर है (त त ज र=१२ व० छंद)। उ०—तात ! जरा आ लख तू विचारि ही,/ को मार को, दे सुख दुःख जीव ही।

इंद्रवज्रा—तात जगो गावहु इंद्र वज्रा (त त ज ग ग=११ व० छंद)। उ०—तू मंगला मंगलकारिणी है,/ सद्भक्त के धामविहारिणी है।

इंद्राणी—इंद्र की पत्नी, **शची**।

इंद्रावती—**नूरमुहम्मद** (आ० का० १७४४ ई०) का काव्य जिसमें राजकुमार राजकुँवर और राजकुमारी इंद्रावती की प्रेम-कथा है। दे० *प्रेम-काव्य*।

इंद्रासन—१ इंद्र का आसन। २ राजसिंहासन। यथा—माँझ ऊँच इंद्रासन साजा। गंध्रपसेन बैठ तहँ राजा—*जायसी*।

इंशाअल्लाखाँ (१७६४-१८१८ ई०)—प्रसिद्ध उर्दू-कवि। हिंदी-गद्य में *रानी केतकी की कहानी या उदय भान चरित* के रचयिता। इस पुस्तक में इन्होंने बाहर की बोली (अरबी, फ़ारसी, तुर्की), गँवारी (ब्रज-भाषा, अवधी आदि) और भाखा (संस्कृत के शब्दों का मेल) से बचने की प्रतिज्ञा की है और पुस्तक को ठेठ हिंदी में लिखने का प्रयत्न किया है। ऐसा करने में ये सफल भी हुए हैं। इनकी भाषा में शुद्ध तात्कालिक रूप दिखाई पड़ता है, किंतु वाक्य-रचना में ये फ़ारसी के प्रभाव से बच नहीं सके हैं।

इक्षुमती—कालीनदी (पूर्वी) जो रोहिलखंड, कुमाँयू और कन्नौज के ज़िले में बहती है।

इक्ष्वाकु—सूर्यवंश के प्रथम राजा जिनका जन्म वैवस्वत मनु की छींक से हुआ था (*भा० ६. ८ आदि*)।

इड़ा—१ सायण के अनुसार यह विश्व की शासिका देवी है। एक बार मनु ने संतति-प्राप्ति के लिये यज्ञ किया जिसमें से एक कन्या निकली। इसका नाम इड़ा पड़ा (*श० ब्रा० १. ८. १. ७-११*)। एक अन्य मत के अनुसार मनु की संबंधी और यज्ञतत्त्व का प्रकाशन करने वाली एक स्त्री, जिसने मनु को यज्ञ में अग्नि-स्थापन का क्रम उचित रूप से सिखाया, जिसके कारण मनु के यज्ञ सफल हुए। यज्ञ सफल होने से प्रजा, पशु समृद्धिशाली हो गये (*तै० ब्रा० १. १. ४*)। एक बार इड़ा मनु के पास गई। उस समय देवों ने प्रत्यक्ष और असुरों ने अप्रत्यक्ष रूप से इड़ा को अपनी ओर बुलाया, पर इड़ा देवों के पास ही गई। यह देख समस्त प्राणी भी देवों के पास चले गये और उन्होंने असुरों का त्याग कर दिया (*तै० सं० १.७.१*)। वेदों में इड़ा बुद्धि की प्रतीक है। जयशंकर प्रसाद-कृत *कामायनी* में मनु को इसकी ओर आकृष्ट दिखाया गया है। पर बाद में इड़ा उनकी पुत्र-वधू बनती है। साथ ही इसे तर्क या बुद्धि की देवी माना है। २ एक नाड़ी। दे० *इला*।

इतिवृत्त—ऐतिहासिक तथ्य मात्र। केवल इतिवृत्त पर आश्रित कविवाणी निर्जीव तथा चमत्कारहीन होती है।

इन्सान—सूफ़ीमत में ज्ञानी मनुष्य के लिये इस शब्द का प्रयोग होता है।

इबलीस—शैतानों का प्रधान। ईश्वर की आज्ञा न पालन करने पर इसे स्वर्ग से निर्वासित कर दिया था।

इब्राहिम—एक प्रसिद्ध पैगंबर जो 'परमात्मा के मित्र' के नाम से पुकारे जाते हैं।

इब्राहीम—लोदीवंशी, भारत का एक बादशाह (१५१७-२६ ई०) जिसे बाबर ने पानीपत के मैदान में परास्त किया था।

इब्सेन (Ibsen) (१८२८-१९०६ ई०)—नार्वे निवासी प्रसिद्ध नाटककार, जिनकी २ रचनाएँ *गुड़िया का घर* और *समाज के स्तंभ* नाम से अनूदित हैं। इन्होंने नाटकीय आदर्शों में कई परिवर्तन किये। नाटकों का विषय ऐतिहासिक न रहकर वर्त्तमान समाज और उसकी समस्याएँ हो गया। नाटक अभिजातवर्ग तक ही सीमित नहीं रहे। व्यक्ति-व्यक्ति के द्वेष की अपेक्षा सामाजिक संस्थाओं के प्रति विद्रोह अधिक दिखाया जाने लगा। बाह्य संघर्ष की अपेक्षा आंतरिक संघर्ष को प्रधानता मिली। स्वगत कथन आदि कम हो गये और नाटक स्वाभाविकता की ओर अधिक बढ़ा। इब्सन ने आधुनिक नाटकों को सबसे अधिक प्रभावित किया है।

इरावत्—उलूपी और अर्जुन का पुत्र जो महाभारत-युद्ध में आर्यश्रृंग राक्षस द्वारा मारा गया (*म० भी० ९०*)।

इल—वैवस्वत मनु का पुत्र। आखेट खेलते हुए कैलास में जाकर जब इसने उत्पात किया, तब पार्वती ने इसे स्त्री होने का शाप दिया। स्त्री बनने के पश्चात् इसका विवाह बुध से हुआ। **पुरूरवा** इसीका पुत्र था (*मत्स्य० ११-१२*)। बाद में इसने बुध की आराधना की जिससे यह सुद्युम्न नाम से पुरुष बन गया (*वा० रा० उ० ८७-९०*) दे० *इला*।

इला—१ वैवस्वत मनु की कन्या (*भा० ९.१ आदि*), बुध की पत्नी तथा पुरूरवा की माता। २ **मेरुदंड** के बाएँ ओर की नाड़ी जिसका अंत नासिका के दाहिने ओर रहता है। इस नाड़ी

से सदैव अमृत का प्रवाह होता है। इसे इड़ा भी कहते हैं।

इलाचंद्र जोशी (१९०२ ई०-)--उपन्यासकार। इनकी मुख्य रचनाएँ *पर्दे की रानी* (१९४१), *संन्यासी*, *प्रेत और छाया* (१९४४), *मुक्तिपथ* (१९४८) आदि हैं।

इन्होंने अपने उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक चित्रण पर अधिक बल दिया है। उनमें कहीं-कहीं मनोविश्लेषण शास्त्र के सिद्धांतों का प्रभाव भी दिखाई देता है। उसमें मनुष्य की सारी क्रियाएँ उसकी उपचेतना में दबी हुई वासनाओं के फलस्वरूप दिखाई जाती हैं।

इलिज़बथ—इंगलैंड की महारानी (१५५८-१६०३ ई०)। ये अकबर की समकालीन थीं।

इलेत्मिश—भारत का गुलामवंशी सम्राट् (१२११-३६ ई०)।

इल्वल—एक असुर। दे० *वातापि*, *लोपामुद्रा*।

इसराफ़ील—एक स्वर्ग-दूत जो क़यामत के समय तुरही बजाकर मृत लोगों को जगाएँगे।

इस्त्वार द ला लितेरात्यूर ऐंदूई ए ऐंदुस्तानी—गार्सैं द तासी (Garcin de Tassy) द्वारा फ्रांसीसी भाषा में लिखित (प्रथम भाग १८३९, द्वितीय भाग १८४६ ई०, अनू०) हिंदी-साहित्य का सर्व-प्रथम इतिहास, जिसमें पहिले कवियों की जीवनियाँ हैं, फिर उनके ग्रंथों के नाम-निर्देश।

ई

ईद—मुसलमानों का एक त्यौहार। रमज़ान मास के ३० दिन के लंबे काल के उपरांत जिस दिन दूज का चाँद दृष्टिगत होता है, उसके दूसरे दिवस यह त्यौहार मनाया जाता है। हिंदी कहावत के अनुसार 'ईद का चाँद' उस व्यक्ति को कहते हैं जो लंबी अवधि के पश्चात् मिले।

ईश्वरचंद्र विद्यासागर (१८२०-९१ ई०)—बँगला भाषा के एक प्रसिद्ध लेखक जिनका एक नाटक *विधवा-विवाह* नाम से अनूदित है।

ईश्वरदास—१ (र० का० १४८९-१५१७ ई०)—एक प्रेम-कवि और *सत्यवती की कथा* (सर्व-प्रथम प्रेम-प्रबंध-काव्य) के रचयिता। २ (र० का० १५५८-१६१८ ई०)—डिंगल के एक भक्त-कवि—*हरिरस*, *बाललीला*, *गरुड़पुराण*, *सभापर्व*, *हालाभालारा*, *कुंडलियाँ*, *गुण आगम*, *रासकैलाश*, आदि के रचयिता।

ईश्वर सूरि—जैन कवि और *ललितांग चरित्र* (१५०४ ई०) के रचयिता।

ईसखिलस (Aeschylus) (५२५-४५६ ई० पू०)—एक महान् यूनानी नाटककार जिनको यूनानी दुखांत नाटकों का जन्मदाता माना गया है।

ईसप—दे० *लुक़मान*।

ईसवी सन्—ईसा के जन्मकाल से प्रारंभ हुआ माना जाने वाला सन्। पर वास्तव में यह सन् ईसा के जन्मकाल के ४ वर्ष पश्चात् चला था। ईसवी सन् विक्रमी संवत् से ५७ वर्ष कम है।

ईसा (४ ई० पू०-२९ अथवा ३० ई०)—ईसाई धर्म के प्रवर्त्तक एक महात्मा। इनकी

जीवन गाथा और शिक्षाएँ *बाइबल के नवीन ग्रंथ* में संगृहीत हैं। बेचन शर्मा पांडेय 'उग्र' ने *महात्मा ईसा* नाम से एक नाटक भी लिखा है।

ईहामृग—रूपक का एक भेद, जिसमें चार अंक होते हैं।

उ

उग्र—दे० *बेचन शर्मा पांडेय 'उग्र'*।

उग्रसेन—मथुरा के एक यदुवंशी राजा और कंस के पिता। कंस ने इन्हें राजगद्दी से उतार दिया था। कृष्ण ने **कंस** का वध करके, इनको फिर राजगद्दी देदी थी *(भा० १०.४५)*।

उच्चैःश्रवा—**समुद्रमंथन** से निकला सफेद घोड़ा जो इंद्र को मिला। इसके कान खड़े रहते थे। इसके सात मुख थे।

उज्जयिनी (उज्जैन)—मालवा की प्राचीन राजधानी। **विक्रमादित्य** की राजधानी यही थी।

उड़नखटोला—दे० *पुष्पक*।

उत्कल—उत्कलिंग। उड़ीसा प्रदेश का प्राचीन नाम।

उत्तंक—वेद ऋषि के शिष्य जो बड़े गुरु-भक्त थे। गुरु-दक्षिणा में गुरू-पत्नी को इन्होंने राजा पौष्य की पतिव्रता पत्नी के कुंडल लाकर दिये थे *(म० आ० ३)*। महाभारत-युद्ध में कौरवों के विनाश की बात सुनकर ये इतने कुपित हुए कि कृष्ण को शाप देने के लिये उद्यत हो गये थे। कृष्ण ने अध्यातमज्ञान का वर्णन कर इन्हें विश्वरूप के दर्शन कराए और कहा—'जब कौरव साम, दाम, दंड और भेद से न माने, तब उनका वध किया गया।'

उत्तम—उत्तानपाद की छोटी रानी सुरुचि से उत्पन्न पुत्र जो ध्रुव का सौतेला भाई था। यह एक यक्ष द्वारा मारा गया *(भा० ४.१०)*।

उत्तर—विराट और सुदेष्णा का पुत्र। एक बार इसने कौरवों को पराजित कर दिया था। महाभारत-युद्ध में यह **शल्य** द्वारा मारा गया।

उत्तर कोसल—अयोध्या के आस-पास का प्रदेश।

उत्तररामचरित—दे० *भवभूति*।

उत्तरा—**विराट** की कन्या। **अज्ञातवास** के समय बृहन्नला के रूप में अर्जुन ने इसे संगीत-नृत्यादि की शिक्षा दी थी। अर्जुन की वीरता से प्रसन्न होकर विराट इसका विवाह अर्जुन से करना चाहते थे, किंतु अर्जुन ने इसे अपने पुत्र अभिमन्यु के लिये अंगीकार किया। अभिमन्यु की मृत्यु के समय यह गर्भवती थी। **अश्वत्थामा** ने इसका गर्भपात करने के लिये इसपर एक अस्त्र फेंका था, किंतु कृष्ण ने इसकी गर्भ-रक्षा की *(म० सौ० १५-१६)*। परीक्षित् इसके पुत्र थे।

उत्तराखंड—हिमालय के समीप का प्रदेश।

उत्तानपाद—स्वायंभुव मनु के पुत्र एक राजा और ध्रुव (दे० *यथा०*) के पिता।

उत्पत्तिवाद—रस की व्याख्या के ४ संप्रदायों में से एक। दे० *रस संप्रदाय*।

उत्प्रेक्षा—एक अर्थालंकार जिसमें प्रस्तुत (उपमेय) में अप्रस्तुत (उपमान) के रूप की संभावना की जाती है। इसके वाचक शब्द मनु, जनु, मानो, जानो, मनहुँ, निश्चय, जान इत्यादि हैं। इन शब्दों की विद्यमानता में वाच्य-उत्प्रेक्षा होतो है, जैसे उसका 'मुख मानो चंद्रमा है'। किंतु वाचक शब्द का प्रयोग तो न हो पर अर्थ करते समय उसकी उपस्थिति हो जाए, तो वह उत्प्रेक्षा प्रत्यमाना कहलाती है, जैसे प्रातःकाल सूर्य की तीव्र किरणों के भय से चंद्रमा छिप गया। यहाँ जड़ चंद्रमा को सूर्य-किरणों से भय नहीं हो सकता, अतः वाक्य का अर्थ करते समय इसमें 'मानो' जोड़कर इस प्रकार अर्थ किया जाता है कि प्रातःकाल मानो सूर्य की तीव्र किरणों के भय से चंद्रमा छिप गया। उत्प्रेक्षा के ये दोनों भेद फिर तीन प्रकार के हो जाते हैं।

उदयन—१ एक प्राचीन दार्शनिक आचार्य और *न्यायकुसुमांजलि*, *आत्मतत्त्वविवेक* आदि के रचयिता। २ वत्स देश का एक राजा और गौतम बुद्ध का समकालीन। मगध के राजा प्रद्योत की पुत्री पद्मावती से इसका विवाह हुआ था।

उदयनाथ, कवींद्र (जन्म १६७९ ई०)—**कालिदास त्रिवेदी** के पुत्र एक रीति-कवि और *रस-चंद्रोदय*, *विनोद चंद्रिका* तथा *जोगलीला* के रचयिता।

उदयशंकर भट्ट (१८९७ ई०-)—नाटककार और कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ ये हैं—

नाटक—*विक्रमादित्य* (ऐतिहासिक), *दाहर अथवा सिंध पतन* (ऐतिहासिक, वीर-रस प्रधान), *अंबा* (पौराणिक, इसमें प्रासंगिक रूप से विवाह-समस्या का चित्रण है), *सगरविजय* (सगर की अपने पिता को राज्यच्युत करने वाले दुर्जय पर विजय का वर्णन), *मत्स्यगंधा* और *विश्वामित्र* (दोनों गीति–नाट्य, इनमें भाव का प्राधान्य है और पश्चात्ताप की भावना दृष्टिगोचर होती है), *राधा*, *कमला* (इसमें जमींदारी प्रथा के विरुद्ध आंदोलन की छाप के साथ रोमांस भी है), *एकला चलो रे*, *कालिदास* (रेडियो नाटक), *शक विजय* (शकों के पश्चात् आर्य संस्कृति की पुनः स्थापना का वर्णन), *आदिम युग* (पौराणिक), *समस्या का अंत*, *धूम शिखा* (एकांकी संग्रह)। इनके *कुमारसंभव* में आचार और कला की समस्या है। लेखक ने सरस्वती द्वारा कला का ही समर्थन करवाया है।

काव्य—*तक्षशिला* (१९३१, प्रबंध-काव्य), *राका* (१९३५), *मानसी*, *विसर्जन* (दोनों १९३९), *युग-दीप* (१९४५), *यथार्थ और कल्पना* (काव्य-संग्रह) आदि।

उपन्यास—*वह जो मैंने देखा* (तीन भाग), *नये मोड़*।

इनके नाटकों में इतिवृत्त अधिकतर पौराणिक है। इनकी कविताओं में पहिले निराशा व वेदना, और फिर विद्रोह और पुरुषार्थ की झलक मिलती है। *युग-दीप* में इनकी प्रवृत्ति प्रगतिवाद की ओर दिखाई देती है। *यथार्थ और कल्पना* में इनकी रचनाएँ **यथार्थवाद** और **आदर्शवाद** दोनों से प्रभावित हैं।

उदात्त—एक अर्थालंकार जिसके दो भेद हैं—

१ प्रथम उदात्त—जिसमें अत्यंत असंभव लोकोत्तर संपत्ति का वर्णन हो। उ०—जेहि तिरहुति तेहि समै निहारी। / तेहि लघु लगे भुवन दस चारी॥ जो संपदा नीच गृह सोहा। सो बिलोकि सुरनायक मोहा॥ यहाँ तिरहुति (जनक का राज्य) के संमुख १४ भुवन लघु

प्रतीत होने लगे। नीच गृह की संपत्ति इंद्र को लुभाने वाली हो गई।

२ *द्वितीय उदात्त*—जिसमें किसी ऋद्धिमान् के योग से प्रशंसा हो। ऋद्धियाँ आठ होती हैं—योग, सिद्धि, लक्ष्मी, प्राणदा, मंगल्या, चेतमीया, समृद्ध और संपन्न। उ०—मानुस हौं, तौ वही 'रसखानि' बसौं नित गोकुल गाँव के ग्वारन;/जो पसु हौं, तौ कहा बसु मेरो, चरौं नित नंद कि धेनु-मँझारन।—*रसखान*।

उदासी—नानकपंथी साधुओं का एक भेद।

उद्गता—प्रथम चरण में स ज स ल, द्वितीय चरण में न स ज ग, तृतीय में भ न ज ल ग और चतुर्थ में स ज स ज ग होते हैं। उ०—१ सब छोड़िये असत काम। २ शरण गहिये सदा हरी। ३ दुःख भव जनित जावें टरी। ४ भजये अहोनिशि हरी हरी हरी॥

उद्दालक आरुणि—धौम्य ऋषि का अत्यंत गुरु-भक्त और आज्ञाकारी शिष्य। गुरु ने इसकी अगाध भक्ति देखकर इसका नाम 'उद्दालक' रख दिया था (*म० आ० ३*)।

उद्दिष्ट—छंद के निर्दिष्ट रूप की **प्रस्तार** के क्रम में स्थिति बताने वाला **प्रत्यय**। वर्णिक उद्दिष्ट में **सूची** के अंक आधे आधे स्थापित करो, मात्रिक में जहाँ गुरु का चिह्न हो, वहाँ ऊपर और नीचे भी सूची के अंक लिखो। गुरु चिह्नों के ऊपर जो संख्या हो, उन सब को छंद के पूर्णांक में से घटा दो। जो शेष रहेगा, वही उत्तर है। यथा—

वर्णिक उद्दिष्ट	मात्रिक उद्दिष्ट
४ वर्णों में यह ऽ।ऽ। कौनसा भेद है ?	६ मात्राओं में से यह ऽ।ऽ। कौनसा भेद है ?
अर्द्धसूची—१ २ ४ ८ ऽ । ऽ ।	पूर्णसूची १ ३ ५ १३ ऽ । ऽ । २ ८
पूर्णांक १६	पूर्णांक १३
गुरु के चिह्नों पर ४ और १ हैं, दोनों मिलकर ५ हुए। ५ को पूर्णांक ८×२=१६ में से घटाया शेष ११ रहे। अतएव यह ११वाँ भेद है।	गुरु चिह्नों पर ५ और १ हैं। दोनों मिलकर ६: हुए। ६ को पूर्णांक १३ में से घटाया, तो शेष ७ रहे। अतएव यह ७ वाँ भेद है।

१३ २४ २१

उद्दीपन—काव्य में वे **विभाव** जो **स्थायी-भाव** को उत्तेजित करते हैं। यथा—आलंबनभूत नायकादि की चेष्टाएँ,रूप, भूषण, उपयुक्त देश-काल, चंद्रमा, चंदन, कोकिल, भ्रमर आदि की तान।

उद्धव—देवभाग के पुत्र (*भा० ६.२४*) और कृष्ण के यादव सखा जो गंभीर राजनीतिक परामर्शदाता होने के साथ-साथ ज्ञानवादी भी थे। इन्होंने बृहस्पति के नीति-शास्त्र का अध्ययन किया था। नंद, यशोदा और गोपियों को समझाने के लिये कृष्ण ने इनको गोकुल और वृंदावन भेजा, पर वहाँ जाने पर उनकी कृष्ण से प्रेमपूर्ण बातें सुन ये भी प्रेम में रँग गये। गोपियों ने इनके ज्ञानवाद का खूब मज़ाक उड़ाया था। इनका और गोपियों का संवाद साहित्य में *भ्रमरगीत* के नाम से प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि उद्धव को अपने ज्ञान तथा अपनी निर्गुण भक्ति का गर्व था, जिसे दूर करने के लिये कृष्ण ने इन्हें गोपियों के पास भेजा था (*भा० ११.७*)।

उद्धव शतक—**जगन्नाथदास 'रत्नाकर'** का ब्रज-भाषा में एक काव्य (१९३१ ई०) जिसमें गोपियों और उद्धव का संवाद है। इसमें एक प्राचीन परिपाटी का पालन करते हुए भी कवि कुछ नवीनता ला सका है। यह भाव-प्रधान ग्रंथ है। गोपियों और कृष्ण के प्रेम में कवि ने दोनों की विरह-वेदना दिखलाई है। इसमें भक्तिकालीन भावनाओं को रीति-कालीन अलंकारिता के साथ व्यक्त किया है। इसमें गोपियों की वैयक्तिक प्रेम निष्ठा और **नंददास** की गोपियों की तार्किकता का संमिश्रण है।

उपचारवक्रता—"मुख चंद्र है', इसमें दो विभिन्न पदार्थों के अति सादृश्य के कारण होने वाली अभेद प्रतीति को उपचार कहते हैं। उपचारवक्रता के लिये दोनों पदार्थों में दूरांतर आवश्यक है। उपचारवक्रता काव्य में विशेष सरसता की जननी होती है। सादृश्य का, जिसके ऊपर उपमा-रूपक आदि अनेक सादृश्य-मूलक अलंकार निर्भर हैं, इस वक्रता में विशेष स्थान होने के कारण इसकी महत्ता अधिक बढ़ जाती है। सूचीभेद्य तम में सुई द्वारा अमूर्त्त पदार्थ में छंद का मूर्त्त-आरोप इस उपचारवक्रता का एक प्रसिद्ध उदाहरण है।"

उपजाति—इंद्रवज्रा (त त ज ग ग) और उपेंद्रवज्रा (ज त ज ग ग) के पादों के संयोग से उपजाति बना करती है। कई आचार्यों के मतानुसार किन्हीं भी दो छंदों के मेल वाले छंद को उपजाति कहते हैं, यथा वंशस्थ+इंद्रवंशा। इंद्रवज्रा और उपेंद्रवज्रा के मेल से १४ प्रकार की उपजाति बन सकती हैं। उ०—१ परोपकारी बनवीर ! आओ (उपेंद्र०)। २ नीचे पड़े भारत को उठाओ (इंद्र०)। ३ हे मित्र ! त्यागो मद मोह माया (इंद्र०)। ४ नहीं रहेगी यह निसकाया (उपेंद्र०)।

उपदेशात्मकता—साहित्यिक ग्रंथों में नैतिकता या सदाचार संबंधी उपदेश देने की प्रवृत्ति।

उपनागर—एक **अपभ्रंश** भाषा जो **नागर** और **ब्राचड़** भाषा भाषी प्रांत के बीच बोली जाती थी।

उपनागरिका—भाषा की वह वृत्ति या शैली जिसमें माधुर्य व्यंजक वर्णों (टवर्ग को छोड़ कर, जब किसी वर्ग के वर्ण अपने अंतिम वर्ण से मिल जाते हैं, तो वे संयुक्ताक्षर मधुर हो जाते हैं। यथा—शशांक, अंग, कुंज, चंचू। र और ण भी यदि लघु हों, तो मधुर माने जाते हैं।) का प्रयोग प्रचुरता से किया जाता है।

उपनिषद्—वेद की शाखाओं के ब्राह्मण-ग्रंथों के वे अंतिम भाग जिनमें ब्रह्मविद्या अर्थात् आत्मा परमात्मा आदि का निरूपण रहता है। कोई-कोई उपनिषदें संहिताओं में भी मिलती हैं, जैसे *ईश* जो *शुक्ल यजुर्वेद* की 'काण्व संहिता' का अंतिम अध्याय है। प्रधान उपनिषदें ये हैं—*ईश, केन* वा *तलवकार* (सामवेदीय), *कठ* (कृष्णयजुर्वेदीय) *प्रश्न, मुंडक, मांडूक्य* (तीनों अथर्ववेदीय), *तैत्तिरीय* (कृष्णयजुर्वेदीय) *ऐतरेया* (ऋग्वेदीय), *छांदोग्य* (सामवेदीय) और *बृहदारण्यक* (शुक्लयजुर्वेदीय)। इनके अतिरिक्त *कौषीतकी, मैत्रायणी* और *श्वेताश्वतर* उपनिषदें भी आर्ष मानी जाती हैं। उपनिषदों की संख्या १८, ३४, ५२ और १०८ तक मानी जाती है पर इनमें से बहुत सी बहुत पीछे की बनी हुई हैं।

उपन्यास (*Novel*)—पाश्चात्य विद्वानों द्वारा की गई उपन्यास की परिभाषाओं को दृष्टि में रखते हुए गुलाबराय ने उपन्यास की परिभाषा इस प्रकार की है—'उपन्यास कार्य-कारण श्रृंखला में बंधा हुआ वह गद्य कथानक है,

जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेची-दिगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक या काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्‌घाटन किया जाता है।' उपन्यास के तत्त्व इस प्रकार हैं—कथा-वस्तु, पात्र और चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, विचार और उद्देश्य, रस और भाव, शैली। आजकल के उपन्यासकार कथावस्तु की अपेक्षा चरित्र-चित्रण पर अधिक बल देते हैं। जेम्स जॉयस और वरजीनिया वुल्फ़ के उपन्यासों में तो कथावस्तु की कोई सत्ता ही नहीं रह गई है।

हिंदी-साहित्य में साहित्यिक कथाओं का प्रारंभ इंशाअल्लाखाँ-कृत *रानी केतकी की कहानी* या *उदयभान चरित* और सदलमिश्र-कृत *नासिकेतो-पाख्यान* से हुआ। हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों में श्रीनिवासदास (१८५१ ई०) का *परीक्षा गुरु*, बालकृष्ण भट्ट-कृत *सौ अजान और एक सुजान* और *नूतन ब्रह्मचारी* तथा राधाकृष्णदास-कृत *निःसहाय हिंदू* उल्लेखनीय हैं। इन उपन्यासों की प्रवृत्ति उपदेशात्मक थी। पर इस काल में बँगला से उपन्यासों के अनुवाद ही अधिक मात्रा में हुए।

जनता की कौतूहल-तृप्ति के लिये **देवकी-नंदन खत्री** (१८६१-१९१३) ने *चंद्रकांता* और *चंद्रकांता संतति* नामक तिलस्मी और ऐयारी और **गोपालराम गहमरी** (जन्म १८७६) ने जासूसी उपन्यास लिखे। तिलस्मी और जासूसी उपन्यासों में यही अंतर है कि तिलस्मी उप-न्यासों में रहस्यमयी घटनाओं की शृंखला आगे की ओर बढ़ती है, जबकि जासूसी में पीछे की ओर। **किशोरीलाल गोस्वामी** (१८६५-१९३२) ने नर-नारी के राग के आधार पर लगभग ६५ सामाजिक उपन्यास लिखकर प्रकाशित किये। **अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'**, **लज्जा-राम महता** और **ब्रजनंदन सहाय** ने भी कुछ उपन्यास लिखे। इस समय तक बँगला के सभी अच्छे उपन्यासों के अनुवाद हो चुके थे। ऐति-हासिक उपन्यासों में बंकिमचंद्र के उपन्यास बड़े लोक-प्रिय हुए। साथ ही अंग्रेज़ी, उर्दू तथा मराठी के उपन्यासों के भी अनुवाद हुए।

'चरित्र-चित्रण और सोद्देश्य उपन्यास लिखने की दृष्टि से **प्रेमचंद** (१८८०-१९३६) ने युगांतर उपस्थित कर दिया'। इनके साहित्य में तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक परि-वर्तनों का भली भाँति चित्रण हुआ है। *सेवासदन*, *निर्मला* और *ग़बन* सामाजिक उपन्यास हैं। *रंगभूमि* में राजनीतिक आंदोलन का चित्रण है। इनके अन्य उपन्यासों में शोषित और दलित जनता के प्रति सहानुभूति है। अपने उपन्यासों में इन्होंने गांधीवाद की समझौतेपूर्ण नीति का प्रतिनिधित्व किया है। **विश्वंभरनाथ शर्मा "कौशिक"** के आदर्श प्रेमचंद के आदर्शों से भिन्न न थे। **जयशंकर प्रसाद** के *कंकाल* में समाज की बुराइयों के उद्‌घाटन के साथ निर्माण और सुधार की ओर प्रवृत्ति है। **वृंदावनलाल वर्मा** के उपन्यासों में ऐतिहासिकता के साथ-साथ स्थानीय गौरव, स्थानीय रंगत और प्रकृति-चित्रण की विशेषता है। **उषादेवी मित्रा** के उपन्यासों में भारतीय नारी के उच्च आदर्श हैं। **चंडीप्रसाद हृदयेश** ने *मंगल प्रभात* में 'एक उपदेशात्मक आदर्शवाद के सहारे बाण की-सी अलंकृत शैली का चमत्कार दिखलाया है।' **प्रतापनारायण श्रीवास्तव** ने शहरी जीवन के उच्च वर्ग का चित्र उतारा है।

सामाजिक और राजनीतिकता के क्षेत्र से निकलकर अब हिंदी-उपन्यास मनोवैज्ञानिकता की ओर अग्रसर हो रहा है। यह अंतर्मुखी प्रवृत्ति प्रेमचंद के जीवन-काल में ही आरंभ

हो गई थी। जैनेंद्रकुमार (जन्म १६०५), **इलाचंद्र जोशी** और **अज्ञेय** के उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक चित्रण पर अधिक महत्त्व दिया गया है। इन उपन्यासों में समाज की अपेक्षा व्यक्ति को अधिक महत्त्व मिला। व्यक्तियों की मनोवृत्तियों में ही सामाजिक व्यवस्था की प्रतिक्रिया द्वारा उस व्यवस्था की भलाई-बुराई की ओर संकेत रहता है। मार्क्सवाद से प्रभावित उपन्यासों में व्यक्ति के विश्लेषण के साथ समाज का सीधा चित्र भी रहता है और उसकी विषमताओं पर अधिक बल दिया जाता है। **यशपाल** के *दादा कामरेड* में समाजवादी विचारधारा का परिचय मिलता है। **राहुल सांकृत्यायन** ने *सिंह सेनापति* में प्राचीन वातावरण में गणतंत्र राज्यों के सहारे मार्क्सवादी सिद्धांतों का उद्घाटन किया है। **नरोत्तमप्रसाद नागर** भी एक प्रगतिवादी लेखक हैं। यथार्थवाद और मनोवैज्ञानिकता के आधार पर प्राचीन नैतिक भाव अपनी नैतिकता खो बैठे हैं। व्यक्ति की अपेक्षा समाज को अधिक दोषी ठहरा कर अपराधी के साथ सहानुभूति प्रकट की जाती है। पाप-पुण्य के बीच की अस्पष्ट रेखा को मिटाने का प्रयत्न किया जा रहा है, जैसे भगवतीचरण वर्मा-कृत *चित्रलेखा* में। यथार्थवादी बनने के नाम पर कुछ अश्लील उपन्यासों का भी जन्म हुआ है, जैसे ऋषभचरण जैन-कृत *चंपाकली*, **चतुरसेन शास्त्री**-कृत *अमर अभिलाषा* और बेचन शर्मा पांडेय-कृत *दिल्ली का दलाल*। आजकल के उपन्यासों में विशेष-विशेष विचार-परंपराओं के अग्रसर करने की ओर भी प्रवृत्ति है। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', **सियारामशरण गुप्त, श्रीनाथसिंह, राधिकारमणप्रसाद सिंह, उपेंद्रनाथ 'अश्क', भगवतीप्रसाद वाजपेयी, अनूपलाल मंडल, रांगेय राघव, रामेश्वर शुक्ल अंचल** आदि ने भी उपन्यास-साहित्य की अभिवृद्धि की है।

इस प्रकार हिंदी उपन्यास 'उपदेशात्मक शैली से प्रारंभ होकर तिलस्मी, ऐयारी और जासूसी उपन्यासों द्वारा मनुष्य की कौतुहल-बुद्धि को जागृत करता हुआ ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं और समस्याओं के चित्रण पर आया और उनमें उन्हीं समस्याओं के सहारे चरित्र-चित्रण की ओर रुचि बढ़ी। राजनीतिक में उसने गांधीवाद और मार्क्सवाद दोनों ही पक्ष लिये। अब वह व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक चित्रण की ओर जा रहा है।

उपपुराण—दे० *पुराण*।

उपमन्यु—धौम्य ऋषि का एक अत्यंत गुरु-भक्त शिष्य। गुरु ने इसकी परीक्षा लेने के लिये इसका खान-पान निषिद्ध कर दिया था। अंत में इसने क्षुधा से व्याकुल होकर आक के पत्ते खाने प्रारंभ कर दिये, जिससे यह अंधा हो गया और एक कुएँ में गिर पड़ा। तब गुरु ने इसे कुएँ से निकाल कर अश्विनीकुमारों से परिचर्या करवाई, जिससे इसकी आँखें ठीक हो गईं (*म० आ० ३.५६ कुं०*)।

उपमा—एक अर्थालंकार जिसमें दो वस्तुओं की समानता का चमत्कारपूर्ण वर्णन किया जाता है। उ०—श्री राधिका शचि के समान सुंदरी है। इसके सात भेद हैं—

१ *पूर्णोपमा*—जहाँ उपमा के चारों अंग (उपमेय, उपमान, साधारण धर्म, वाचक) पृथक् शब्दों द्वारा कथित हों। उ०—इंद्र सो उदार है नरेंद्र मारवाड़ को।'

२ *लुप्तोपमा*—उपमा में जहाँ एक से तीन तक अंगों का लोप हो। इसके तीन मुख्य भेद हैं—

(१) धर्मलुप्ता—जहाँ धर्म लुप्त हो। उ०—बदन सुधानिधि सो लखौ। यहाँ उज्ज्वलता धर्म का लोप है।

(२) वाचकलुप्ता—जहाँ वाचक लुप्त हो। उ०—प्रीति सों न पगें तिन्हैं कुलिस-कठोर जानि; / प्रेम परतीति तें पसीजत है पाहनो। —*कुलपति मिश्र*। यहाँ तिन्हें कुलिश (के समान) कठोर जानो का प्रयोजन है, किंतु वाचक लुप्त है।

(३) उपमानलुप्ता—जहाँ उपमान लुप्त हो। उ०—कोकिल-से, बचन मधुर जाके सुखदानि। यहाँ उपमान लुप्त है, क्योंकि कोकिल न होकर उसके वचन उपमान हैं, जिनका कथन नहीं है।

इसी प्रकार लुप्तोपमा के वाचकधर्म लुप्ता, वाचकोपमेय लुप्ता, वाचकोपमान लुप्ता और वाचकधर्मोपमान लुप्ता भी अन्य भेद हैं।

३ *मालोपमा*—जहाँ एक ही उपमेय के अनेक उपमान हों। उ०—उसका बदन कमल के समान सुंदर, पुष्प के समान कोमल और चंद्रमा के समान उज्ज्वल है।

४ *रसनोपमा*—जहाँ उपमेय क्रमशः एक दूसरे के उपमान होते चले जाएँ। उ०—बंस-सम बखत, बखत-सम ऊँचों मन, / मन-सम कर, कर-सम करी दान के। यहाँ चार वर्ग हैं, जिनमें पृथक्-पृथक् चार उपमाएँ हैं, और प्रति पहिली वाली का उपमेय दूसरी में उपमान हो जाता है, यही संबंध है।

५ *वाच्योपमा*—उ०—भौंह कमान कटाच्छ सर, समर-भूमि बिचलै न; /लाज तजे हू दुहुन के सलज सूर-से नैन। यहाँ जो उपमा सलज सूर-से नैन में है, वह केवल अभिधा द्वारा सिद्ध होने से वाच्योपमा मानी गई है।

२ *लक्ष्योपमा*—जहाँ लक्षणा से संबंधित हो। उ०—मुख सिय को है चंद्र रिपु, सुधा, मित्र मृदु बैन। / अधर बंधु बंधूक के, कज प्रभा हर नैन।

७ *व्यंग्योपमा*—उ०—अद्वितीय निज को समुझि ससि जनि हर्षित होय; / रे सठ, भुव-मंडल सकल कहा लियो तैं जोय। यहाँ व्यंग्य द्वारा चंद्रमा के समान किसी वस्तु का होना प्रकट किया गया है, जो उपमान रूप में है।

उपमान—किसी प्रस्तुत वस्तु के साथ समानता दिखलाने के लिये जिस अप्रस्तुत वस्तु का वर्णन किया जाए। यथा—'मुख कमल-सा सुंदर है।' यहाँ मुख प्रस्तुत है, अतः उपमेय है और कमल अप्रस्तुत है, इसलिये उपमान है।

उपमेय—दे० *उपमान*।

उपमेयोपमा—एक अर्थालंकार, जिसमें उपमान और उपमेय क्रमशः उपमेय और उपमान हो जाएँ। उ०—कामिनी दामिनी सी भई, दामिनी कामिनी आहि।

उपरूपक—दस मुख्य रूपकों के अतिरिक्त अठारह गौण रूपक हैं। ये इस प्रकार हैं—नाटिका, त्रोटक, गोष्ठी, सट्टक, नाट्यरासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य, प्रेक्षण, रासक, संलापक, श्रीगदित (श्रीरासिका), शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणिका, हल्लीश और भाणिका। ये सब अभिनेय हैं, अतः रूपक हैं।

उपवेद—चारों वेदों का एक-एक उपवेद है जिसमें उस-उस वेद पर आधारित विशेष विद्या का निरूपण किया गया है। ये चार हैं—*धनुर्वेद, गंधर्ववेद, आयुर्वेद* और *अर्थवेद*।

उपसुंद—दे० *सुंदोपसुंद*।

उपाख्यान—१ पुरानी कथा। २ किसी ग्रंथ के अंतर्गत अवांतर कथानक। जैसे—<u>महाभारत</u> में शकुंतलोपाख्यान।

उपेंद्रनाथ 'अश्क' (१९१० ई०-)—नाटककार, उपन्यासकार और कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *जय-पराजय* (१९३७, इसमें वृद्ध-विवाह की सामाजिक समस्या भी उपस्थित की गई है), *स्वर्ग की झलक* (१९३८, इसमें स्त्री शिक्षा और पारिवारिक जीवन की समस्या है), *क़ैद*, *उड़ान* (नाटक), *देवताओं की छाया में*, *तूफ़ान से पहिले*, *चरवाहे* (एकांकी-संग्रह), *सितारों के खेल* (१९४०), *गिरती दीवारें* (१९४६), *गर्म राख* (उपन्यास), *ऊर्मियाँ* (१९४१), *प्रात प्रदीप* (काव्य-संग्रह) आदि हैं। *गिरती दीवारें* में प्राचीन रूढ़िवाद का अंत दिखलाया गया है। इनकी कविताएँ प्रधानतया भावुकतापूर्ण और प्रगतिवादी होती हैं।

उपेंद्रवज्रा—जती जगैं गाय उपेंद्रवज्रा (ज त ज ग ग=११ व० छंद)। उ०—अनेक ब्रह्मादि न अंत पायो, / अनेकधा बेदन गीत गायो।

उभय बाई—<u>भक्तमाल</u> के अनुसार दो राजकुमारियाँ जो संत-सेवा के लिये लालायित रहती थीं।

उभयवृत्त—वे पद्य जिनमें वर्णवृत्त तथा मात्रिकवृत्त दोनों की विशेषताएँ पाई जाएँ।

उमर ख़ैयाम (मृत्यु ल० ११२३ ई०)—फ़ारसी के प्रसिद्ध कवि, जिनकी रुबाइयों के कई अनुवाद निकल चुके हैं। हालावादी कवि **हरिवंशराय 'बच्चन'** पर इनका प्रभाव है।

उमर फ़ारूक़—इस्लाम के दूसरे खलीफ़ा। **मुहम्मद** इनके दामाद थे।

उमा—हिमालय और मेना की पुत्री। इनके पति रुद्र थे।

उमादे भटियाणी री वात—डिंगल भाषा की एक गद्यमय कथा (लि० का० १७९० ई०), जिसमें जोधपुर के राव मालदे की भटियाणी रानी की प्रतिज्ञा का वर्णन है कि वह जीवन भर अपने पति से नहीं बोलेगी।

उर्दू—खड़ी बोली हिंदी का वह रूप जिसमें अरबी और फ़ारसी भाषाओं के शब्द अधिक सम्मिलित हों और जो फारसी लिपि में लिखी जाए। ग़ालिब, हाली, इक़बाल आदि इसी भाषा के प्रसिद्ध कवि हैं। उर्दू का शाब्दिक अर्थ 'सेना' है, अर्थात् वह भाषा जो 'सेना के बाज़ार' में बोली जाती थी। उर्दू का प्रारंभिक नाम 'ज़बान-ए-उर्दू-ए-मुअल्ला' था, जो संक्षिप्त होकर 'ज़बान-ए-उर्दू' और फिर केवल 'उर्दू' ही रह गया।

उर्मिला—सीरध्वज जनक की कन्या और दशरथ-पुत्र लक्ष्मण की पत्नी। दे० *साकेत*।

उर्वशी—एक परम सुंदरी अप्सरा। एक बार नारद द्वारा पुरूरवा की प्रशंसा सुनकर यह उन पर मोहित हो गई। भरतमुनि के शाप से इसने पृथ्वी पर जन्म लिया। पुरूरवा से इसे ५ पुत्र उत्पन्न हुए। पुरूरवा को वस्त्रहीन देखने पर शर्त के अनुसार यह स्वर्ग लौट गई (*भा० ९.१४-१५*)। उर्वशी अर्जुन पर भी मुग्ध हो गई थी, पर अर्जुन ने अस्वीकार कर दिया। इसपर इसने अर्जुन को एक वर्ष के लिये नपुंसक हो जाने का शाप दिया। **अज्ञातवास** के समय अर्जुन के लिये यह शाप उपयोगी सिद्ध हुआ (*म० व० ४५-४६*)।

उलटबाँसी—ऐसी उक्तियाँ जिनमें किसी अलौकिक रहस्य को बतलाने के लिये ऐसी बातें कही जाती हैं, जो ऊपर से देखने में उलटी प्रतीत होती है, किंतु रहस्य को समझ कर व्याख्या करने से उनमें कुछ संगति बैठ जाती है। उ०—पहले जन्म पुत्र का भयऊ, बाप जन्मिया पीछे। / बाप सूत की एकै नारी, ई अचरज कोई काछे ॥—*कबीर*। कबीर ने अनेक उलटबाँसियाँ कही हैं।

उलूपी—ऐरावतवंशी कौरव्य नाग की पुत्री। तीर्थयात्रा के समय जब अर्जुन ने गंगा में स्नान किया तो यह उन्हें जल में घसीट कर अपने भवन में ले गई। इसने अर्जुन से गांधर्व विवाह किया। उलूपी से अर्जुन को इरावान् नामक एक पुत्र भी प्राप्त हुआ (*म० आ० २१४*)। **बभ्रुवाहन** और अर्जुन के युद्ध में ऐसा प्रतीत होता था कि बभ्रुवाहन ने अर्जुन को मार दिया। वस्तुतः उलूपी ने अर्जुन को माया के योग से मूर्च्छित किया हुआ था। बाद में संजीवनी-मंत्र से अर्जुन को पुनः चेतना में ला दिया (*म० आश्व० ७९-८१*)। पांडव जब महाप्रस्थान को निकले, तब इसने गंगा में डूब कर प्राण त्याग दिये (*म० महा० १*)।

उल्लाला—उल्लाला तेरह करो, एकादश तहं लघु भरों (१३ (११ वीं लघु) मा० छंद)। उ०—यदि चाहो भवनिधि तरन / छोड़ दूसरों की सरन।

उल्लू—एक पक्षी जिसकी बोली अशुभ मानी जाती है। यह कहीं तो बुद्धि और कहीं मूर्खता का प्रतीक माना जाता है। उल्लू कहीं-कहीं शुभ भी माना जाता है, क्योंकि यह लक्ष्मी का वाहन है।

उल्लेख—एक अर्थालंकार। इसके दो भेद हैं—

१ *प्रथम उल्लेख*—इसमें गुण के कारण एक का अनेक वास्तविक रूपों में बहुतों द्वारा कथन या विचार किया जाता है। उ०—जानति सौति अनीति है, जानति सखी सुनीति / गुरुजन जानत लाज है, प्रियतम जानत प्रीति। यहाँ अनेक पुरुष एक ही को अनेक भाँति सोचते या कहते हैं।

२ *द्वितीय उल्लेख*—इसमें एक ही व्यक्ति किसी को अनेक वास्तविक रूपों में समझे या कहे। उ०—खल खंडन, मंडन धरनि, उद्धत उदित उदंड; / दल दंडन दारुन समर हिंदुराज भुज-दंड। यहाँ वक्ता केवल एक है तथा वर्णन अनेक।

उषा—**बाणासुर** की कन्या। एक बार इसने स्वप्न में एक पुरुष को देखा और यह उसपर मोहित हो गई। उषा की सखी चित्रलेखा ने उषा द्वारा बताए गये पुरुष के वर्णन से ज्ञात कर लिया कि वह पुरुष कृष्ण-पौत्र अनिरुद्ध है। वह योगबल से अनिरुद्ध को उषा के भवन में ले आई। कुछ दिनों के उपरांत बाणासुर को इस बात का पता लग गया और उसने अनिरुद्ध को बंदी बना लिया। इसपर कृष्ण और बलदेव ने बाणासुर पर आक्रमण कर दिया। दोनों पक्षों में घोर युद्ध हुआ। कृष्ण ने बाणासुर के चार हाथों को छोड़कर सब हाथ काट दिये, पर बाणासुर और रुद्र की प्रार्थना पर जीवन-दान दिया। अंत में उषा-अनिरुद्ध का विवाह हो गया (*भा० १०.६२-६३, शिव० रुद्र० यु० ५१-५६*)।

उषादेवी मित्रा (१८९८ ई०-)—कहानी-उपन्यास लेखिका। इनकी रचनाएँ *पिया* (१९२७), *जीवन की मुस्कान* (१९३९), *पथचारी* (१९४०), *बचन का मोल* (उपन्यास), *सांध्य*

पूरबी, *नीम चमेली* (दोनों १९४१), *मेघ मल्हार*, *पिकनिक*, *रात की रानी*, *रागिनी*, *सोहिनी* (कहानी-संग्रह) आदि हैं। इन्होंने भारतीय नारियों के ऊँचे आदर्श उपस्थित किये हैं। 'इनके उपन्यासों में बंगाली भावुकता और अलंकृत शैली के भी दर्शन होते हैं।'

उसमान (आ० का० १६१३ ई०)—ग़ाज़ीपुर निवासी, शेख़ हुसैन के पुत्र और चिश्ती की परंपरा में हाजी बाबा के शिष्य एक सूफ़ी-कवि, जिन्होंने *चित्रावली* (प्रेम-काव्य) लिखा। अपनी रचना में इन्होंने **जायसी** का अनुकरण किया है।

उसमान ग़नी—इस्लाम के तीसरे खलीफ़ा और **मुहम्मद** के दामाद।

ऊ

ऊदल—महोबे के राजा परमाल के मुख्य सामंतों में से एक, जो अपने समय के बड़े पराक्रमी वीरों में थे। दे० *आल्हाखंड*।

ऊमर दान (जन्म १८५१ ई०)—मारवाड़ निवासी एक डिंगल कवि और *ऊमरकाव्य* (सुधारवादी कविता-संग्रह) के रचयिता।

ऋ

ऋक्षराज—एक वानर जिसकी उत्पत्ति ब्रह्मा के आँसू से हुई थी। ऋक्षराज ने एक दिन जल में अपनी छाया देखी, तो उसमें कूद पड़ा। जल में गिरते ही ब्रह्मा की आज्ञा से इसने एक सुंदर स्त्री का रूप धारण कर लिया। उसी समय इंद्र और सूर्य इसपर मुग्ध हो गये। इंद्र ने अपना तेज इसके मस्तक पर और सूर्य ने अपना तेज इसके गले में डाल दिया। फलस्वरूप इंद्र के वीर्य से बालि और सूर्य के वीर्य से सुग्रीव ये दो वानर उत्पन्न हुए। कुछ दिनों उपरांत ब्रह्मा की आज्ञा से पुनः वानर बनकर ऋक्षराज किष्किंधा में राज्य करने लगा *(वा० रा० उ० ३७ से आगे प्रक्षिप्त सर्ग १)*।

ऋचीक—१ एक भृगुवंशी ऋषि। जब इन्होंने एक हज़ार श्यामकर्ण श्वेत घोड़े ला दिये, तब गाधि ने अपनी कन्या सत्यवती का विवाह इनसे कर दिया *(म० व० ११५)*। इन्होंने सत्यवती और अपनी सास के लिये दो चरु तैयार किये। सत्यवती की माँ ने यह समझ कर कि सत्यवती वाला चरु अधिक अच्छा होगा, उसका चरु खा लिया और अपना भाग सत्यवती के लिये छोड़ दिया। ऋचीक को जब यह पता लगा तब इन्होंने कहा कि दोनों के घोर प्रकृति वाले पुत्र हों। सत्यवती ने बहुत अनुनय-विनय की तो ऋचीक ने कहा—'तुम्हारा पुत्र तो नहीं पर तुम्हारा पौत्र ब्राह्मण होकर क्षत्रिय के कर्म करेगा और तुम्हारा भाई क्षत्रिय वंश में उत्पन्न होकर ब्रह्मवेत्ता होगा।' अतः सत्यवती के पुत्र जमदग्नि और जमदग्नि के पुत्र परशुराम हुए और गाधि के पुत्र विश्वामित्र हुए *(म० शां० ४९, अनु० ४ आदि)*। २ दे० *अजीगर्त*।

ऋतुध्वज—दे० *मदालसा*।

ऋतुपर्ण—अयोध्या के एक राजा। **नल** ने इन्हीं के यहाँ बाहुक नाम से सारथि का कार्य किया था। नल ने इन्हें अश्वविद्या सिखाई और स्वयं इनसे द्यूतविद्या सीखी (म० व० ६०, ६७, ७२)।

ऋतुवर्णन—दे० *षड्ऋतुवर्णन* ।

ऋभु—ब्रह्मा के मानसपुत्र (*भा० ४.८*)। इन्होंने अपने शिष्य निदाघ को तत्त्वज्ञान का उपदेश दिया था ।

ऋषभचरण जैन (१९११ ई०-)—उपन्यासकार । *दिल्ली का व्यभिचार*, *दिल्ली का कलंक*, *दुराचार के अड्डे* आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं ।

ऋषिनाथ (र० का० १७३३-७४ ई०)—कवि ठाकुर के पिता, काशिराज के दीवान सदानंद और रघुवर कायस्थ के आश्रित एक रीति-कवि तथा *अलंकारमणिमंजरी* (१७७४) के रचयिता ।

ऋष्यमूक—पंपासरोवर (दे० *पंपा*) के निकट एक पर्वत, जहाँ सुग्रीव रहता था । दे० *वालि*, *मतंग* ।

ऋष्यश्रृंग—विभांडक ऋषि के पुत्र । उर्वशी को देखकर विभांडक ऋषि का वीर्यपात हो गया । संयोग से एक मृगी (शापभ्रष्ट देवकन्या) ने उस वीर्य को पी लिया, जिसके फलस्वरूप ऋष्यश्रृंग का जन्म हुआ । मृगी से उत्पन्न होने के कारण इनके श्रृंग थे । एक बार राजा रोमपाद के कुप्रबंध के कारण उसके राज्य में अकाल पड़ा । अकाल दूर करने के लिये ब्राह्मणों ने ऋष्यश्रृंग का विवाह राजा की पोष्य-पुत्री शांता से करने को कहा । ऋष्यश्रृंग ब्रह्मचारी थे । राजा ने वेश्याओं को भेजकर इनके मन में विकार उत्पन्न करवाया । अंत में ये आ गये । इनका शांता से विवाह होने के पश्चात् घोर वृष्टि हुई (*म० व० ११०-१३*) । राजा दशरथ ने पुत्रकामेष्टि यज्ञ करने के लिये इन्हें बुलवाया था (*वा० रा० बा० ६-१४*) । इनका आश्रम भागलपुर के २८ मील पश्चिम में और बरियरपुर के ४ मील दक्षिण-पश्चिम में ऋषि-कुंड नामक स्थान पर था ।

ए

एक घूँट—**जयशंकर प्रसाद** का हिंदी-साहित्य में प्रथम एकांकी नाटक (१९३१ ई०) । 'स्वास्थ्य सरलता तथा सौंदर्य के प्राप्त कर लेने पर प्रेम-प्याले का 'एक घूँट' पीना पिलाना ही आनंद है और वह भी बंधन-युक्त होने पर', यही इसका प्रतिपाद्य विषय है ।

एकदंत—दे० *गणेश* ।

एकनाथ (आ० का० १५४३ ई०)—महाराष्ट्र के एक महान् संत एवं भक्त-कवि, जिनके द्वारा ज्ञानेश्वर-कृत *ज्ञानेश्वरी* का प्रचार महाराष्ट्र के कोने-कोने में हो गया । इनकी हिंदी-कविता भी प्रसिद्ध है । इन्होंने *भागवत* और *रामविजय* नामक दो प्रसिद्ध ग्रंथों का निर्माण किया । पैठन में इनकी समाधि वा मठ है, जहाँ प्रति वर्ष मेला लगता है ।

एक भारतीय आत्मा—दे० *माखनलाल चतुर्वेदी* ।

एकलव्य—एक व्याधपुत्र जिसने द्रोणाचार्य की मूर्त्ति को गुरु मानकर उसे संमुख रख धनुर्विद्या में प्रवीणता प्राप्त की थी । द्रोणाचार्य ने इसे व्याधपुत्र समझकर अपना शिष्य बनाना अस्वीकार कर दिया था । इसने पांडवों के कुत्ते के मुख में सात बाण इस प्रकार मारे कि कुत्ता भौंक न सका । यह देखकर पांडव चकित हो गये । अर्जुन के अनुरोध पर द्रोणाचार्य ने एकलव्य की कला को घटाने के लिये, इसके दाहिने हाथ का अंगूठा

गुरु-दक्षिणा में माँग लिया। इसने प्रसन्नता-पूर्वक गुरु-दक्षिणा देदी (*म० आ० १३२*)।

एकांकी—एक अंक में ही समाप्त होने वाला संक्षिप्त नाटक। यद्यपि संस्कृत के भाण और प्रहसन आदि कई रूपक और उपरूपक एकांकी हैं, पर हिंदी में इसका वर्त्तमान रूप पाश्चात्य एकांकी का अनुकरण है। इसमें दो-तीन पात्रों के चरित्र के दो-चार पहलुओं का सम्यक चित्रण किया जाता है। लंबे मंच-निर्देश द्वारा पहिले ही पृष्ठ-भूमि तथा परिस्थिति का निर्देश कर दिया जाता है। घटना एक ही रहती है। कथोपकथन में भी लंबे भाषणों का स्थान नहीं रहता। अभिनय की एकता इसमें बहुत आवश्यक है। प्रासंगिक कथावस्तु का भी इसमें स्थान नहीं और संक्षेप विशेष अपेक्षित रहता है। हिंदी में जयशंकर प्रसाद का एक घूँट (१९२९ ई०) ही प्रथम आधुनिक एकांकी माना जाता है। रामकुमार वर्मा के *पृथ्वीराज की आँखें* के अतिरिक्त *रेशमी टाई*. *चारुमित्रा*, *सप्तकिरण*, *सही रास्ता* (संग्रह) भी निकले हैं। भुवनेश्वरप्रसाद (*कारवाँ*, संग्रह), **उपेंद्रनाथ 'अश्क'**, **सेठ गोविंददास**, गणेशप्रसाद द्विवेदी (*सुहाग की बिंदी*), **उदयशंकर भट्ट**, **सत्येंद्र**, **जगदीश-चंद्र माथुर** आदि लेखकों ने भी सुंदर एकांकी लिखे हैं। दे० *रेडियो नाटक* तथा *गीति-नाट्य*।

समय की बचत तथा अभिनय की अपेक्षा-कृत सुलभता के कारण एकांकी नाटकों का प्रचलन अधिक बढ़ रहा है।

एकावली—१ एक शृंखलामूलक अर्थालंकार, जिसमें वर्णित पदार्थों का विशेष्य विशेषण-भाव संबंध (१) पूर्व-पूर्व विशेष्य पर-पर विशेषण और (२) पूर्व-पूर्व विशेषण पर-पर विशेष्य—इन दो क्रमों से बताया जाता है। १ उ०—सो न दया जु न धर्म धरै, वह धर्म नहीं जहँ दान वृथा ही। / दान न सो जहँ साँच न केशव, साँच न सो जो बसै छल माहीं॥ यहाँ दया आदि के पर-पर वाक्य विशेषण हैं। २ उ०—रस सो काव्य रु काव्य सों, सोहत वचन महान्। / वचन ही सौं रसिक जन, तिन सौं संत सुजान॥ यहाँ काव्य आदि पर-पर विशेष्य हैं। २ हैं भ न ज ज ल इकावली सुंदर (भ न ज ज ल=१३ व० छंद)। उ०—भानुज जल महँ आये परै जब, / कुंजअवलि विकसैं सर में तव। / त्यों रघुवर पुर आए गये जब। / नारिडरु नर प्रमुदे लखि के तब॥

एकेश्वरवाद—ईश्वर को एक तथा प्रकृति और आत्मा को उससे भिन्न मानने वाला सिद्धांत।

एरिसटॉटल—दे० *अरस्तु*।

एडिसन, जोज़फ़ (Addison, Joseph) (१६७२-१७१९ ई०)—अंग्रेज़ी कवि, नाटककार और निबंधकार, जिनकी मुख्य रचनाएँ *कवर्ली एसेज़* (निबंध) और *केटो* (दुःखांत नाटक, अनू० *केटो कृतांत*) हैं।

ऐरावत—इंद्र का हाथी जो **समुद्रमंथन** से निकले चौदह रत्नों में एक था। यह पूर्व दिशा का **दिग्गज** भी है। पर्य्याय०—अभ्रमातंग, श्वेतहस्ती, चतुर्दंत।

ओ

ओज—एक प्रसिद्ध-काव्य-गुण। दंडी के मत

से समास-बहुल पदावली के प्रयोग से ओज-गुण का आविर्भाव होता है तथा यह गद्य का जीवन है, परंतु गौड़ीय रीति के लेखक अपनी पद्य-रचना में भी इसका वैसा ही प्रयोग करते हैं।

औ

औचित्य—औचित्य के ऊपर आश्रित कला ही कला कही जा सकती है। अलंकार-शास्त्र में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। क्षेमेंद्र का कथन है कि उचित स्थान पर रखे जाने पर ही अलंकार अलंकार कहे जाते हैं और गुण गुण।

औचित्य-संप्रदाय—औचित्य विचारधारा के अमर प्रणेता क्षेमेंद्र के मत से सभी ध्वनि, रस आदि औचित्य का अनुगमन करते हैं। अनौचित्य के बिना किसी अन्य कारण से रस भंग नहीं होता। सभी आचार्यों ने अपने ग्रंथों में औचित्य की रक्षा के लिये संकेत किया है।

औरंगज़ेब—मुग़लवंशी भारत-सम्राट् (१६५८-१७०७ ई०)।

और्व—भृगुवंशी एक मुनि। भृगु मुनि के ही वंशज परशुराम थे, जिन्होंने पृथ्वी के समस्त क्षत्रियों का संहार कर डाला था और **कार्तवीर्य** का भी वध किया था। कार्तवीर्य के पुत्रों ने भी भृगु के वंशजों को मारना प्रारंभ कर दिया। इसपर और्व ने घोर तप करके कार्तवीर्य के पुत्रों को अंधा कर दिया (*म० आ० १७८-७६*)। इनकी क्रोधाग्नि के तेज से संपूर्ण पृथ्वी भस्म हो जाती, पर अपने पितरों की इच्छा से इन्होंने उस अग्नि को वड़वा या घोड़ी के रूप में समुद्र में डाल दिया। इसी कारण और्वानल को बड़वानल भी कहते हैं।

क

कंकाल—**जयशंकर प्रसाद** का एक उपन्यास (१६२६ ई०)।

देवीनिरंजन हरिद्वार के कुंभ-मेले का सब से बड़ा महात्मा था, किंतु उसने अमृतसर के श्रीचंद नामक व्यापारी की पत्नी किशोरी तथा एक अन्य विधवा स्त्री रामा से अनुचित संबंध स्थापित कर लिया, जिसके फलस्वरूप क्रमशः विजय और तारा का जन्म हुआ। अपने इस पतन को उसने एक दार्शनिक रूप दे दिया। १५ वर्ष बाद काशी में ग्रहण हुआ। स्वयंसेवक मंगलदेव जो स्वयं भी संभवतः अवैध संबंध से उद्भूत व्यक्ति था, तारा को गर्भवती कर ठीक विवाह के दिन यह कहकर भाग गया कि तारा दुश्चरित्रा माँ की संतान है। विजय ने यमुना (तारा) से प्रेम करना चाहा पर उधर से निराश हो कर वह एक बाल-विधवा घंटी की ओर उन्मुख हुआ। समाज ने उसे घंटी से विवाह करने की अनुमति नहीं दी। तब विजय ने डाकू बदन गूजर की मुसलमान पत्नी से उत्पन्न बालिका गाला से प्रेम किया, किंतु गाला ने उसे इस कारण अस्वीकृत कर दिया कि विजय उसका आश्रित है। अंत में मंगलदेव ने गाला से विवाह किया। उधर बाथम नामक एक ईसाई धर्म-गुरु घंटी पर आसक्त था। इस प्रकार *कंकाल* में समाज के मान्य कहलाने वाले वर्गों के गुप्त कुकृत्यों का रहस्योद्घाटन किया गया है। उपन्यास का अंत बड़ा प्रभावपूर्ण है। एक ओर तो

'धर्मसंघ' का वह जलूस है जिसमें मंगलदेव जैसा दुराचारी पापात्मा प्रकट रूप से धर्मात्मा बन, धर्म की ध्वजा उठाए चल रहा है और दूसरी ओर उसी धर्म तथा समाज के नीचे पिसी यमुना अपने भाई का कंकाल लिये बैठी है। 'वह जलूस हमारे धर्म तथा समाज का बाहरी प्रतीक है और वह ककाल उसकी नग्न भयंकरता।'

उपन्यास में प्रायः सभी चरित्र यथार्थवादी भूमि पर विकसित हुए हैं, पर इसमें जो जीवन चित्रित है, वह निरुद्देश्य नहीं है। 'उसमें तथाकथित उच्चता के प्रति गर्व की भावना पर व्यंग्यपूर्ण चोट है। उसमें एशियाथी संघ के रचनात्मक कार्य की भी आदर्शवादी रूपरेखा है।' चरित्र के अनुसार ही इसमें घटना-क्रम बना है। कथावस्तु के चयन, उसके संघटन तथा निर्वाह की दृष्टि से यह उपन्यास निर्दोष दिखाई देता है।

कंपिल—दक्षिण **पंचाल** की राजधानी जहाँ **द्रौपदी** का स्वयंवर हुआ था।

कंबोज—अफ़ग़ानिस्तान के उत्तरीय भाग का प्राचीन नाम।

कंस—मथुरा-नरेश उग्रसेन का पुत्र जो पूर्वजन्म में कालनेमि नामक असुर था (*भा० १०.१.६८*)। इसका विवाह **जरासंध** की दो पुत्रियों से हुआ था (*ग० सं० १.६-७*)। अपने श्वशुर की सहायता से इसने अपने पिता को गद्दी से उतार दिया और स्वयं राजा बन बैठा (*भा० १०.१.६६*)। **देवकी** के विवाह के समय यह आकाशवाणी हुई थी कि कंस का वध देवकी के आठवें पुत्र द्वारा होगा। इस भय से कंस ने देवकी तथा **वसुदेव** को कारागार में डाल दिया और उनकी संतानों का वध करता रहा (दे० *बलराम*), किंतु देवकी के आठवें पुत्र **कृष्ण** को युक्ति से बचा लिया गया (*१०.२*)। कंस ने बलराम और कृष्ण का वध कराने के लिये जितने असुरों को गोकुल भेजा, वे स्वयं कृष्ण और बलराम द्वारा मारे गये। अंत में कंस ने कृष्ण को **अक्रूर** द्वारा मथुरा बुलवाया। कृष्ण ने मथुरा पहुँच कर कंस का ही वध कर दिया (*ह० वं० २.२८-३०, भा० १०.४४*)।

ककुत्स्थ (पुरंजय)—शशादविकुक्षी के पुत्र एक सूर्यवंशी राजा। सुर-असुर युद्ध में ये देवताओं की ओर से वृषभरूपधारी इंद्र पर आरूढ़ होकर लड़े थे। वृषभ के ककुद् पर बैठने से इनका नाम 'ककुत्स्थ' पड़ा (*भा० ६.६*)।

कच—दे० *देवयानी*।

कच्छप—विष्णु के अवतार जो **समुद्रमंथन** के समय समुद्र में स्थित हुए थे। प्रजापति ने ही कच्छप (कूर्म) का रूप धारण कर सृष्टि रची। इसी कारण इनका नाम कच्छप पड़ा (*श० ब्रा० ७.५.१. ५-१०*)।

कणाद—वैशेषिक दर्शन के रचयिता एक ऋषि। दर्शन में परमाणुवाद का प्रचार इन्होंने ही किया है। इन्होंने अपने दर्शन में धर्म का लक्षण इस प्रकार दिया है —
'यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धिः स धर्मः' अर्थात् जिससे ऐहलौकिक उन्नति और मोक्ष की प्राप्ति हो, वह धर्म है। इस अत्यंत उदार समन्वयात्मक लक्षण के कारण ही ये प्रसिद्ध हैं। इनका असली नाम उलूक था परंतु क्षेत्रों से धान्यकणों को चुन-चुन कर खाने से इनका नाम 'कणाद' पड़ा। काशी में अबतक इनके द्वारा स्थापित एक शिवलिंग है। कहा जाता है कि शिव ने प्रकट होकर इन्हें यहाँ दर्शन दिये थे।

कणिक—**धृतराष्ट्र** का एक ब्राह्मण मंत्री। यह सर्वदा धृतराष्ट्र को पांडवों के विरुद्ध परामर्श देता था।

कण्व—कश्यपगोत्रोत्पन्न एक ऋषि जो मेधातिथि के पुत्र थे। **मेनका** द्वारा त्यक्ता **शकुंतला** का इन्होंने बड़े प्रेम से पालन-पोषण किया था (*म० आ० ६८-७४, भा० ६.१०*)। नंदलाल दे के अनुसार इनका आश्रम मालिनी (चुका) नदी के तीर पर हरिद्वार से ३० मील दक्षिण में और बिजनौर से ८ मील उत्तर में प्रलंब (मंडोर) नामक स्थान पर था। इनके आश्रम कोटा (राजस्थान) से ४ मील दक्षिण-पूर्व में चंबल नदी के तीर पर (*म० व० ८२, अग्नि० १०६*) और नर्मदा के तीर पर भी बतलाए जाते हैं।

कण्हपा (वर्त्त० ८४० ई० ?)—वज्रयान शाखा के एक विद्वान् सिद्ध-कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

कथा—गद्य में लिखी गई सरस वस्तु वाली कहानी। यह गद्य-काव्य का एक पुराना भेद है। प्राचीन काल में कथात्मक साहित्य की कमी न थी किंतु गद्य में बहुत कम कथाएँ लिखी जाती थीं। *कादंबरी*, *दशकुमारचरित* आदि कथा के उदाहरण हैं। दे० *आख्यायिका*।

कथावस्तु—दे० *वस्तु*।

कथा सरित सागर—कश्मीर निवासी सोमदेव कवि का संस्कृत में एक पद्यमय कथा-संग्रह (ल० १०७० ई०, अनू०) जिसमें २४००० श्लोक हैं। इसमें बौद्ध *जातक* कथाओं का उल्लेख है। इसके लेखक ने इस ग्रंथ का आधार *बृहत्कथा* को कहा है। इसमें राजा **शिवि** की भी कथा है।

कदंब (कदम)—एक ऊँचा वृक्ष, जिसमें वर्षा ऋतु में गेंद जैसे गोल-गोल, पीले रंग के फूल लगते हैं। कृष्ण को यह वृक्ष बहुत प्रिय था। वे इसके नीचे त्रिभंगी रूप में खड़े होकर बंसी बजाया करते थे।

कद्रू—दक्ष प्रजापति की कन्या (*भा० ६.६*) और **कश्यप** की एक पत्नी जिससे नाग उत्पन्न हुए। एक बार इसने अपनी सौत **विनता** से हुए एक विवाद में विजय प्राप्त करने के लिये अपने एक सहस्र नाग-पुत्रों को आज्ञा दी कि तुम सब शीघ्र ही काले बाल बनकर **उच्चैःश्रवा** नामक घोड़े की सफेद पूंछ को ढक लो, अन्यथा मुझे पराजित होकर **विनता** की दासी बनना पड़ेगा। बहुत से नागों ने ऐसा ही किया। कद्रू विजयी हुई और विनता इसकी दासी बनी।

कनक मंजरी—**काशीराम** (आ०का० १६६३ ई०) का एक प्रेम-काव्य जिसमें रत्नपुर के राजकुमार द्वारा धनधीर साह की स्त्री कनकमंजरी से पति-प्रवास के अवसर पर की गई प्रेम-याचना, तथा उसकी असफलता का रोचक वर्णन है।

कनकामर मुनि (वर्त्त० १०६० ई०)—जैन कवि और *करकुंड चरिउ* (करकुंड चरित्र) के रचयिता।

कनखल—**हरिद्वार** के दो मील पूर्व में गंगा और नीलधारा के संगम पर एक ग्राम। पुराणानुसार दक्ष ने यहाँ यज्ञ किया था। दे० *सती*।

कनिष्क—भारत का एक कुशानवंशी राजा (७८-१०६ ई०)।

कन्हैयालाल मणिकलाल मुंशी (१८८७ ई०-)—गुजराती भाषा के एक लेखक जिनकी रचनाएँ इन नामों से अनूदित हैं—

उपन्यास—*अभिशाप, प्रतिशोध, जय सोमनाथ, पाटन का प्रभुत्व, गुजरात के नाथ, भगवान् परशुराम, राजाधिराज, किसका अपराध, लोमहर्षिणी, पृथ्वी वल्लभ, भगवान् कौटिल्य, लोपामुद्रा, स्वप्न-द्रष्टा, मेरी कमला, शिशु और सखी, पर्दे की आड़ में, अतीत के स्वप्न।*

नाटक—*दो पौराणिक नाटक, शंबर कन्या, ध्रुवस्वामिनी देवी।*

कपिल—१ **कर्दम** और **देवहूति** के पुत्र (*भा० ३.२४*) एक मुनि जो सांख्य-शास्त्र के प्रवर्त्तक माने जाते हैं। इस दर्शन में प्रकृति और पुरुष का सूक्ष्म विवेचन तथा प्रकृति से जगत् की उत्पत्ति का क्रम विस्तार से वर्णित किया गया है। २ पुराणानुसार एक मुनि जिन्होंने **सगर** के पुत्रों को भस्म किया था (*ह० वं० १.१४, भा० ६-८*)। इनका आश्रम गंगा के दहाने के निकट सगर द्वीप में था।

कपिलवस्तु—एक नगर, जहाँ गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। यह स्थान बस्ती ज़िले में माना जाता है। हुएनत्संग के अनुसार यह नगर **श्रावस्ती** से ८३ मील की दूरी पर था। फाहियान ने इस नगर को श्रावस्ती से १३ योजन की दूरी पर बतलाया है।

कबंध—दंडकारण्य का एक राक्षस। पूर्वजन्म में यह विश्वावसु नामक गंधर्व था, पर एक ब्राह्मण के शाप से राक्षस बन गया था। राम-लक्ष्मण ने इसके हाथ काटकर इसका उद्धार किया था। मरते समय इसने राम-लक्ष्मण को सुग्रीव के पास जाने का परामर्श दिया था, और कहा था कि सुग्रीव तुम्हें सीता की खोज करने में सहायता देंगे (*वा० रा० अर० ६९-७३, म० व० २७९*)।

कबीर (१३९८-१५१८ ई०) (सं० १४५५-१५७५)—कबीर पंथ के प्रवर्त्तक और एक प्रसिद्ध संत-कवि। जन्म काशी। किंवदंती है कि इनका जन्म रामानंद के आशीर्वाद से एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ। लोक-लाज से इनकी माता ने नवजात शिशु को लहरतारा के ताल के समीप फेंक दिया। नीरू नामक एक मुसलमान जुलाहा बालक को अपने घर उठा लाया। निस्संतान नीरू और उसकी पत्नी नीमा ने बच्चे का पालन किया। कुछ लोगों का विश्वास है कि कबीर का जन्म मगहर में हुआ था। इनका विवाह लोई से हुआ। इनके पुत्र का नाम कमाल और पुत्री का नाम कमाली था। आरंभ से ही कबीर भावुक और भक्त थे। रामानंद की दीक्षा ग्रहण करने के लिये ये एक रात्रि पंचगंगा घाट की उन सीढ़ियों पर जा पड़े जहाँ से रामानंद स्नान करने के लिये उतरा करते थे। अँधेरे में उनका पैर कबीर के ऊपर पड़ गया और वह बोल उठे "राम राम कह"। कबीर ने इसे गुरु-मंत्र मान लिया और वे अपने को रामानंद का शिष्य मानने लगे। कबीर साधुओं का सत्संग भी रखते थे और जुलाहे का कार्य भी करते थे। कबीर पंथ में मुसलमान भी हैं। वे इनको सूफ़ी फ़क़ीर शेख़ तक़ी का शिष्य बतलाते हैं। किंतु जिस प्रकार इन्होंने अपनी कविता में शेख़ तक़ी को संबोधन किया है, उससे उसमें संदेह होता है। कबीर की मृत्यु **मगहर** में हुई थी।

यद्यपि इनके अनेक ग्रंथ प्रसिद्ध हैं, तथापि 'बीजक' और *आदि ग्रंथ* में संगृहीत अंश ही इनकी प्रामाणिक रचनाएँ समझी जाती हैं। इस 'बीजक' को (साखी, शब्द और रमैनी) में

विभक्त किया गया है। काशी में रहकर इन्होंने अनेक विद्वानों के सत्संग से बहुत कुछ ज्ञानलाभ किया था। इसलिये शिक्षित न होते हुए भी इनकी रचनाओं में दर्शनों, उपनिषदों आदि का पुट मिलता है। कबीर अत्यंत संतोषी, स्पष्टवक्ता, एवं निर्भीक तथा सात्विक प्रकृति के पुरुष और स्वावलंबी व्यक्ति थे। इन्होंने जाति-पाँति और हिंदू-मुसलमानों के बाह्य पाखंडों का घोर खंडन किया, जिसका एक मात्र उद्देश्य हिंदू और मुसलमान दोनों में शुद्ध सात्विक धर्म का प्रचार करना था।

कबीर पर **रामानंद**, **शंकराचार्य**, नाथ पंथी साधुओं एवं सूफ़ियों का भी प्रभाव था। रामानंद से इन्होंने मांस-भक्षण-निषेध और वैष्णवी दया का भाव प्राप्त किया। **शंकराचार्य** से मायावाद और अद्वैतवाद के विचारों को अपनाया। नाथ-पंथियों से हठ-योग के सिद्धांत ग्रहण किये। सूफ़ी फ़कीरों से प्रेम की साधना ली, और मुसलमान शरीयत के मानने वालों से मूर्त्ति तथा तीर्थों का खंडन सीखा। कबीर ने परमात्मा को अपने पास में ही देखा है, और हठयोग की साधना में सारे ब्रह्मांड और परमात्मा को शरीर के अभ्यंतर में ही पाया है। गुरु को इन्होंने परमात्मा से भी ऊँचा स्थान दिया है। इनकी वाणी में रहस्यवाद की मात्रा अधिक है। हिंदू प्रथा के अनुसार इन्होंने जीवन को दुलहिन माना है और परमात्मा को प्रियतम बतलाया है। जीव का विरह-वर्णन बड़ी सरसता के साथ किया है। कबीर निर्गुणवादी थे, फिर भी समझाने के लिये और शुष्कता को दूर करने के लिये इन्होंने शृंगार का पुट दे दिया है।

यद्यपि कबीर ने स्वयं कहा है—"मेरी बोली पूरबी", तथापि इनकी भाषा में पंजाबी, राजस्थानी, खड़ी बोली, पूर्वी हिंदी, ब्रज, फ़ारसी आदि भाषाओं के शब्दों के दर्शन होते हैं, इसलिये इनकी भाषा को सधुक्कड़ी कहते हैं। इनकी साखियाँ दोहा छंद में और पद विविध रागों में हैं। पदों की भाषा ब्रज का साहित्यिक माधुर्य लिये हुए है। छंदशास्त्र के नियमों का पालन कठोरता से नहीं किया गया है।

कबीर ने अपनी अनुभूति को प्रकट करने के लिये रूपकों का सहारा लिया है। रूपकों को विशेषकर दो रूपों में बाँधा है—उलटबाँसी और आश्चर्यजनक घटनाओं की सृष्टि। इन दोनों का संबंध रहस्यवाद से है। कबीर ने इन रूपकों को प्रायः जुलाहे की दिनचर्या, पशु-संसार, प्रेमी-प्रेमिका के व्यवहार, हठयोग के चक्रों आदि से निरूपित किया है।

नानक, दादूदयाल, रामचरण मुख्यतया और **जायसी, रहीम** तथा **रसखान** गौणतया इनसे किसी-न-किसी प्रकार प्रभावित हैं। रवींद्रनाथ ठाकुर ने इनके १०० पदों का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया है। इससे इनकी कविता का महत्त्व प्रतीत होता है। विशेष दे० रामकुमार वर्मा-कृत *संत कबीर* व *कबीर का रहस्यवाद*, हज़ारी-प्रसाद द्विवेदी-कृत *कबीर*।

कमरिपा (वर्त्त० ८४० ई० ?)—एक वज्र-यान सिद्ध-कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

कमल—दे० *पद्म*।

कयाधू—**हिरण्यकशिपु** की पत्नी और प्रह्लाद (दे० यथा०) की माता।

क़यामत—१ मुसलमानों, ईसाइयों और यहूदियों के मतानुसार सृष्टि का वह अंतिम दिन जब सब मुर्दे खड़े होंगे और ईश्वर के

संमुख उनके कर्मों का लेखा रखा जाएगा। २ प्रलय का दिन।

करखा—कल सैंतीस, वसु सूर्य बसु अंक यति, या करहु अंत, करखा बखानो (३७(८, १२, ८, ९) दंडक मा० छंद) अंत य। उ०—नमो नरसिंह, बलवंत नरसिंह विभो, संत हितकाज, अवतार धारो॥

करतोया—रंगपुर, दिनजपुर और बोग्र ज़िलों में बहने वाली एक नदी। महाभारतकाल में यह नदी बंगाल और कामरूप को विभाजित करती थी। यह वर्षाकाल में भी पवित्र मानी जाती है। पार्वती के पाणिग्रहण के समय शिव के हाथ से गिरे हुए जल से इसकी उत्पत्ति हुई थी।

करन कवि—(र० का० ल० १८०३ ई०)—पन्ना-नरेश हिंदूपतिसिंह के आश्रित एक रीति-कवि। *साहित्यरस* तथा *रस कल्लोल* के रचयिता।

करनेस—नरहरि बंदीजन (१५०५-१६१० ई०) के साथी एक रीति-कवि। *कर्णाभरण*, *श्रुति-भूषण* तथा *भूप-भूषण* (अलंकार-ग्रंथ) के रचयिता।

करबला—अरब का वह उजाड़ स्थान जहाँ **हुसैन** मारे गये थे। प्रेमचंद ने *करबला* नामक एक नाटक और मैथिलीशरण गुप्त ने *काबा* और *करबला* नामक एक काव्य लिखा है।

करवीर—कोल्हापुर का प्राचीन नाम।

करुण—इष्ट-नाश और अनिष्ट-प्राप्ति से आविर्भूत होने वाला, कपोत वर्ण और यमदेवता वाला रस। शोक स्थायी-भाव; शोचनीय व्यक्ति आलंबन; तत्संबंधी कथादि उद्दीपन; दैव-निंदा, रोदन, उच्छ्वास, स्तभ और प्रलापादि अनुभाव; मोह ग्लानि, श्रम, चिंता, स्मृति, दैन्य, उन्मादादि संचारी-भाव हैं। उ०—सब बंधुन को सोच तजि, तजि गुरुकुल को नेह।/हा! सुशील सुत किमि कियो, अनत लोक तैं गेह। यहाँ मृत-पुत्र आलंबन, बांधव-दर्शन आदि उद्दीपन, रोदन अनुभाव, दैन्य आदि संचारी-भाव और शोक स्थायी भाव है।

करुष—१ रीवा प्रदेश। २ बिहार के अंतर्गत शाहबाद ज़िले का एक भाग।

कर्कोटक—**कद्रू** का पुत्र एक नाग (*म० स० ९*) जो **नारद** के शाप से स्थावर हो गया था। जब राजा **नल** राज्य भ्रष्ट होकर वन में घूम रहे थे, उस समय उन्होंने इसे दावाग्नि में भस्म होने से बचाया। इसने नल को काटा और यह शाप-मुक्त हो गया। इसके काटने से एक ओर तो नल विरूप हुए और दूसरी ओर उन पर कलि का प्रभाव धीरे-धीरे कम होने लगा (*म० व० ६६*)।

कर्ण—१ कुमारी कुंती (दे० यथा०) के गर्भ से सूर्य के औरस पुत्र (*म० आ० १११*)। इस प्रकार ये पांडवों के भाई थे। लोकलज्जावश कुंती ने इन्हें उत्पन्न होते ही यमुना में बहा दिया। यमुना से निकालकर अधिरथ-पत्नी राधा ने इन्हें पाला था, अतः इन्हें 'राधेय' भी कहते हैं। कर्ण ने भी अर्जुन आदि की भाँति द्रोणाचार्य से ही धनुर्विद्या सीखी थी। इनके और अर्जुन के बीच सदा प्रतिद्वन्द्विता रहती थी। जब कुंती को यह ज्ञात हुआ कि कर्ण मेरा ही पुत्र है, तब उन्होंने कृष्ण को कर्ण के पास इसलिये भेजा कि कर्ण महाभारत-युद्ध में पांडवों की ओर से लड़ें। जब कृष्ण के कहने

से ये नहीं माने तो कुंती स्वयं गई, किंतु कर्ण कौरवों के कृतज्ञ थे, इस कारण इन्होंने अपनी असमर्थता प्रकट की। बात यह थी कि एक बार द्रोणाचार्य के पास धनुर्विद्या सीखते समय अर्जुन ने अज्ञात कुलशील वाले सूतपुत्र से लड़ना अस्वीकार कर दिया था। द्रौपदी-स्वयंवर में भी कर्ण ने जैसे ही धनुष उठाया, द्रौपदी बोल उठीं कि मैं सूतपुत्र को नहीं वरूँगी। इनपर हीन जाति होने से बहुत अत्याचार हुआ। अतः दुःखी होकर कर्ण कौरवों की शरण में चले गये *(म० आ० १८८)*। फिर भी ये अपनी माता से अर्जुन के अतिरिक्त किसी भी पांडव को न मारने के लिये प्रतिज्ञा-बद्ध हो चुके थे। इसका इन्होंने मृत्यु समय तक पालन किया *(म० उ० १४०-४६)*। दुर्योधन ने **अंग** देश का राजा बना कर इन्हें **अंगराज** की उपाधि दी थी। दान देने में कर्ण अग्रणी माने जाते रहे हैं और इनका नाम 'दानवीर कर्ण' के रूप में लिया जाता है। अर्जुन के यथार्थ पिता इंद्र ने अर्जुन की तुलना में इन्हें निर्बल बनाने के लिये, इनकी दानशीलता का लाभ उठाते हुए, इनके सहजात कवच तथा कुंडल दान में ले लिये। इनकी उदारता से प्रसन्न होकर इंद्र ने इन्हें एक शक्ति दी। जिसपर भी इस शक्ति का प्रयोग किया जाता, वह मृत्यु को प्राप्त होता *(म० व० ३००-३१०)*। कर्ण ने अर्जुन को मारने के लिये यह शक्ति सुरक्षित रखी थी, किंतु कर्ण को **घटोत्कच** पर ही उसका प्रयोग करना पड़ा *(म० द्रो० १७६)*। महाभारत-युद्ध के सोलहवें दिन इन्होंने कौरव-सेना का सेनापतित्व स्वीकार किया और अगले दिन ही अर्जुन के हाथों मारे गये *(म० क० ८७, ९०-९१)*। दे० *अलर्क*। कर्ण के पर्य्याय०—राधेय, **वसुषेण**, अर्कनंदन, सूर्यसुत, सूतपुत्र, अंगराज, अंगराट् आदि। २ कल तेरा सत्रा साजि, बखानै कर्ण सरीखै दानी। नित प्रात सवा मन सोन, द्विजन कहँ देत महा सुखमानी (३० (१३,१७) मा० छंद, अंत ग ग)। इसके चौकलों में जगण का निषेध है। इसे सार्थ भी कहते हैं।

कर्णघंटा—एक ब्राह्मण जो शिव का अनन्य भक्त था। कानों में घंटा बाँधकर यह अन्य देवताओं के नाम तक सुनना नहीं चाहता था। जिस स्थान में यह रहता था, वह भी 'कर्णघंटा' के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

कर्णिकार—सुंदर लाल पुष्प वाला एक देव-वृक्ष। कवि-प्रसिद्ध है कि स्त्रियों के नृत्य से यह पुष्पित हो जाता है। इसके पुष्प से शिव का पूजन होता है।

कर्दम—**कपिल** के पिता एक ऋषि। ये छाया के गर्भ से उत्पन्न ब्रह्मदेव के पुत्र थे। देवहूति इनकी पत्नी थी *(भा० ३.१२, २१-२५)*। इनका आश्रम गुजरात में सिद्धपुर नामक स्थान पर था।

कर्पूर मंजरी—राजशेखर (ई० ७ वीं शती के पश्चात्) का प्राकृत में एक उपरूपक (सट्टक) (अनू०) जिसमें राजा चंद्रपाल और राज-कुमारी कर्पूरमंजरी की प्रेम-कथा तथा विवाह का वर्णन है।

कर्मनाशा—बिहार और उत्तर प्रदेश को विभाजित करने वाली एक नदी। इसके जल के स्पर्श से पुण्यका क्षय होना माना जाता है। किंतु नदीकूल के अधिवासीइसको अपवित्र नहीं समझते।

कर्मयोग—सफलता और असफलता का विचार न करते हुए केवल कर्त्तव्य भावना से कार्य को करना। इसका उपदेश कृष्ण ने विस्तार के साथ अर्जुन को दिया था। दे० *भगवद्गीता*।

कर्मसाक्षी—वे देवता जो प्राणियों के कर्मों को देखते रहते हैं और उनके साक्षी रहते हैं। ये नौ हैं—सूर्य, चंद्रमा, यम, काल, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश।

कर्माबाई—जगन्नाथपुरी की एक महिला जो **जगन्नाथ** की भक्ति के लिये प्रसिद्ध है।

कला (*Art*)—इसके दो भेद किये गये हैं—उपयोगी और ललित। वास्तु, मूर्त्ति, चित्र, संगीत और काव्य ये पाँच ललित कलाएँ हैं। हेगल (Hegel) ललित कलाओं में अमूर्त्त-आधार की मात्रा के अनुसार उनकी श्रेष्ठता बताते हैं। वास्तु में मूर्त्त आधार सबसे अधिक रहता है, वह सबसे निचली है। दूसरे क्रम पर मूर्ति, तीसरे पर चित्र, चौथे पर संगीत और अंत में काव्य है क्योंकि इनमें मूर्त्त आधार कम होता चला जाता है। महादेवी वर्मा के अनुसार कला और उपयोगी कला में गुलाब और गुलकंद की उपयोगिता जैसा अंतर है। *शैवतंत्र* में उल्लिखित ६४ कलाएँ ये हैं—गीत (गानविद्या), वाद्य, (भाँति-भाँति के बाजे बनाना), नृत्य, नाट्य, आलेख्य (चित्रकारी), विशेषकच्छेद्य (बेल बूटे बनाना), तंडुल कुसुम आदि से पूजा के उपहार की सज्जा, पुष्पास्तरण (फूलों की सेज बनाना), दंत वसनांगराग (दाँत, वस्त्र और अंगों को रंगना) मणिभूमिकाकर्म (मणियों का फर्श बनाना), शयनरचन (शय्या-रचना), उदकवाद्य (जल को बाँध देना), चित्रयोग (विचित्र सिद्धियाँ दिखलाना), मालाग्रंथनविकल्प (हार-माला बनाना), केशशेखरापीडयोजन (कान और चोटी के फूलों के गहने बनाना), नेपथ्ययोग (कपड़े और गहने बनाना), कर्णपत्रभंग (कानों के पत्तों की रचना करना), सुगंधयुक्ति (सुगंध वस्तुएँ बनाना), भूषणयोजना (पुष्प-भूषण रचना) इंद्रजाल (जादूगरी), कौचुमार योग (चाहे जैसा वेष धारण करना), हस्तलाघव (हाथ की फुर्ती के काम), चित्रशाकापूपभक्ष्यविकारक्रिया (भाँति-भाँति के भोजन बनाना), पानकरसरागासवयोजन (भाँति-भाँति के पीने के पदार्थ बनाना), सूचीकर्म (सूई का काम), सूत्रक्रीड़ा (कठपुतली बनाना), वीणाडमरूवाद्य, प्रहेलिका (पहेली), प्रतिमाला (प्रतिमा बनाना), दुर्वाचकयोग (कूटनीति), पुस्तकवाचन (ग्रंथों के पढ़ने की चातुरी), नाटकाख्यायिकादर्शन (नाटक, आख्यायिका आदि रचना), काव्यसमस्यापूर्त्ति (समस्यापूर्त्ति करना), पट्टिकावेत्रवाणविकल्प (पट्टी, बेंत, बाण आदि बनाना), तर्ककर्म (गलीचे, दरी बनाना), तक्षण (बढ़ई की कारीगरी), वास्तुविद्या, रूप्यरत्नपरीक्षा, धातुवाद (सोना, चाँदी आदि बनाना), मणिरागज्ञान (मणियों के रंगों की पहिचान), आकरज्ञान (खानों की पहिचान), वृक्षायुर्वेद, मेषकुक्कुटलावकयुद्धविधि (भेड़ा, मुर्गा, बटेर आदि को लड़ाने की रीति), शुकसारिकाप्रलापन (तोता-मैना आदि की बोलियाँ बोलना), उत्सादन (उच्चाटन की विधि), संवाहन और केशमार्जनकौशल (केशों की सफाई का कौशल), अक्षरमुष्टिकाकथन (मुट्ठी की चीज़ या मन की बात बता देना), म्लेच्छितकलाविकल्प (म्लेच्छ काव्यों का समझ लेना), देशभाषाविज्ञान (विभिन्न देशों की भाषा का ज्ञान), पुष्प-

शकटिकानिमित्तज्ञान (शकुन अपशकुन का जानना), यंत्रमातृका (मातृकायंत्र बनाना), धारणमातृका (रत्नों का काटना), संवाच्य (सांकेतिक भाषा बनाना), मानसीकाव्यक्रिया (मन में कटकरचना करना), अभिधानकोष (कोषों का ज्ञान), छंदोज्ञान (छंदों का ज्ञान), क्रियाविकल्प (नयी-नयी बातें निकालना), छलितकयोग (छल से काम लेना), वस्त्र-गोपन (वस्त्रों को छिपाना), द्यूतवैशिष्टय (द्यूतक्रीड़ा), आकर्षणक्रीड़ा (आकर्षण करना), बालक्रीड़ाक्रम (बालकों के खेल), वैनायिकी (मंत्रविद्या), वैजयिकी (विजय प्राप्त कराने वाली विद्या) और वैतालिकी (वेताल को वश में करना) विद्याओं का ज्ञान ।

कलानिधि (आ० का० १७१२ ई०) बूँदी के राव बुद्धिसिंह के आश्रित एक उत्कृष्ट राम-भक्त कवि । *श्रृंगाररस माधुरी*, *वाल्मीकि रामायण* (तीन कांड का पद्यबद्ध अनुवाद), *रामायण सूचनिका*, *वृत्त चंद्रिका* (छंदशास्त्र) *नवशई* तथा *समस्यापूर्त्ति* के रचयिता । इनकी रचनाएँ सरस और सुंदर हैं ।

कलावाद—'कला का उद्देश्य कला, या काव्य का उद्देश्य काव्य मानने वाली धारा ।' कलावादी कविता के क्षेत्र को जीवन-क्षेत्र से बिलकुल पृथक् मानते हैं । इस वाद का जन्म १८६६ ई० में फ्रांस में हुआ था । ब्रिटेन में डा० ब्रैडली (Bradley) ने इसका प्रतिपादन किया है । कलावादी कला की दुनिया को 'एकांत, स्वतःपूर्ण और स्वतंत्र मानते हैं, आई० ए० रिचर्ड्ज़ (I. A. Richards) ने इस मत का खंडन किया है । उनका कथन है कि 'काव्यानुभव जीवन से ही होकर आता है, काव्य-जगत् की शेष जगत् से भिन्न कोई सत्ता नहीं और उसके अनुभव शेष अनुभवों से भिन्न नहीं हैं ।'

कलिंग—उत्तर सरकार । उड़ीसा के दक्षिण में और द्रविड़ के उत्तर में समुद्र के किनारे का प्रदेश ।

कलिंद—एक पर्वत जिससे यमुना नदी निकली है । इसी कारण यमुना को 'कालिंदी' भी कहते हैं ।

कलि—कलियुग के प्रवर्त्तक । इनके माता-पिता क्रमशः हिंसा और क्रोध हैं *(भा० ४-८-३-४)* । दे० *नल*, *परीक्षित्* ।

कलियुग—चार युगों में से अंतिम युग जो अब चल रहा है । यह ४३२००० वर्ष का माना गया है । अर्जुन-पौत्र **परीक्षित्** की मृत्यु के पश्चात् कलियुग का प्रारंभ होना माना जाता है ।

कल्कि—कलियुग के अंत में अवतीर्ण होने वाले **विष्णु** के दशम अवतार । कलियुग का संहार कर ये सत्ययुग की प्रवृत्तियों का प्रचार करेंगे । शंभल (मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश) में विष्णुयश नामक ब्राह्मण के घर में इनका जन्म होगा *(म० व० १६०, भा० १.३; १२.२)* ।

कल्प—ब्रह्मा का एक दिन जिसमें १४ मन्वं-तर वा ४३२०००००० वर्ष होते हैं ।

कल्पवृक्ष—स्वर्ग का वह वृक्ष जो **समुद्रमंथन** से निकले १४ रत्नों में से एक था । इसके पुष्प में इच्छानुसार कोई भी सुगंधि सूँघी जा सकती थी ।

कल्हण—कश्मीर-नरेश विजयसिंह के मंत्री

और *राज तरंगिणी* (११८४-६४ ई०, कश्मीर का इतिहास) के संस्कृत में रचयिता ।

कविता कौमदी—दे० *रामनरेश त्रिपाठी* ।

कवितावली (कवित्त रामायण) **तुलसीदास** का ब्रज-भाषा में लिखित एक मुक्तक काव्य ।

इसमें राम-कथा का वर्णन कवित्त, सवैया, छप्पय और भूलना छंदों में हुआ है । छंदों की संख्या ३४५ है । इसमें राम के शौर्य तथा ऐश्वर्य के वर्णन का प्राधान्य है । इसी कारण सुंदर और लंका कांडों में अन्य कांडों की अपेक्षा छंदों की संख्या अधिक है । इसकी रचना एक विस्तृत काल में हुई थी, अतः इसमें विभिन्न शैलियों के दर्शन होते हैं । यह तुलसीदास की एक उत्तरकालीन रचना है ।

कवित्त—एक मुक्तक दंडक जिसमें ३१ (१६, १५) अक्षर होते हैं । अंतिम वर्ण गुरु होता है । शेष के लिये गुरु लघु का नियम नहीं है । उ०—सच्चे हो पुजारी तुम प्यारे प्रेम मंदिर के, उचित नहीं हैं तुम्हें दुःख से करा-हना । इसे मनहर, मनहरण और घनाक्षरी भी कहते हैं ।

कवित्त रत्नाकर—**सेनापति** का एक काव्य (१६४८ ई०) जिसमें पाँच तरंगें हैं । *श्लेष वर्णन* में इनका भाषाधिकार स्पष्ट ज्ञात होता है । *शृंगार वर्णन* में संयोग-वियोग के चित्र बड़ी कुशलता से खींचे गये हैं । *ऋतु वर्णन* में प्रकृति का सरस वर्णन है । *रामायण वर्णन* और *राम रसायण* में राम-कथा भक्ति भावमयी तथा पांडित्यपूर्ण है । भाषा स्वाभाविक है ।

कवि-निरंकुशता—व्याकरण के नियमों का उल्लंघन करने की, शब्दों के रूप विकृत करने व छंदोभंग करने की विशेष स्वतंत्रता जिसका उपयोग कवि अपनी इच्छानुसार करता है ।

कवि-प्रसिद्धि—दे० *कवि-समय* ।

कविप्रिया —**केशवदास** का एक ग्रंथ (१६०१ ई०) जो अलंकार-परक है । इसमें काव्य-भेद, अलं-कार-भेद, दोष, काव्य के वर्ण्य-विषय आदि का समावेश है । रचना प्रौढ़ एवं प्रांजल है ।

कविमाला—तुलसी (महाकवि तुलसीदास से भिन्न) द्वारा संगृहीत एक ग्रंथ (१६५५ ई०), जिसमें १४४३ ई० से १६४३ ई० तक के ७५ कवियों की रचनाओं का संग्रह है ।

कविराज (आ० का० ८०० ई०?)—संस्कृत-कवि और *राघवपांडवीय* (महाकाव्य, इसके प्रत्येक श्लोक से दो अर्थ निकलते हैं—एक अर्थ से *रामायण* की और दूसरे अर्थ से *महा-भारत* की कथा) के रचयिता ।

कवि-समय—शास्त्र और लोक-विरोधी वे बातें जिनका कवि परंपरा से वर्णन करते आ रहे हैं । उनके विषय में यह नहीं विचारा जाता कि वस्तुतः वे उस प्रकार होती हैं या नहीं । कुछ वृक्षों में दोहदसंचार (अकाल में कराये जाने वाले पुष्पोद्गम) के लिये भी स्त्रियों की कुछ क्रियाएँ कवि-प्रसिद्धि मान ली गई हैं (दे० *कुरबक, कर्णिकार*) । अन्य प्रकार की कवि-प्रसिद्धियों के लिये दे० *चकवा, हंस, पद्म* । प्रस्तुत ग्रंथ में प्रसिद्ध कवि-समयों का यथास्थान निर्देश हुआ है । पदार्थों के रंग के विषय में (जैसे—श्वेत रंग वाले पदार्थ—चंद्र, ऐरावत आदि) और कुछ संकीर्ण (जैसे आकाश में मलिनता, युवकों के गले में हारों का रहना, काम-बाण तथा स्त्री-कटाक्ष से उनके हृदय फटना आदि) कवि-प्रसिद्धियाँ भी

मान ली गई हैं। विशेष दे० हजारीप्रसाद द्विवेदी-कृत *हिंदी-साहित्य की भूमिका*।

कश्यप—ब्रह्मा के मानसपुत्र। इनकी ३७ पत्नियों के नाम ये हैं—**अदिति**, अरिष्टा, इरा, **कद्रू**, कपिला, कालका, काला, काष्ठा, क्रोधवशा, क्रोधा, खशा, ग्रावा, ताम्रा, तिमि, **दनु**, दनायु, दया, **दिति**, धनु, नायु, पतंगी, पुलोमा, प्राधा, प्रोवा, मुनि, यामिनी, वसिष्ठा, **विनता**, विश्वा, सरमा, सिंही, सिंहिका, सुनेत्रा, सुपर्णा, सुरभि, सुरसा, सूर्या। कहीं-कहीं इनकी केवल १३ पत्नियाँ मानी जाती हैं। इन पत्नियों से ही संसार के विभिन्न जीव उत्पन्न हुए। कश्यप की गणना प्रजापतियों में होती है।

कहानी—गुलाबराय के अनुसार 'कहानी एक स्वतःपूर्ण स्वल्पकाय रचना है, जिसमें एक तथ्य या प्रभाव को अग्रसर करने वाली व्यक्ति केंद्रित घटना या घटनाओं के उत्थान-पतन और मोड़ के साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाला वर्णन हो।' पात्र और वस्तु-विधान में समता होते हुए भी आकार, शैली और आदर्श की दृष्टि से उपन्यास से इसका विशेष अंतर है। इसके प्रमुख तत्त्व हैं—वस्तु, पात्र, कथोपकथन और शैली। कुछ कहानियाँ बिना वस्तु-योजना के चलती हैं। कहानी का विषय कुछ भी हो सकता है। पात्र संख्या में कम होते हैं और उनकी दो-चार विशेषताएँ ही बताई जाती हैं। कहानी की पद्धतियाँ वर्णात्मक, आत्मकथात्मक, कथोपकथनात्मक, पत्रात्मक, वातावरणात्मक और मनोवैज्ञानिक आदि हैं। हिंदी में आधुनिक कहानी का प्रारंभ १९०० ई० के लगभग माना जाता है। १९०० में *टेंपेस्ट* (शेक्सपियर का एक नाटक) के आधार पर राधाचरण गोस्वामी की एक कहानी प्रकाशित हुई। उसके पश्चात् दूसरी महत्त्वपूर्ण कहानी रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष के समय' नाम से निकली। बंग महिला की 'दुलाई वाली' नामक कहानी १९०७ में सामने आई। **जयशंकर प्रसाद** की सबसे पहिली 'ग्राम' नामक कहानी १९११ में 'इंदु' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। हिंदी में प्रसाद एक प्रकार से प्रथम मौलिक कहानी-लेखक कहे जा सकते हैं। इनकी कहानियों में कथानक की अपेक्षा भावों का प्राधान्य है, जबकि प्रेमचंद की कहानियों में घरेलु जीवन के अतिरिक्त बहुत-सी सामाजिक समस्याओं के ऊपर प्रकाश डाला गया है, और समाज में प्रतिष्ठित कहे जाने वाले लोगों की दुर्बलताओं का बड़ा मनोरंजक रूप से वर्णन किया गया है। इनके अतिरिक्त प्रारंभिक लेखकों में **राधिकारमणप्रसाद सिंह** ('कानों में कंगना') और **चंद्रधर शर्मा गुलेरी** ('उसने कहा था') प्रमुख हैं। **विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक** की कहानियाँ वार्त्तालापप्रधान हैं और उनमें मानसिक विश्लेषण बहुत अच्छा है। **सुदर्शन** ने कहानी-क्षेत्र में बड़ी प्रसिद्धि पाई है। **प्रतापनारायण श्रीवास्तव** ने भी कुछ कहानियाँ लिखी हैं। **चंडीप्रसाद 'हृदयेश'** की कहानियों को गद्य-काव्य कहना असत्य न होगा। **बेचन शर्मा पांडेय 'उग्र'** की राजनीतिक और सामाजिक कहानियाँ बड़ी चुभती हुई होती हैं। **चतुरसेन शास्त्री** ने ऐतिहासिक कहानियाँ बहुत सुंदर लिखी हैं। **जैनेंद्रकुमार** की कहानियों में मनोवैज्ञानिक अध्ययन अधिक रहता है। **भगवतीप्रसाद वाजपेयी**, सत्यजीवन वर्मा, धनीराम प्रेम, **अज्ञेय**, पहाड़ी, विष्णु तथा **चंद्रगुप्त विद्यालंकार** ने भी कहानी-क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति पाई है। स्त्री-लेखिकाओं में **सुभद्रा-**

कुमारी चौहान का *बिखरे मोती* नामक कहानी-संग्रह उल्लेखनीय है। शिवरानी देवी, होमवंती, **उषादेवी मित्रा**, कमलादेवी चौधरानी, चंदकिरण सोनरिक्सा, चंद्रावती जैन आदि कई लेखिकाएँ इस क्षेत्र में अच्छा कार्य कर रही हैं।

विशेष दे० विनोदशंकर व्यास-कृत *कहानी कला*, मोहनलाल जिज्ञासु-कृत *कहानी और कहानीकार*।

कहार (पाँच)—योग के भाषानुसार पाँच ज्ञानेंद्रियाँ—आँख, नाक, कान, जीभ, त्वचा।

कांचीपुर—**द्रविड़** देश का एक मुख्य नगर। यह वैष्णव तथा शैवों का एक प्रसिद्ध पुण्य-क्षेत्र है।

कांडपृष्ठ—**कर्ण** के धनुष का नाम।

कांपिल्य—दे० *कंपिल*।

काकतालीय न्याय—किन्हीं दो घटनाओं का अकस्मात् एक साथ हो जाना काकतालीय न्याय होता है।

काक भुशुंडि—एक ब्राह्मण जो लोमश ऋषि के शाप से काक (कौवा) हो गये थे। बाद में इन्होंने लोमश से ही राममंत्र की दीक्षा ली। राम-कथा को सर्व-प्रथम कहने वाले ये ही हैं। कहते हैं कि इनकी रचित *भुशुंडि रामायण* भी है। एक बार जब ये राम-कथा कह रहे थे, तो कहा जाता है कि शंकर राजहंस बनकर राम-कथा सुनने नीलाचल पर इनके आश्रम में पहुँचे थे। *रामचरितमानस उत्तरकांड* के अनुसार काकभुशुंडि राम के परम भक्त थे, जिन्होंने गरुड़ को राम का माहात्म्य बतलाया और भक्ति का उपदेश दिया। माताप्रसाद गुप्त के अनुसार अयोध्या में 'श्रावण कुंज' नामक एक मंदिर के महंत के पास *आदि रामायण* नामी संस्कृत ग्रंथ की एक प्रति है। यह *रामायण* ब्रह्म-भुशुंडि-संवाद के रूप में है और आकार में *वाल्मीकि रामायण* से कदाचित् ही छोटी है।

काकाक्षिगोलक न्याय—"कौए की पुतली (कनीनिका)"। कौए की एक ही पुतली होती है पर उसीसे वह दोनों आँखों का कार्य लेता है। एवं एक शब्द अथवा शब्द-समूह से दो पृथक्-पृथक् अर्थों को सूचित करने के लिए इस न्याय का उपयोग होता है।

कादंबरी—**बाण** (वर्त्त० ६३०-४५ ई०) का संस्कृत में एक गद्य-काव्य (अनू०)। यह अपनी श्लेषबहुल रचना तथा स्थान-स्थान पर राजनीति आदि विषयक उत्तम उपदेशों के कारण अत्यंत उत्कृष्ट कोटि का गद्य-काव्य माना जाता है। संस्कृत में यह अपने ढंग का अनुपम उपन्यास है।

कादिर (आ० का० १५४३ ई०)—हरदोई निवासी एक कवि। इनके स्फुट कवित्त प्राप्त हैं।

कान्यकुब्ज—कन्नौज का प्राचीन नाम। बौद्ध-काल में यह नगरी **पंचाल** की राजधानी थी।

काफ़िया—**अंत्यानुप्रास** का नामांतर।

काबा—अरब में मक्के शहर का वह स्थान जहाँ मुसलमान हज करने जाते हैं। मैथिलीशरण गुप्त ने *काबा और करबला* नाम से एक काव्य भी लिखा है।

कामताप्रसाद गुरु (१८७५-१९४८ ई०)—ये भाषा-विज्ञान तथा हिंदी-व्याकरण के निष्णात पंडित थे। इनका **हिंदी-साहित्य सम्मेलन**, **नागरी प्रचारिणी सभा** आदि संस्थाओं से घनिष्ट संबंध था। इनकी प्रमुख रचनाएँ

हिंदी व्याकरण (हिंदी का प्रथम विस्तृत प्रामाणिक व्याकरण ग्रंथ), *भाषा वाक्य, पृथक्करण, हिंदी रचना, भौमासुर, विनयपचासा* (दोनों काव्य), *सत्य प्रेम* (उपन्यास) *सुदर्शन* (नाटक) आदि हैं।

कामदा—राय जू गहौ, मूर्त्ति कामदा (र य ज ग=१० व० छंद)। उ०—रायजू ! गयो, मो लला कहाँ।/राय यों कहै, नंद जू तहाँ।

कामदेव—स्त्री-पुरुष के संयोग की प्रेरणा देने वाले एक देवता। ये सौंदर्य एवं प्रेम के प्रतीक हैं। इनके माता-पिता क्रमशः लक्ष्मी तथा विष्णु हैं। इनकी स्त्री रति, मित्र वसंत, वाहन कोकिल, अस्त्र फूलों का धनुष-बाण और धनुष की डोरी भौंरों की मानी जाती रही है, तथा कामदेव के मूर्त्त और अमूर्त्त दो रूप माने गये हैं। इनकी ध्वजा पर मत्स्य का चिह्न है। देवताओं की प्रार्थना पर **तारकासुर** के वध के लिये, इन्होंने ही शिव को पार्वती के प्रति आकृष्ट करने के लिये प्रयत्न किया, जिसपर शिव ने इन्हें अपने तृतीय नेत्र से भस्म कर दिया। इनके वियोग में रति के विलाप करने पर शिव ने वरदान दिया कि कालांतर में इनका जन्म कृष्ण तथा रुक्मिणी से **प्रद्युम्न** के रूप में होगा। *(भा० १०.५५.१)*। इनके पाँच बाण—मोहन, उन्मादन, संतपन, शोषण और निश्चेष्टीकरण, अथवा लालकमल, अशोक, आम, चमेली और नीलकमल हैं। कामदेव के पर्य्याय०—मदन, मन्मथ, मार, प्रद्युम्न, कंदर्प, मीनकेतन, अनंग, काम, पंचशर, शंबरारि, मनसिज, पुष्पधन्वा, रतिपति, मकरध्वज, आत्मभू, मैन, अतनु, मनोभव, मकरकेतु, स्मर, कुसुमायुध, रतिप्रिय आदि।

कामधेनु—एक गौ जो **समुद्रमंथन** से निकले १४ रत्नों में से एक थीं। ये याचित वस्तुओं को देने वाली थीं। पर्य्याय०—सुरधेनु, सुरसुरभि, कामदुहा आदि।

कामना—**जयशंकर प्रसाद** का एक नाटक (१९२७ ई०)।

इसमें मानवी भावों का मानवीकरण करने की चेष्टा की गई है। कांचन, कामिनी और कादंब की महिमा का गान है। विलास के निष्कासन के साथ '*वसुधैवकुटुंबकम्*' की भावना का प्रचार है। इस नाटक पर संस्कृत-नाटक *प्रबोधचंद्रोदय* का प्रभाव है।

कामबाण—दे० *कामदेव*।

कामरूप—१ आसाम। यहाँ के राजा ने किरात-सेना भेजकर दुर्योधन की सहायता की थी। २ २६ (९,७,१०) मा० छंद, अंत ग ल। उ०—नभ भूमि जहँ तहँ, भरे वनचर, राम-कृष्ण अरूढ़।

कामरूप की कथा—हरसेवक मिश्र (आ० का० १७८७ ई०) का एक काव्य जिसमें राजकुमार कामरूप और एक राजकुमारी की प्रेम-कथा है।

कामरेड—सहयोगी। साम्यवादी अपने दलवालों और अपने से सहानुभूति रखने वालों को 'कामरेड' शब्द से संबोधित करते हैं। **यशपाल** के *दादा कामरेड* नामक उपन्यास में 'कामरेड' शब्द का यही भाव है।

कामवन—वह वन जहाँ शिव ने **कामदेव** का दहन किया था। दे० *अंग*।

कामायनी—**जयशंकर प्रसाद** का एक महाकाव्य (१९३६ ई०)।

प्रसिद्ध **जलप्लावन** के **पश्चात्** **मनु** की नाव हिमवान् की चोटी से टकराई, और वे वहीं चिंताग्रस्त बैठे थे। पिछले सुख की

स्मृति तथा भविष्य की चिंता ने उन्हें निराश कर दिया। **श्रद्धा** नामक गंधर्व राजकन्या उनसे आ मिली। 'कामगोत्रजा' होने के कारण वह 'कामायनी' कहलाती थी। उधर मनु मधुर आसुरी प्रेरणा से पशुहिंसापूर्ण काम्य यज्ञ करने लगे, जिससे श्रद्धा को विरक्ति हो गई। मनु श्रद्धा का पूर्ण प्रेम न पाकर ईर्ष्यालु हो गये और उसे गुफा में छोड़कर अपनी अ-तृप्त अभिलाषाओं की पूर्त्ति के लिये चल दिये। उजड़े सारस्वत प्रदेश की रानी इड़ा ने उन्हें अपने राज्य के प्रबंधक के रूप में अपना लिया। जब ये इड़ा पर भी अधिकार जमाने का प्रयत्न करने लगे, तब प्रजा में विद्रोह खड़ा हो गया। संघर्ष में मनु घायल होकर गिर पड़े। श्रद्धा इस विप्लव का स्वप्न देखकर अपने द्वादशवर्षीय पुत्र के साथ मनु के पास पहुँची। मनु का उसने उपचार किया, किंतु स्वस्थ और जागृत मनु लज्जा के कारण श्रद्धा को वहीं छोड़, भाग निकले। श्रद्धा अपने पुत्र 'मानव' को इड़ा के समीप छोड़कर मनु से हिमालय पर जा मिली। श्रद्धा मनु को ऐसे महादेश में ले गई जहाँ वे निराधार ठहरे जान पड़ते थे। यहाँ उन्हे तीन आलोक-विंदु दिखाई पड़े जो 'इच्छा', 'ज्ञान' और 'क्रिया' के केंद्र-से थे। श्रद्धा की मुस्कान की ज्योतिर्मय रेखा ने इन तीनों को एक में मिला दिया, जिससे इनमें समन्वय स्थापित हो गया। तब मनु और श्रद्धा पहुँचे हुए सिद्ध-युगल के रूप में प्रसिद्ध हो गये। उनके दर्शनार्थी सैंकड़ों यात्रियों में इड़ा और मानव भी थे। मनु ने उन्हें मानवता का दिव्य संदेश दिया।

कामायनी १५ सर्गों (*चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य और आनंद*) का एक महाकाव्य है। नवनिर्माण-कर्त्ता मनु को जिन भावनाओं के कारण जीवन-संघर्ष में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और अंत में आनंद-लोक में अनंत शांति की प्राप्ति हुई, वे ही *कामायनी* के मुख्य विषय हैं। साथ ही, मनु मन का प्रतीक है। श्रद्धा या विश्वासमयी रागात्मिक वृत्ति मनुष्य-जीवन में शांतिमय आनंद को अनुभव कराती और उसे निर्विशेष आनंद-धाम तक पहुँचाती है। इड़ा या बुद्धि मनुष्य को तर्क-वितर्क और निर्मम कर्म-जाल में फँसाए रहती और संतोष के आनंद से सदा दूर रखती है। इच्छा, कर्म और ज्ञान, इन तीनों के मेल होने से ही मनुष्य आनंद को प्राप्त करता है। कथा के साथ रूपक को मुख्यता देने के कारण मनु का चरित्र कुछ गिर गया है। उनका मन कुछ चंचल है। 'भारतीय सभ्यता के प्रवर्त्तक का मन चंचल और दुर्बल होना कुछ अखरता है।' *कामायनी* और दांते-कृत *दिवीना कोमेदिया* में कुछ समानता की झलक पाई जाती है।

मत-भेद के रहते हुए भी *कामायनी* आज खड़ी बोली का सर्वोत्तम महाकाव्य माना जाता है। विशेष दे० 'मानव'-कृत *कामायनी की टीका*, कन्हैयालाल सहल, विजेंद्र स्नातक-कृत *कामायनी दर्शन*, फतहसिंह-कृत *कामायनी सौंदर्य*।

कायाकल्प—**प्रेमचंद** का एक उपन्यास (१९२८ ई०), जिसमें सामाजिक, सांप्रदायिक तथा राजनीतिक समस्याओं का समावेश है। उपन्यास के कथानक में अनेक अलौकिक घटनाओं का वर्णन है। इस उपन्यास को लेखक की प्रथम-कोटि की रचनाओं में स्थान नहीं दिया जाता।

कारक दीपक—एक अर्थालंकार, जिसमें अनेक क्रियाओं का एक ही कारक होता है। उ०—कहत, नटत, रीझत, खिझत, खिझत हिलत-मिलत लजियात।/भरे भौन मैं करत है नैनन ही सों बात॥—*बिहारी*।

कारणमाला—एक शृंखलामूलक अर्थालंकार, जिसमें वर्णित पदार्थों का कार्य कारण संबंध (१) पूर्व-पूर्व कारण पर-पर कार्य और (२) पूर्व-पूर्व कार्य पर-पर कारण इन दो क्रमों से बताया जाता है। उ०—१ होत लोभ ते मोह, मोहहिं ते उपजे गरब। गरब बढ़ावै कोह, कोह कलह, कलहहु व्यथा ॥ २ सुजस दान और दान धन, धन उपजे किरवान। सो जग में जाहिर करी, सरजा सिवा सुजान ॥

कारूँ—**मूसा** का चचेरा भाई जो अपने असीम धन और कंजूसी के लिये प्रसिद्ध है।

कार्तवीर्य—कृतवीर्य के पुत्र एक न्यायी राजा। **दत्तात्रेय** की कृपा से इन्हें एक सहस्र हाथ प्राप्त थे *(गणेश० १.७२ ७३)*। इनकी राजधानी **माहिष्मती** नगरी थी। **रावण** को इन्होंने पराजित किया था *(वा० रा० उ० ३१-३३)*। इन्होंने ही **जमदग्नि** का आश्रम उजाड़ा था और उनका वध किया था। इसपर **परशुराम** ने इनका संहार कर दिया। इसके अर्जुन, सहस्रार्जुन, हैहयाधिपति आदि नाम भी हैं *(नारद० १.७६)*।

कार्तिकप्रसाद खत्री (१८५१-१९०४ ई०)—कलकत्ते से 'प्रेम-विलासिनी' और 'हिंदी-प्रकाश' (पत्रों) के संचालक। *रेल का विकट खेल* (नाटक) के रचयिता तथा *प्रमिला, जया, मधुमालती* आदि बँगला उपन्यासों के अनुवादक।

कार्त्तिकेय—दे० *स्कंद*।

कार्य अर्थप्रकृति—दे० *अर्थप्रकृति*।

कालकेतु—दे० *भानुप्रताप*।

काल-दोष—किसी प्राचीनकाल का वर्णन करने वाले काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास आदि में किसी ऐसी परवर्ती बात का निर्देश, जो वास्तव में उस समय संभव न हो।

कालनेमि—१ एक दानव, जिसने देवताओं को पराजित कर स्वर्ग पर अधिकार कर लिया था। इसका वध विष्णु द्वारा हुआ। अगले जन्म में यह कंस हुआ *(भा० १०.१)*। २ रावण का मामा एक राक्षस। यह **हनुमान** को उस समय छलना चाहता था, जब वे **लक्ष्मण** के लिये संजीवनी लाने जा रहे थे। इसका वध हनुमान द्वारा हुआ *(अध्या० रा० युद्धकांड ७)*।

कालभैरव—शिव के एक अनुचर, जो काशी के कोतवाल कहे जाते हैं और पापियों को दंड देते हैं।

कालयवन—एक महापराक्रमी यवनपति, जिसने **जरासंध** के साथ मिलकर मथुरा पर आक्रमण किया था। कृष्ण भागकर एक गुफा में छिपे रहे। इसी गुफा में मुचुकुंद (दे० यथा०) नामक राजा बहुत दिनों से सो रहा था। जब कालयवन ने मुचुकुंद को ठोकर मारकर जगाया, तब यह उसकी कोपदृष्टि से भस्म हो गया *(ह० व० २.५७ आदि)*।

कालरात्रि—ब्रह्मा की रात्रि, जिसमें सारी सृष्टि विलीन हो जाती है, केवल नारायण ही रहते हैं। दे० *कल्प*।

कालिंदी—कलिंद पर्वत से निकलने के कारण यमुना का एक नाम। पूर्वजन्म में ये सूर्य की कन्या थीं। यमुना के तीर पर कृष्ण को पतिरूप में प्राप्त करने के लिये इन्होंने घोर तपस्या की और उसमें ये सफल हुईं। कृष्ण को इनसे १० पुत्र प्राप्त हुए *(भा० १०.६१)*।

कालिदह—वृंदावन में यमुना का एक दह वा कुंड जिसमें **कालिय** नामक नाग रहता था।

कालिदास—संस्कृत के उत्कृष्ट कवि और नाटककार तथा *कुमारसंभव*, *रघुवंश*, *विक्रमोर्वशीय*, *मालविकाग्निमित्र*, (पाँच अंकों का रूपक जिसमें अग्निमित्र और मालविका की प्रणय-कथा है), *अभिज्ञान शाकुंतल*, *मेघदूत*, *ऋतुसंहार* (ऋतुओं का सुंदर वर्णन) (सब अनू०) के रचयिता। *नलोदय*, *शृंगार तिलकम्*, *राक्षस काव्य*, *पुष्पवन विलास* तथा *श्यामलदंडक* भी इनकी रचनाएँ कही जाती हैं।

कालिदास में स्वाभाविकता और कलात्मकता का बड़ा सुखद संमिश्रण है। कालिदास अपनी उपमाओं के लिये प्रसिद्ध हैं जैसा कि '*उपमा कालिदासस्य, भारवेरर्थगौरवम्।*' इस श्लोक-पाद में कहा गया है।

इनके काल के संबंध में ऐतिहासिकों के अनेक मत हैं, किंतु उनमें दो मुख्य हैं—१ ५७ ई० पू०, २ चंद्रगुप्त विक्रमादित्य का समय (३७५-४१३ ई०)।

किंवदंती है कि ये मूर्ख थे। कुछ पंडितों ने महाराज भोज से चिढ़कर उनकी विदुषी कन्या विद्योत्तमा का विवाह निपट मूर्ख कालिदास से करवा दिया। इससे विद्योत्तमा को बडा दुःख हुआ। उसने कहा कि जबतक तुम विद्वान् बनकर नहीं आते, मैं तुम्हारे साथ न रहूँगी। पत्नी की इस भर्त्सना से कालिदास को बड़ा दुःख हुआ और इन्होंने घोर तपस्या करके विद्या प्राप्त की। लौटने पर इनकी पत्नी ने पूछा—*अस्ति कश्चित् वाग्विशेषः?* इसपर अपनी पत्नी के मुख से उच्चारित उन तीन शब्दों से प्रारंभ करते हुए इन्होंने तीन प्रसिद्ध महाकाव्य (*कुमारसंभव*, *मेघदूत* और *रघुवंश*) लिखे।

कालिदास त्रिवेदी (र० का० १६८८-१७१९ ई०)—अंतर्वेद निवासी एक रीति-कवि। *वारवधुविनोद*, *जंजीराबंद*, *राधा-माधव-बुधमिलनविनोद* तथा *कालिदास हज़ारा* के रचयिता।

कालिदास हज़ारा—**कालिदास त्रिवेदी** (र० का० १६८८-१७१९ ई०) द्वारा संगृहीत ग्रंथ जिसमें १४२४ से १७१९ तक के २१२ कवियों के १००० पद्य हैं। कवियों के काल आदि के निर्णय यह ग्रंथ बड़ा ही उपयोगी है।

कालिय—**कद्रू** का पुत्र एक नाग जिसके पाँच फन थे। पहिले यह रमणक द्वीप के समुद्र में रहता था, पर **गरुड़** के भय से वृंदावन में यमुना के कालिदह नामक कुंड में रहने लगा था। एक दिन गौएँ और गोप कालिय द्वारा किया गया विषैला जल पीकर मूर्च्छित हो गये। यह देखकर कृष्ण यमुना में कूद पड़े और कालिय को वश में कर लिया। कालिय और इसकी पत्नियों की प्रार्थना पर कृष्ण ने इसे क्षमा कर दिया और इसे यमुना छोड़ कर रमणक द्वीप के समुद्र में लौट जाने को कहा। इसने वैसा ही किया (*भा० १०. १५-१६*)।

काली—दे० *दुर्गा*।

काव्य—गुलाबराय के अनुसार संसार के प्रति कवि की भाव-प्रधान मानसिक प्रतिक्रियाओं के श्रेय को प्रेय रूप देने वाली अभिव्यक्ति। काव्य की आत्मा के संबंध में आचार्यों में मत-भेद है (शब्द और अर्थ को काव्य का शरीर माना जाता है)। भरतमुनि और विश्वनाथ ने रस को (दे० *रस संप्रदाय*), भामह, उद्भट आदि ने अलंकार को (दे० *अलंकार संप्रदाय*), दंडी और वामन ने रीति को (दे० *रीति संप्रदाय*), कुंतक ने वक्रोक्ति को (दे० *वक्रोक्ति संप्रदाय*), आनंदवर्द्धन और अभिनवगुप्त ने ध्वनि को (दे० *ध्वनि संप्रदाय*), क्षेमेंद्र ने औचित्य को (दे० *औचित्य संप्रदाय*) काव्य की आत्मा माना है। काव्य की इन विभिन्न व्याख्याओं के

कारण उपर्युक्त संप्रदायों का जन्म हुआ। इन संप्रदायों में मुख्यता रस और ध्वनि संप्रदाय की रही है, किंतु इन दोनों ने एक दूसरे का महत्त्व स्वीकार किया है। ऊपर कहे हुए छः संप्रदायों से प्रभावित होकर भिन्न-भिन्न आचार्यों ने काव्य की भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ की हैं। मम्मट ने उस रचना को जो दोषरहित और गुण वाली हो तथा जिसमें कहीं-कहीं अलंकार न भी हो उसे काव्य कहा है (*तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि*)। विश्वनाथ ने रसयुक्त वाक्य को काव्य कहा है (*वाक्यं रसात्मकं काव्यम्*)। जगन्नाथ ने *रसगंगाधर* में रमणीय अर्थ का प्रतिपादन करने वाले शब्द को काव्य माना है (*रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्*)। पाश्चात्य आचार्यों ने जो काव्य की परिभाषा दी है, वह काव्य के चार तत्त्वों (भावतत्त्व, कल्पनातत्त्व, बुद्धितत्त्व और शैलीतत्त्व) पर ही आश्रित है। रामचंद्र शुक्ल ने रागात्मक तत्त्व को प्रधानता दी है।

कविता के लिये सभी तत्त्व आवश्यक हैं। उसके लिये अनुभूति और अभिव्यक्ति का प्रायः समान महत्त्व है, फिर भी अभिव्यक्ति का महत्त्व अनुभूति पर निर्भर रहता है। अनुभूति का आधार अंतर और बाह्य जगत् है। कविता श्रेय को प्रेय रूप देती है। वह केवल स्वांतः सुखाय ही नहीं होती वरन् उसमें पाठक और आलोचक भी अपेक्षित रहते हैं।

भारतीय परंपरानुसार काव्य के श्रव्य काव्य (जो कानों से सुना जाए) और दृश्य काव्य (जो अभिनीत होकर देखा जाए) दो भेद हैं। आकार के आधार पर श्रव्य के पद्य, गद्य और मिश्रित ये तीन विभाग तथा दृश्य काव्य के **रूपक, उपरूपक** आदि भेद हैं। बंध की दृष्टि से पद्य के दो भेद किये हैं—**प्रबंध** और मुक्तक। प्रबंध में तारतम्य रहता है, मुक्तक काव्य इससे मुक्त होता है। प्रबंध के भी दो भेद हैं—**महाकाव्य** और **खंडकाव्य**। *वाल्मीकि रामायण*, *कामायनी* आदि महाकाव्य हैं, *मेघदूत*, *जयद्रथ-वध* आदि खंडकाव्य हैं। स्फुट कविताएँ मुक्तक में आती हैं। मुक्तकों में कुछ पद तो पाठ्य होते हैं और कुछ विशेष रूप से गेय। बिहारी के दोहे पाठ्य हैं और सूरदास के पद, महादेवी, प्रसाद, पंत और निराला के गीत गेय है। गद्य के उपन्यास, कहानी, जीवनी, निबंध, पत्र और गद्यकाव्य भेद हैं। मिश्रित का चंपू एक प्रसिद्ध भेद है।

पाश्चात्य समीक्षा में काव्य के दो मूल विभाग किये गये हैं—एक विषयी-प्रधान (*Subjective*) दूसरा विषय-प्रधान (*Objective*)। विषयी-प्रधान काव्य को प्रगीत-काव्य कहा गया है और विषय-प्रधान का एपिक (*Epic*) से तादात्म्य किया गया है। प्रगीत-काव्य में भावना और गीत की प्रधानता रहती है, महाकाव्य में विवरण या प्रकथन (*narration*) की। पाश्चात्य देशों में होमर (*Homer*) के *इलियड* (*Iliad*) और *ऑडिसी* (*Odyssey*) आदर्श महाकाव्य माने जाते हैं। प्रगीत-काव्य के प्रमुख भेद इस प्रकार हैं—गीतिकाव्य (*Lyric*), चतुर्दशपदी (*Sonnet*), संबोधन-गीत (*Ode*) और शोक-गीत (*Elegy*)।

काव्य-न्याय—पापी को दंड और पुण्यात्मा को पुरस्कार देने वाला न्याय। कुछ लोगों के मत से यह न्याय काव्य में आवश्यक है, यद्यपि लोक-व्यवहार में ऐसा बहुत कम देखने में आता है।

काव्य-प्रयोजन—'*काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये। सद्यः परनिर्वृतये कांतासम्मिततयोपदेशयुजे॥*' *मम्मट*॥ अर्थात् काव्य के प्रयोजन *१ यशलाभ, २ धनलाभ, ३ व्यवहार का ज्ञान, ४ अमंगल से रक्षा, ५ तुरंत परमानंद की प्राप्ति* और *६ कांता के*

समान प्रेममय उपदेश। विश्वनाथ के अनुसार काव्य द्वारा कम बुद्धि वालों को भी सुख से चतुर्वर्ग फलों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति होती है। इस प्रकार भारतीय परंपरानुसार धर्म, यश, धन आदि की प्राप्ति के साथ-साथ आनंद और शिक्षा देना काव्य के प्रयोजन माने जाते रहे हैं। पर यूरोप में यह विवाद अबतक चल रहा है कि कविता का उद्देश्य क्या है? **अफलातून**, (रस्किन (१८१९-१९०० ई०) आदि शिक्षा पर अधिक बल देते हैं, तो कलावादी और पलायनवादी शिक्षा की उपेक्षा करते हैं। दूसरी ओर यथार्थवादी और प्रभाववादी आनंद को ही गौण बना देना चाहते हैं। होरेस (६५-८ ई० पू०) का मत है कि कविता का लक्ष्य शिक्षा देना भी हो सकता है, आनंद देना भी हो सकता है, अथवा शिक्षा और आनंद साथ-साथ देना भी हो सकता है।

काव्यलिंग—एक अर्थालंकार जिसमें काव्यार्थ या पदार्थ किसी का हेतु हो। उ०—निकट रहे आदर घटै, दूरि रहे दुख होय: / 'सम्मन' या संसार में प्रीति करौ जनि कोय।

काशी—१ दे० *वाराणसी*। २ योग के भाषानुसार आज्ञा-चक्र के समीप इड़ा (गंगा या वरना) और पिंगला (यमुना या असी) के मध्य का स्थान काशी (वाराणसी) कहलाता है। यहाँ विश्वनाथ का मंदिर है।

काशी-करवट—काशीस्थ एक तीर्थ-स्थान जहाँ प्राचीन काल में लोग आरे के नीचे कटकर अपने प्राण देना बहुत पुण्य समझते थे।

काशीनाथ (१८४९-१८९१ ई०)—आगरा निवासी। *ग्राम पाठशाला*, *निकृष्ट नौकरी*, *तीन ऐतिहासिक रूपक*, *बाल-विधवा-संताप-नाटक* (नाटक) के रचयिता और कई अंग्रेजी पुस्तकों के अनुवादक।

काशीराम (आ० का० १६६३ ई०)—औरंगजेब के सूबेदार निजामत खाँ के आश्रित एक कवि और *कनक मंजरी* (प्रेम-काव्य) के रचयिता।

काश्यप—महाभारत-कालीन एक प्रसिद्ध विष-चिकित्सा-विशारद वैद्य। इसने **तक्षक** से घूँस लेकर उस के द्वारा डसे गये राजा **परीक्षित्** की चिकित्सा नहीं की थी (*म० आ० ४३. स्कंद० २.१.११*)।

काश्यपपुर—मुलतान का प्राचीन नाम।

कासिम शाह (आ० का० १७३१ ई०)—ज़िला बाराबंकी निवासी एक प्रेम-कवि और *हंस जवाहर* के रचयिता।

किंकर—राक्षसों की एक जाति।

किन्नर—एक प्रकार के देवता जिनका मुख घोड़े के समान होता है, और जो संगीत में अत्यंत कुशल होते हैं। ये कैलास पर्वत पर स्थित **कुबेरपुरी** में रहते हैं। इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के अंगूठे से मानी जाती है।

क़िबला—मक्का। यह पश्चिम दिशा में है। मुसलमान इसकी ओर मुख करके नमाज़ पढ़ते हैं।

किरात—१ हिमालय का पूर्वीय भाग तथा उसके आस-पास का देश। २ दे० *अर्जुन*।

किरातार्जुनीय—**भारवि** (६३४ ई०) का संस्कृत में एक महाकाव्य (अनू०) जिसमें किरात वेषधारी शिव द्वारा अर्जुन को दिव्य पाशुपत अस्त्र रस गौण है और वीर रस प्रधान है। संस्कृत महाकाव्य की बृहत्त्रयी में इसका स्थान प्रथम है।

किरीट—आठ भकार बनात 'किरीट' मनोहर छंद शिरोमणि भावत (८ भ=२४ व० छंद)। उ०—सभ्य समागम के प्रतिकूल, / न मूढ़ ! भयानक चाल चला कर। / वंचक ! बान बिसार बुरी, / रच दंभ ! किसी को न छला कर।

किर्मीर—बक का भाई एक राक्षस, जिसे भीम ने वनवास के समय काम्यक वन में मारा था (*म० व० ११*)।

किशनजी (र० का० १७६७-१८३१ ई०)—मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह के आश्रित एक डिंगल-कवि। *भीम विलास* (जीवन चरित्र) तथा *रघुवरजसप्रकाश* के रचयिता।

किशोरीदास वाजपेयी—कनखल (हरिद्वार) निवासी। आधुनिक लेखक। इनकी मुख्य रचनाएं— *व्रज-भाषा का व्याकरण, राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण, हिंदी निरुक्त, साहित्य निर्माण, राष्ट्रभाषा का इतिहास, अच्छी हिंदी, साहित्यिक जीवन के अनुभव और संस्मरण* आदि हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी (१८६५-१९३२ ई०)—संस्कृत के अच्छे साहित्य-मर्मज्ञ तथा हिंदी के पुराने कवि और उपन्यासकार। 'उपन्यास' (१८९८, मासिक पत्र) के संचालक और छोटे-बड़े ६५ उपन्यासों के रचयिता। *तारा, चपला, तरुण-तपस्विनी, रज़िया बेगम, लीलावती, राजकुमारी, लवंगलता, हृदयहारिणी, हीराबाई, लखनऊ की क़ब्र* आदि इनके मुख्य उपन्यास हैं।

इनके उपन्यास कुछ साहित्यिक अवश्य हैं, पर उनमें जनता की रुचि को उन्नत करने की दिशा में कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। उनमें वासना का विलास अधिक दृष्टिगोचर होता है। उपन्यासों की शैली कई प्रकार की है। दे० *नाटक, कहानी*।

किष्किंधा—मैसूर और हैदराबाद के बीच का प्रदेश, जहाँ **बालि** और **सुग्रीव** का राज्य था। बल्लारी के समीप वह स्थान बतलाया जाता है जहाँ बालि का दाहसंस्कार हुआ था।

किसान (पंच)—योग के भाषानुसार शरीर में स्थित पंच प्राण—उदान (मस्तिष्क में), प्रान (प्राण) (हृदय में), समान (नाभि में), अपान (गुह्य स्थान में), व्यान (समस्त शरीर में)।

कीचक—राजा **विराट** का सेनापति और विराट की रानी सुदेष्णा का भाई। पांडवों के **अज्ञातवास** के समय द्रौपदी का सतीत्व नष्ट करने का प्रयत्न करने के कारण भीम ने इसका वध किया था (*म० वि० १४-२४*)।

कीरति—**राधा** की माता, कीर्त्ति।

कीर्त्ति—१ **वृषभानु** की पत्नी और राधा की माता। इसी कारण राधा को कीर्त्तिकुमारी (कीरतिकुमारी) कहा है। २ सससाग बने शुभ कीर्त्ति (स स स ग=१० व० छंद)। उ०—ससि सो गुनिए मुख राधा; सखि साँचहि आवत बाधा।

कीर्त्तिपताका—**विद्यापति** (१३६८-१४७५ ई०) का अपभ्रंश में एक प्रशस्ति-संबंधी ग्रंथ।

कीर्त्तिलता—**विद्यापति** (१३६८-१४७५ ई०) का अपभ्रंश में एक ग्रंथ, जिसमें तिरहुत के राजा कीर्त्तिसिंह की वीरता, उदारता गुणग्राहकता आदि का वर्णन है। इसमें देशी भाषा का प्रयोग भी दृष्टिगोचर होता है।

कुंजर—१ **अंजना** के पिता। २ एक वृद्ध शुक जिसने **च्यवन** ऋषि को उपदेश दिया था।

कुंजरो नरो—हाथी या मनुष्य । **द्रोणाचार्य** को मारने के लिये कृष्ण के आग्रह से **युधिष्ठिर** ने *'अश्वत्थामा हतो, नरो वा कुंजरो वा'* एक संदिग्ध वाक्य कहा था *(म० द्रो० १९२)*। अब यह मुहावरा दुविधा की बातों के अर्थ में प्रयुक्त होता है ।

कुंडल—२२ (१२,१०) मा० छंद, अंत ग ग । उ०—जय कृपालु, कृष्ण चंद फंद के कटैया, वृंदावन कुंज-कुंज खोर के खिलैया । विशेष—इस छंद को प्रभाती में भी गाया जाता है । जिस कुंडल छंद के अंत में गुरु एक ही हो उसे उडियाना कहते हैं । यह भी प्रभाती में गाया जाता है । उ०—ठुमक चलत रामचंद्र बाजत पैजनियाँ, धाय मातु गोद लेत दशरथ की रनियाँ ॥

कुंडलिनी—दे० *नागिनी* ।

कुंडलिया—२४ मात्राओं का एक छंद, जिसमें छः पाद होते हैं । प्रारंभ में **दोहा** होता है । आगे के चारों पाद **रोला** छंद के चार पाद होते हैं । उ०—मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय । जा तन की झाईं परे, श्याम हरित दुति होय ॥ श्याम हरित दुति होय, कटै सब कलुष कलेसा । मिटै चित को भरम रहै नहिं, कछुक अंदेसा ॥ कह पठान सुलतान, काटु यम दुःख की बेरी । राधा बाधा हरहु, हहा बिनती सुन मेरी ॥

कुंडिन—विदर्भ (बरार) की प्राचीन राजधानी ।

कुंतल—पहिले यह देश उत्तर में नर्मदा, दक्षिण में तुंगभद्रा, पश्चिम में अरबसागर और पूर्व में गोदावरी और पूर्वीय घाटों से घिरा हुआ था । भिन्न-भिन्न समय में इसकी राजधानियाँ नासिक और कल्याणी थीं । बाद में दक्षिण महाराष्ट्र को कुंतल कहा जाने लगा । इसमे मैसूर प्रदेश का उत्तरीय भाग भी सम्मिलित था ।

कुंतिभोज—एक राजा जिसने पृथा (**कुंती**) को गोद लिया था ।

कुंती—**शूरसेन** की कन्या और **वसुदेव** की बहिन, जिनका आरंभिक नाम पृथा था । **कुंतीभोज** द्वारा इन्हें गोद लेने से इनका नाम 'कुंती' पड़ा । दुर्वासा ऋषि द्वारा दिये गये मंत्र के प्रभाव से ये किसी भी देवता को बुला सकती थीं । एक बार इन्होंने सूर्य का आवाहन किया । कुमारी कुंती को उनसे गर्भ रह गया और **कर्ण** उत्पन्न हुए *(म० आ० १११)* । कुंती का विवाह **पांडु** से हुआ *(११२)* । शापवश पांडु अपनी पत्नियों से संभोग नहीं कर सकते थे । इसी कारण धर्मराज, वायु और इंद्र के साथ संयोग कर, कुंती ने क्रमशः **युधिष्ठिर**, **भीम** और **अर्जुन** ये तीन पुत्र उत्पन्न किये । पांडु की दूसरी पत्नी का नाम माद्री था । **माद्री** ने **अश्विनीकुमारों** से संयोग कर **नकुल** और **सहदेव** ये दो पुत्र जन्मे । यही पाँचों भाई पंच पांडव नाम से प्रसिद्ध हुए *(११८-२४)* ।

कुंद—सफेद रंग का एक पुष्प । कवि-प्रसिद्धि है कि इसके कुड्मल भी सफेद होते हैं । इसकी उपमा दाँतों से दी जाती है ।

कुंदनलाल साह—दे० *ललित किशोरी* ।

कुंभकर्ण—रावण का भाई एक राक्षस । जब यह ब्रह्मा से वर माँगने वाला था, तब सरस्वती इसकी जिह्वा पर बैठ गई, जिससे यह निद्रा ही माँग सका । अतः यह अधिक सोता था *(वा० रा० उ० १०)* । लंका-युद्ध के समय रावण ने इसे जगाया था । यह सुग्रीव को अपनी भुजाओं में दबाकर ले चला, पर वे इसके नाक-कान काटकर इसकी भुजाओं से बाहर निकल गये *(वा० रा० यु० ६०-६७)* । राम ने इसका वध किया था । आजकल 'कुंभकर्ण'

शब्द लक्षणा द्वारा अत्यधिक निद्रालु व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है।

कुंभनदास (आ० का० १५५० ई०)—**अष्टछाप** के एक कवि, जो पूर्ण विरागी भक्त थे। **अकबर** ने इन्हें सीकरी बुला कर इनका बड़ा सम्मान किया था, पर इसका इन्हें बराबर खेद ही रहा। इनके कुछ फुटकर पद ही मिलते हैं।

कुकनु—एक पक्षी जो गाने में बहुत निपुण समझा जाता है। प्रसिद्ध है कि इसके गाने से अग्नि प्रकट हो जाती है। यह उसी अग्नि में भस्म हो जाता है। वर्षा पड़ने पर उसी राख की ढेरी में से यह फिर उत्पन्न हो जाता है।

कुकुभ—सोरह रत्न कला प्रति पादै, / कुकुभा अंतै दे कर्णा (३० (१६, १४) मा० छंद, अंत ग ग)। उ०—पारवती तप कियौ अपारा, / खाय खाय सूखे पर्णा।

कुकुरिपा (वर्त्त० ८४० ई०)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

कुतबन (आ० का० १४९३ ई०)—चिश्तीवंश के शेख बुरहान के शिष्य और जोनपुर के बादशाह हुसैनशाह के आश्रित एक सूफ़ी-कवि। *मृगावती* (१५०१, प्रेम-काव्य) के रचयिता। दे० *प्रेम-काव्य*।

कुतुबअली (आ० का० १५२३-४८ ई०)—एक मुसलमान लेखक जिनके विषय में खोज हो रही है। इनकी कोई भी रचना अब तक उपलब्ध नहीं है।

कुतुब सतक—किसी अज्ञात लेखक का एक प्रेम-काव्य (लि० का० १५७३ ई०), जिसमें दिल्ली-सुलतान फ़िरोज़शाह के शाहज़ादे क़ुतुब तथा एक मुसलमान स्त्री किशोरी साहिबा की प्रेम-कथा है।

कुतबुद्दीन ऐबक—गुलामवंशी एक शासक (१२०६-१० ई०)।

कुनाल—सम्राट् **अशोक** का पुत्र। इसकी आँखों की सुंदरता पर मोहित होकर इसकी सौतेली माता तिष्यरक्षा ने इससे प्रेमयाचना की। इसने उसे दुत्कार दिया। एक समय यह विद्रोह दमन करने के लिये तक्षशिला गया। तिष्यरक्षा ने अशोक से कहकर सात दिन के लिये राज्य-प्रबंध का भार स्वयं ग्रहण कर लिया। उसने राजमुहर से अंकित एक आदेशपत्र तक्षशिला के अधिकारी के पास इस आशय का भेजा कि कुनाल की दोनों आँखें निकलवा दी जाएँ। वह पत्र कुनाल के हाथ में पड़ गया। कुनाल ने उसे राजाज्ञा समझकर अपनी आँखें स्वयं निकाल लीं। वहाँ से घूमते-घूमते कुनाल अपनी पत्नी कांचनमाला के साथ राजधानी में पहुँचा। सब बातें जानकर अशोक ने तिष्यरक्षा के वध की आज्ञा देदी, किंतु कुनाल के आग्रह पर अशोक ने अपनी आज्ञा लौटा ली। मैथिली-शरण गुप्त ने *कुणाल गीत* नामक एक काव्य लिखा है।

कुबरी—दे० *कुब्जा*।

कुवेर—दे० *कुबेर*।

कुब्जा—कंस की एक दासी जो तीन स्थान से टेढ़ी थी। धनुर्यज्ञ के समय जब कृष्ण और बलराम मथुरा आए, तब कृष्ण की कृपा से यह सीधी हो गई (*भा० १०.४२*)। यह कृष्ण से प्रेम करती थी। भ्रमरगीतों में गोपियों ने कृष्ण के साथ कुब्जा को खरी-खोटी सुनाई है।

कुमार—**कार्त्तिकेय** का नामांतर।

कुमारगुप्त—गुप्तवंशी भारत-सम्राट् (४१३-५५ ई०)।

कुमारपाल—गुजरात-शासक (११४३-७२ ई०)। दे० *हेमचंद्र*।

कुमार मणिभट्ट—गोकुल निवासी एक रीति-कवि। *रसिक रसाल* (ल० १७४६ ई०) के रचयिता।

कुमारसंभव—**कालिदास** का संस्कृत में एक महा-काव्य (अनू०), जिसमें शिव-पार्वती के विवाह, **कार्त्तिकेय** के जन्म तथा **तारकासुर** के वध का सुंदर वर्णन है।

कुमुद—लाल कमल। कवि-प्रसिद्धि है कि यह श्वेत होता है। इसका वर्णन जलाशयों में होना चाहिये और यह दिन में नहीं खिलता।

कुमुदिनी—एक पौधा। इसका पुष्प चंद्रमा को देखकर विकसित होता है और सूर्योदय होते ही बंद हो जाता है। कुमुदिनी का प्रियतम चंद्रमा है।

कुरबक (कुरवक)—एक वृक्ष। कवि-प्रसिद्धि है कि यह स्त्रियों के आलिंगन से पुष्पित हो जाता है। (*आलिंगनात् कुरवको बकुलो मुखशीधुना।/ कामिनीनां पदाघातादशोकः पुष्प्यति द्रुतम्॥*

क़ुरान—मुसलमानों का धर्म-ग्रंथ जो अरबी भाषा में है। माना जाता है कि यह **मुहम्मद** पर इलहाम द्वारा प्रकट हुआ था।

कुरु—संवरण और **तपती** के पुत्र एक राजा (*म० आ० ६३.४२ कुं०*)। कुरुवंश के ये ही आदि पुरुष थे। इनके वंशज कौरव कहलाए।

कुरुक्षेत्र—एक बहुत प्राचीन तीर्थ, जो अंबाला और दिल्ली के बीच में स्थित है। पहिले कुरुक्षेत्र प्रदेश के अंतर्गत सोनीपत, अमीन, करनाल और पानीपत भी थे। महाभारत-युद्ध कुरुक्षेत्र में ही नहीं, अपितु इसके आस-पास के प्रदेश में भी हुआ था। अमीन में अभिमन्यु मारा गया था। सोनीपत (सोन-प्रस्थ) और पानीपत (पाणिप्रस्थ) उन पाँच गाँवों में से दो हैं, जो युधिष्ठिर ने दुर्योधन से माँगे थे। कुरुक्षेत्र को 'स्थानुतीर्थ' और 'सामंतपंचक' भी कहते थे।

कुलपति मिश्र (र० का० १६६७-८६ ई०)—आगरा निवासी, **बिहारीलाल** के भानजे एक रीति-कवि। *रस रहस्य, द्रोणपर्व, युक्ति तरंगिणी, नखशिख* तथा *संग्रामसार* के रचयिता। इनका रस संबंधी *रस रहस्य* नामक ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है।

कुलूत—कांगड़ा जिले में कुलू प्रदेश। इसकी राजधानी नगरकोट थी।

कुवलयापीड़—एक हाथी जिसे **कंस** ने कृष्ण का वध करने के उद्देश्य से धनुष-यज्ञ के मंडप के द्वार पर स्थित कर रखा था, पर कृष्ण ने इसका वध कर दिया (*भा० १०.४३*)।

कुवेर—**विश्रवा** ऋषि के पुत्र। ब्रह्मा ने इन्हें राक्षसगण, लंका, पुष्पक विमान, यक्षाधिपत्य, राजत्व, धनेशत्व, अमरत्व, लोकपालत्व और रुद्र की मैत्री ये सब वर दिये (*म० व० २७५-७६ कुं०*)। इनमें से **रावण** ने लंका तो इनसे माँग कर लेली और पुष्पक विमान इनको युद्ध में परा-जित करके इनसे छीन लिया (*वा० रा० उ० १५*)। ये इंद्र की नवनिधियों के भंडारी और समस्त संसार के धन के स्वामी समझे जाते हैं। रावण से पूर्व लंका में ये ही राज्य करते थे। बाद

में इन्होंने अपनी राजधानी **अलकापुरी** बनाई। ये बड़े कुरूप थे—इनके एक आँख, तीन पैर और आठ दाँत थे। देवता होने पर भी इनका पूजन कहीं नहीं होता। पर्य्याय०—किन्नरेश, यक्षराज, धनद, गुह्यकेश्वर, राजराज, नर-वाहन आदि।

कुवेरपुरी—**कुवेर** की राजधानी, **अलकापुरी**।

कुश—रामचंद्र का ज्येष्ठ पुत्र। दे० *कुशलव*।

कुशध्वज—सीता के पिता सीरध्वज जनक के अनुज और **माँडवी** तथा **श्रुतकीर्त्ति** के पिता।

कुशल मिश्र (आ० का० १७६६ ई०)—आगरा निवासी, एक राम-भक्त कवि। *गंगा नाटक* के रचयिता।

कुशललाभ—दे० *माधवानल कामकंदला चरित्र*।

कुशलव—राम के दो पुत्र। लोकापवाद के कारण राम ने जब गर्भवती सीता को वनवास दे दिया, तब वाल्मीकि के आश्रम में कुशलव का जन्म हुआ था। इन्होंने राम के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को पकड़ कर घोड़े के रक्षक शत्रुघ्न, लक्ष्मण, भरत और हनुमान को पराजित कर दिया था। युद्ध-भूमि में इनकी भेंट राम से हुई। बाद में राम ने इन्हें पहिचान लिया (जै० अ० २८-३६)। अश्वमेध यज्ञ के समय राम ने वाल्मीकि को भी निमंत्रित किया। वे अपने साथ इनको भी ले आए। इन्होंने वाल्मीकि द्वारा रचित *रामायण* का पाठ कर सब सभासदों को मुग्ध कर लिया। इनका परिचय पाकर राम ने इन्हें ग्रहण कर लिया। राम ने कोसल लव को और उत्तर कोसल कुश को दे दिया (*वा० रा०* उ० ४८-४६, ६६, ६३-६४, १०७)।

कुशावती (कुशस्थली)—एक मत से बुँदेलखंड में स्थित रामनगर नामक नगर, जो राम-पुत्र कुश ने बसाया था।

कुशिक—एक राजा जो **विश्वामित्र** के पितामह और **गाधि** के पिता थे।

कुसुमपुर—पटना का प्राचीन नाम।

कुसुमविचित्रा—नय नय धारौ कुसुमविचित्रा (न य न य=१२ (६, ६) व० छंद)। उ०—नयन यहीं ते, तुम बदनामा। / हरि छवि देखौ, किन बसु जामा॥

कूट—**कंस** की सभा का एक मल्ल, जिसे बल-राम ने मारा था (*भा० १०.४४*)।

कूपखनक न्याय—"कुआँ खोदने वाला"। बावली खोदते समय यदि शरीर को कीचड़ लग भी जाए, तो बाद में उसे पानी से धोया जा सकता है। इसी प्रकार कार्य की सिद्धि होने पर कार्य करते समय प्राप्त हुए दोषों का परिहार किया जा सकता है।

कूपमंडूक न्याय—"कुएँ का मेढक"। कुएँ में रहने वाला मेढक कुएँ को ही संपूर्ण संसार समझता है। इसी प्रकार घर में ही सीमित रहने वाले तथा संसार की व्यापकता न जानने वाले मनुष्य का दृष्टिकोण अत्यंत संकुचित हो जाता है।

कूपयघटिका न्याय—"रहट के डोल"। रहट के डोल बारी-बारी से भरते हैं और खाली होते हैं। इसी प्रकार संसार में सुख दुःख का चक्र सदा चलता रहता है।

कूर्म—दे० *कच्छप*।

कृतवर्मन—महाभारत-युद्ध में अंत तक बचे हुए कौरवों के तीन योद्धाओं में से एक (*म० स्त्री० ११*)। बाद में इसका वध **सात्यकि** द्वारा हुआ (*म० मौ० ३*)।

कृत्या—१ एक राक्षसी जिसे तांत्रिक लोग अपने अनुष्ठान से उत्पन्न करके किसी शत्रु को विनष्ट करने के लिये भेजते हैं। २ दे० *अंबरीष*।

कृपाचार्य—शरद्वान् ऋषि के पुत्र, **अश्वत्थामा** के मामा और कौरव-पांडवों के आरंभिक गुरु। इंद्र की आज्ञा से जालवती नामक अप्सरा ने शरद्वान् मुनि की तपस्या भंग की (*म० आ० १४०.६ कुं०*)। फलस्वरूप एक पुत्र और एक पुत्री की उत्पत्ति हुई, जिन्हें उन्होंने वन में छोड़ दिया। राजा शांतनु जब उस वन से निकले, तब उन्होंने जालवती द्वारा त्यक्त उस बालक और बालिका को उठा लिया। उनकी कृपा से पालन-पोषण होने के कारण उनके नाम कृप और कृपी रखे गये (*भा० ६.२१*)। भीष्म पितामह ने कौरवों और पांडवों को धनुर्विद्या सिखाने का कार्य इन्हीं को सौंपा था (*म० आ० १३६.४२ कुं०*)। महाभारत-युद्ध में ये कौरवों की ओर थे (*म० द्रो० १५६ कुं०*)।

कृपानिवास (आ० का० १७८६ ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि। *भावना पचीसी*, *समय प्रबंध*, *माधुरी प्रकाश*, *जानकी सहस्र नाम* तथा *लगन पचीसी* के रचयिता।

कृपाराम (आ० का० १५४१ ई०)—एक रीति-कवि और *हित तरंगिणी* के रचयिता। भाव-व्यंजना में इनके दोहे **बिहारी** के दोहों के समान हैं। *हित तरंगिणी* हिंदी-साहित्य में रीति-शास्त्र पर प्रथम सफल ग्रंथ है। इन्होंने भक्ति-काल में भी रीतिकाल के आदर्शों की सृष्टि की।

कृपी—कृपाचार्य (दे० यथा०) की बहिन, द्रोणाचार्य की पत्नी और अश्वत्थामा की माता।

कृष्ण—विष्णु के अवतार। ये **वसुदेव** और **देवकी** के पुत्र थे। **कंस** को आकाशवाणी द्वारा ज्ञात हुआ कि वसुदेव का अष्टम पुत्र उसका वध करेगा। अतः कंस ने वसुदेव और देवकी को बंदी कर लिया और उनकी प्रथम सात संतानों को मार डाला (दे० *बलराम*)। अष्टम पुत्र कृष्ण जब उत्पन्न हुए, तब वसुदेव ने इन्हें **नंद** के पास गोकुल में पहुँचा दिया और वहाँ से **यशोदा** की नवजात पुत्री को लाकर देवकी को दे दिया। कंस ने उसे भूमि पर पटक कर मार डालना चाहा, किंतु वह आकाश में उड़ गई और कहा कि तुम्हें मारने वाला **गोकुल** में है (*ह० वं० २.४*)। इनको मारने के लिये कंस ने अनेक राक्षस और राक्षसियों को गोकुल भेजा, पर कृष्ण ने उन सब का वध कर दिया। दे० *धेनकासुर*, *प्रलंबासुर*, *अरिष्टासुर*, *केशी*, *व्योमासुर*, *पूतना*, *बक*, *अघासुर*, *वत्सासुर*। अंत में असफल होकर कंस ने **अक्रूर** द्वारा कृष्ण को मथुरा बुलवाया, जहाँ पहुँच कर कृष्ण ने उसे मार डाला। बाद में कृष्ण ने द्वारिका में यादवों का राज्य स्थापित किया। इनकी प्रधान रानियाँ **रुक्मिणी, जांबवती, सत्यभामा** आदि थीं। **राधा** इनकी प्रेमिका कही जाती हैं। नरकासुर-वध के पश्चात् कृष्ण ने उस द्वारा बंदी की गई १६१०० स्त्रियों को मुक्त कर उनसे विवाह कर लिया (*भा० १०.५६*), जिनसे अस्सी हज़ार पुत्र उत्पन्न हुए। महाभारत-युद्ध में इन्होंने पांडवों का पक्ष लिया था और ये अर्जुन के सारथि बने थे। इनकी मृत्यु एक बहेलिये का तीर लगने से हुई। धर्मोपदेशक, राजनीतिक-नेता और समाज-सुधारक—इन रूपों में कृष्ण का चरित्र अनुपम है। दे०

अर्जुन, *भगवद्गीता*, *जांबवान्*, *सत्राजित्*, *स्यमंतक*, *द्रौपदी*, *कालिय*, *जरासंध*, *गोवर्द्धन लीला*. *अक्षयपात्र*, *द्रोणाचार्य*, *उत्तरा* आदि। विशेष दे० *भा० १०, विष्णु० ५, ब्रह्मवै० ४, ह० वं० २, ग० सं०, ब्रह्म० १८०-२१२, पद्म० उ० २७२-७६, म० आ० ६३.६६, २१८, २२७, २३४, म० स० २, १३-१५, २१-२४, ३३, ३६-३६, ४५, ६८, म० व० १२, १४-१५, २०-२२, १८६, २६३, म० उ० १, ५, ७, ४८, ५७, ५६, ६६-६७, १३०-३१, १४०-४२, १५०-५१, १५४, १६२, म० भी० २५-४३, १०६, म० द्रो० १४६, १६०-६२, म० क० ६०-६१; म० सौ० १६, म० स्त्री० १२, १३, २५, म० आश्व० ६६-७०, म० मौ० १-८*। कृष्ण के पर्य्याय०—श्याम, साँवले, सँवलिया, नंदनंदन, जनार्दन, यदुनंदन, देवकीनंदन; कंसारि, मुर-मर्दन, मुरलीधर, वंशीधर, गिरिधर, द्वारिका-धीश, माधव, केशव, हृषीकेश, मुकुंद, मधुसूदन, गोपीनाथ, राधारमण, चक्रपाणि, ब्रजभूषण, वासुदेव, यादवेश, योगींद्र, मदनमोहन, गोपाल, आदि।

कृष्ण कवि—**बिहारीलाल** के पुत्र और *बिहारी सतसई* की टीका (१७२८-३३ ई० के मध्य लिखित) के रचयिता।

कृष्ण-काव्य—**सूरदास** प्रभृति **अष्टछाप** कवियों तथा मीराबाई, **रसखान**, **घनानंद** आदि द्वारा रचित साहित्य।

इस काव्य में दो प्रभाव स्पष्ट लक्षित हो सकते हैं—१ **वल्लभाचार्य** की बालकृष्णो-पासना प्रधान भक्ति-पद्धति और २ **जयदेव**, **विद्यापति**, **चंडीदास** आदि भक्त-कवियों की गीत-काव्य पद्धति। जयदेव ने गीत-काव्य द्वारा स्त्री-पुरुष की साधारण प्रेम लीलाओं में सहज आकर्षण रखने वाले मनुष्यों के चित्त को अपनी कोमलकांत पदावली द्वारा राधा-कृष्ण की दिव्य लीलाओं की ओर आकर्षित किया। विद्यापति और चंडीदास ने उनका अनुकरण किया। **चैतन्य महाप्रभु** द्वारा बंगाल के इन गेय पदों का वृंदावन में भी प्रचार हुआ। कृष्ण-भक्त शृंगारी कवियों के उद्दाम शृंगार-वर्णन के पीछे यही तथ्य है। उन्होंने रागात्मक वृत्तियों का आश्रय लेकर भगवान् का स्मरण करवाया है।

कृष्ण की लीलाओं में उनके बचपन के उन अलौकिक कार्यों का वर्णन है, जिनमें उन्होंने अनेक असुरों आदि का वध किया, गोवर्द्धन पर्वत को धारण किया और गोपियों के साथ रासलीला की। इन लीलाओं के साथ भक्ति-भावना भी है। सभी कवियों ने कृष्ण के रूप-सौंदर्य का वर्णन किया है। कृष्ण-काव्य में *भ्रमरगीत* भी लिखे गये। सब संप्रदायों के कृष्ण-भक्त *भागवत* में वर्णित कृष्ण की ब्रज-लीला को ही लेकर चले, क्योंकि उन्होंने अपनी प्रेमलक्षणा भक्ति के लिये कृष्ण का मधुर रूप ही पर्याप्त समझा। कृष्ण के लोक-रक्षक या धर्म-संस्थापक स्वरूप को सामने नहीं रखा। परिणाम यह हुआ कि कृष्ण-भक्त कवि अधिकतर फुटकल शृंगारी पदों की रचना करने में ही लगे रहे। उनमें न अनेकरूपता आई, न जीवन के अन्य गंभीर पक्षों के मार्मिक रूप स्फुटित हुए। कृष्ण का इतना चरित्र नहीं लिया कि खंडकाव्यों और महाकाव्यों का निर्माण होता। कवियों की गति राधाकृष्ण की प्रेमलीला-गान और बाल-कृष्ण की उपासना तक ही रह गई। कृष्ण-भक्ति के साथ-साथ 'नखशिख', 'ऋतु-वर्णन' और 'नायिका-भेद' भी निरंतर विस्तार पाते गये (दे० *रीति-काव्य*)। कविता में अलंकार योजना भी होने लगी थी। कृष्ण-काव्य का विकास प्रायः मुक्तक के रूप में ही हुआ और **अष्टछाप** के भक्त कवियों की संगीत-लहरी में ही हमको उनका पूरा-पूरा

आनंद मिलता है। कृष्ण-काव्य की भाषा एकमात्र ब्रज-भाषा है। इसलिये इसी भाषा को परिमार्जन और परिष्करण का अवसर मिला। आगे चलकर भाव-सौंदर्य की अपेक्षा भाषा-सौंदर्य ही प्रधान हो गया और कृष्ण-काव्य के बाद साहित्य में रीति-काव्य आ गया। कृष्ण-काव्य में शृंगार और वात्सल्य रस का जितना व्यापक और परिपक्व रूप इस साहित्य में है, उतना अन्यत्र उपलब्ध नहीं होता। विशेष दे० प्रभुदयाल मित्तल-कृत *अष्टछाप परिचय*, धीरेंद्र वर्मा-कृत *अष्टछाप*।

कृष्ण गीतावली—दे० *श्रीकृष्ण गीतावली*।

कृष्णदास—१ (जन्म १४९६ ई०)—**वल्लभाचार्य** के शिष्य, **अष्टछाप** के कवि। *भ्रमरगीत*, *प्रेमतत्त्व-निरूपण* तथा *जुगलमान चरित्र* के रचयिता। इनकी कविता **सूरदास** और **नंददास** की कोटि से कुछ नीचे रह जाती है। ये जन्म से शूद्र थे। २ मिर्जापुर निवासी, एक कृष्ण-भक्त कवि। *माधुर्य-लहरी* (१७९६ ई०, कृष्ण चरित्र संबंधी) के रचयिता।

कृष्णदास, राय (१८९२ ई०-)—काशी निवासी एक लेखक। *भावुक*, *व्रजरज* (कविता-संग्रह), *साधना*, *छायापथ*, *संलाप*, *प्रवाल* (गद्य-काव्य), *अनाख्या*, *सुधांशु*, *आँखों की थाह* (गल्प-संग्रह), *भारतीय मूर्त्तिकला* तथा *भारतीय चित्रकला* (कला-विषयक) के रचयिता। हिंदी-साहित्य की गद्यात्मक कविता और भारतीय चित्रकला के विवेचन के क्षेत्र में इनकी देन महत्त्वपूर्ण है।

कृष्ण मिश्र (आ० का० ल० ११०० ई०)—संस्कृत के एक नाटककार। *प्रबोधचंद्रोदय* (अनू०) के रचयिता। इनके इस नाटक में वेदांत का ज्ञान अतीव रोचक शैली से दिया गया है। लेखक ने विवेक, मोह, ज्ञान, विद्या, बुद्धि, श्रद्धा, भक्ति आदि अमूर्त्त भावों की पुरुष और स्त्री पात्रों के रूप में कल्पना की है। अंत में गुणी तथा साधु पात्रों की विजय होती है। केशवदास-कृत *विज्ञान गीता* *प्रबोधचंद्रोदय* के ढंग की एक पुस्तक है।

कृष्णवती—एक कवयित्री। *विवाह विलास* (१८४३ ई० से पूर्व, कृष्ण-राधा का विवाह) की लेखिका।

कृष्णा—**द्रौपदी** का एक नाम, जो उनके कृष्ण वर्ण के कारण रखा गया था।

केकय—१ नंदलाल दे के अनुसार व्यास और सतलुज नदियों के बीच का प्रदेश। *संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर* के अनुसार व्यास और शाल्मली नदी की दूसरी ओर के देश का प्राचीन नाम। यह अब कश्मीर के अंतर्गत है और 'कक्का' कहलाता है। २ केकय देश का राजा वा निवासी। ३ राजा दशरथ के श्वशुर, **कैकेयी** के पिता।

केकयी—दे० *कैकेयी*।

केतु—दे० *राहु*।

केदार—केदारनाथ। रुद्र हिमालय में एक पर्वत, जिसपर केदारनाथ नामक शिवलिंग स्थित है। यह एक प्रसिद्ध तीर्थ है।

केरल—वर्त्तमान ट्रावनकोर।

केशवदास—१ (१५५५-१६१७ ई०)—काशिनाथ के पुत्र। ओरछा-नरेश के दरबारी कवि, मंत्र-गुरु एवं मंत्री। *विज्ञान गीता*, *रतन बावनी*, *जहाँगीर जस-चंद्रिका*, *वीरसिंहदेव-चरित*, *रसिक प्रिया*, *कविप्रिया*, *रामचंद्रिका* आदि के रचयिता। इन्होंने ओरछा दरबार पर **अकबर** द्वारा किया गया एक करोड़ रुपये का दंड क्षमा करवा दिया था। यह भी प्रसिद्ध है कि **बीरबल**

ने इन्हें इनकी एक कविता पर छः लाख रुपया दिया था। बहुत समय तक ये ओरछा-नरेश महाराजा रामसिंह के अनुज इंद्रजीत के आश्रित रहे। उनकी मृत्यु पर ये वीरसिंह देव के कृपापात्र बने। इनके पूर्वज संस्कृत के पंडित और कवि थे। इनके अग्रज का नाम बलभद्र मिश्र था।

ये कवि और आचार्य हैं, किंतु इनका आचार्य रूप प्रधान है। इन्होंने साहित्य की मीमांसा शास्त्रीय पद्धति पर कर, काव्य-रचना का पांडित्यपूर्ण आदर्श स्थापित किया। अपने काव्य में इन्होंने चारणकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल के आदर्शों का समुच्चय उपस्थित किया। ये संस्कृत के भी आचार्य थे। रीति-शास्त्र को व्यवस्थित रूप देने का श्रेय इन्हीं को है। इनके काव्य में श्लेष, विरोधाभास, परिसंख्या आदि अलंकारों के अच्छे उदाहरण मिलते हैं, यद्यपि कहीं-कहीं इस अलंकार-प्रियता के कारण ये हास्यास्पद बन गये हैं। इन्होंने दंडी आदि संस्कृत आचार्यों का अनुकरण किया। आगामी रीतिकालीन सभी कवि व आचार्य किसी न किसी रूप में केशवदास से प्रभावित हुए हैं। इनकी भाषा बुंदेलखंडी मिश्रित ब्रज है, जिसका रूप इन्होंने अपना पांडित्य दिखाने की चेष्टा में बहुत कुछ खो दिया है। इनकी रचना अलंकारों और अनेक गुणों से युक्त होने के कारण दुर्बोध हो गई है। विशेष दे० चंद्रबलि पांडे-कृत *केशवदास*, कृष्णशंकर शुक्ल-कृत *केशव की काव्य-कला*, । २ (आ० का० १६६३ ई०)—यारी साहब के शिष्य एक संत कवि। *अमीघूंट* के रचयिता।

केशवराम भट्ट (१८५४-१६०४ ई०)—महाराष्ट्र निवासी एक नाटककार। *सज्जाद संबुल* तथा *शमशाद सौसन* (सामाजिक नाटक) के रचयिता। 'बिहारबंधु' (पत्र) के संचालक।

केशी—कृष्ण को मारने के लिये कंस द्वारा भेजा गया एक असुर। यह एक भयानक अश्व-रूप धारण करके आया था। इसका वध कृष्ण द्वारा हुआ (*भा० १०.३७*)।

केसरी—एक वानर जिनकी स्त्री अंजना थीं। हनुमान इनके पुत्र थे।

कैकसी—सुमाली राक्षस की कन्या, विश्रवा की पत्नी तथा रावण, कुंभकर्ण, शूर्पणखा और विभीषण की माता (*वा० रा० उ० ६, स्कंद० ३.१.४७*)।

कैकेयी—राजा केकय की पुत्री, राजा दशरथ की रानी और भरत की माता। मंथरा के बहकावे में आकर इसने दशरथ से अपने पुत्र भरत के लिये अयोध्या का राज्य माँगा और राम को १४ वर्ष का वनवास दिलवा दिया (*वा० रा० अयो० ११, ६२*)। राजा दशरथ ने प्रसन्न होकर इसे कोई दो वर माँगने के लिये कह रखा था (*ब्रह्म० १२३*)। वे इसने इस रूप में माँगे।

कैटभ—दे० *मधुकैटभ*।

कैलास—तिब्बत में हिमालय का एक शिखर, जो मानसरोवर से २५ मील उत्तर में है। यह शिव-पार्वती का निवासस्थान माना जाता है।

कैशिकी वृत्ति—दे० *वृत्ति*।

कोकदेव—कश्मीर निवासी एक पंडित और *कोक-शास्त्र* या *रति-शास्त्र* के रचयिता।

कोकिल—एक पक्षी। कवि-प्रसिद्धि है कि यह वसंत में ही बोलती है। यह सत्य है कि ग्रीष्म और वर्षा में भी यह बोला करती है। इसके

स्वर में माधुर्य होता है। इसके संबंध में अनेक किंवदंतियाँ हैं। कवियों ने इसका वसंत और 'काम' के सहचर के रूप में वर्णन किया है।

कोटरा—**बाणासुर** की माता। जब कृष्ण और बाणासुर में युद्ध हुआ (दे० *उषा*), तब यह नग्न होकर युद्ध-क्षेत्र में आई थी (*भा० १०.६३*)।

कोमला--भाषा की वह वृत्ति, जिसमें न तो **उपनागरिका** के माधुर्य व्यंजक वर्णों का और न **परुषा** के कठोर वर्णों का ही प्रयोग होता हो।

कोयल—दे० *कोकिल*।

कोलरिज (Coleridge) (१७७२-१८३४ ई०)—एक अंग्रेज़ी कवि, जिनकी *एन्शंट मैरिनर* नामक कविता *वृद्ध नाविक* नाम से अनूदित है।

कोशल (कोशला, कोशलापुरी)---दे० *कोसल*।

कोसल (कोशल)—दे० *अयोध्या*।

कोहकाफ़—यूरोप और एशिया के मध्य में स्थित एक पर्वत, जो देव और परियों का निवास-स्थान माना जाता है।

कौटिल्य—दे० *चाणक्य*।

कौरव—राजा **कुरु** की संतान। बाद में कौरव शब्द केवल धृतराष्ट्र के १०० पुत्रों के लिये प्रयुक्त होने लगा।

कौशांबी—वत्स देश की राजधानी। यह नगर इलाहाबाद से ३० मील पश्चिम में वर्त्तमान कोसाम के निकट था। उदयन की राजधानी यहीं थी।

कौशिक—१ महाराज कुशिक के वंशज होने से **विश्वामित्र** का नामांतर। २ एक तपस्वी। एक बार एक बगली ने इनके ऊपर विष्ठा कर दी। इन्होंने क्रुद्ध होकर उसकी ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा, तो वह भस्म हो गई। इसपर इन्हें अपने तप के प्रभाव का बड़ा गर्व हो गया। ये भिक्षा के लिये एक पतिव्रता गृहिणी के घर गये। उसे भिक्षा लाने में देरी करते देख, ये अपना क्रोध प्रदर्शित करने लगे। इसपर गृहिणी बोली—'मैं बगली नहीं जो आपकी कोपाग्नि से भस्म हो जाऊँगी।' कौशिक अवाक् रह गये। गृहिणी ने इन्हें बतलाया कि अपने पातिव्रत्य के बल से मैंने सब घटना जान ली थी। तब इन्होंने उससे क्षमा माँगी। उसने इन्हें क्रोध को वश में करने की शिक्षा दी और मिथिलापुर-निवासी **धर्मव्याध** से मिलने को कहा। धर्मव्याध पितृपरंपरा से चले आए व्यवसाय को करते हुए भी धर्म-पालन करते थे। उन्होंने इनको अनेक प्रकार के उपदेश देकर अपने पूर्व जन्म की कथा बतलाई कि वे पिछले जन्म में वेदाध्यायी ब्राह्मण थे (*म० व० २०६-१६*)। ३ इंद्र का नामांतर।

कौसल्या (कौशल्या)—कोसल-नरेश भानुमान् की कन्या, राजा दशरथ की प्रधान रानी और **राम** की माता।

कौस्तुभ—**समुद्रमंथन** से निकला एक रत्न, जिसे विष्णु अपने वक्षस्थल पर धारण किये हुए हैं।

क्रथकैशिक—विदर्भ (बरार) का प्राचीन नाम।

क्राथ—एक राजा जो बाहुग्रह के अवतार माने जाते हैं। यथा—चल्यो क्राथ नरनाथ माथ पर मुकुट मनोहर—*गोपाल*।

क्रौंच—१ दे० *वाल्मीकि*। २ हिमवान् पर्वत और मेना का पुत्र। जिस द्वीप में यह पर्वत है, उस द्वीप का नाम भी क्रौंच पड़ गया (ह० वं० १.१८)।

क्षीरनीर न्याय—"दूध और जल"। जल और दूध का एकत्रित होने पर पूर्णरूपेण मिल जाना अर्थात् एक होना, अभेद होना।

क्षीरसागर—पुराणानुसार सात समुद्रों में से एक, जो दूध से भरा हुआ माना जाता है। नारायण इसी में शेष-शय्या पर सोते हैं। दे० *सप्तसागर*।

क्षेमेंद्र (वर्त्त० १०५० ई०)—कश्मीर निवासी, संस्कृत के एक प्रसिद्ध कवि और आचार्य। इनकी मुख्य रचनाएँ *औचित्यविचारचर्चा*, *कला-विलास*, *दर्पदलन*, *कविकंठाभरण*, *चतुर्वर्गसंग्रह*, *चारु-चर्या*, *बृहत्कथामंजरी*, *भारतमंजरी*, *रामायणमंजरी*, *समयमातृका*, *सुवृत्ततिलक* और *दशावतारचरित* हैं।

ख

खंडकाव्य—वह छोटा प्रबंधकाव्य जिसमें अधिक से अधिक आठ सर्ग हों, जीवन के किसी एक ही पक्ष अथवा एक ही घटना का वर्णन हो और **महाकाव्य** के घटक अनेक तत्त्वों में से कुछ का ही समावेश हो।

खगनिया (र० का० १६०३ ई०)—उन्नाव निवासिनी एक कवयित्री, जो अपनी पहेलियों के लिये प्रसिद्ध हैं।

खटमल बाईसी—**अली मुहिबखाँ 'प्रीतम'** की एक हास्यपूर्ण कविता (१७२० ई०)। इसमें २२ छंद हैं। यह हिंदी की हास्य रस की प्रथम लाक्षणिक पुस्तक है।

खड़ी बोली—दिल्ली और मेरठ के आस-पास बोली जाने वाली वह बोली, जो आज प्रायः हिंदी के नाम से प्रसिद्ध है। ब्रज-भाषा की अपेक्षा यह बोली वास्तव में खड़ी-खड़ी लगती है, कदाचित इसी कारण इसका नाम खड़ी बोली पड़ा। दे० *गद्य*।

खड़ी बोली हिंदी-काव्य—यद्यपि भारतेंदु **हरिश्चंद्र** ने खड़ी बोली में कविता की है, तथापि इसका परिपक्व रूप हमें **श्रीधर पाठक**, **अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'**, **मैथिलीशरण गुप्त**, **जयशंकर प्रसाद**, **सुमित्रानंदन पंत** आदि वर्त्तमान कवियों की कृतियों में मिलता है। 'पंत' ने तो खड़ी बोली की कविता में ब्रज-भाषा का-सा माधुर्य भर दिया है। आधुनिक खड़ी बोली के काव्य की विषयगत विशेषताएँ निम्न हैं—

१ इसमें स्वदेश-प्रेम की भावना पर्याप्त रूप से प्रस्फुटित हुई (दे० *मैथिलीशरण गुप्त*, *माखनलाल चतुर्वेदी*, *बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'*, *रामधारी-सिंह 'दिनकर'*)। कुछ कवियों की प्रवृत्ति राष्ट्रियता से ऊपर उठकर अंतर्राष्ट्रियता की ओर भी बढ़ी है (दे० *सुमित्रानंदन पंत*)। २ आधुनिक कविता ऊपर से उतर मानव की निम्न से निम्न अवस्था का चित्रण करती है (दे० *सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की भिक्षुक आदि कविताएँ*)। इसलिये इस कविता में मानव-गौरव व व्यक्तिवाद का प्रभुत्व है। ३ आधुनिक कविता का जीवन-दर्शन निवृत्ति से प्रवृत्ति की ओर अधिक होता जा रहा है (दे० *छायावाद*)। ४ आधुनिक कवि प्रकृति को आलंबन रूप से देखना चाहते हैं, कभी-कभी उसका मानवीकरण भी कर देते हैं (दे० *छायावाद*)। ५ छायावादी तथा रहस्यवादी (दे० *छायावाद*) कविता में बाह्य की अपेक्षा

अंतर्मुखी प्रवृत्ति अधिक है। प्रगतिवाद के प्रभाव से अब यह प्रवृत्ति कम होती जा रही है। ६ वर्त्तमान कविता में दुःखवाद की मात्रा अधिक है। इसी की विस्मृति के लिये **हालावाद** की लहर उठी। **बालकृष्ण शर्मा** नवीन की 'विप्लवगान' नामक कविता में भी रूढ़ि-ग्रस्त, वैषम्यपूर्ण, जर्जर संसार का नाश करके इसी से छुटकारा पाने का प्रयास है। इसीसे बचने के लिये 'प्रसाद' ने अतीत और भविष्य के गीत गाये हैं। 'पंत' भी दुःख से ऊब कर कहते हैं—'शांति सुख है उस पार'। **महादेवी वर्मा** ने दुःख में ही सुख का अनुभव किया है। **प्रगतिवाद** में मार्क्स के सिद्धांतों के द्वारा दुःखित मानवता के करुण-क्रंदन के अंत का प्रयास है। 'निराला' की *तोड़ती पत्थर*, बालकृष्ण शर्मा नवीन की *जूटे पत्ते* तथा भगवतीचरण वर्मा की *भैंसा गाड़ी* आदि कविताओं ने इस वर्ग में विशेष ख्याति प्राप्त की है।

छंदों में तुकबंदी का बंधन तो उपाध्याय जी प्रभृति विद्वानों द्वारा संस्कृत-छंदों के प्रयोग से ही जाता रहा था, पर 'निराला' के हाथ में तो छंद ने पूर्ण मुक्ति प्राप्त कर ली है। नवीन कलाकारों के हाथ में कविता छंद के वर्णों के लघु-गुरु क्रम और मात्राओं की गणना के बंधन से मुक्त हो चली है। यह उन्मुक्त सरिता की भाँति अपनी ताल और लय के साथ बहती है। उसके लिये यह आवश्यक नहीं कि एक छंद की सभी पंक्तियाँ बराबर वर्णों या मात्राओं की हों। ऐसे छंद रबड़, केंचुआ या कंगारु छंद के नाम से प्रसिद्धि पा गये हैं। आधुनिक कविता में साहित्य, संगीत और कला तीनों का समन्वय रहता है। उपमा और रूपक भी नये हैं, नये प्रतीकों का प्रयोग हुआ है और शब्द-चित्र भी अच्छे रचे जाते हैं। जहाँ पर मनुष्येतर पदार्थों में मनुष्य का-सा व्यवहार दिखाया जाए, वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है। जुही की कली के लिये 'सोती थी सुहाग भरी' कहना इसी का उदाहरण होगा। ऐसे प्रयोगों से भाषा की लाक्षणिकता बढ़ी है। अब मूर्त्त वस्तुओं की अमूर्त से और अमूर्त वस्तुओं की मूर्त्त से उपमाएँ अधिक दी जाती हैं, यथा—१ 'बिखरी अलकें ज्यों तर्क जाल'। २ 'जीवन की जटिल समस्या है बढ़ी जटा-सी कैसी'।

इस प्रकार खड़ी बोली काव्य में राष्ट्रिय प्रेम की, छायावादी, रहस्यवादी, हालावादी तथा प्रगतिवादी धाराएँ प्रवाहित हुईं।

उपर्युक्त प्रसिद्ध कवियों के अतिरिक्त **महावीरप्रसाद द्विवेदी, नाथूराम शंकर शर्मा, भगवानदीन, रामचंद्र शुक्ल, रामनरेश त्रिपाठी, श्यामनारायण पांडेय, गोपालशरणसिंह, सुभद्राकुमारी चौहान, सियारामशरण गुप्त, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', रामकुमार वर्मा, मोहनलाल महतो वियोगी, जनार्दनप्रसाद झा द्विज, गुरुभक्तसिंह भक्त, नरेंद्र, रामेश्वरप्रसाद शुक्ल 'अंचल', उदयशंकर भट्ट, उपेंद्रनाथ अश्क, मोहनलाल द्विवेदी, अनूप शर्मा, गोविंदवल्लभ पंत, लक्ष्मीनारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, जगन्नाथप्रसाद 'मिलिंद', पद्मकांत मालवीय, बालकृष्ण राव, गोपालसिंह नैपाली, आरसीप्रसादसिंह, शिवमंगलसिंह 'सुमन', जगदंबाप्रसाद हितैषी, गंगेय राघव** आदि इस क्षेत्र में प्रसिद्धि पा चुके हैं।

और भी कवि तथा कवयित्रियाँ इस क्षेत्र में प्रकाश में आ रही हैं, जिनमें रामनाथलाल 'सुमन' (*विपंची*), चंद्रप्रकाश (*रैन बसेरा*), गोकुलचंद शर्मा (*तपस्वी तिलक, गांधी गौरव, प्रणवीर प्रताप*), हरिशंकर शर्मा (*घास पात, रामराज्य*), निरंकारदेव 'सेवक' (*स्वस्तिका*), श्यामबिहारी शुक्ल 'तरल' (*मानव*), कृष्णचंद्र शर्मा 'चंद्र' (*मरीचिका*), हंसकुमार तिवारी (*रिम-झिम*), नील-

कंठ तिवारी (*इंद्र-धनुष*), सुधींद्र (*प्रलयवाणी, जौहर*), पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' (*तू युवक है, दूब के आँसू*), भारतभूषण अग्रवाल (*छवि के बंधन, मुक्तिमार्ग*), केदारनाथ अग्रवाल (*युग की गंगा, नींद के बादल*), मुकुटधर पांडेय, तोरनदेवी शुक्ल 'लली', रामेश्वरी देवी 'चकोरी', तारा पांडेय (*शुकपिक, अतरंगिणी*), विद्यावती कोकिल, सुमित्राकुमारी सिन्हा, **दिनेशनंदिनी डालमिया**, होमवती (*उद्गार*), कमलादेवी चौधरी, शांति आदि उल्लेखनीय हैं।

हालावाद (जिसके प्रवर्त्तक हिंदी कविता में **हरिवंशराय 'बच्चन'** समझे जाते हैं) भी अनेक कवियों को प्रेरणा दे रहा है, जिसके परिणाम-स्वरूप *मधुशाला* के अनुकरण पर कृष्णचंद्र की *मदशाला* और रंजन की *टीशाला* और हृषीकेश चतुर्वेदी की *विजया-नाटिका* के दर्शन होते हैं।

हिंदी-कविता में एक नवीन धारा **प्रयोगवाद** (नई कविता) के नाम से पनप रही है। इस धारा के प्रमुख कवि **अज्ञेय**, गिरिजाकुमार माथुर, गजानन मुक्तिबोध, प्रभाकर माचवे, नेमीचंद्र जैन, शमशेर बहादुर आदि हैं।

खर—विश्रवा का पुत्र और रावण का एक सौतेला भाई (*म० व० २७६.८ कुं०*), जो रामचंद्र द्वारा पंचवटी-युद्ध में मारा गया था (*वा० रा० अर० १८-३०*)।

खरारी—द्वै चारहि छै, आठ दसै, मत्त सजावो, लै नाम खरारी। / नर जन्म लहे, वाहीं सो, प्रीति लगावो, उपजाहि पुरारी (३२ (८, ६, ८, १०) मा० छंद)। इस छंद का उदाहरण इसके लक्षण में है।

खरोष्ट्री (खरोष्ठी)—एक प्राचीन लिपि जो दाहिने से बाएँ को लिखी जाती थी। यह लिपि खरोष्ट्र (काशग़र) से भारत में आई थी।

खांडवप्रस्थ—एक ग्राम जो पांडवों को धृतराष्ट्र की ओर से मिला था। पीछे पांडवों ने वहीं पर **इंद्रप्रस्थ** बसाया था। दे० *खांडववन*।

खांडववन—एक प्राचीन वन जो आधुनिक मुज़फ्फरनगर ज़िले में था। दे० *अग्नि*। पद्म० उ० ६४ के अनुसार खांडववन यमुना के तीर पर था और इंद्रप्रस्थ (खांडवप्रस्थ) इसका एक भाग था।

ख़िज़्र—एक मुसलमान पैगंबर। इनके विषय में कहा जाता है कि ये भूले-भटकों का पथ-प्रदर्शन करते रहते हैं। ये अमर माने जाते हैं।

खिड़ियो जगो—दे० *वचनिका राठौर रतनसिंह जी री महेस दासौत री*।

खुमान (र० का० १७७३-१८२३ ई०)—चरखारी-नरेश के आश्रित एक भक्त कवि। *अमरप्रकाश, अष्टयाम, लक्ष्मणशतक, हनुमान-नखशिख, हनुमान-पंचक, हनुमान-पचीसी, नीति-विधान, नृसिंह चरित्र* आदि के रचयिता।

खुमान रासो—दलपत विजय का डिंगल में एक काव्य, जिसमें चित्तौड़ाधिपति रावल खुमान द्वितीय (८१३-४३ ई०) से लेकर **महाराणा प्रताप** तक का वृत्त दिया गया है। इस प्रकार प्रायः आठ सौ वर्षों तक इसमें परिवर्तन-परिवर्द्धन होता रहा। दे० *वीरगाथा काव्य*।

ख़ुसरो, अमीर (१२५३-१३२५ ई०)—वास्तविक नाम अबुलहसन। पटियाली (एटा) निवासी, बादशाह ग़यासुद्दीन बलबन के शाहज़ादे मुहम्मद के शिक्षक और दरबारी कवि, अरबी तथा फ़ारसी के विशिष्ट विद्वान्, कुशल कवि और हिंदी के तत्कालीन प्रमुखतम लेखकों

में से एक, जिनके ९९ ग्रंथ कहे जाते हैं। इनमें से कुल २२ उपलब्ध हैं। *खालिकबारी* (फ़ारसी-हिंदी का कोष) इनका प्रसिद्ध ग्रंथ है। कुछ विद्वान् *खालिकबारी* इनके द्वारा लिखित नहीं मानते। इन्होंने इतिहास और संगीत पर भी लिखा है। इनका हिंदुस्तानी संगीत में उच्च स्थान है। सितार और तबले का तो इनको आविष्कारक कहा जाता है। पहेलियों के लिये भी ये प्रसिद्ध हैं। पहेलियाँ छः प्रकार की होती हैं—**अंतर्लापिका**, **बहिर्लापिका**, **मुकरी**, दोसुखना (जिसमें दो या तीन प्रश्नों का एक ही उत्तर हो), बराबरी या संबंध (जिसमें दो अर्थों के शब्दों को कौतूहल के साथ घटित किया जाए) और ढकोसला (जिसमें निरर्थक शब्दावली हो)। इन्होंने सब प्रकार की पहेलियाँ लिखी हैं। इस क्षेत्र में ये अद्वितीय हैं। इन्होंने अपनी पहेलियों के द्वारा जन-समाज का अच्छा मनोरंजन किया है। डिंगल और अपभ्रंश के समय में इन्होंने प्रथम बार खड़ी बोली में कविता की और उसके आदि-कवि कहलाए। पर इनकी बोली के संबंध में अनेक मत हैं। इनकी खड़ी बोली में ब्रज-भाषा की ओर कुछ झुकाव मालूम देता है। इन्होंने 'हिंदवी' शब्द का प्रयोग किया है।

इनकी कविता से यह बात प्रमाणित होती है कि उर्दू खड़ी बोली में से फ़ारसी शब्द पृथक् करके नहीं, वरन् फ़ारसी, अरबी के शब्द भरकर बनी है।

ग

गंग (आ० का० १५९३ ई०)—**अकबर** के समकालीन एक श्रेष्ठ कवि। कहते हैं कि अपनी स्वतंत्र प्रकृति के कारण किसी राजा या नवाब ने इन्हें हाथी से कुचलवा दिया था। इनके पद अनेक संग्रहों में मिलते हैं। इन्होंने श्रृंगार और वीर दोनों रसों की कविता की है। दास के 'तुलसी गंग दुवौ भये सुकविन के सरदार' कथन में इनके श्रेष्ठ कवि होने की पुष्टि होती है। कहा जाता है कि **रहीम** ने इन्हें ३६ लक्ष रुपया भेंट किया था। इन्होंने *चंद छंद बरनन की महिमा* नामक एक छोटा-सा ग्रंथ भी लिखा। यह ग्रंथ खड़ी बोली गद्य में है।

गंगा—१ उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध और अतिपवित्र नदी जो हिमालय में गंगोत्री से निकल कर बंगाल की खाड़ी में गिर जाती है। हरिद्वार, प्रयाग और वाराणसी आदि प्रसिद्ध तीर्थ इसके किनारे बसे हुए हैं। हिंदुओं का विश्वास है कि इसमें स्नान करने से स्वर्ग-प्राप्ति होती है। पुराणानुसार एक बार सब देव ब्रह्मा के पास गये। गंगा के साथ इक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न महाभिष भी थे। सहसा वायु ने गंगा के वस्त्र उड़ा दिये। यह देख सब देवता नीचे की ओर देखने लगे, किंतु महाभिष गंगा की ओर ही देखते रहे। इसपर ब्रह्मा ने महाभिष को शाप दिया—'तुम मृत्युलोक में जन्म लो, जहाँ गंगा तुम्हारी पत्नी होगी।' महाभिष का जन्म **शांतनु** के रूप में हुआ। स्वर्ग से आते समय मार्ग में गंगा को **अष्टवसु** मिले जो वसिष्ठ के शाप से मृत्युलोक में जन्म लेने आ रहे थे। अष्टवसु की प्रार्थना पर गंगा उनको पुत्र-रूप में जन्म देने के लिये और जल में फेंक देने के लिये उद्यत हो गई। ऐसा करने से अष्टवसु शीघ्र ही देवलोक पहुँच गये। इधर **भगीरथ**, जो अपने पूर्वजों का उद्धार करने के लिये स्वर्ग से गंगा लाने के लिये प्रयत्नशील थे, अपने प्रयत्न में सफल हुए।

गंगा जब स्वर्ग से गिरीं, तो शिव ने इन्हें अपनी जटाओं में धारण कर लिया। फिर जह्नु ऋषि ने इन्हें पी लिया, पर भगीरथ की प्रार्थना पर उन्होंने गंगा को अपने कर्ण-द्वार से निकाल दिया। शांतनु से गंगा को आठ पुत्र प्राप्त हुए। सात पुत्र तो गंगा ने डुबा दिये, किंतु आठवाँ पुत्र शांतनु ने डुबाने नहीं दिया। यही पुत्र **भीष्म** हुआ (*म० आ० १०२-६ कुं०*)। जब परशुराम और भीष्म का युद्ध हुआ (दे० *अंबा*) तो गंगा ने भीष्म की रक्षा की थी (*म० उ० १८२*)। भीष्म के वध के लिये जब अंबा तप कर रही थी, तो एक बार वह गंगा में स्नान करने आई। इसपर गंगा ने उसे नदी होने का शाप देदिया (*म० उ० १८६*)। गंगा के पर्य्याय०—भागीरथी, जाह्नवी, मंदाकिनी, सुरसरि, देवापगा, भीष्मसू, त्रिपथगा, सुरधुनि, सुरापगा, अलकनंदा आदि। २ इड़ा नाड़ी का एक नाम। दे० *इला*।

गंगाद्वार—**हरिद्वार** का प्राचीन नाम।

गंगाप्रसाद उदैनियाँ—एक राम-भक्त कवि और *राम आग्रह* (१७८७ ई०) के रचयिता।

गंगाप्रसाद दास (आ० का० १८५० ई०)—चित्रकूट निवासी एक लेखक जिन्होंने कृष्ण-भक्त होते हुए भी राम-भक्त तुलसीदास-कृत *विनय पत्रिका* की गद्य और पद्य में टीका लिखी।

गंगाराम (आ० का० १८०० ई०)—एक भक्त कवि। *शब्द ब्रह्म* के रचयिता।

गंगावतरण—**जगन्नाथदास 'रत्नाकर'** का ब्रज-भाषा में एक काव्य (१९२८ ई०) जिसमें **गंगा** के आकाश से उतरने और शिव के उन्हें संभालने के लिये सन्नद्ध होने का वर्णन बहुत ही ओजपूर्ण है। यह कथात्मक ग्रंथ है। कथा में थोड़ा बहुत परिवर्तन कर उसमें शृंगार, वीर, हास्य, भयानक सभी प्रकार के रसों की सामग्री उपस्थित की है।

गंगासागर—एक तीर्थ जो उस स्थान पर है जहाँ गंगा समुद्र में गिरती है। यहाँ पर **कपिल** का आश्रम था।

गंगोत्री—रुद्र हिमालय में वह स्थान जहाँ से गंगा नदी निकलती है। यहाँ गंगा देवी का एक मंदिर है। गंगोत्री से एक कोस दूर पतनगिरि नामक स्थान है। यहाँ पर द्रौपदी और चार पांडवों का देहांत हुआ। इसके पश्चात् युधि-ष्ठिर ने इस स्थान का त्याग कर दिया और वे स्वर्गारोहिणी नामक शिखर पर चढ़े। अपने रथ में बिठाकर इंद्र उन्हें सशरीर स्वर्ग ले गये। उनके साथ एक कुत्ता (धर्मराज) भी था।

गंगोदक—आठ हों रागण जान 'गंगोदका' पिंगलाचार्य का छंद ये सोहना (८ र=२४ व० छंद)। उ०—राम राजान के राज आये इहाँ, धाम तेरे महाभाग जागै अबै, देवि मंदोदरी कुंभकर्णादि दै, मित्र मंत्री जिसे देख पूछि देखौ सबै। इसे गंगाधर और खंजन भी कहते हैं।

गंडकी—गंडक नदी। यह हिमालय में धवला-गिरि से निकल कर बिहार के अंतर्गत मुजफ्फर-पुर जिले में सोनपुर नामक स्थान पर गंगा से जा मिलती है। विष्णु ने इस नदी के स्रोत के निकट कठोर तपस्या की और उनके कपोलों के स्वेद से यह नदी प्रवाहित हुई। **शालग्राम** इसके स्रोत के निकट है।

गंजन—काशी निवासी एक रीति-कवि। *कमरुद्दीन खाँ हुलास* (१७२६ ई०, अपने आश्रय-दाता के नाम पर) के रचयिता।

गंधमादन—रुद्र हिमालय का एक भाग। यह कैलास पर्वत के दक्षिण में है। **बदरिकाश्रम** इसी पर्वत पर स्थित है।

गंधर्व—एक प्रकार के देवविशेष जो संगीत विद्या में निपुण होते हैं। विश्वावसु (दे० *कबंध*), चित्ररथ, **हाहा, हूहू, तुंबुरु** आदि प्रधान गंधर्व हैं।

गगन—गगना त्रिसकार गगा होवे (स स स ग ग=११ व० छंद)। उ०—ससि सो गगनौं कर है सोभा, लखि जाहि मिटै मन को छोभा। छवि अद्‌भुत आय निहारौ री, ब्रजराजहिं आज रीझावौ री॥

गज—(गजेंद्र)—राजा **इंद्रद्युम्न** जो शाप से हाथी बन गया था। इसका तालाब में मगर या ग्राह (दे० *हूहू*) से युद्ध हुआ। जब इसने देखा कि मगर इसे मार देगा, तो इसने भगवान् से प्रार्थना की और भगवान् ने इसकी रक्षा की (*भा० ८.३-५*)।

ग़ज़ल—फ़ारसी-उर्दू में मुक्तक काव्य का एक भेद। पहिले इसका प्रधान विषय प्रेम होता था, पर अब तो सब प्रकार के विषयों पर ग़ज़लें लिखी जाती हैं।

गट (Goethe) (१७४९-१८३२ ई०)—एक जर्मन कवि और नाटककार, जिनका *फाउस्ट* (*Faust*) नामक नाटक अनूदित है।

गण—छंद शास्त्र में अक्षरों या मात्राओं का समूह। वर्णगण तीन अक्षरों का और मात्रागण चार मात्राओं का होता है। वर्णगण आठ होते हैं और मात्रागण पाँच। *यमाताराजभानसलगा* सूत्र से वर्णगणों का नाम-स्वरूप सरलता से अवगत हो जाता है।

१ यगण (यमाता) ।ऽऽ (लघु गुरु गुरु) शुभ।
२ मगण (मातारा) ऽऽऽ (गुरु गुरु गुरु) शुभ।
३ तगण (ताराज) ऽऽ। (गुरु गुरु लघु) अशुभ।
४ रगण (राजभा) ऽ।ऽ (गुरु लघु गुरु) अशुभ।
५ जगण (जभान) ।ऽ। लघु गुरु लघु) अशुभ।
६ भगण (भानस) ऽ।। (गुरु लघु लघु) शुभ।
७ नगण (नसल) ।।। (लघु लघु लघु) शुभ।
८ सगण (सलगा) ।।ऽ (लघु लघु गुरु) अशुभ।

मात्रागण चार मात्राओं के गुरु-लघु भेद से पाँच ही बनते हैं।

१ सर्वगुरु (सुरलता) ऽऽ (गुरु गुरु)।
२ आदिगुरु (चरण) ऽ।। (गुरु लघु लघु)।
३ मध्यगुरु (भूपति) ।ऽ। (लघु गुरु लघु)।
४ अंतगुरु (कमल) ।।ऽ (लघु लघु गुरु)।
५ सर्वलघु (विप्र) ।।।। (लघु लघु लघु लघु)।

गणपति—१ दे० *गणेश*। २ दे० *माधवानल कामकंदला*।

गणेश—१ एक प्रसिद्ध देवता जिनका संपूर्ण शरीर मनुष्य का है पर सिर हाथी का है। ये शिव और पार्वती के पुत्र हैं (*ब्रह्मवै० ३.८*, *लिंग० १०५*)। एक अन्य मत से पार्वती ने अपने अंग के उबटन की मूर्त्ति बनाई और उसे सजीव कर दिया, जो गणेश कहलाए। शनैश्चर की क्रूर दृष्टि से इनका सिर धड़ से अलग हो गया था। इसपर देवों ने गजेंद्र का मस्तक इनके धड़ से जोड़कर इन्हें जीवित कर दिया (*ब्रह्मवै० ३.१८, शिव० रुद्र० कु० १३*)। एक बार शिव-पार्वती अंतःपुर में व्यस्त थे। ये द्वार पर द्वाररक्षक के रूप में बैठे थे। जब इन्होंने परशुराम को भीतर जाने से रोका, तो उन्होंने इनसे युद्ध किया और उसमें इनका एक दाँत टूट गया। इसलिये इन्हें 'एकदंत' भी कहते हैं (*ब्रह्मवै० ३.४१-४४*)। एक बार देवताओं ने सर्वसम्मति से यह निश्चय किया

कि जो सबसे पहिले पृथ्वी की परिक्रमा करे, वही सर्वप्रथम पूजनीय हो। सब देवता अपने-अपने वाहन पर चढ़कर चल पड़े। गणेश ने सारी पृथ्वी की परिक्रमा न कर केवल राम-नाम लिखकर उसकी परिक्रमा कर ली। तब राम-नाम की महिमा जानकर सबने इन्हें अपना पूज्य स्वीकार कर लिया। शुभ कार्यों में इनकी पूजा सर्वप्रथम होती है (*पद्म० सृ० ६३*)। ये ज्ञान और मंगल कार्यों के देवता हैं। इनका वाहन मूषक है। ये बड़े भारी विद्वान् भी हैं। *महाभारत* लिखने के लिये **वेदव्यास** को जब कोई योग्य लेखक नहीं मिला, तो इन्होंने ही उस महान् कार्य को पूर्ण किया (*म० आ० १.११२ कु०*)। गणेश के पर्याय०—लंबोदर, हेरंब, एकदंत, मूषकवाहन, गजवदन, गणपति, विनायक, गजास्य, वक्रतुंड, मोदकप्रिय आदि। २ (*र० का० १७८३-१८५१*) ई०—महापात्र **नरहरि बंदीजन** के वंशज, काशिराज उदित-नारायणसिंह के आश्रित एक भक्त-कवि और *वाल्मीकि रामायण श्लोकार्थ-प्रकाश, प्रद्युम्न विजय* (पद्यात्मक नाटक) तथा *हनुमतपचीसी* के रचयिता।

गणेश मिश्र (आ० का० १५८८ ई०)—एक कवि। *विक्रम विलास* के रचयिता।

गदाधर भट्ट (आ० का० १५३३ ई०)—दक्षिणी ब्राह्मण, संस्कृत के प्रकांड पंडित, गौड़िया संप्रदाय के प्रमुख एक कृष्ण-भक्त कवि, जिन्होंने कृष्ण की वंदना के साथ नंद और यशोदा की भी वंदना की है। इनके केवल स्फुट पद उपलब्ध हैं।

गदाधरसिंह (१८४८-९८ ई०)—भारतेंदु के मित्र और कादंबरी (संस्कृत गद्य-काव्य), *दुर्गेश-नंदिनी* तथा *बंग विजेता* (बँगला से) के अनु-वादक।

गद्य—काव्य के दो भेदों में से एक जिसमें छंद और वृत्त का प्रतिबंध नहीं होता और बाकी रस, अलंकार सब गुण होते हैं। पहिले इसे कवि-कर्म की कसौटी माना जाता था—*गद्यं कविनां निकषं वदंति*। आज इसने पद्य को भी अपदस्थ-सा कर दिया है और उपन्यास, कहानी, नाटक आदि में सर्वत्र अपना अधिकार जमा लिया है। कुछ लोगों के प्रयत्नों से अब गद्य में भी बहुत-कुछ माधुर्य का समावेश हुआ है। हिंदी में गद्य के लिये यह प्रश्न था कि वह किस भाषा में लिखा जाए। ब्रज-भाषा में गद्य का नितांत अभाव न था। १३५० ई० के आस-पास कुछ गोरखपंथी साहित्य ब्रज-भाषा में मिलता है। इसके अतिरिक्त **वल्लभाचार्य** ने *शृंगार रस-मंडन* लिखा। **गोकुलनाथ** ने *चौरासी वैष्णवन की वार्ता* तथा *दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता* पुस्तकें लिखीं, पर ब्रज-भाषा मुख्यतः पद्य की ही भाषा रही। नवीन युग के आजाने पर उसकी कोमलकांत पदावली जीवन की संघर्षमय कठोर भूमि के लिये अनुकूल सिद्ध न हो सकी। राजदरबार में फारसी का चलन उठ गया था। उर्दू ने उसका स्थान ले लिया। किंतु उर्दू जनता की भाषा न थी। अंग्रेज़ पादरी लोगों ने अपनी *बाइबल* का अनुवाद पहिले पहिल हिंदी में किया था। शासन की सुविधा के लिये अफ़सर जनता की भाषा से परिचय प्राप्त करना चाहते थे, इसलिये फोर्ट विलियम कॉलिज में उर्दू के अतिरिक्त हिंदी भाषा (खड़ी बोली) के अध्यापन का प्रबंध किया गया। यद्यपि खड़ी बोली का अस्तित्व खुसरो और कबीर से पूर्व था और **गंग**, पटियाला निवासी रामप्रसाद

(*योग वसिष्ठ;* १७४१), दौलतराम (*पद्म पुराण,* संस्कृत से अनुवाद) ने इसका प्रयोग पद्य में भी किया, तथापि वह जनता की भाषा रही, साहित्यिक भाषा न हो सकी। एक विशाल क्षेत्र में समझी जाने के कारण खड़ी बोली गद्य के लिये अधिक उपयुक्त थी। खड़ी बोली-गद्य का सूत्रपात करने का श्रेय **सदासुखलाल, लल्लूलाल, इंशा अल्लाखाँ** तथा **सदल मिश्र** को है। पर इनसे भी पूर्व उन्नीसवीं शती के प्रारंभ से पहिले १७२१ ई० में रामप्रसाद निरंजनी ने *भाषा योग वसिष्ठ* और १७६१ में दौलतराम ने जैन *पद्मपुराण* का अनुवाद खड़ी बोली में किया। खड़ी बोली-गद्य के अन्य प्रारंभिक लेखकों में स्वामी **दयानंद सरस्वती, श्रद्धाराम फुल्लौरी**, राजा **शिवप्रसाद**, राजा **लक्ष्मणसिंह, भारतेंदु हरिश्चंद्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', श्रीनिवासदास, अंबिकादत्त व्यास, राधाचरण गोस्वामी, बालमुकुंद गुप्त, महावीरप्रसाद द्विवेदी** आदि प्रमुख हैं। अब तो उपन्यास, कथा, नाटक, निबंध आदि साहित्य के सभी अंगों में गद्य का अच्छा विकास हो रहा है।

गद्य-काव्य—गद्य में की गई काव्य के अन्य गुणों से युक्त रचना। पर इसमें वैयक्तिकता और एकतथ्यता अधिक होती है। यह आकार में छोटा होता है और इसमें अन्विति भी कुछ अधिक होती है। यह एक निश्चित ध्येय की ओर जाता है। 'गद्य-काव्य की भाषा गद्य की होती है किंतु भाव प्रगीत काव्यों के से। इसमें रूपकों और अन्योक्तियों का प्राधान्य रहता है। कहानी की भाँति इसमें एक ही संवेदना रहती है किंतु जहाँ वह प्रलाप शैली का अनुकरण करता है, वहाँ अन्विति का अभाव भी भावातिरेक का द्योतक है।' हिंदी में गद्य-काव्य के लेखकों में **राय कृष्णदास** (*साधना*) तथा **वियोगी हरि** (*श्रद्धा के कण, अंतर्नाद, भावना*) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। राय कृष्णदास में शांत उपासना का भाव अधिक है। इनकी रचनाओं में हृदय के उद्गार के साथ कुछ कला भी रहती है। वियोगी हरि ने पांडित्यपूर्ण शैली को अपनाया। इनकी शैली में समासों और अलंकारों का चमत्कार है और भावावेश का प्राधान्य है। अन्य लेखकों में चतुरसेन शास्त्री (*अंतस्तल*), दिनेशनंदिनी डालमिया (*मौक्तिकमाल, उन्मन*), प्रकाशचंद गुप्त, रामप्रसाद विद्यार्थी आदि उल्लेखनीय हैं।

गद्य-गीत—हिंदी में गद्य-काव्य (दे० यथा०) के अतिरिक्त गद्य-गीत भी लिखे गये हैं। इनमें गद्य-काव्य की अपेक्षा गति और लय कुछ अधिक होती है और पंक्तियों का विन्यास भी कुछ-कुछ गीतों का-सा होता है। रवींद्रनाथ ठाकुर-कृत *गीतांजलि* के अंग्रेज़ी गद्य-गीत भी इसी प्रकार के हैं।

ग़बन—**प्रेमचंद** का एक उपन्यास (१९३१ ई०)।

अपने विवाह का ऋण चुकाने के लिये, दयानाथ के पुत्र रमानाथ ने अपनी पत्नी जालपा के आभूषण चुराकर एक सराफ के यहाँ गिरवी रख दिये और हिसाब साफ कर दिया। अपनी पत्नी के आग्रह पर उसने एक ऐड्वोकेट इंद्रभूषण की पत्नी रत्न से साढ़े छः सौ रुपये उधार लेकर सराफ से आभूषण छुड़वा लिये। जब रत्न ने रुपयों की माँग की तो रमानाथ ने म्यूनिसिपैलिटी के कोष से रुपये पूरे कर दिये और स्वयं प्रयाग से कलकत्ते भाग गया। जालपा को इस बात का तनिक भी पता नहीं था कि यह सब रमानाथ ने उसके प्रसन्न रखने के लिये किया

था । अंत में जालपा ने अपने आभूषण बेच कर म्यूनिसिपैलिटी के कोष के रुपये पूरे कर दिये । रमानाथ की भेंट देवीदीन नामक एक वृद्ध खटिक से हुई जो अपने दोनों पुत्रों की आहुति स्वदेशी-आंदोलन में दे चुके थे । रमानाथ ने चाय की दुकान खोल ली, किंतु वह पुलिस से डरता था । एक बार पुलिस ने संदेह मे उसे एक अन्य झूठे राजनीतिक मुक़दमें में गवाही देने के लिये राज़ी कर लिया । यह मुक़दमा क्रांतिकारियों से संबंध रखता था । फलस्वरूप एक को फाँसी की तथा पाँच को दस-दस वर्ष और आठ को पाँच-पाँच वर्ष की जेल की सज़ा मिली । रमानाथ को बहलाने के लिये ज़ोहरा नामक एक वेश्या भी लाई गई जिसे इससे कुछ प्रेम हो गया । जालपा रमानाथ की खोज में कलकत्ते आई और उसके कहने पर रमानाथ ने अपनी झूठी गवाही की सूचना न्यायाधीश को बतला दी, जिससे मुक़दमा फिर से प्रारंभ हुआ । इधर रत्न अपने पति का इलाज करवाने के लिये उसे कलकत्ते लाई थी, किंतु उसका देहांत होने से वह अकेली रह गई । देवीदीन ने अब कुछ भूमि मोल लेली थी । रमानाथ, जालपा, रत्न, ज़ोहरा और बाद में दयानाथ भी वहीं रहने लगे । रत्न की मृत्यु हो गई । ज़ोहरा एक डूबती स्त्री को बचाने के लिये स्वयं भी डूब गई ।

उपन्यास के पूर्वार्ध में दिखाया गया है कि किस प्रकार मध्यवर्ग में प्रदर्शन की अनिष्टकारी भावना कितने भयंकर परिणाम उत्पन्न कर सकती है । इसके अतिरिक्त उत्तरार्ध में पुलिस के हथकंडों, न्यायालय के निर्णयों आदि के संबंध में कथा-प्रवाह के भीतर जो विचार व्यक्त किये गये हैं, वे भारतवर्ष में विदेशी शासन के कारनामों का यथेष्ठ उद्घाटन करते हैं । प्रयाग की पारिवारिक कहानी को विस्तार देने के लिये कलकत्ते का प्रकरण जोड़ दिया गया है । इससे उपन्यास के संकलन और प्रभाव की एकाग्रता में त्रुटि अवश्य आ गई है, पर कहानी के प्रवाह में कोई बड़ी बाधा उपस्थित नहीं होती ।

गय—१ इल अथवा सुद्युम्न राजा का मध्यम पुत्र । यह गयापुरी में राज्य करता था (*भा० ६.१*) । २ एक धर्मपरायण राजा जिन्होंने गया देश में सौ वर्ष तक यज्ञ किया (*म० व० ६५, १२१*) ।

गयशिर—गया में ब्रह्मयोनि पहाड़ी का एक निचला भाग । प्रसिद्ध है कि यह गयासुर (दे० यथा०) के शीर्ष पर स्थित है ।

गया—*रामायण* तथा *महाभारत* आदि में वर्णित हिंदुओं का एक प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ । यह उत्तर में रामशिला और दक्षिण में ब्रह्मयोनि पहाड़ियों के बीच में फल्गु नदी के तट पर स्थित है । यह एक पीठ है जहाँ सती का वक्षस्थल गिरा था । गया से छः मील दक्षिण में बुद्ध गया है । सिद्धार्थ ने इस स्थान पर बोधि वृक्ष के नीचे समाधिस्थ होकर बुद्धत्व को प्राप्त किया था । सम्राट् अशोक के समय में गया में अनेक बौद्ध मठ स्थापित हुए थे और यह बौद्ध धर्म का प्रसिद्ध केंद्र था । बाद में यह नगर हिंदुओं के अधिकार में चला गया ।

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' (१८८३ ई०-)—ब्रज-भाषा और खड़ी बोली के कवि । 'सुकवि' (पत्र) के संपादक और *कृषक-क्रंदन*, *राष्ट्रिय वीणा*, *त्रिशूल-तरंग*, *करुण भारती* आदि के रचयिता । इनका ध्यान वर्त्तमान राजनीति पर अधिक है । इनकी राष्ट्रिय कविताएँ 'त्रिशूल' नाम से हैं । इनकी भाषा सुबोध है ।

गयासुद्दीन तुग़लक़ प्रथम—भारत का एक सुलतान (१३२०-२५ ई०)।

गयासुद्दीन बलबन—भारत का एक सुलतान (१२६६-८६ ई०)।

गयासुर—एक दैत्य। विष्णु ने इसका कैकट देश में नाश किया था। इसकी देह पाँच कोस व इसका सिर एक कोस लंबा था (*स्कंद० ५. १.५६*)। घोर तपस्या के उपरांत अपना शरीर पवित्र करने के लिये इसने विष्णु से वर प्राप्त किया। लोग इसके दर्शन से बैकुंठ जाने लगे। यह देखकर ब्रह्मा ने इसका शरीर भिक्षा में प्राप्त कर एक शिला से दबा दिया, पर यह निश्चल न हुआ। अंत में जब स्वयं विष्णु उस शिला पर बैठे, तब यह निश्चल हो गया। देवताओं ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने यही वर माँगा कि जब तक सूर्य-चंद्र रहें, तब तक आप इस शिला पर बैठे रहें। इसके नाम पर गया तीर्थ का नाम पड़ा। गयाक्षेत्र का परिमाण पाँच कोस का है और गयशिर स्थान का परिमाण एक कोस का है (*वायु० २.४४*)।

गरीबदास (जन्म १७१७ ई०)—छुड़ानी (रोहतक) निवासी एक संत और गरीबदासी पंथ के प्रवर्त्तक। इनके ७००० पदों में से केवल १८०० प्राप्त हैं। ये **कबीर** के बड़े भक्त थे।

गरुड़—कश्यप और विनता (दे० यथा०) के पुत्र जो विष्णु के वाहन तथा पक्षियों के राजा माने जाते हैं। देवताओं से युद्ध करके ये अपनी माता के लिये स्वर्ग से अमृत लाए थे (*म० आ० २३, २५, २८, यो० वा० १.६*)।

गर्ग—बृहस्पति के वंश में उत्पन्न एक ऋषि। *गर्ग संहिता* इन द्वारा रचित प्रसिद्ध धर्म-ग्रंथ है। इनके आश्रम रायबरेली ज़िले में गेगासों नामक स्थान पर और लोधमून वन (कुमायूँ) में थे।

गर्भ संधि—दे० *संधि*।

गर्भांक—रंगद्वार, आमुख आदि अंगों वाला बीज और फल का आभास देने वाला नाटक के अंक के बीच में आने वाला छोटा अंक। दे० *अर्थोपक्षेपक*।

गांडीव—**अर्जुन** के धनुष का नाम। सर्व-प्रथम ब्रह्मा ने इसे रचकर सोम को दिया। सोम ने वरुण को और अग्नि की प्रार्थना पर वरुण ने अर्जुन को दिया। मृत्यु के समय अर्जुन ने इसे वरुण को लौटा दिया था।

गांधार—वह प्रदेश जहाँ अब पेशावर और रावलपिंडी के ज़िले हैं। इसकी राजधानियाँ पुरुषपुर (वर्त्तमान पेशावर) और तक्षशिला थीं। इस देश की प्राचीनतम राजधानी पुष्करावती थी। दे० *गांधारी*।

गांधारी—गांधार-नरेश सुबल की कन्या (*म० आ० ६३.५८ कुं०*), धृतराष्ट्र की पत्नी और दुर्योधन की माता। शिव ने इन्हें एक सौ पुत्र प्राप्त होने का वर दिया था (*११६.१० कुं०*)। अपने पति को अंधा देखकर, इन्होंने अपनी आँखों पर भी पट्टी बाँधली थी जिससे कि ये किसी परपुरुष को न देखें (*११८ कुं०*)।

गांधी—दे० *मोहनदास कर्मचंद गांधी*।

ग़ाज़ीदास (आ० का० १८२०-३० ई०)—छत्तीसगढ़ निवासी एक संत जो जाति से

चमार थे। इन्होंने 'सतनामी पंथ' के सिद्धांतों का ही प्रचार किया।

गाथा—१ प्राचीन काल की एक प्रकार की ऐतिहासिक रचना, जिसमें लोगों के दान, यज्ञादि का वर्णन होता था। २ एक प्रकार की प्राचीन भाषा जिसमें संस्कृत के साथ कहीं-कहीं पाली भाषा के विकृत शब्द मिले रहते हैं। *ललितविस्तर* आदि बौद्ध ग्रंथ इसी भाषा में लिखे हुए हैं। ३ एक छंद। इस छंद का प्राकृत में बहुत प्रयोग हुआ है। *गाथा सप्तशती* इसी छंद में लिखी गई है।

गाधि—विश्वामित्र और सत्यवती के पिता। दे० *ऋचीक*।

गायत्री—१ ब्रह्मा की पत्नी *(पद्म० सृ० १६-१७)* जो वेदमाता हैं *(म० शां० ६६.२४ कुं०)*। पर्य्याय०—सावित्री, ब्राह्मी आदि। २ एक प्रसिद्ध वैदिक मंत्र तथा एक छंद। गायत्री की प्रशंसा वेदों, ब्राह्मणग्रंथों, उपनिषदों, *महाभारत* और पुराणों में की गई है *(छां० उ० ३.१२)*।

गार्गी—वचक्नु ऋषि की कन्या, एक प्रसिद्ध विदुषी और ब्रह्मज्ञानी महिला, जिन्होंने जनक की सभा में याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ किया था *(बृ० उ० ३.६; ८. आश्व० गृ० ३.४.४ आदि)*।

गार्सें द तासी (Garcin de Tassy)—दे० *इस्त्वार द ला लितेरात्यूर ऐंदूई ए ऐंदुस्तानी*।

गालव—विश्वामित्र के एक शिष्य। इन्होंने ८०० श्यामकर्ण घोड़े गुरु-दक्षिणा में दिये थे *(म० उ० १०६-१९)*। इनके आश्रम जयपुर से तीन मील एक स्थान पर, और चित्रकूट पर्वत पर थे।

गॉल्ज़वर्दी (Galsworthy) (१८६७-१९३३ ई०)—एक अंग्रेज़ी उपन्यासकार और नाटककार, जिनके कुछ नाटक *चान्दी की डिबिया*, *हड़ताल* और *न्याय* नाम से अनूदित हैं।

गाहिणीनाथ—**गोरखनाथ** के शिष्य। इन्होंने संत ज्ञानदेव के पितामह गोविंदपंत को ब्रह्मोपदेश दिया था।

गिरिधर कविराज (आ० का० १७४३ ई०)—एक कवि। इनकी नीति संबंधी कुंडलियाँ ग्रामीण अपढ़ लोगों तक में अत्यंत प्रिय हैं। इनकी ब्रज-भाषा में कहीं-कहीं खड़ी बोली और अवधी का भी मिश्रण है।

गिरिधरदास (१८३३-६० ई०)—भारतेंदु हरिश्चंद्र के पिता जिनका वास्तविक नाम गोपालचंद्र था। भारतेंदु ने इनके ग्रंथों की संख्या ४० दी है पर केवल १८ ही उपलब्ध हैं। इनमें अधिकतर धार्मिक कथामृत हैं। इन्होंने *नहुष* नामक नाटक भी लिखा जो भारतेंदु द्वारा हिंदी का सर्वप्रथम नाटक कहा गया है। दे० *नाटक*।

गिरिधर शर्मा 'नवरत्न' (आ० का० १८८१ ई०)—झालरापाटन निवासी एक कवि जिनकी स्वरचित रचनाएँ *जया जयंत*, *भीष्म-प्रतिज्ञा*, *सुकन्या*, *सावित्री*, *सांख्यदोहावली*, *वेदस्तुति*, *चित्रांगदा* तथा *गीतांजलि* हैं।

गिरिनाथ—शिव। यथा—कुछ दिन तहाँ रहे गिरिनाथा—*तुलसी*।

गिरिव्रजपुर—दे० *राजगृह*।

गीतगोविंद—**जयदेव** का संस्कृत में एक गीतिकाव्य जिसमें राधा-कृष्ण का मिलन, कृष्ण की मधुर लीलाएँ और प्रेम की मादक अनु-

भूति सरस एवं मधुर शब्दावली में अंकित हुई है। यह प्रथम रचना है जिसमें राधा का व्यक्तित्व पहिली बार मधुर और प्रेमपूर्ण बनाकर साहित्य में प्रस्तुत किया गया है। आगामी संपूर्ण कृष्ण-साहित्य इससे प्रेरणा प्राप्त करता प्रतीत होता है। **विद्यापति** की *पदावली* पर *गीतगोविंद* का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

गीतावली—**तुलसीदास** का ब्रज-भाषा में एक ग्रंथ जिसमें ३२८ पद सात कांडों में विभाजित हैं। कृष्ण की कथा का गीतों में अत्यधिक प्रचार होते देखकर इसमें तुलसीदास ने गीतों में राम की कथा लिखी है। राम का सौंदर्य और ऐश्वर्य इसकी आत्मा है। इसमें कोमल रसों का वर्णन अधिक है, परुष रसों का कम। पर तुलसी के राम राज-मर्यादा में बँधे हुए हैं। इसी कारण माधुर्य में कुछ कमी-सी आ जाती है। इस काव्य का रचनाकाल १५७० ई० माना जा सकता है।

गीत—महादेवी वर्मा के अनुसार 'साधारणतः गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुःखात्मक अनुभूति का वह शब्द-रूप है, जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके।' गीत दो प्रकार के होते हैं—लोकगीत और साहित्यिक। 'लोकगीतों में होता तो निजीपन है, किंतु उनमें साधारणीकरण और सामान्यता कुछ अधिक रहती है, तभी वे वैयक्तिक रस की अपेक्षा जन-रस उत्पन्न कर सकते हैं।' इन गीतों का संबंध प्रायः अवसर विशेष से रहता है। दे० *लोकगीत*। साहित्यिक गीतों के दो मुख्य भेद हैं—शुद्ध संवेदनात्मक और कथाश्रित। प्रथम प्रकार के गीतों में कवि स्वयं ही आत्म-निवेदन करता है, जैसे कबीर तथा मीरा के गीत अथवा तुलसी के *विनयपत्रिका* के पद। दूसरी प्रकार के गीतों में भी कवि अपना निवेदन करता है, किंतु किसी अन्य पात्र द्वारा, जैसे सूरदास के लीला-संबंधी पद।

वैसे तो गीतों का इतिहास वेदों से प्रारंभ होता है, पर इनका वास्तविक रूप जयदेव-कृत *गीतगोविंद* में प्राप्त होता है। 'विद्यापति और चंडीदास के पदों में जयदेव की ही प्रतिध्वनि सुनाई देती है।' हिंदी में गीतों का सूत्रपात कबीर आदि संत-कवियों की वाणी में हुआ। कृष्ण-काव्य में माधुर्य-पक्ष के कारण गीतों का ही प्राधान्य रहा। मीरा में निजीपन परा-काष्ठा तक पहुँच गई है। खड़ी बोली में जयशंकर प्रसाद ने अपने नाटकों में प्रयुक्त गीतों से नई परंपरा खड़ी की है। सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और महादेवी वर्मा के गीत भी अपना अलग स्थान रखते हैं।

गीति—१ ऐसी रचना जिसमें गण या मात्रा की अपेक्षा लय, राग और संगीत की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। **जयदेव**, सूरदास, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' आदि ने असंख्य गीतियाँ लिखी हैं। २ भानुवि षमगण जनहो, नौनौ कल सम पदैष टजगी ती (विषम पादों में १२, सम पादों में १८, मा० छंद)। विषम गणों में जगण न हो। छठवें में जगण हो और अंत में गुरु। उ०—रामा रामा रामा, आठौ यामा जपौ यहो नामा। त्यागौ सारे कामा, पैहौ अंतै हरीजु को धामा॥ थोड़े से हेर-फेर से इसके कई भेद हो जाते हैं।

गीतिका—रत्न रवि कल धारि कै लग, अंत रचिये गीतिका (२६ (१४, १२) मा० छंद, अंत लग)। इस छंद की ३ री, १० वीं, १७ वीं और २४ वीं मात्राएँ सदा लघु रहती

है । अंत में रगण करना मधुर होता है । इसका छंद-उदाहरण इसीके लक्षण में है ।

गीतिकाव्य—संगीत से अत्यधिक अनुप्राणित कविता । संगीत, आध्यांतरिकता, संक्षेप और एकता गीति के प्राण हैं । कुछ लोग इसे प्रगीतकाव्य कहते हैं । लोक-गीतों से उदित होने वाली भारतीय गीति-परंपरा **जयदेव, विद्यापति,** सूरदास और मीराबाई से होकर सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा और सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' तक पहुँची है । चित्र-कल्पना और मानवीकरण ने आधुनिक गीतिकाव्य में नवीन सौंदर्य उत्पन्न कर दिया है । गीतिकाव्य के पत्र-गीति, व्यंग्य-गीति, शोक-गीति, वर्ग-भावना-गीति और अध्यांतरिक-काव्य-गीति ये पाँच मुख्य भेद हैं ।

गुंडरिपा (वर्त्त० ८४० ई० ?)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि । दे० *सिद्ध साहित्य* ।

गुड़जिह्वाका न्याय—"गुड़ और जिह्वा" । कटु औषध देने के पूर्व जिह्वा पर गुड़ लगाना जिससे कि बच्चे की जिह्वा को प्रथम गुड़ का स्वाद आये और इस निमित्त से कटु औषध बच्चे के उदर में प्रवेश कराई जा सके । अर्थात् कठिन तथा अप्रिय कार्य को कराने के लिये मीठे शब्दों का उपयोग करना ।

गुण—रसोत्कर्ष में कारण-भूत पदार्थ । भरत आदि प्राचीन आचार्यों द्वारा श्लेष, प्रसाद, समाधि, उदारता, माधुर्य, अर्थव्यक्ति, कांति, सुकुमारता, समता और ओज ये दस शब्दगुण एवं अर्थगुण माने गये थे, परंतु विश्वनाथ आदि नवीन आचार्यों ने **माधुर्य, ओज** और **प्रसाद** इन तीन गुणों में ही इन सबका अंतर्भाव कर लिया है ।

गुणनिधि—एक अत्यंत दुर्गुणी व व्यसनी ब्राह्मण जिसने शिव-भक्ति से मुक्ति प्राप्त की (*शिव० रुद्र० सृ० १८*) ।

गुण-संप्रदाय—रीति (पदसंघटना) का कौशल काव्यगुणों के विनिवेश पर ही निर्भर है, इस कारण रीति-संप्रदाय का ही एक नाम गुण-संप्रदाय भी पड़ गया है । गुणों को ही काव्य का सर्वस्व मानने वाला संप्रदाय गुण-संप्रदाय नाम से अभिहित होता रहा है । दे० *रीति-संप्रदाय* ।

गुणाढ्य—दे० *बृहत्कथा* ।

गुपाल—तिथि कल रच जगणांत गुपाल (१५ मात्राओं और अंत में जगण से बनने वाला सम मात्रा छंद) ।

गुमान मिश्र (र० का० १७४३-८३ ई०)—पन्ना रियासत निवासी, पिहानी-नरेश अकबर अली खाँ के आश्रित, ब्रज-भाषा के श्रेष्ठ प्रबंध-काव्यकार, एक कृष्ण-भक्त कवि और *कृष्ण-चंद्रिका* के रचयिता तथा श्रीहर्ष-कृत *नैषधीय चरित* के **पद्यबद्ध रूप में** अनुवादक । *कृष्ण-चंद्रिका* का कृष्ण-साहित्य में अत्यंत महत्त्व-पूर्ण स्थान है, क्योंकि प्राचीन कृष्ण-काव्य में यही एक सरस एवं उत्कृष्ट प्रबंध-काव्य है । *छंदाटवी* (छंदशास्त्र), *रस नायिकाभेद* आदि भी इनके ग्रंथ कहे जाते हैं ।

गुरुदत्तसिंह—दे० *भूपति* ।

गुरुदीन पांडे—एक रीति-कवि और *बागमनोहर* (१८०३ ई०, केशवदास-कृत *कविप्रिया* के आधार पर लिखित) के रचयिता ।

गुरुभक्तसिंह 'भक्त' (१८९३ ई०-)—कवि । इनकी मुख्य रचनाएँ *नूरजहाँ* (१९३५,

काव्य) और *विक्रमादित्य* (१९४६, प्रबंध-काव्य) हैं। *नूरजहाँ* में जहाँगीर और नूरजहाँ की प्रेम-कथा है। इस काव्य की दो विशेषताएँ हैं— प्रकृति-वर्णन और मुहावरों का प्रयोग। इसके सोलहवें सर्ग में ग्रामीण दृश्यों का सुंदर चित्रण है। *विक्रमादित्य* में चंद्रगुप्त द्वितीय और ध्रुवदेवी की प्रणयकथा तथा चंद्रगुप्त की विजय यात्राओं का वर्णन है। इसमें अहिंसात्मक नीति की अपेक्षा बल-प्रयोग द्वारा दुष्टों के दमन को ओर अधिक झुकाव है।

गुर्जर—गुजरात प्रांत का प्राचीन नाम।

गुलाबराय (१८८७ ई०-)—आलोचक और निबंधकार। इनकी मुख्य रचनाएँ *नव रस, सिद्धांत और अध्ययन, काव्य के रूप, हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास, हिंदी नाट्य विमर्श, प्रबंध प्रभाकर* आदि हैं।

गुलाल साहब (आ० का० १६९३-१७४३ ई०)—बसहरि (गाजीपुर) निवासी एक संत जिनकी 'बारहमासा', 'हिंडोल' 'होली', 'बसंत', 'रेखते', 'मंगल' और 'आरती' आदि रचनाओं में **कबीर** का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

गुह—शृंगवेरपुर निवासी निषादराज जिन्होंने वनवास जाते समय बहँगियों में फल-मूल लेकर राम, लक्ष्मण और सीता का स्वागत किया था। ये राम के साथ चित्रकूट भी गये थे। भरत जब चित्रकूट में राम से मिलने के लिये चले, तो गुह ने भ्रमवश समझा कि उसके मन में कपट है। ये धनुष-बाण लेकर उनकी नाव डुबाने दौड़े, किंतु भरत का शील और भ्रातृ-प्रेम देखते ही उनके पैरों पर गिर पड़े। गुह के असीम प्रेम एवं भक्ति को देखकर वसिष्ठ ने इन्हें रामसखा जानकर हृदय से लगा लिया था (*वा० रा० अयो० ५०-५१. ८४-८७*)।

गूढ़ोक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें दूसरे को संबोधित कर कोई बात संबंधित को सुनाई जाती है। उ०—एरे रस लोभी भ्रमर सब दिन कियो विलास। साँझ होत तजि कमल को अब करु अनत निवास॥

गोकर्ण—दे० *आत्मदेव*।

गोकुल—दे० *ब्रज*।

गोकुलनाथ—**विट्ठलनाथ** (जन्म १८५८ ई०) के पुत्र और ब्रज-भाषा-गद्य में *चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता* तथा *दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता* के रचयिता।

गोकुलनाथ, गोपीनाथ और मणिदेव—काशी-नरेश उदितनारायणसिंह के आश्रित इन तीन कवियों ने मिलकर १७७३ से १८२७ ई० तक *महाभारत* और *हरिवंश पुराण* का हिंदी में अत्यंत सरस अनुवाद किया। अभी तक हिंदी में इतना विशाल अन्य कोई ग्रंथ नहीं बन पाया है। इतना विशाल ग्रंथ होने पर भी न तो इसमें कहीं शिथिलता आई है और न रोचकता और काव्यगुण में कमी हुई है। भाषा प्रांजल और सुव्यवस्थित है। छंदों की चुनाव भी बहुत उत्तम है। रूपमाला, घनाक्षरी, सवैया आदि मधुर छंद अधिक रखे गये हैं, बीच-बीच में दोहे और चौपाइयाँ भी हैं। अनुप्रास आदि का भी आवश्यक विधान है। गोकुलनाथ ने *चेत चंद्रिका* (अलंकार-ग्रंथ), *गोविंद सुखदविहार, राधाकृष्ण-विलास* (रस संबंधी ग्रंथ), *राधा नखशिख, नामरत्न माला* (कोश), *सीताराम-गुणार्णव* (*अध्यात्म रामायण* का अनुवाद), *अमरकोष भाषा, कवि मुखमंडन* (अलंकार-ग्रंथ) ग्रंथ भी लिखे। 'रीतिग्रंथ-रचना और प्रबंध-रचना दोनों में

समान रूप में कुशल और कोई दूसरा कवि रीतिकाल के भीतर नहीं पाया जाता।' गोपीनाथ गोकुलनाथ के ही पुत्र थे।

गोदान—**प्रेमचंद** का एक उपन्यास (१९३६ ई०)।

सामान्य कृषक होरी के गोबर नामक एक युवा पुत्र और रूपा और सोना नामक दो पुत्रियाँ थीं। उसके पास केवल पाँच बीघे भूमि थी। होरी ने भोला नामक ग्वाले से एक गाय उधार ली। सब ग्रामवासी उस गाय को देखने आये किंतु होरी के भाई हीरा और शोभा नहीं आए। जब गोबर भोला के यहाँ गाय लेने गया था, तब उसकी दृष्टि भोला की विधवा पुत्री झुनिया पर पड़ी और वह उससे प्रेम करने लगा। गोबर और झुनिया एकांत में भी मिलते रहे और झुनिया के गर्भ रह गया। एक दिन होरी रुग्ण शोभा को देखने गया। पीछे से हीरा ने गाय को विष देदिया। होरी ने इस घटना को व्यक्त नहीं किया, किंतु हीरा ग्राम से ग़ायब हो गया। इसी बीच गर्भवती झुनिया होरी के यहाँ आ गई। गोबर भागकर शहर पहुँचा और वहाँ खोंचा लगाने लगा। कुछ समय बाद गोबर वापिस आ गया। होरी दिन प्रतिदिन दरिद्र होता जाता था। अब वह किसानी को छोड़कर मज़दूरी करने लगा। धनिया, सोना और रूपा भी उसीके साथ मज़दूरी करती थीं। गोबर माता-पिता से लड़कर झुनिया और बच्चे को लेकर शहर चला गया। इधर पंडित दातादीन के पुत्र मातादीन की रखेल सिलिया नामक चमारिन को भी होरी ने आश्रय दिया था। होरी ने सोना के विवाह के लिये दुलारी सहुआइन और नोहरी से ऋण लिया। अब उसके सिर पर ऋण का भारी बोझ था। वह जीवन से युद्ध करते-करते पराजित-सा हो चुका था। इधर गोबर को शहर जाकर खन्ना साहिब की शक्कर की मिल में नौकरी करनी पड़ी। मिल में हड़ताल होने से पुलिस द्वारा उसे चोट आई। सिलिया के पुत्र उत्पन्न होने के पश्चात् मातादीन उसे अपने घर ले आया। कथा की इस मूलधारा के साथ ही उपन्यास में एक लघु कथानक भी चलता रहता है। इसका संबंध नागरिक जीवन से है। इलाके के ज़मींदार रायसाहिब अमरपाल सिंह थे। इनके कई मित्र थे। ओंकारनाथ 'बिजली' पत्र के यशस्वी संपादक थे, जो देश की सेवा करते थे। श्यामबिहारी तंखा बीमा कंपनी के दलाल थे। मिस्टर बी० मेहता यूनिवर्सिटी के दर्शन-शास्त्र के अध्यापक थे। मिस मालती लेडी डाक्टर थीं। मिर्ज़ा जी की लखनऊ में जूतों की दुकान थी। मिस्टर तंखा रायसाहिब को काफ़ी ठगा करते थे। एक दिन रायसाहिब तंखा को डाँट फटकार कर खन्ना के यहाँ पहुँचे। उन्होंने खन्ना से चुनाव और पुत्री के विवाह के लिये कुछ रुपये माँगे, किंतु खन्ना ने टाल-मटोल कर दी। नगर की यह मित्र-मंडली प्रायः मिलती रहती थी। मालती और मेहता एक दूसरे के निकट आते गये। अंत में इनका संबंध मित्रों का-सा हो गया। खन्ना एक रसिक व्यक्ति थे। उनकी अपनी पत्नी से नहीं पटती थी। खन्ना मालती की ओर आकृष्ट हुआ। राजा सूर्यप्रतापसिंह अपनी पुत्री का विवाह रायसाहिब के बड़े पुत्र रुद्रपालसिंह से करना चाहते थे, किंतु वह मालती की बड़ी बहिन सरोज से विवाह करना चाहता था। रायसाहिब को हर ओर से निराशा हो रही थी। इसी बीच होरी की दशा खराब हो गई। असहाय होकर उसने रूपा का विवाह रामसेवक नामक एक अधेड़, किंतु खाते-पीते, किसान से कर

दिया। हीरा घर लौट आया, और होरी ने उसे छाती से लगा लिया। एक दिन होरी को लू लग गई। उसकी जीवन-लीला समाप्त हो रही थी। सब बोले कि अब गोदान करा दो, यही समय है। धनिया ने सुतली बेचकर लाए हुए बीस आने पैसे मातादीन के हाथ पर रखकर कहा—'घर में न गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसा है, यही इनका गो-दान है।' इतना कहकर वह पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

इसमें उक्त दोनों कथानक यद्यपि परस्पर इतने असंबद्ध नहीं हैं, तथापि उनमें वास्तविक ऐक्य की कमी अवश्य है। उपन्यास में भारतीय ग्रामीण जीवन के विविध पक्षों का दिग्दर्शन कराया गया है। उपन्यास का संबंध किसी 'वाद' से नहीं है। इसमें लेखक के व्यापक चिंतन की अभिव्यक्ति हुई है और उसने अपने प्रौढ़तम अनुभवों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया है। यह प्रेमचंद की अंतिम और श्रेष्ठ कृति है।

गोदावरी—दक्षिण भारत की एक प्रसिद्ध और पवित्र नदी जो नासिक से २० मील ब्रह्मगिरि पहाड़ी से निकलती है।

गोप—ब्रज निवासी एक प्राचीन अहीर जाति जिसका मुख्य व्यवसाय पशु-पालन था और जो अपने पशुओं के लिये इंद्र की पूजा किया करती थी। दे० *गोवर्द्धन लीला*।

गोपा—गौतम बुद्ध की पत्नी। दे० *यशोधरा*।

गोपालराम गहमरी (१८७६ ई०–)—जासूसी साहित्य के लेखक, 'जासूस' (पत्र) के संस्थापक तथा लगभग २०० से अधिक ग्रंथों के रचयिता। इनके ग्रंथों में मौलिक, अनूदित और आधारित जासूसी और सामाजिक उपन्यास, ऐतिहासिक और सामाजिक नाटक, मैस्मेरिज़्म संबंधी ग्रंथ, मौलिक काव्य और व्यंग्य सभी कुछ हैं। इनकी मुख्य रचनाएँ *चतुर चंचला, नए बाबू, बाकी बेबाक, आदमी बना, ननद-भौजाई, संकट में शिक्षा, खून, अमरसिंह, संदेह भंजन, देशदर्शा, विद्याविनोद, बभ्रुवाहन, जन्मभूमि, इच्छाशक्ति* आदि हैं। इनके जासूसी तथा **देवकीनंदन खत्री** के तिलस्मी उपन्यासों में यही अंतर है कि तिलस्मी उपन्यासों में रहस्यमयी घटनाओं की शृंखला आगे की ओर बढ़ती है, जासूसी में पीछे की ओर। दे० *जासूसी उपन्यास*।

गोपालशरण सिंह (१८९१ ई०–)—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *माधवी* (१९२६, सरस सुंदर कविताओं का संग्रह), *कादंबिनी* (१९३७, इसमें कवि ने जीवन के सुखमय पहलू को लिया है। कवि चराचर सृष्टि में एक चिर उल्लास के दर्शन करता है), *सुमना* (१९४१, इसमें गांधीवाद से संबंध रखने वाली सेवा और कष्ट-सहिष्णुता की महत्ता बतलाने की प्रवृत्ति है) आदि हैं। इनकी भाषा सुबोध है, पर उसमें गंभीर और ऊँचे भावों का समावेश उत्तमता के साथ किया है।

गोपालसिंह 'नैपाली' (१९१३ ई०–)—कवि। *पीपल, हरीघास* (कविताएँ), *नवीन* (काव्य-संग्रह) आदि के रचयिता। इन्होंने प्रकृति के संबंध में सुंदर कविता की है।

गोपी—१ ब्रज की गोप-जातीय स्त्रियाँ। २ वैष्णव साहित्य में गोपी शब्द का तात्पर्य उन स्त्रियों से है, जो गोकुल में रहती थीं और कृष्ण की लीलाओं में भाग लेती थीं।

गोपीचंद—रंगपुर (बंगाल) के एक राजा जो **भर्तृहरि** की बहिन मैनावती के पुत्र कहे जाते हैं। अपनी माता से उपदेश लेकर इन्होंने

वैराग्य लिया और अपनी रानी पाटमदेवी से महल में जाकर भिक्षा माँगी थी। इनके गुरु जालंधरनाथ थे। इनके जीवन की घटनाओं के गीत बनाकर जोगी लोग आजकल सारंगी पर गाया करते हैं। दे० *नाथ संप्रदाय*।

गोपीचंदनाथ—दे० *गोपीचंद*।

गोपीनाथ—१ दे० *गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव*। २ दे० *पंथराज*।

गोमंतक—गोआ का प्राचीन नाम।

गोमती—अवध की एक नदी (*वा० रा० अयो०* ४६)। लखनऊ नामक नगर इसके किनारे बसा हुआ है।

गोरक्षपा—दे० *गोरखनाथ*।

गोरखनाथ—प्रसिद्ध नाथ योगी, **मत्स्येंद्रनाथ** (मच्छंद्रनाथ) के शिष्य और नाथ-पंथ के प्रमुख प्रचारक। इनके समय के संबंध में मत-भेद है, पर यह माना जाता है कि ये १३ वीं शती में वर्त्तमान थे। इनकी गद्य और पद्य की ये पुस्तकें **पीतांबरदत्त बड़थ्वाल** द्वारा प्रामाणिक मानी गई हैं—*सबदी, पद, सिष्या दरसन, प्राण संकली, नरवै बोध, आतमबोध (?), अभैमात्रा जोग, पंद्रह तिथि, सप्तवार, मछींद्र गोरख बोध, रोमावली, ग्यान तिलक, ग्यान चौंतीसी* और *पंचमात्रा*। इनकी संस्कृत में भी लिखित कुछ पुस्तकें कही जाती हैं।

इनकी रचनाओं में सिद्धों के स्वच्छंदतावाद के विरुद्ध संयम, सदाचार तथा हठयोग (एक प्रकार से पातजल-योग का शैवरूप) का प्रतिपादन हुआ है। कबीर पर इनकी रचनाओं का बहुत प्रभाव पड़ा है। इनके योग की घोर शुष्कता का सूर ने कुछ शृंगारिक सरसता के साथ (विशेषकर *भ्रमरगीत* में) और तुलसी ने मर्यादित व्यंग्य से खंडन किया है। गोरखनाथ अपने युग के सब से बड़े नेता थे। भक्ति आंदोलन के पूर्व सब से शक्तिशाली धार्मिक आंदोलन गोरखनाथ का योगमार्ग ही था। इनकी गणना गोरक्षपा के नाम से वज्रयान शाखा के ८४ सिद्धों में भी की गई है। गोरखपुर नगर इन्हीं के नाम पर बसाया गया कहा जाता है। दे० *नाथ-संप्रदाय, संत साहित्य*।

गोरा-बादल की कथा—जटमल की एक पुस्तक (१६२३ ई०), जिसमें मेवाड़ की महारानी पद्मावती की रक्षा में गोरा-बादल नामक राजा रत्नसेन के दो वीरों की कीर्त्ति-गाथा है (दे० *पद्मावत*)। रामकुमार वर्मा ने इसकी पाँच हस्तलिखित प्रतियाँ देखी हैं। वे सभी पद्य में हैं। एक छठी प्रति बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ते में सुरक्षित है। इसके संबंध में श्यामसुंदरदास ने लिखा है कि यह कथा गद्य और पद्य में है। यह संभव प्रतीत नहीं होता कि एक ही लेखक ने उसी कहानी को उसी वर्ष गद्य और पद्य दोनों में लिखा हो। इस कथा की भाषा में खड़ी बोली का प्राधान्य है।

गोरेलाल पुरोहित—दे० *लाल कवि*।

गोर्की (Gorky) (१८६८-१९३६ ई०)—एक रूसी लेखक, जिनके कुछ उपन्यास *शेलकश, वे तीनों, टानियाँ* और *माँ* नाम से अनूदित हैं।

गोलोक—विष्णु या कृष्ण का निवासस्थान।

गोल्डस्मिथ (Goldsmith) (१७२८-७४ ई०)—अंग्रेज़ी भाषा के एक कवि, नाटककार और उपन्यासकार, जिनकी *ट्रैवलर* (*Traveller*) और *डिज़र्टिड विलेज* (*Deserted Village*) कविताएँ *श्रांत पथिक* और *ऊजड़ ग्राम* के नामों से अनूदित हैं। ये अनुवाद श्रीधर पाठक ने किये थे।

गोवर्द्धन—वृंदावन से १८ मील मथुरा ज़िले में पर्वत, जिसे एक बार बहुत अधिक वर्षा होने पर कृष्ण ने अपनी उँगली पर उठा लिया था। दे० *गोवर्द्धनलीला, ब्रजमंडल*।

गोवर्द्धन लीला—कृष्ण ने इंद्र के स्थान पर गोवर्द्धन पर्वत की पूजा प्रारंभ करवाई। कुपित होकर इंद्र ने ब्रजवासियों पर मूसलाधार वर्षा की। कृष्ण ने गोवर्द्धन को अपनी उँगली पर उठा लिया और उसके नीचे आकर सब ब्रजवासियों ने अपनी रक्षा की (*भा० १०.२५ आदि*)।

गोविंद गिल्लाभाई (१८४८-१९२८ ई०)—गुजरात निवासी एक कवि। *नीति विनोद, पावस पयोनिधि, श्लेषचंद्रिका, विष्णुविनय पच्चीसी* आदि ३२ ग्रंथों के रचयिता।

गोविंददास (जन्म १५५४ ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि और *एकांत पद* के रचयिता।

गोविंददास सेठ—जबलपुर के कांग्रेसी नेता और आधुनिक नाटककार। इनकी मुख्य रचनाएँ *कर्त्तव्य* (प्रथम भाग में रामचंद्र की तथा द्वितीय में कृष्ण की कथा), *प्रकाश* (इसके आरंभ में थोड़ा प्रतीकवाद से भी काम लिया गया है। इसमें बौद्ध धर्म के पलायनवाद की अपेक्षा स्वस्थ योग और कर्त्तव्यमयी प्रवृत्ति को अधिक महत्त्व दिया गया है।), **हर्ष**, (ऐतिहासिक) (तीनों १९३६ ई०), *सेवापथ, कुलीनता, विकास* (सामाजिक), *शशिगुप्त* (मौर्य सम्राट् चंद्रगुप्त की जीवन गाथा), *प्रेम या पाप, कर्ण* (पौराणिक), *बड़ा पापी कौन ?* (सामाजिक), *राम से गांधी, सुख किसमें ?* (नाटक), *चतुष्पथ* (संवादात्मक नाटक), *एकादशी, नवरत्न* (एकांकी संग्रह), *नाट्य कला मीमांसा* आदि हैं। इनके नाटकों में राजनीतिक आंदोलनों का अच्छा चित्रण हुआ है।

गोविंद नारायण मिश्र (१८६० ई०-)—हिंदी और संस्कृत के एक विद्वान्। इन्होंने अनेक पत्रों का संपादन किया। हिंदी-साहित्य सम्मेलन के दूसरे अधिवेशन के ये सभापति भी रहे। इनका व्याकरण संबंधी विचार संस्कृत की पद्धति पर था। *विभक्ति विचार* में इन्होंने विभक्तियों को शब्दों में मिलाकर लिखने की सलाह दी। इन्होंने *शिक्षा-सोपान* और *सारस्वत-सोपान* नामक और भी दो ग्रंथ लिखे। ये बाण और दंडी के ढंग पर गद्य लिखते थे। इनके कुछ निबंधों का संग्रह *गोविंद निबंधावली* के रूप में प्रकाशित हुआ है।

गोविंदवल्लभ पंत—आधुनिक नाटककार। इनके मुख्य नाटक *वरमाला* (१९२५, *मार्कंडेय पुराण* की एक कथा पर निर्मित), *राजमुकुट* (१९३५, मेवाड़ की **पन्ना** नामक धाय के अलौकिक त्याग का ऐतिहासिक वृत्त), *अंगूर की बेटी* (१९३७, मद्य के दुष्परिणाम दिखाने वाला सामाजिक नाटक) आदि हैं।

गोविंदसिंह, गुरु (१६६६-१७०८ ई०)—सिखों के दसवें और अंतिम गुरु, जो सिपाही होते हुए भी साहित्य के बड़े प्रेमी थे। इनके *सुनीतिप्रकाश, सर्वलोहप्रकाश, प्रेमसुमार्ग, बुद्धिसागर, चंडीचरित्र* आदि ग्रंथ साहित्यिक ब्रज-भाषा में हैं। *दशम गुरुग्रंथ* में इनकी वाणी का संग्रह है। *चंडीचरित्र* आदि ग्रंथों में सगुणोपासना की भावना प्रकट की गई है। *चंडीचरित्र* बड़ी ओजपूर्ण रचना है।

गोविंदस्वामी (जन्म लग० १५०३ ई०)—**विट्ठलनाथ** के शिष्य और **अष्टछाप** के कवि। ये ब्रज से इतना प्रेम करते थे कि ये ब्रज को छोड़कर बैकुंठ भी जाना नहीं चाहते थे। ब्रज की महिमा के साथ वहाँ के प्राकृतिक दृश्य का वर्णन भी इन्होंने अच्छा किया है।

गोसाईं चरित्र—बेनी माधवदास का एक ग्रंथ (१६३० ई०), जिसमें गोस्वामी तुलसीदास का जीवन-चरित्र वर्णित है। कई आलोचक इसको प्रामाणिक नहीं मानते।

गौड़—बंग देश का एक प्राचीन विभाग, जो भुवनेश्वरी सीमा तक था।

गौड़ी—काव्य-नाटक में एक रीति या शैली जिसमें टवर्ग, संयुक्त अक्षर अथवा समास अधिक होते हैं।

गौतम—१ सप्तर्षियों में से एक। अहल्या (दे० यथा०) इनकी पत्नी थी। राजा जनक का पुरोहित शतानंद इनका पुत्र था (*म० व० १८५*)। इनका एक आश्रम जनकपुरी से २४ मील दक्षिण-पश्चिम में अहियरी नामक ग्राम में था। २ दे० *गौतम बुद्ध*।

गौतम बुद्ध (मृत्यु ५४३ ई० पू०)—बौद्ध धर्म के प्रवर्त्तक। इनका जन्म शाक्यवंशी राजा शुद्धोदन की रानी महामाया के गर्भ से लुंबिनि, कपिलवस्तु नामक स्थान में हुआ। इनका नाम गौतम अथवा सिद्धार्थ रखा गया। युवावस्था में इनका विवाह गोपा (यशोधरा) से हुआ। एक बार एक दुर्बल वृद्ध को, एक बार एक रोगी को और एक बार शव को देखकर ये संसार से विरक्त तथा उदासीन हो गये। एक दिन जब इन्हें समाचार मिला कि गोपा के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ है, तब इन्होंने गृह-त्याग का निश्चय कर लिया। अपनी पत्नी को निद्रावस्था में छोड़कर, २९ वर्ष की अवस्था में ये घर से निकल गये। गृह-त्याग के प्रायः ७ वर्ष बाद एक रात्रि को महाबोधि वृक्ष के नीचे इनको उद्बोधन हुआ और इन्होंने दिव्यज्ञान प्राप्त किया। उसी समय से ये गौतम बुद्ध कहलाए। इसके उपरांत धर्मप्रचार करने के लिये ये काशी पहुँचे। ये कपिलवस्तु भी गये। वहाँ इन्होंने अपने पुत्र राहुल को अपने उपदेशों से मुग्ध करके अपना अनुयायी बना लिया। इन्होंने संकाश्य, श्रावस्ती, कोशांबी, राजगृह, पाटलिपुत्र, कुशीनगर आदि अनेक स्थानों में भ्रमण कर प्रायः ४४ वर्ष तक धर्मप्रचार किया। अंत में कुशीनगर के पास के वन में इनका शरीरांत हुआ। इनका दार्शनिक सिद्धांत ब्रह्मवाद अथवा सर्वात्मवाद था। ये संसार को कार्य-कारण के अविच्छिन्न नियम में बद्ध और अनादि मानते थे तथा छः इंद्रियों और अष्टांग मार्ग को ज्ञान तथा मोक्ष का साधन समझते थे। हिंदु-शास्त्रों के अनुसार ये विष्णु के नवम अवतार हैं। *विष्णुपुराण* आदि में इनके संबंध में अनेक कथाएँ दी गई हैं। दे० *जातक*।

ग्रंथराज—गाडण गोपीनाथ का एक काव्य (१७४६-५३ ई०), जिसमें बीकानेर के महाराजा गजसिंह की प्रशंसा है। यह ग्रंथ डिंगल साहित्य में महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

ग्रंथ साहब—गुरु अर्जुनदेव द्वारा संगृहीत एक ग्रंथ (१६०४ ई०), जिसमें कबीर, रैदास, नामदेव आदि १६ संतों के, मुख्यतः नानक के, पद हैं।

ग्राम्यत्व—असंस्कृत या गँवारू भाषा के प्रयोग से उत्पन्न काव्य-दोष।

ग्राह—दे० *हूहू* तथा *गज*।

ग्रियर्सन, जॉर्ज (Grierson, George)—इन्होंने *शिवसिंह सरोज* के आधार पर *मॉडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑव् नॉर्दर्न हिंदुस्तान* (१८८९ ई०) नामक हिंदी-साहित्य का इतिहास लिखा। इन्होंने *लिंगविस्टिक सर्वे ऑव् इंडिया* नामक अंग्रेज़ी

पुस्तक में भारतीय भाषाओं और उनके साहित्य का पर्यवेक्षण किया है। भाषा-विज्ञान के ये प्रकांड पंडित थे।

ग्रे (Gray) (१७१६-७१ ई०)—एक अंग्रेज़ी कवि, जिनकी *एलिजी रिटन इन ए कंट्री चर्चयार्ड* का *ग्रामस्थ शवागार में लिखित शोकोक्ति* नाम से अनुवाद है।

ग्वाल कवि (र० का० १८२२-६१ ई०)—मथुरा निवासी एक रीति-कवि। *यमुना लहरी* (देवस्तुति संबंधी ग्रंथ), *रसिकानंद* (अलंकार ग्रंथ), *रसरंग* (१८४७), *कृष्णाजू को नखशिख*, *दूषण दर्पण* (१८३४) (चारों रीति-ग्रंथ), *हम्मीर हठ*, *गोपी पच्चीसी*, *राधा-माधव-मिलन* और *राधा अष्टक* के रचयिता। रीतिकाल की सनक इनमें इतनी अधिक थी कि इन्हें *यमुना लहरी* नामक देवस्तुति में भी नवरस और षड्ऋतु सुझाई पड़े हैं। इनकी कविता का प्रचार साधारण जनता में अच्छा है। *कवि हृदयविनोद* में इनकी बहुत-सी कविताएँ संगृहीत हैं।

घ

घटोत्कच—हिडिंबा से उत्पन्न भीम का पुत्र (*म० आ० १५५*)। इसका कर्ण से घोर युद्ध हुआ था। कर्ण ने इंद्र से प्राप्त 'शक्ति' द्वारा इसका वध किया था। अर्जुन कर्ण का वध तभी कर सके जब कर्ण 'शक्ति' का प्रयोग घटोत्कच पर कर 'शक्ति' से वंचित हो चुके थे, अन्यथा पांडव महाभारत-युद्ध में विजयी न हो सकते (*म० द्रो० १७४-७६*)।

घनश्याम—१ कृष्ण। २ रामचंद्र। यथा—शोक की आग लगी परिपूरण आइ गये घनश्याम बिहाने—*केशव*।

घनाक्षरी—दे० *कवित्त*।

घनानंद (१६८९-१७३९ ई०)—दिल्ली के बादशाह मुहम्मदशाह के मीर मुंशी, जो जाति से कायस्थ थे। इनका सुजान नामक एक वेश्या से प्रेम था, पर उसके द्वारा तिरस्कृत होने पर इन्हें सांसारिक माया-मोह से विरक्ति हुई और ये वृंदावन जाकर वैष्णव हो गये। ये साहित्य और संगीत दोनों कलाओं के पारंगत, रसिक-शिरोमणि भावुक कवि थे। इन्होंने विप्रलंभ श्रृंगार पर बहुत सुंदर रचना की है। 'प्रेम की पीर' ही लेकर इनकी वाणी का प्रादुर्भाव हुआ। इनकी कविता में रीतिकालीन रूढ़ि की अपेक्षा निजीपन और हृदय का उल्लास अधिक है। इन्होंने अपनी कविताओं में बराबर 'सुजान' को संबोधन किया है, जो श्रृंगार में नायक के लिये और भक्ति पक्ष में कृष्ण के लिये प्रयुक्त मानना चाहिये। इनकी भाषा बड़ी ही सरस, प्रौढ़ और प्रवाहयुक्त है, इसमें कहीं शैथिल्य का नाम नहीं। इन जैसी लाक्षणिकता, मूर्त्तिमत्ता और प्रयोगों की विलक्षणता ब्रज-भाषा के अन्य कवियों में बहुत कम दिखाई देती है। इनकी लिखित ४० पुस्तकों का पता लगा है, जिनमें *घनानंद कवित्त*, *कृपाकंद निबंध*, *वियोग-बेली*, *प्रेम पत्रिका*, *विरह लीला*, *सुजान सागर* आदि प्रमुख हैं। विशेष दे० विश्वनाथ प्रसाद-कृत *घनानंद*, शंभुनाथ प्रसाद-कृत *घनानंद*।

घनानंद के अतिरिक्त इनसे मिलते-जुलते नाम के आनंदघन नामक दो कवि और हुए हैं—१ भक्त कवि आनंदघन जिन्होंने *पदावली*, *इश्कलता* और *यमुनायश* लिखे हैं। २ जैन कवि आनंदघन जिन्होंने *आनंदघन चौबीसी* तथा *आनंदघन बहोत्तरी* नामक दो पुस्तकें लिखी हैं।

घाघ (जन्म १६९६ ई०)—एक चतुर, अनुभवी और प्रसिद्ध सूक्तिकार, जिनकी कृषि-

संबंधी बहुत-सी कहावतें उत्तर भारत में लोकप्रिय हैं। आजकल 'घाघ' शब्द गहरे चालाक व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है।

घुणाक्षर न्याय—घुन नामक कीड़ों के काटने और खाने से लकड़ी में अनायास ही अक्षर की-सी आकृतियाँ बन जाती हैं। अतएव ऐसी कृति या रचना उत्पन्न हो जाने को जो अपने आप अनजाने में ही हो जाए, घुणाक्षर न्याय कहते हैं।

घृणा—वीभत्स रस के स्थायी-भाव जुगुप्सा का नामांतर।

घृताची—एक अप्सरा। इसे भरद्वाज से द्रोणाचार्य *(म० आ० १४०.३६ कुं)* और व्यास से शुक *(म० शां० ३३२ कुं०)* नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

च

चंचरी—री सजै जु भरी हरी, गुण चंचरीवत वारिण तू (र स ज ज भ र=१८ (८. १०) व० छंद)। इसे चर्चरी तथा विबुधप्रिया भी कहते हैं।

चंचलाति (चपलाति) **शयोक्ति**—दे० *अतिशयोक्ति*।

चंड—दे० *शुंभनिशुंभ*।

चंडकौशिक—दे० *जरासंध*।

चंडमुंड—चंड और मुंड नामक दो राक्षस जो दुर्गा द्वारा मारे गये थे। दे० *शुंभनिशुंभ*।

चंडवृष्टिप्रपात—नगण युगल और रा सात हों चंडवृष्टिप्रपात बने शोभनादंड का (दो नगण और सात रगण=२७ व० दंडक छंद)। उ०—भजहु सतत राम सीता महामंत्र जासों महा कष्ट तेरो नसै मूल तें।

चंडीदास (१४१७-७७ ई०)—बंगाल के एक कृष्ण-भक्त कवि और **विद्यापति** (आ० का० १४०३ ई०) के समकालीन। इनकी *कृष्णलीला-घटित पदावली* ने कृष्ण-भक्त हिंदी कवियों को प्रभावित किया। दे० *कृष्ण-काव्य*।

चंडीप्रसाद 'हृदयेश'—आधुनिक उपन्यासकार और कहानी-लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *मनोरमा* (१९२४ ई०), *मंगलप्रभात* (१९२६) (उपन्यास) *नंदननिकुंज*, *वनमाला* (कहानी-संग्रह) आदि हैं। इनकी शैली कवित्वपूर्ण, अलंकार और समासों से भारी भरकम तथा क्लिष्ट है। भाषा की चमक-दमक में कहीं-कहीं पात्रों का व्यक्तित्व छिप जाता है। इनकी कहानियाँ गद्य-काव्य सी हैं।

चंद—चंद्राकार का एक नाम। दे० *अमृत*।

चंद कुँवरि री वात—**प्रतापसिंह** का एक काव्य (लि० का० १७६५ ई०), जिसमें अमरावती के राजकुमार और वहाँ के सेठ की पुत्री चंद कुँवरि की प्रेम-कथा है।

चंद छंद बरनन की महिमा—**गंग** कवि का छोटा-सा ग्रंथ (१५८० ई०), जो खड़ी बोली-गद्य में है।

चंदन—१ (र० का० १७६३-९३ ई०)—शाहजहाँपुर निवासी, गौड़ राजा केसरीसिंह के आश्रित एक रीति-कवि। *केसरीप्रकाश*, *चंदन-सतसई*, *पथिकबोध*, *नखशिख*, *नाममाला* (कोष), *पत्रिका बोध*, *तत्त्वसंग्रह*, *सीतवसंत* (कहानी), *कृष्ण-काव्य* तथा *प्राज्ञ-विलास* के रचयिता। ये फारसी के भी कवि थे। २ एक वृक्ष। कवि-प्रसिद्धि है कि इसके फूल और फल का वर्णन नहीं

होना चाहिये। यह भी प्रसिद्धि है कि यह केवल मलय पर्वत पर ही होता है और इसमें नाग लिपटे रहते हैं।

चंदन मलयगिरि की बात—भद्रसेन का एक काव्य (लि० का० १७४० ई०) जिसमें चंदन और मयलगिरि की प्रेम-कथा है। इसकी दूसरी प्रति (लि० का० १७६५ ई०) भी मिलती है।

चंदनावती—कुलिंद (वर्त्तमान सहारनपुर) की राजधानी। यहाँ के राजा ने **चंद्रहास** को आश्रय दिया था।

चंदबरदाई (वर्त्त० ११९३ ई०)—*पृथ्वीराजरासो* के रचयिता। ये पृथ्वीराज के सामंत, सखा और राजकवि माने जाते हैं। हिंदी-साहित्य के ये ही प्रथम महाकवि कहे जाते हैं। कहा जाता है कि महाकवि **सूरदास** इन्हीं के वंशज थे।

चंद्रकांत—एक मणि वा रत्न जो चंद्रमा की किरण के संपर्क से पसीजता है और उससे जल झरने लगता है।

चंद्रकांता—**देवकीनंदन खत्री** का एक प्रसिद्ध उपन्यास (१८९१ ई०)।

विजयगढ़-राजकुमारी चंद्रकांता और नौगढ़-राजकुमार वीरेंद्रसिंह आपस में प्रेम करते थे, किंतु विजयगढ़ के मंत्री का पुत्र क्रूरसिंह चाहता था कि चंद्रकांता उसे ही वरण करे। दोनों में युद्ध हुआ। अंत में वीरेंद्रसिंह और चंद्रकांता का विवाह हो गया। दोनों पक्षों में सधे हुए ऐयार हैं जो अपनी कारीगरी दिखलाते हैं। इन ऐयारों में जीतसिंह, तेजसिंह, बद्रीनाथ, पन्नालाल आदि प्रमुख हैं।

उन्पयास के ४ भाग हैं। कईयों ने इस उपन्यास को पढ़ने के लिये ही हिंदी सीखी। देखा-देखी बहुत से लोगों ने इस प्रकार के ऐयारी उपन्यास लिखने प्रारंभ किये। इस उपन्यास में चरित्र-चित्रण को महत्त्व नहीं दिया गया है। कथा की जटिलता ऐसी है कि उससे पाठक की उत्सुकता निरंतर बढ़ती जाती है। यही इसका चमत्कार है।

चंद्रकांता संतति—**देवकीनंदन खत्री** का एक ऐयारी उपन्यास (१८९६ ई०), जिसमें चंद्रकांता की संतति द्वारा तिलस्म और ऐयारी के चमत्कार दिखाए गये हैं। इसके २४ भाग हैं।

चंद्रगुप्त—**जयशंकर प्रसाद** का एक नाटक (१९३१ ई०)।

तक्षशिला के गुरुकुल में मगधवासी चंद्रगुप्त मौर्य, मालव-राजकुमार सिंहरण, गांधार-राजकुमार आंभीक, राजकुमारी अलका तथा चाणक्य एक दूसरे से परिचित हुए। मगध-नरेश नंद ने चाणक्य के पिता का निर्वासन और शकटार का सवंश नाश कर दिया और चंद्रगुप्त के पिता को बंदी बना लिया। चाणक्य तथा चंद्रगुप्त ने नंद की राजसभा में यवनों के प्रतिकार का सुगम उपाय बताया, किंतु मगध-नरेश ने उसे अस्वीकृत कर दिया। चाणक्य का अपमान हुआ और उन्होंने नंद वंश के विनाश की प्रतिज्ञा की। आंभीक ने अलक्षेंद्र (सिकंदर) का पक्ष लिया। पर्वतेश्वर (पौरस) अलक्षेंद्र के विरुद्ध रहा। अलक्षेंद्र और पर्वतेश्वर में युद्ध हुआ। अंत में संधि हो गई। चाणक्य ने पर्वतेश्वर का साथ छोड़कर कूटनीति प्रारंभ करदी। मालव तथा क्षुद्रक दो गणतंत्रों ने मैत्री कर, चंद्रगुप्त के सेनापतित्व में अलक्षेंद्र को रोकने का प्रयत्न किया। मालव-दुर्ग में अलक्षेंद्र घायल हुआ और वह लौट गया। सिंहरण तथा अलका का विवाह हो गया। मगध-राज-

कुमारी कल्याणी, मालविका तथा सैल्यूकस की पुत्री कार्नेलिया तीनों ही चंद्रगुप्त के प्रति आकर्षित थीं और चंद्रगुप्त भी उनके प्रति आकर्षित थे। चाणक्य ने पर्वतेश्वर को आत्म-हत्या करने से बचाया और आधे मगध का लोभ देकर उसे अपनी ओर कर लिया। नंद के प्रधान मंत्री राक्षस को भी उन्होंने छल से रोके रखा। मगध में विप्लव की संपूर्ण तैयारी हो गई। चाणक्य के कुसुमपुर पहुँचने पर शकटार, मालविका, मौर्य आदि जो बंदी थे, शकटार के बनाए हुए भूगर्भ मार्ग से निकल आए। चाणक्य की कूटनीति से नंद ने राक्षस को बंदी कर लिया। इससे प्रजा में उत्तेजना उत्पन्न की गई। राजसभा हुई। नंद को बंदी कर लिया गया और वह शकटार द्वारा मारा गया। परिषद् ने चंद्रगुप्त को राजगद्दी देदी। कल्याणी ने पर्वतेश्वर का वध कर दिया और उसने स्वयं भी आत्महत्या कर ली। चंद्रगुप्त के दक्षिणापथ से विजय करके लौटने पर राक्षस ने उसे मार डालने का षड्यंत्र रचा, किंतु उसके स्थान पर मारी गई मालविका। अलक्षेंद्र की मृत्यु के उपरांत सैल्यूकस ने भारत पर चढ़ाई कर दी। आंभीक की सहायता से चंद्रगुप्त ने युद्ध में सैल्यूकस को बंदी बना लिया। राक्षस को प्रधान मंत्री नियुक्त कर, चाणक्य वन को चले गये।

इस नाटक में मौर्यकालीन राजनीतिक, धार्मिक एवं राष्ट्रिय स्थितियों का विशद विवेचन है। चाणक्य की प्रतिभा का चमत्कार इसमें वैसा प्रकट नहीं होता जैसा विशाखदत्त-कृत *मुद्राराक्षस* में और **द्विजेंद्रलाल राय**-कृत *चंद्रगुप्त* नाटक में। यह वीर रसात्मक सफल ऐतिहासिक नाटक है। द्विजेंद्रलाल राय-कृत *चंद्रगुप्त* में विश्वप्रेम के भाव हैं, पर प्रसाद के *चंद्रगुप्त* में राष्ट्र-प्रेम है। नाटक में संकलनत्रय की पूर्ण अवहेलना हुई है। अभिनय की दृष्टि से नाटक कुछ लंबा भी हो गया है। **बदरीनाथ भट्ट** ने भी *चंद्रगुप्त* नाम से एक नाटक लिखा है।

चंद्रगुप्त प्रथम—गुप्तवंशी भारत-सम्राट् (३२०-३० ई०)।

चंद्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य)—गुप्तवंशी भारत-सम्राट् (३७५-४१३ ई०)।

चंद्रगुप्त मौर्य—भारत-सम्राट् (३२१-२९७ ई० पू०)।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी (१८८३-१९२२ ई०)—निबंधकार, कहानी-लेखक। 'समालोचक' (साहित्यिक पत्र) के संपादक और 'सुखमय जीवन', 'उसने कहा था', 'बुद्धू का काँटा' नामक प्रसिद्ध कहानियों के रचयिता। इनकी शैली अत्यंत मार्मिक और पांडित्यपूर्ण है। चुटीले हास्य की अभिव्यंजना के सहारे इन्होंने पाठकों के हृदय पर स्थायी प्रभाव छोड़ा है। इन्होंने प्राचीन हिंदी के संबंध में बड़े गवेषणापूर्ण लेख लिखे हैं। इनकी 'उसने कहा था' नामक कहानी वचन निभाने की वीरता और भावुकता से पूर्ण एक सजीव रचना है। व्याकरण के विविध विषयों पर भी इन्होंने बहुत लेख लिखे और इस प्रकार भाषा-संस्कार के कार्य में योग दिया।

चंद्रभागा—पंजाब में चनाब नामक नदी का प्राचीन नाम।

चंद्रमणि—दे० *चंद्रकांत मणि*।

चंद्रमा—एक उपग्रह। पुराणानुसार ये अत्रि और अनसूया (दे० यथा०) के पुत्र थे (*विष्णुधर्म० १.१०६*)। **समुद्रमंथन** से निकले चौदह रत्नों में से ये एक थे। इसी कारण इन्हें लक्ष्मी

का भाई या समुद्र का पुत्र कहते हैं। इनका विवाह दक्ष की २७ कन्याओं से हुआ था। ये अपनी अन्य पत्नियों की अपेक्षा रोहिणी पर विशेष प्रेम रखते थे। इसी कारण दक्ष प्रजापति ने इन्हें शाप दिया जिससे इन्हें राजयक्ष्मा रोग हो गया था। देवताओं ने दक्ष से चंद्रमा के स्वास्थ्य के लिये प्रार्थना की। इसपर दक्ष ने कहा कि चंद्रमा का १५ दिन क्षय और १५ दिन वृद्धि होगी (*म० श० ३५*)। शिव ने **हलाहल** विष की शांति के लिये इन्हें अपने सिर पर धारण किया है। ये अपने गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा को हर लाए थे, जिनसे इन्हें बुध नामक पुत्र प्राप्त हुआ (*भा० ९.१४ आदि*)। चंद्रमा शीतलता और सुंदरता के प्रतीक हैं। पर्य्याय०—सोम, सुधाधर, इंदु, सुधाकर, हिमांशु, शशि, शशधर, शशांक, मृगांक, नक्षत्रेश, कुमुद-बांधव, निशापति, विधु, कलानिधि, क्षपाकर, द्विजराज, सुधानिधि, कलंकधर, उडुप, राकापति, अमृतद्युति आदि।

चंद्रमुनि (वर्त्त० १०२३ ई०)—एक जैन कवि। *पुराणसार* आदि ग्रंथ और टीकाओं के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

चंद्रशेखर वाजपेयी (१७९८-१८७५ ई०)—जन्म मुअज़मबाद, फतहपुर। पटियाला-नरेश नरेंद्रसिंह की प्रेरणा से इन्होंने अपना प्रसिद्ध वीररस काव्य *हम्मीर हठ* लिखा। *विवेक विलास*, *रसिक विनोद*, *नखशिख*, *वृंदावनशतक* आदि इनकी अन्य रचनाएँ हैं।

चंद्रसरोवर—व्रज का एक तीर्थस्थान जो **गोवर्द्धन पर्वत** के समीप है।

चंद्रहास—केरल देश का युवराज। बाल्यावस्था में इसके माता-पिता का देहांत हो गया था। अतः इसका पालन-पोषण इसके पिता के मंत्री दुष्टबुद्धि द्वारा हुआ। ईर्ष्या के कारण मंत्री ने कई बार इसकी हत्या करनी चाही, पर दुष्टबुद्धि की कन्या विषया ने इसको वर लिया और **कुलिंद**-नरेश ने इसको आश्रय दे दिया। बाद में इसे अपना राज्य प्राप्त हो गया और इसने युधिष्ठिर के अश्वमेध के समय अर्जुन के साथ संधि कर ली (*जैं० अ० ५०-५६*)।

चंद्रावली नाटिका—**भारतेंदु हरिश्चंद्र** की एक नाटिका (१८७७ ई०), जिसमें चंद्रावली का कृष्ण के प्रति प्रेम, विरह तथा अंत में कृष्ण-मिलन दिखाया है। यह लेखक की उत्कृष्ट रचनाओं में है। इसका संस्कृत तथा ब्रज-भाषा में अनुवाद हो चुका है।

चंपक (चंपा)—एक पुष्प। कवि-प्रसिद्धि है कि रमणियों के कोमल हास्य से यह पुष्पित हो जाता है।

चंपकमाला—चंपकमाला भा म सगा है (भ म स ग=१० (५,५) व० छंद)। उ०—वृष्टि भली जैहे मरुदेशा, अन्न भलौ जैमे कट्ल्केशा।

चंपापुरी (चंपा, चंपानगर)—वर्त्तमान भागलपुर से ४ मील पश्चिम की ओर एक नगरी। यह **अंग** देश की राजधानी थी।

चंपू—वह काव्य जिसमें गद्य और पद्य का संमिश्रण हो।

चकवा (चक्रवाक)—एक पक्षी। कवि-प्रसिद्धि है कि चक्रवाक जोड़ों में पाये जाते हैं, ये दिन में जलाशय के एक ही किनारे रहते हैं, पर रात्रि को पृथक्-पृथक् हो विरह में ही बिताते हैं। कवियों ने इनके रात्रिकाल के इस वियोग पर अनेक सूक्तियाँ लिखी हैं।

चकोर—एक पक्षी। कवि-प्रसिद्धि है कि यह चाँदनी पीता है।

चक्रवाक—दे० *चकवा*।

चक्रव्यूह—सेना की एक कुंडलाकार स्थिति जिसके भीतर प्रवेश करना अत्यंत कठिन होता था। दे० *अभिमन्यु*।

चग़ताई—चगेज़खाँ के वंशज। **बाबर, अकबर** आदि इसी प्रसिद्ध तुर्की वंश के बादशाह थे।

चतुरदास (आ० का० १६३५ ई०)—*भगवद्गीता* के ग्यारहवें अध्याय के हिंदी-पद्य में अनुवादक।

चतुरसिंह, महाराज (जन्म १८७६ ई०)—मेवाड़ के राजवंशज एक डिंगल-कवि और शांतरस तथा भक्ति से पूर्ण १६ ग्रंथों के रचयिता।

चतुरसेन शास्त्री (१८८१ ई०-)—जन्म दिल्ली। प्रसिद्ध उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार और लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

उपन्यास—*हृदय की परख, हृदय की प्यास, अमर अभिलाषा, वैशाली की नगर वधू* (दो भाग)।

कहानी-संग्रह—*सिंहगढ़ विजय, अक्षत, रजकरण, लाल रूख, पूर्णाहुति*।

नाटक—*अजीतसिंह, पगध्वनि, पाँच एकांकी*।

विविध—*हिंदी साहित्य का परिचय, हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास, हिंदू राष्ट्र का नव निर्माण, कामकला के भेद*।

इनकी प्रतिभा चहुँमुखी है। इनकी पुस्तकों की संख्या एक सौ से ऊपर है। इनकी रचनाओं से इनके पूर्ण पांडित्य का परिचय मिलता है। इनका दृष्टिकोण अवश्य ही यथार्थवादी है, परंतु कहीं-कहीं यथार्थ की सनक में वह अनैतिक और कुरुचिपूर्ण हो गया है। इनके उपन्यासों के विरुद्ध पर्याप्त आंदोलन किया गया था। इनकी ऐतिहासिक कहानियाँ बहुत कलापूर्ण बन पड़ी हैं; वर्णन बहुत चित्ताकर्षक होता है। भाषा भी बहुत सजीव, चलती हुई और प्रवाहपूर्ण होती है, प्रेमचंद की भाँति मुहावरों का यथेष्ट प्रयोग किया गया है।

चतुर्भुजदास—**कुंभनदास** (र० का० १५५० ई०) के पुत्र, **अष्टछाप** के कवि, **विट्ठलनाथ** के शिष्य और *द्वादश यश, भक्ति प्रताप, हितजू को मंगल* तथा फुटकर पदों के रचयिता। इनकी भाषा व्यवस्थित और सरस है।

चतुर्युगी—चारों युगों का समय। अर्थात् ४३२०००० वर्ष।

चरण—छंदशास्त्र में किसी पद्य के एक चतुर्थांश को चरण या पाद कहते हैं।

चरणदास (जन्म १७०३ ई०)—देहरा (अलवर) निवासी एक संत। *अमरलोक, अखंड धाम, भक्ति पदारथ, ज्ञान सरोदय, शब्द* आदि के रचयिता।

चर्पटनाथ—मनुखेटपत्तन निवासी ब्राह्मण जो **गोरखनाथ** या बालानाथ के शिष्य कहे गये हैं। दे० *नाथ संप्रदाय*।

चर्मण्वती—राजपूताना में चंबल नदी का प्राचीन नाम। **रंतिदेव** ने यज्ञों में गौओं का इतना बलिदान किया कि उनके रक्त से यह नदी प्रवाहित हुई (*म० द्रो०* ६७)।

चवपैया—३० (१०, ८, १२) मा० छंद, अंत ग। उ०—भे प्रकट कृपाला, दीन दयाला, हर्षित छवि लखि मैया। विशेष—इसके अंत में एक सगण और एक गुरु अत्यंत कर्णमधुर होता है, परंतु प्रधान नियम तो अंत गुरु का है, यों तो छः गुरु तक आ सकते हैं। उ०—रामा रामा रामा।

चाणक्य—सम्राट् **चंद्रगुप्त मौर्य** के गुरु, मंत्री और *चाणक्यनीति* तथा *अर्थशास्त्र* के रचयिता।

इनकी सहायता से चंद्रगुप्त ने नंद वंश का विनाश कर दिया और अपना राज्य स्थापित किया। विष्णुगुप्त, कौटिल्य इनके अन्य नाम हैं। इनका *अर्थशास्त्र* राजनीतिक विषयों के उत्तम प्रतिपादन के कारण अत्यंत प्रसिद्ध तथा प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है।

चाणूर—कंस का एक मल्ल, जिसे धनुष-यज्ञ के समय कृष्ण ने मल्लयुद्ध में मार दिया था (*भा० १०.४४*)।

चातक—दे० *पपीहा*।

चामर—रा ज रा ज रेफ से बने सुचारु चामरम् (र ज र ज र=१५ व० छंद)। उ०—रोज रोज राधिका सखीन संग आइकै। खेल रास कान्ह संग चित्त हर्ष लाइकै॥ इसके अन्य नाम तूण और सोमवल्लरी हैं।

चामुंडा—चंड और मुंड के मारने के कारण दुर्गा का एक नाम। दे० *शुंभनिशुंभ*।

चारण-काव्य—दे० *वीरगाथा-काव्य*।

चार्वाक—एक प्रकृतिवादी विचारक। बृहस्पति ने एक अनीश्वरवादी संप्रदाय स्थापित किया था, पर इसका अधिक प्रचार चार्वाक द्वारा ही हुआ। इस संप्रदाय के अनुसार शरीर से पृथक् आत्मा का अस्तित्व नहीं है और भौतिक सुख-प्राप्ति ही परम पुरुषार्थ है। इस संप्रदाय का मूल मंत्र है—*यावज्जीवेत्सुखं जीवेद्‌ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्। भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥* अर्थात् जब तक जीओ खूब मौज करो। दूसरों से ऋण लेकर भी भोग्य पदार्थों का सेवन करो। जब शरीर भस्म हो जाता है तब फिर आत्मा का अस्तित्व नहीं रहता। इसलिये पुनर्जन्म का सिद्धांत भी इसके मत में अशुद्ध है।

चालीसा—चालीस पद्यों का ग्रंथ वा काव्य। यथा—*हनुमानचालीसा*।

चालुक्य—दक्षिण भारत का एक अत्यत प्रबल और प्रतापी राजवंश, जिसने ४८९ ई० से लेकर १२ वीं शती तक राज्य किया।

चिंता—दे० *श्रीवत्स*।

चिंतामणि—एक कल्पित रत्न जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि इससे जो अभिलाषा की जाए, वह पूर्ण कर देता है।

चिंतामणि—**रामचंद्र शुक्ल** के निबंधों का एक संग्रह।

चिंतामणि त्रिपाठी (जन्म १६०९ ई०)—तिकवाँपुर (कानपुर) निवासी, **भूषण** और **मतिराम** के भाई, एक रीति-कवि जिन्हें **शाहजहाँ** आदि ने पर्याप्त पुरस्कार दिये थे। *कविकुल-कल्पतरु* (१६५०), *काव्य विवेक, काव्य प्रकाश, छंद विचार* और *रामायण* इनकी रचनाएँ हैं। रामचद्र शुक्ल ने इनको रीतिकाल का प्रवर्त्तक माना है क्योंकि इन्हीं के पश्चात् रीति ग्रंथों की अविरल धारा बही। चिंतामणि और उनके पश्चात् कवियों में अलंकार अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखने लगे थे और अलंकार्य्य से पृथक् हो गये थे। इसके अतिरिक्त इन्होंने रस को भी प्रधानता दी।

चित्तौड़—एक इतिहास-प्रसिद्ध नगर, जो उदयपुर के महाराणाओं की प्राचीन राजधानी था। हिंदी में चित्तौड़ के महाराणाओं की वीरता पर अनेक काव्य लिखे गये हैं।

चित्रकाव्य—चमत्कार को ही प्रधानता देने वाला काव्य। संस्कृत-आचार्य मम्मट के अनुसार यह अधम-काव्य है। जिसमें कोरा

शाब्दिक चमत्कार हो, वह शब्दचित्र और जिसमें अर्थालंकार आदि के कारण रसादि की अपेक्षा भी अर्थ अधिक चमत्कृत हो जाये, वह अर्थचित्र कहलाता है।

चित्रकूट—प्रयाग के निकट एक पर्वत जहाँ वनवास के समय **रामचंद्र** और **सीता** ने बहुत दिनों तक वास किया था (*वा० रा० अयो० ५५*)। यह चित्रकूट स्टेशन से लगभग चार मील पर है।

चित्रकेतु—दे० *वृत्रासुर*।

चित्रगुप्त—चौदह यमराजों में से एक, जो प्राणियों के पाप और पुण्य का लेखा रखते हैं।

चित्रबंध—वह रचना जिसमें किसी श्लोक में कुछ अक्षर की आवृत्ति इस प्रकार की जाती है कि वह श्लोक कमल, चक्र, छत्र आदि के रूप में लिखा जा सकता है। इसमें लिखे जाने अक्षरों की संख्या पठनीय अक्षरों से कम अवश्य होती है। यह एक शब्दालंकार है।

चित्रलेखा—दे० *उषा*।

चित्रांगद—सत्यवती (दे० यथा०) और शांतनु के पुत्र और भीष्म के सौतेले भाई। शांतनु की मृत्यु के बाद इन्होंने ही राजगद्दी ली, क्योंकि भीष्म ने पहिले से राजा न बनने का प्रण कर लिया था। इनके छोटे भाई विचित्रवीर्य थे (*म० आ० १०८ कुं०*)।

चित्रांगदा—मणिपुर-नरेश चित्रवाहन की पुत्री, अर्जुन की एक पत्नी और बभ्रुवाहन की माता (*म० स० ३३.२५ कुं०*)। पाडवों के महाप्रस्थान के समय ये अपने पिता के घर चली गई थीं।

चित्रावली—**उसमान** का एक प्रेम-काव्य (१६१३ ई०)।

इसमें नैपाल के राजकुमार सुजानकुमार, सागरगढ़ की राजकुमारी कँवलावती और रूपनगर की राजकुमारी चित्रावली की प्रेम-कथा है। पद्मावत के समान इसमें भी आध्यात्मिकता रखने का पूर्ण प्रयत्न किया गया है।

चूलिका—दे० *अर्थोपक्षेपक*।

चेख़ोफ़ (Chekhov) (१८६०-१९०१ ई०)—एक रूसी नाटककार, उपन्यासकार और कहानी-लेखक। इनकी कुछ कहानियाँ अनूदित हैं।

चेदि—बुँदेलखंड का प्राचीन नाम। **शिशुपाल** यहीं का राजा था।

चैतन्य महाप्रभु (१४८५-१५३३ ई०)—जन्म नदिया (बंगाल)। २२ वर्ष की अवस्था में ये **मध्वाचार्य** के संप्रदाय में दीक्षित हुए, किंतु बाद में इन्होंने **निंबार्काचार्य** और **विष्णुस्वामी** के सिद्धांतों को स्वीकार कर लिया। इन्होंने भक्ति में **राधा** को प्रमुख स्थान दिया और उनकी आराधना में **जयदेव**, **चंडीदास** और **विद्यापति** के पदों का प्रयोग किया। इन्होंने गान और नृत्य के साथ अपने संप्रदाय में संकीर्तन को भी स्थान दिया। इनकी भक्ति में प्रेमोन्मत्तता अधिक थी।

चोर—योग के भाषानुसार पंच विकार—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद।

चोरापराध मांडव्य दंडन्याय—"*खलः करोति दुर्वृत्तं नूनं फलति साधुषु*"। चोरों का अपराध और **मांडव्य** ऋषि को दंड। अर्थात् एक के अपराध के बदले दूसरे को दंड मिलना।

चोल—कर्नाटक और तंजोर प्रांत।

चौकल—चार मात्राओं का समूह । इसके पाँच भेद हैं—SS, IIS, ISI, SII, IIII ।

चौदह रत्न—दे० *समुद्रमंथन* ।

चौपई—गुरु लघु अंत पंच दस मत्त, चौपई नाम जयकरी सत्त (१५ मा० छंद) अंत ग ल । उ०—परिहित-सम नहिं साधन और, कृष्ण-चरण-सम ठौर न और । इसे जयकारी भी कहते हैं ।

चौपाई—सोलह कल, ज त अंत न भाई । सम सम, विषम विषम चौपाई (१६ कलाएं । अंत में जगण और तगण और सम कल के अनंतर विषम कल नहीं होना चाहिये) । तुलसी-दास की अधिकांश चौपाइयों में अंतिम वर्ण गुरु पाया जाता है । उनमें गुरु-गुरु या लघु-गुरु नियम अधिक निभाया गया है । ये ही चौपा-इयाँ हिंदी-जगत् में आदर्श मानी गई हैं । उ०—हाथ लिए बल्कल सुकुमारी, खड़ी भई लाज उर भारी । पहर न जानत मन अकुलानी, राम ओर लखि कह मृदु बानी ।।

चौबोला—वसु मुनि लगि चौबोला रचौ (१५ (८,७) मा० छंद, अंत ल ग) । उ०—वसु मुनि लगि चौबोला रचौ, काहे तपि तपि देही तचौ । संत समागम संतन सजौ, शरणागत है, प्रभु को ।। इसे हंसी भी कहते हैं ।

चौरंगीनाथ—**गोरखनाथ** के शिष्य जो 'पूरन भगत' के नाम से प्रसिद्ध हैं । अपनी विमाता के प्रणय की अवहेलना करने के कारण इन की आँखें फोड़ दी गईं और हाथ-पैर काटकर इन्हें एक कूप में डाल दिया गया । ये १२ वर्ष तक उसी कूप में पड़े रहे । बाद में **गोरखनाथ** ने **मत्स्येंद्रनाथ** के प्रभाव से कूप से निकालकर इन्हें शरीर से संपन्न (चौरंगी) बनाया ।

चौरासी और दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता—**गोकुलनाथ** के व्रज-भाषा-गद्य में दो ग्रंथ, जिनमें दीक्षित वैष्णवों के जीवन पर प्रकाश डाला है; इनमें अनेक कवि भी हैं । **अष्टछाप** के कवि भी इन्हीं में निर्दिष्ट हैं ।

चौरासी लाख योनियाँ—भारतीय धर्मग्रंथों के अनुसार योनियों की संख्या ८४ लाख मानी जाती है । इनमें ९ लाख जलचर, ४ लाख मनुष्य, २७ लाख स्थावर, ११ लाख कृमि, १० लाख पक्षी, २३ लाख चौपाये हैं ।

च्यवन—भृगु तथा पुलोमा के पुत्र एक प्राचीन ऋषि । इन्होंने गर्भ से निकल कर पुलोम नामक एक राक्षस से अपनी माता की रक्षा की थी (*पद्म० पा० १४*) । इनका विवाह शर्याति की पुत्री सुकन्या से हुआ था । उस समय ये वृद्ध थे पर अश्विनीकुमारों के प्रसाद से नवयुवक हो गये थे (*भा० ६.३ आदि*) । इनके आश्रम बिहार राज्य के अंतर्गत शाहाबाद जिले में चौसा, सतपुरा पर्वतों में पयोष्णी नदी के निकट पूर्णा जयपुर में धोसी और रायबरेली में चिलल नामक स्थानों पर थे ।

छ

छंद—वह रचना जिसमें वर्ण वा मात्रा की गणना के अनुसार विराम आदि का नियम हो । यह दो प्रकार का होता है—*वर्णिक* या *वर्णवृत्त* (जिसमें अक्षरों की गणना हो) और *मात्रिक* (जिसमें मात्राओं की गणना हो) ।

छंदशास्त्र—छंदों की परंपरा, भेद, जाति, लक्षण और स्वरूप आदि की विवेचना करने वाला शास्त्र । पिंगल छंदः सूत्र ही पहिली सर्वांग पूर्ण रचना है और **पिंगल** के नाम से ही छंद-शास्त्र को पिंगल शास्त्र भी कहते हैं । हिंदी

में छंदशास्त्र पर अनेक ग्रंथ हैं, पर जगन्नाथ-प्रसाद 'भानु'-कृत *छंद प्रभाकर* सबसे अधिक लोकप्रिय है।

छंदोभंग—छंद-रचना का एक दोष, जो मात्रा, वर्ण आदि की गणना वा लघु-गुरु आदि नियम का पालन न होने के कारण होता है।

छत्र कुँवरि बाई (जन्म ल० १६६८ ई०)—एक कवयित्री और *प्रेमविनोद* (कृष्ण-भक्ति संबंधी) की लेखिका।

छत्रसाल—(मृत्यु १६५८ ई०)—बुंदेलखंड के एक प्रबल पराक्रमी राजा। लालकवि के *छत्रप्रकाश* नामक ग्रंथ में मुसलमानों के साथ इनके अनेक युद्धों का विस्तृत विवरण लिखा है। कुछ समय के लिये भूषण कवि भी इनके आश्रय में रहे थे। ये गुणियों का सम्मान करने के लिये प्रसिद्ध थे।

छत्रसाल दशक— **भूषण** की एक कविता जिसमें पन्ना-नरेश **छत्रसाल** की प्रशंसा में कवित्त हैं।

छत्रसिंह कायस्थ—वटेश्वर निवासी एक भक्त कवि और *विजय मुक्तावली* (१७०० ई०) के नाम से *महाभारत* के अनुवादक।

छप्पय—रोला के पद चार मत्त चौबीस धारिये। उल्लाला पद दोय अंत माही सुधारिये (छप्पय के ६ पादों में पहिले चार रोला (२४, २४) और अंतिम दो उल्लाला (२८, २८ अथवा २६, २६) के—मा० छंद)। उ०—नीलांबर परिधान, हरित पट पर सुंदर है। / सूर्य-चंद्र युग मुकुट, मेखला रत्नाकर है॥ / नदियाँ प्रेम प्रवाह, फूल तारे मंडन है। / बंदीजन खग वृंद, शेष फन सिंहासन है॥ / करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेष की, / है मातृभूमि ! तू सत्य ही, सगुण मूर्ति सर्वेश की।

छाया—दे० *संज्ञा*।

छायाग्राहिणी—एक राक्षसी जिसने समुद्र फाँदते हुए हनुमान की छाया पकड़कर उन्हें खींच लिया था। यथा—या भव पारावार कौ उलघि पार को जाय। तिय छबि छाया-ग्राहनी गहै बीच हो आय—*बिहारी*।

छायावाद—रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 'छायावाद' शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिये। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में जहाँ उनका संबंध काव्य-वस्तु से होता है, अर्थात् जहाँ कवि उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलंबन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम का अनेक प्रकार से व्यंजन करता है। रहस्यवाद के अंतर्भूत रचनाएँ पहुँचे हुए पुराने संतों या साधकों की उस वाणी के अनुकरण पर होती हैं जो तुरीयावस्था में या समाधि-दशा में नाना रूपकों के रूप में उपलब्ध आध्यात्मिक ज्ञान का आभास देती हुई मानी जाती थी। इस रूपकात्मक आभास को यूरोप में 'छाया (*phantasmata*) कहते हैं। इसी से बंगाल में ब्रह्मसमाज के बीच उक्त वाणी के अनुकरण पर जो आध्यात्मिक गीत या भजन बनते थे, वे 'छायावाद' कहलाने लगे। धीरे-धीरे यह शब्द धार्मिक क्षेत्र से वहाँ के साहित्य-क्षेत्र में आया और फिर रवींद्र बाबू की धूम मचने पर हिंदी के साहित्य-क्षेत्र में भी प्रकट हुआ।

'छायावाद' शब्द का दूसरा प्रयोग काव्य-शैली या पद्धति-विशेष के व्यापक अर्थ में है। १७८५ ई० में फ्रांस में रहस्यवादी कवियोंका एक दल खड़ा हुआ जो प्रतीकवादी (*Symbolists*) कहलाया। ये अपनी रचनाओं में प्रस्तुतों

के स्थान पर अधिकतर अप्रस्तुत प्रतीकों को लेकर चलते थे। इसी से उनकी शैली की ओर लक्ष्य करके 'प्रतीकवादी' शब्द का व्यवहार होने लगा। आध्यात्मिक या ईश्वर-प्रेम संबंधी कविताओं के अतिरिक्त और सब प्रकार की कविताओं के लिये भी प्रतीक शैली की ओर वहाँ प्रवृत्ति रही। हिंदी में 'छायावाद' शब्द का जो व्यापक अर्थ--रहस्यवादी रचनाओं के अतिरिक्त और प्रकार की रचनाओं के संबंध में भी ग्रहण हुआ, वह इसी प्रतीक शैली के अर्थ में था। छायावाद का सामान्यत अर्थ हुआ प्रस्तुत के स्थान पर उसकी व्यंजना करने वाली छाया के रूप में अप्रस्तुत का कथन। इस शैली के भीतर किसी वस्तु या विषय का वर्णन किया जा सकता है।

छायावाद का केवल पहिला अर्थात् मूल अर्थ लेकर तो हिंदी-काव्य-क्षेत्र में चलने वाली महादेवी वर्मा हैं। पंत, प्रसाद, निराला इत्यादि और सब कवि प्रतीक-पद्धति या चित्र भाषा शैली की दृष्टि से ही छायावादी कहलाए।

छिन्नमस्ता—एक देवी। इन्होंने अपना सिर काटकर अपने बाएँ हाथ में ले रखा है और कंठ से निकलते रुधिर को ये अपने कटे सिर की जीभ से चाट रही हैं। इनके दाएँ हाथ में कृपाण है। स्त्री और पुरुष का मैथुनरत युगल ही इनका वाहन है।

छीतस्वामी (जन्म ल० १५१८ ई०)—**अष्टछाप** के कवि। इन्होंने राजा **बीरबल** द्वारा **विट्ठलनाथ** के देवत्व में संदेह प्रकट किये जाने पर उनकी पुरोहित-वृत्ति त्याग दी थी। कृष्ण की भक्ति के अतिरिक्त इनके पदों में ब्रज के प्रति प्रेम का भाव है। ये इतने भावुक थे कि यमुना जल में पैर देने के अपराध के भय से उसमें स्नान नहीं करते थे; रेती में लेट लिया करते थे अथवा कुएँ के जल से स्नान करते थे।

छीहल—दे० *पंच सहेली*।

छेकानुप्रास—दे० *अनुप्रास*।

छेकोक्ति—वह लोकोक्ति जो अर्थांतर गर्भित हो अर्थात् जिससे अन्य अर्थ की भी ध्वनि निकले। उ०—कपि-सैन कपि जानै।—*दूलह*।

ज

जंबुद्वीप—भारतवर्ष। पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक, जो खारे समुद्र से घिरा है। यह एक लाख योजन विस्तीर्ण है और इसके नौ खंड माने गये हैं। दे० *भारतवर्ष*।

जंभ—एक असुर। इसका वध इंद्र ने किया था (*भा० ८.११.१३*)।

जंभलदत्त—दे० *वेतालपंचविंशति*।

जगजीवनदास (जन्म १७१८ ई०)—बाराबंकी निवासी एक संत, जिन्होंने 'सतनामी पंथ' का पुनः संगठन किया। *ज्ञान प्रकाश, महाप्रलय* और *प्रथम ग्रंथ* ये इनके तीन ग्रंथ हैं।

जगण—दे० *गण*।

जगदंबाप्रसाद मिश्र 'हितैषी' (१८९५ ई०-)—कवि और *वैकाली* (१९४१, काव्य-संग्रह, इसमें प्रकृति के कुछ अच्छे चित्र हैं) आदि के रचयिता।

जगदानंद (आ० का० १६४३ ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि और *ब्रज परिक्रमा* तथा *उपाख्यान*

सहित दशम स्कंध (*भागवत* के दशम स्कंध का संक्षिप्त विषय-वर्णन) के रचयिता।

जगदीशचंद्र माथुर—आधुनिक नाटककार। इनके मुख्य नाटक *भोर का तारा, ओ मेरे सपने, कोणार्क* आदि हैं। दे० *एकांकी नाटक*।

जगद्विनोद—**पद्माकर भट्ट** (१७५३-१८३३ ई०) का एक ग्रंथ।

यह शृंगार रस का उत्कृष्ट ग्रंथ है। मतिराम-कृत *रसराज* के समान यह ग्रंथ काव्य-रसिकों और अभ्यासियों दोनों का कंठहार रहा है। इसमें माधुर्य, स्वाभाविकता तथा सरलता अद्‌भुत है। ऐसा रचना-सौष्ठव बिहारी को छोड़ अन्य किसी कवि में नहीं दीख पड़ता।

जगनिक (आ० का० ११७३ ई०)—कालिंजर के राजा परमाल के आश्रित एक भाट। इन्होंने महोबे के दो प्रसिद्ध वीरों—आल्हा और ऊदल (उदयसिंह)—के वीर चरित्र का विस्तृत वर्णन एक वीरगीतात्मक काव्य के रूप में किया था। वह काव्य अबतक अप्राप्त है, पर उसके आधार पर प्रचलित गीत हिंदी-भाषा-भाषी प्रांतों के ग्राम-ग्राम में सुनाई पड़ते हैं। ये गीत *आल्हा* के नाम से प्रसिद्ध हैं और वर्षा ऋतु में गाये जाते हैं। दे० *आल्हा*।

जगन्नाथ—विष्णु की एक प्रसिद्ध मूर्त्ति, जो उड़ीसा के पुरी (जगन्नाथपुरी) नामक स्थान में है।

जगन्नाथदास 'रत्नाकर' (१८६६-१९३२ ई०)—ब्रज-भाषा के प्रसिद्ध कवि। बी० ए० की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् इन्होंने आवागढ़ राज्य में नौकरी की, फिर ये अयोध्या-नरेश प्रतापनारायणसिंह के और उनके देहांत होने पर उनकी धर्मपत्नी के प्राइवेट सेक्रेटरी रहे। ये हिंदी-साहित्य सम्मेलन के सभापति रहे थे। खड़ी बोली का आकर्षण इनके ब्रज-भाषा प्रेम पर विजय न प्राप्त कर सका। इन्होंने *हरिश्चंद्र, गंगालहरी, कल-काशी, उद्धवशतक, गंगावतरण* आदि ग्रंथ लिखे, किंतु अंतिम दो ने बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त की। इन्होंने *समालोचनादर्श* के नाम से पोप के *ऐसे ऑन क्रिटिसिज्म* का भी पद्यानुवाद किया था। इनकी *बिहारी रत्नाकर* (*बिहारी सतसई* की टीका) बहुत सुंदर है।

इनकी भाषा संस्कृत-निष्ठ है। उसमें प्रायः दीर्घ समास भी आ जाते हैं। अपनी रचनाओं में इन्होंने व्याकरण पर अधिक ध्यान दिया है। इनकी भाषा में (विशेषकर *गंगावतरण* में) माधुर्य की अपेक्षा ओज की मात्रा कुछ अधिक है।

इनकी कविता पर पद्माकर की छाप स्पष्ट हो है, साथ ही अन्य कई प्राचीन कवियों का भी इनकी कविता पर प्रभाव है। विशेष दे० कृष्णशंकर शुक्ल-कृत *कविवर रत्नाकर*।

जगन्नाथप्रसाद 'मिलिंद' (१९०३ ई०-)—कवि और नाटककार। इनकी मुख्य रचनाएँ *बलि-पथ के गीत* (राष्ट्रिय कविताओं का संग्रह) और *प्रताप प्रतिज्ञा* (१९२८) तथा *समर्पण* (नाटक) हैं। इनके नाटक साहित्यिक और अभिनय के उपयुक्त हैं।

जगमोहनसिंह ठाकुर (१८५७-९९ ई०)—लेखक, कवि और *श्यामा स्वप्न* (उपन्यास), *प्रेम रत्नाकर, प्रेम संपतिलता, श्यामा लता, देववानी, श्यामा सरोजिनी* तथा *मानस-संपति* (सब काव्य) के रचयिता। ये प्रेम-पथिक कवि और माधुर्यपूर्ण गद्य-लेखक थे। इन्होंने नये ढंग के प्रकृति-चित्रण की स्थापना की।

जग्गाजी—डिंगल-कवि और *रतन महेसदासोतरी*

वाचनिका (१६५८ ई०, इसमें रतलाम-नरेश रतनसिंह की वीरता का वर्णन है।) के रचयिता।

जज्जल—दे० *हम्मीररासो*।

जटमल—दे० *गोरा-बादल की कथा*।

जटायु—विनता और अरुण का पुत्र और संपाती का भाई एक गिद्ध जो राम-भक्त था। जब रावण सीता का हरण करके ले जा रहा था तब रावण से इसी ने युद्ध किया था। रावण ने इसके पक्षों को काटकर इसे घायल कर दिया था। रामचंद्र को सीता का पता बताते ही इसका प्राणांत हो गया था (*वा० रा० अर० ५०–५२. ६७–६८*)।

जटासुर—एक राक्षस, जो **द्रौपदी** पर मोहित होकर ब्राह्मण के वेष में पांडवों के साथ मिल गया था। भीम की अनुपस्थिति में एक बार इसने द्रौपदी, युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव को हर ले जाना चाहा था, पर मार्ग में ही भीम ने इसे मार डाला (*म० व० १५७*)।

जड़ भरत—दे० *भरत*।

जतुगृह—दे० *लाक्षागृह*।

जनक—जनकपुरी के राजा और सीता के पिता। पर्य्याय०—विदेह, मिथिलेश आदि।

जनकपुरी—राजा जनक की राजधानी। दे० *विदेह*।

जनकराज किशोरीशरण (आ० का० १८४३ ई०)—एक राम-भक्त कवि और *अष्टयाम*, *सीताराम सिद्धांत मुक्तावली* तथा *सीताराम सिद्धांत अनन्य-तरंगिणी* के रचयिता।

जनक लाड़िलाशरण (आ० का० १८४३ ई०)—एक लेखक, जिन्होंने *टीकानेह प्रकाश* नाम से बाल अली जू-कृत *स्नेह प्रकाश* की टीका लिखी है।

जनमेजय—परीक्षित् के पुत्र एक कुरुवंशी राजा। परीक्षित् की मृत्यु तक्षक नाग से हुई थी। इसके प्रतिकार स्वरूप इन्होंने नागयज्ञ किया, जिसमें नाग आ-आ कर भस्म होने लगे। नागराज वासुकि ने आस्तीक नामक एक नाग को भेजा, जिसने जनमेजय से प्रार्थना कर यज्ञ बंद करवाया (*म० आ० ५१–५८*)।

जनमेजय का नागयज्ञ—**जयशंकर प्रसाद** का एक नाटक (१९२६ ई०)।

कृष्ण के आदेशानुसार अर्जुन द्वारा खांडववन में नागों के भस्म किये जाने पर प्रतिकार स्वरूप उनके पौत्र राजा **परीक्षित्** को **तक्षक** नाग ने डस लिया, जिससे उनका प्राणांत हो गया। तब परीक्षित् के पुत्र **जनमेजय** ने नागों से बदला लेने का निश्चय किया। वेदव्यास ऋषि का शिष्य उत्तंक गुरुपत्नी की आज्ञा से रानी के मणि-कुंडल लेने गया। इसे गुरुपत्नी ने गुरुदक्षिणा में माँगा था। जनमेजय के लोभी पुरोहित काश्यप के ऐंद्र महाभिषेक न करवाने पर तुरकावषेय ने वह कर्म करवा दिया, पर दक्षिणा स्वयं न लेकर उसी पुरोहित को दिलवा दी। उसी समय उत्तंक ने आकर रानी से मणि-कुंडल दान में प्राप्त किये। मार्ग में काश्यप ने तक्षक को बतला दिया कि उत्तंक के पास कुंडल हैं। तक्षक उत्तंक से मिल गया और सोते समय उसने उत्तंक की हत्या करके मणि-कुंडल लेने का प्रयास किया, पर वासुकि तथा सरमा के आ जाने से वह वैसा नहीं कर पाया। उत्तंक ने मणिकुंडल गुरुपत्नी को दे दिये। वह *वृद्धस्य तरुणी भार्या* के नाते इसपर प्रेम प्रकट करने लगी, पर यह उसे फटकार कर चल

दिया। उधर जनमेजय **जरत्कारु** ऋषि की हत्या के प्रायश्चित में **अश्वमेध** यज्ञ करने को उद्यत हुए। उसी समय तक्षक की कन्या मणिमाला को जनमेजय ने देखा। दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो गये। उत्तंक ने राजा के यहाँ जाकर उन्हें तक्षक के प्रति उत्तेजित किया। जनमेजय ने प्रतिज्ञा की कि अश्वमेध से पहिले नाग-यज्ञ होगा। उन्होंने अपने तीन भाइयों को तीन ओर अश्वमेध यज्ञ के लिये विजय प्राप्त करने के हेतु भेज दिया। स्वयं भी नाग जाति पर आक्रमण कर दिया। काश्यप, जरत्कारु ऋषि की पत्नी, नाग सरदार वासुकि की बहिन मनसा, वासुकि की यादवी पत्नी सरमा और दोनों के पुत्र माणवक और आस्तीक ने राजा के प्रति षड्यंत्र रचा। नागों ने जनमेजय की रानी और अश्वमेध का घोड़ा पकड़ लिया। युद्ध में तक्षक इत्यादि पकड़े गये। काश्यप की कुटिल नीति के कारण राजा ने ब्राह्मणों के निर्वासन की आज्ञा देदी और अश्वमेध यज्ञ के पहिले नाग-यज्ञ में नागों की आहुति देने का निश्चय किया। उसी समय वेदव्यास आस्तीक आदि के साथ आए और उनके उपदेश के कारण जनमेजय ने अपने विचार बदल दिये। वेदव्यास ने रानी की पवित्रता का प्रमाण दिया। अंत में रानी ने मणिमाला से जनमेजय का विवाह करवा दिया। उसी समय से आर्य और नाग जाति दोनों में संबंध स्थापित हो गया।

कथा पौराणिक है। नाटक का प्रतिपाद्य विषय है 'आर्य जाति और नाग जाति की एकता।' यह कृति प्रसाद के उत्कृष्ट नाटकों में गिनी जाती है।

जनस्थान—नासिक के समीप एक स्थान जहाँ पर वनवास के समय रामचंद्र ने निवास किया था।

जना (तीन)—योग के भाषानुसार तीन गुण—सत, रज, तम।

जनार्दन (आ० का० १४५३ ई०)—एक महाराष्ट्र-भक्त कवि जिन्होंने हिंदी में भी कुछ रचना की है।

जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज' (१९०४ ई०-)—कवि और *अनुभूति* (काव्य-संग्रह) आदि के रचयिता। ये बहुत ही भावुक कवि हैं।

जन्माष्टमी—भादों की कृष्णाष्टमी। इस दिन अर्द्धरात्रि के समय कृष्ण का जन्म हुआ था। इस दिन हिंदू उपवास रखते हैं तथा कृष्ण-जन्म का उत्सव मनाते हैं।

जमदग्नि—सत्यवती के पुत्र तथा परशुराम के पिता एक ऋषि। ये बड़े ज्ञानी, विद्वान् और शांत प्रकृति के थे (दे० *ऋचीक*)। ये कार्तवीर्य द्वारा मारे गये। दे० *रेणुका*।

जमाल (र० का० १५७० ई०?)—एक मुसलमान कवि। इनके नीति और शृंगार के दोहे राजस्थान की ओर बहुत जनप्रिय हैं।

जमुना—१ योग के भाषानुसार **पिंगला** नाड़ी का एक नाम। २ दे० *यमुना*।

जयंत—इंद्र और पौलोमी का पुत्र (*म० आ० १२३ कुं०*)। कृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न से इसका युद्ध हुआ था। मेघनाद से भी इसका युद्ध हुआ था। इसीने ही कौए का वेष बनाकर सीता को चोंच से मारा था। इसपर राम ने इसका गर्व और इसकी मूर्खता दूर करने के लिये इसकी एक आँख निकाल ली थी। देवासुर-युद्ध में इसने कालेय राक्षस का वध किया था (*पद्म० सृ० ६३-६४*)। पर्य्याय०—उपेंद्र, पाकशासनि आदि।

जय—विष्णु का एक पार्षद। दे० *जयविजय*।

जयचंद—कन्नौज के एक राठौर वंशीय राजा। जब इनकी पुत्री संयोगिता को पृथ्वीराज चौहान बलपूर्वक कन्नौज से हर ले गये (दे० *पृथ्वीराजरासो*), तब इन्होंने ११६३ ई० में मुहम्मद गौरी के साथ मिलकर पृथ्वीराज से युद्ध किया था। अंत में पृथ्वीराज पराजित हो गये। भारतीय इतिहास में ये देशद्रोही समझे जाते हैं। बाद में मुहम्मद गौरी के साथ युद्ध करते हुए ये मारे गये। इनकी वीरता का वर्णन इनके आश्रित कई कवियों ने अपने ग्रंथों में किया है।

जयचंद्र (आ० का० १४०३ ई०)—ग्वालियर के तोमरवंशी राजा वीरमदेव के आश्रित एक जैन कवि और *हम्मीर महाकाव्य* के रचयिता।

जयतराम (आ० का० १५७३ ई०)—**अकबर** के दरबारी कवि और *भगवद्गीता* के पद्यबद्ध टीकाकार।

जयदेव १ (आ० का० ई० १३ वीं शती)—वीरभूम, बंगाल निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि और संस्कृत में *गीतगोविंद* के रचयिता। कुछ विद्वान् इनको उड़ीसा-निवासी मानते हैं। इनकी रचना एक सरस शृंगारिक गीति-काव्य है। परवर्ती संपूर्ण कृष्ण-साहित्य *गीतगोविंद* से प्रेरणा प्राप्त करता प्रतीत होता है। हिंदी में जयदेव की रचनाएँ *ग्रंथ साहब* में मिलती हैं, किंतु सौंदर्य की दृष्टि से संस्कृत रचना के समक्ष अत्यंत तुच्छ हैं। हिंदी संत-कवियों में इनका नाम आता है। कबीर ने इनका उल्लेख किया है। २ (आ० का० १२०० ई०)—संस्कृत के एक नाटककार और *प्रसन्नराघव* (*रामायण* की कथा पर आधारित एक नाटक) के रचयिता।

जयद्रथ—सिंधु-नरेश, दुर्योधन का बहनोई। एक बार इसने द्रौपदी को वन में अकेली पाकर हर ले जाने का प्रयत्न किया था, किंतु भीम और अर्जुन ने इसे पकड़ लिया और इसे बहुत अपमानित किया (*म० व० २६४-७२*)। इसीने भीम आदि को चक्रव्यूह में अभिमन्यु के पास नहीं पहुँचने दिया, अतः अभिमन्यु अकेला लड़ता-लड़ता कौरवों द्वारा मृत्यु को प्राप्त हुआ (*म० द्रो० ३३.४६*)। इसपर अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि वे इसे सूर्यास्त से पूर्व मार डालेंगे, अन्यथा स्वय अग्नि में भस्म हो जाएँगे। यह जानकर कौरवों ने जयद्रथ को छिपा दिया। उसी समय कृष्ण ने अपनी अलौकिक शक्ति द्वारा सूर्य को कुछ समय के लिये अस्त कर दिया। जब जयद्रथ के सहर्ष सामने आते ही सूर्य सहसा चमक उठा, तब अर्जुन ने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की। जयद्रथ के पिता वृद्धक्षेत्र ने जयद्रथ को वर दिया था कि जो इसका सिर भूमि पर गिराएगा, वह स्वयं मृत्यु को प्राप्त होगा। अर्जुन ने तीरों से जयद्रथ का सिर वृद्धक्षेत्र की ही गोद में डाल दिया। जब वृद्धक्षेत्र उठा तो जयद्रथ का सिर उसकी गोद से भूमि पर गिर गया और इस प्रकार वृद्धक्षेत्र भी मृत्यु को प्राप्त हुआ (*म० द्रो० ७२-७४, ८५-१४६*)। **मैथिलीशरण गुप्त** ने *जयद्रथ वध* के नाम से एक खड-काव्य लिखा है।

जयद्रथ वध—**मैथिलीशरण गुप्त** का एक खंड-काव्य (१६१० ई०), जो सात सर्गों में है।

इसमें कौरवों के महारथियों द्वारा **अभिमन्यु** के मारे जाने के अनंतर पुत्र-शोक-पीड़ित अर्जुन की **जयद्रथ** को मारने की प्रतिज्ञा तथा उसकी पूर्त्ति की कथा वर्णित है। गुप्त जी की प्रारंभिक सभी रचनाओं की अपेक्षा इसमें भाव पक्ष अधिक प्रबल है।

जय-विजय—विष्णु के दो पार्षद। ये दोनों एक दूसरे को शाप देकर गज तथा ग्राह बन गये थे। एक बार जब गज नदी में उतरा, तब ग्राह ने उसका पाँव पकड़ लिया। गज ने विष्णु से प्रार्थना की। विष्णु ने गज और ग्राह दोनों का उद्धार कर दिया और ये दोनों विष्णु के फिर से पार्षद हो गये *(स्कंद० २.४.२८, पद्म० उ० ११०, भा० ७.१)*। एक बार इन्होंने सनक आदि ऋषियों को विष्णु से मिलने नहीं दिया। इसपर ऋषियों ने इन्हें शाप दिया कि 'राक्षस हो जाओ'। अतः ये सत्ययुग में हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु, त्रेतायुग में रावण और कुंभकर्ण तथा द्वापरयुग में शिशुपाल और दंतवक्र हुए। विष्णु ने वराह, नृसिंह, राम एवं कृष्ण रूप में अवतार लेकर अपने सेवकों का उद्धार किया। पुनः ये पूर्ववत् विष्णु के पार्षद हो गये।

जयशंकर प्रसाद (१८८९-१९३७ ई०)—इनका जन्म काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ। इनके पिता 'सुँघनी साहु' के नाम से विख्यात थे। बचपन में इन्होंने तीर्थ-स्थानों की यात्रा की। इन्होंने घर पर ही संस्कृत, अंग्रेज़ी, फारसी, हिंदी, उर्दू, प्राकृत, पाली, गुप्तकालीन इतिहास तथा बौद्ध दर्शन का गंभीर अध्ययन किया। इनके तीन विवाह हुए। इनके अंतिम विवाह से रत्नशंकर उत्पन्न हुए जो इस समय अपना पैतृक व्यवसाय चला रहे हैं। इनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं—

चंपू—*उर्वशी* (१९०९), *प्रेम-राज्य* (१९१०)।

काव्य—*चित्राधार* (१९०८-१८), *कानन-कुसुम* (१९१२, ब्रज-भाषा की कविताओं का संग्रह), *करुणालय* (गीति-नाट्य), *प्रेम-पथिक* (१९१३, इसमें अतुकांत का पहिला प्रयोग है), *महाराणा का महत्त्व* (१९१४), *आँसू* (१९२६), *झरना* (१९२७), *लहर* (१९३५), *कामायनी* (१९३६)।

नाटक—*सज्जन* (१९१०-११, एकांकी), *कल्याणी परिणय* (१९१३, एकांकी), *प्रायश्चित* (१९१४), *राज्यश्री* (१९१५), *विशाख* (१९२१), *अजातशत्रु* (१९२२), *जनमेजय का नाग-यज्ञ* (१९२६), *कामना* (१९२७), *स्कंदगुप्त विक्रमादित्य* (१९२८), *एक घूँट* (१९२९, एकांकी), *चंद्रगुप्त* (१९३१), *ध्रुवस्वामिनी* (१९३३)।

कहानी-संग्रह—*छाया* (१९०२), *चित्राधार की कहानियाँ* (१९१८), *प्रतिध्वनि* (१९२६), *आकाशदीप* (१९२९), *आँधी* (१९३१), *इंद्रजाल* (१९३६)।

उपन्यास—*कंकाल* (१९२९), *तितली* (१९३४), *इरावती* (१९३६, अपूर्ण)।

निबंध—*काव्य और कला* (१९३०-३६)।

'इंदु' (१९०९, १६, १६), 'जागरण' (१९२९) और 'हंस' (१९२८) साहित्यिक पत्रों में संपादकीय लेख।

प्रसाद की हिंदी-साहित्य को बड़ी भारी देन है। द्विवेदी-युग के पश्चात् जो नया युग चला वह इनसे ही प्रारंभ होता है। छायावाद और रहस्यवाद के प्रथम प्रवर्त्तकों में ये अग्रगण्य हैं। इनकी कविता की तीन मान्य प्रवृत्तियाँ हैं—१ वैयक्तिक तथा ईश्वरोन्मुख प्रेम, २ प्रकृति प्रेम, ३ प्राचीन गौरव। ये प्रेम की वेदना को बड़ा महत्त्व देते हैं। इनका प्रेम लौकिक से अलौकिक में परिवर्तित हो जाता है। इनकी कविता में प्रधान रस करुण है। *कामायनी* खडी बोली का श्रेष्ठ महाकाव्य मानी जाती है। हिंदी के मौलिक नाटककारों में ये सर्वप्रधान माने जाते हैं। इनके नाटक अधिकतर ऐतिहासिक हैं। ये भारतीय गौरव-गाथा गाने में विशेष समर्थ हुए हैं। अपनी रचनाओं

के लिये इन्होंने बौद्धकालीन भारत के इतिहास को विशेष रूप से अपनाया। नाटकों में मनोवैज्ञानिकता पर्याप्त मात्रा में है और कहीं-कहीं बड़े सुंदर अंतर्द्वंद्व दिखलाए गये हैं। इनके नाटक कलामय होते हुए भी भाषा की दृष्टि से कुछ कठिन हैं। वे साधारण रंगमंच के लिये अयोग्य हैं, उनके लिये विशेष रंगमंच चाहिये। नाटकों में प्रसाद गुण की कमी है। इनके साधारण पात्र भी संस्कृत-गर्भित भाषा बोलते हैं और दार्शनिक सिद्धांतों का विवेचन करते प्रतीत होते हैं। इनके प्रधान पात्रों में दार्शनिक त्याग की भावना रहती है और उनपर प्रसाद के नियतिवाद की छाप होती है।

उपन्यास-क्षेत्र में भी इन्होंने अपना स्थान बना लिया है। इनके उपन्यासों में प्रेमचंद के उपन्यासों की अपेक्षा भावना का उत्कर्ष अधिक है। दे० *कंकाल*, *तितली*।

कहानी-क्षेत्र में भी ये एक प्रकार से प्रथम मौलिक कहानी-लेखक कहे जा सकते हैं। दे० *कहानी*। इनकी कहानियों में कथानक की अपेक्षा भावों का प्राधान्य है।

इनकी भाषा संस्कृत-गर्भित है। भाषा की दुरूहता अधिकांश में प्रतीकों के कारण है। इनका शब्द-चयन बड़ा सुंदर है। इनके काव्य में पुरानी और नई (विशेषण विपर्यय और मानवीकरण आदि) दोनों ही ढंग की अलंकार-योजना हुई है। इनकी उपमाओं में सुखद नवीनता रहती है। विशेष दे० गुलाबराय-कृत *प्रसादजी की कला*, विनोदशंकर-कृत *प्रसाद और उनका साहित्य*, रामरतन भटनागर-कृत *प्रसाद का जीवन और साहित्य*, जगन्नाथ प्रसाद शर्मा-कृत *प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन*, सुशीलादेवी-विमलादेवी-कृत *प्रसाद के उपन्यास तथा कहानियाँ*।

जयानक (वर्त्त० ११६८-१२०० ई०)—पुष्कर निवासी एक कवि और *पृथ्वीराज विजय* (संस्कृत-काव्य) के रचयिता।

जरत्कारु—एक ऋषि जो नागराज वासुकि के बहनोई और **आस्तीक** के पिता थे। अपने पूर्वजों के उद्धार के लिये इन्होंने विवाह करना स्वीकार कर लिया था (*म० आ० १३*)। एक बार इनकी पत्नी ने इन्हें संध्या को सोते समय उठा दिया, जिससे क्रुद्ध होकर ये कहीं चले गये (*म० आ० १४.४७ कुं०*)।

जरा—१ जरासंध (दे० यथा०) की उपमाता (*म० द्रो० १८१*)। २ एक व्याध जिसने कृष्ण का अंत किया था। दे० *सांब*।

जरासंध—मगध-नरेश, और कंस का श्वशुर। मगध-नरेश बृहद्रथ निस्संतान थे। उन्हें चंडकौशिक ऋषि के वरदान से जरासंध नामक पुत्र प्राप्त हुआ। जरासंध जब उत्पन्न हुआ तब इसका शरीर दो भागों में विभक्त था, पर जरा नामक राक्षसी ने इन दो भागों को जोड़कर बालक को जीवित कर दिया। इससे इसका नाम जरासंध हुआ (*मत्स्य० ५०, म० स० १७-१८*)। कंस के कृष्ण द्वारा मारे जाने पर, उसका बदला लेने के लिये इसने १८ बार मथुरा पर आक्रमण किया था। एक बार जरासंध ने कृष्ण और बलराम का पीछा किया, पर कृष्ण और बलराम प्रवर्षण नामक एक ऊँचे पर्वत पर चढ़ गये। जरासंध ने पर्वत के चारों ओर अग्नि लगा दी। कृष्ण और बलराम पर्वत से नीचे धरती पर कूद पड़े और द्वारिका पहुँच गये। रणक्षेत्र छोड़ने के कारण कृष्ण रणछोड़ कहलाए (*म० स० १४*)। भीम ने जरासंध को मल्लयुद्ध में मार दिया था (२०-२४)।

जलंधर—दे० *जालंधर* ।

जलतरंग न्याय—जल से ही तरंगे उठती हैं । दोनों एक ही हैं, किंतु नाम भिन्न-भिन्न हैं । अतएव जहाँ दो में अभेद दिखाना हो, वहाँ इस उक्ति का प्रयोग होता है ।

जलधरमाला—मो भासे माँ, जलधरमाला ये ही (म भ स म=१२ व० छंद) । उ०—मो भासै मो, छलि हरि दीन्हों जोगा । / ठानो ऊधो, उन कुबजा सों भोगा ।

जल-प्लावन—एक खंड-प्रलय जिसमें पृथ्वी जलमग्न हो गई थी । विष्णु ने मत्स्य (दे० यथा०) रूप धारण कर **मनु** की नाव को हिमगिरि के शिखर तक पहुँचाया था *(श० ब्रा० १. ८.१.१, मत्स्य० १-२)* । इससे मिलती जुलती कथा कई प्राचीन जातियों के साहित्य में पाई जाती है (दे० नूह) । जयशंकर प्रसाद-कृत *कामायनी* में जल-प्लावन और उसके पश्चात् का दृश्य है ।

जलहरण—जल हरण बत्तीस अक्षरों के चार पाद, अंत में दो लघु हों, मन में बढ़ाए सुख (३२ (१६, १६) दंडक व० छंद, अंत ल ल) । अंतिम वर्ण गुरु भी देखा जाता है, पर उच्चारण लघु के समान ही होता है । उ०—भरत सदा ही पूजे पादुका उतै सनेम, इते राम सीय बंधु सहित पधारे बन ।

जलाल गहाणी री वात—किसी अज्ञात लेखक का एक प्रेम-काव्य (लि० का० १६६६ ई०), जिसमें जलाल और गहाणी की प्रेम-कथा है ।

जलालुद्दीन—खिलजीवंशी एक शासक (१२९०-९६ ई०) ।

जलालुद्दीन रूमी (१२०७-७३ ई०)—फ़ारसी के प्रसिद्ध सूफी कवि और दरवेश संप्रदाय के प्रवर्त्तक ।

जलोद्धतगति—जु साज सहिता, जलोद्धतगती (ज स ज स=१२ (६, ६) व० छंद) । उ०—जु साज सुपली हरीहिं सिर में ।

जसवंतसिंह (१६२६-८१ ई०)—जोधपुर-नरेश, **शाहजहाँ** और **औरंगज़ेब** के बड़े विश्वास-पात्र, एक रीति-कवि । *भाषा भूषण* के रचयिता । इनके इस ग्रंथ के एक ही दोहे में एक अलंकार के लक्षण तथा उसके उदाहरण दोनों का समावेश है, जो विद्यार्थियों को सूत्ररूप से याद करने के लिये उपयोगी है । *अपरोक्ष सिद्धांत, सिद्धांत बोध, सिद्धांत सार* और *प्रबोधचंद्रोदय* (नाटक) इनके तत्त्वज्ञान संबंधी ग्रंथ हैं ।

जसवंतसिंह द्वितीय (अनुमानित र० का० १७९९ ई०)—तेरवाँ (कन्नौज) के नरेश, एक रीति-कवि । *सालिहोत्र* तथा *शृंगार-शिरोमणि* के रचयिता ।

जहाँगीर-जस-चंद्रिका — **केशवदास** (१५५५-१६१६ ई०) का एक काव्य, जिसमें **जहाँगीर** के यश का वर्णन है ।

जह्नु—एक ऋषि । दे० *गंगा* ।

जांबवत्—ब्रह्मा की जंभ से उत्पन्न एक ऋक्ष *(वा० रा० बा० १७)* । ये ऋक्षराज थे *(वा० रा० यु० ३७)* । सीता की खोज करने में इन्होंने राम की सहायता की थी । रावणवधानंतर इन्होंने नगारे बजाए थे *(पद्म० उ० १५०)* । राम के राज्याभिषेक के अवसर पर ये समुद्रजल लाए थे *(वा० रा० यु० १३१)* । **स्यमंतक** मणि के लिये इनका कृष्ण से २८ दिन तक युद्ध हुआ था, किंतु यह जानकर कि कृष्ण भी विष्णु के अवतार हैं, इन्होंने कृष्ण की स्तुति की और अपनी कन्या जांबवती का विवाह कृष्ण से कर दिया *(भा० १०.५६)* । पर्य्याय०—जांबवान्, जामवंत आदि ।

जांबवती—जांबवत् (दे० *यथा०*) की पुत्री तथा कृष्ण की एक पत्नी ।

जातक—एक प्रकार के बौद्ध ग्रंथ, जिनमें बुद्ध के पूर्व-जन्मों की कथाएँ लिखी हैं । बौद्धों के अनुसार संपूर्ण जातकों की संख्या ५५० है । बुद्ध ने स्वयं **श्रावस्ती** में रहते समय अपने शिष्यों को मोक्षधर्म की शिक्षा देने के लिये ५५० पूर्व जन्मों में जो-जो अलौकिक कार्य किये थे, उन्हीं के वे इन ५५० जातकों में आख्यान के रूप से कहे गये हैं । इस समय बहुत से जातक विलुप्त हो गये हैं । कुछ प्रचलित जातकों के नाम इस प्रकार हैं—*अगस्त्य, अपुत्रक, अधिसह्य, श्रेष्ठी, आर्या, भद्रवर्णीय, ब्रह्म, ब्राह्मण, बुद्धबोधि, चंद्रसूर्य, दशरथ, गंगापाल, हंस, हस्ती, काक, कपि, क्षांति, काल्मषपिंडि, कुंभ, कुश, किन्नर, महाबोधि, महाकपि, महिष, मैत्रिबल, मत्स्य, मृग, मघादेवीय, पद्मावती, रूरु, शत्रु, शरभ, शश, शतपत्र, शिवि, सुभास, सुपारग, सुतसोम, श्याम, उन्मादयंती, वानर, वत्त कपोत, विश, विश्वंभर, वृषभ, व्याघ्री, यज्ञ, वृषहरणीय, लनुव, विनुर, पुष्कर* आदि ।

ये सब ग्रंथ संस्कृत और पाली भाषा में रचित हैं । बहुतों की सिंहली भाषा में टीका भी है । बहुतों का अनुमान है कि जातक प्रायः २००० वर्ष पहिले के रचे हुए हैं । इनमें कई एक आख्यायिकाएँ ऐसी हैं, जिनकी शैली पंचतंत्र या **ईसप** की आख्यायिकाओं से मिलती है और बहुत-सी ऐसी हैं जो पौराणिक आख्यायिकाओं को बिगाड़ कर बौद्धों के मतानुसार लिखी गई हैं ।

जानकीचरण (आ० का० १८२० ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि । *प्रेम प्रधान* तथा *सियाराम रस मंजरी* के रचयिता ।

जानकी मंगल—**तुलसीदास** का अवधी भाषा में एक काव्य (१५८६ ई० ?), जिसमें सीताराम का विवाह *वाल्मीकि रामायण* के अनुकूल है । राम के विवाह के साथ उनके अन्य तीन भाइयों का भी विवाह-वर्णन है ।

जानकी रसिक शरण (आ० का० १७०३ ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि । *अवधी सागर* के रचयिता ।

जाबाल—दे० *सत्यकाम जाबाल* ।

जाबालि—राजा दशरथ के मंत्री और गुरु (*वा० रा० बा० ६९*) । इन्होंने भरत के साथ चित्रकूट जाकर राम को वन से लौट आने और राज्य करने के लिये बहुत समझाया था (*वा० रा० अयो० १०८*) ।

जामवंत—दे० *जांबवत्* ।

जायस—रायबरेली ज़िले का एक ऐतिहासिक नगर जहाँ बहुत समय से सूफ़ी फ़कीरों की गद्दी है । प्रसिद्ध हिंदी-कवि **जायसी** यहीं के निवासी थे ।

जायसी—दे० *मलिक मुहम्मद जायसी* ।

जालंधर—एक दैत्य । इसका जन्म शिव के तृतीय नेत्र से अग्नि-रूप में हुआ । इंद्र की प्रार्थना पर शिव ने इसे समुद्र में छोड़ दिया । ब्रह्मा ने इसका नाम जालंधर रखा और इसे वर दिया कि शिव के अतिरिक्त इसे और कोई नहीं मार सकता (*स्कंद० २.४.१४, पद्म० उ० ९६–१०४*) । इसे समुद्र और गंगा का पुत्र भी माना गया है (*पद्म० उ० ३*) । यह बड़ा वीर था, इसने स्वर्ग तक पर अधिकार कर लिया । स्वर्गच्युत होकर इंद्र शिव की शरण में गये । जालंधर को वर प्राप्त था कि जबतक इसकी पतिव्रता पत्नी वृंदा का सतीत्व भंग नहीं होगा, तबतक इसकी मृत्यु नहीं होगी । विष्णु ने जालधंर-रूप धारण कर वृंदा का सतीत्व भंग किया । इसके बाद शिव ने जालंधर का वध कर

दिया। यह जानकर कि विष्णु ने वृंदा का सतीत्व भंग किया है, उसने विष्णु को शाप दिया कि राक्षस ही उनकी पत्नी का हरण करेगा। इसके पश्चात् वृंदा अग्नि में प्रवेश कर गई (*आ० रा० सारकांड ४. शिव० रुद्र० यु० २३*)।

जासूसी उपन्यास—हत्या या डाके आदि पर आश्रित कहानी वाला उपन्यास। एक जासूस द्वारा, जिसे ऐसी कोई सूचना नहीं मिली रहती जोकि पाठक के पास न हो, उस षड्यंत्र को खोजने का सफल प्रयास किया जाता है। इसमें आनंद उसी केंद्रीय घटना के समाधान में निहित रहता है। साथ ही, उपन्यास में ऐसी बात नहीं होती जिसका तर्कों, कारणों या विज्ञान की दृष्टि से समाधान न हो जाए। हिंदी-साहित्य में इस प्रकार के उपन्यासों का सूत्रपात **गोपालराम गहमरी** द्वारा हुआ।

जिनदत्त सूरि (वर्त्त० १०९७ ई०)—जैन कवि, *चाचरि, काल स्वरूप कुलक* और *उवएस रसायण* (उपदेश रसायन) के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

जिन पद्म सूरि (आ० का० १२०० ई०)—गुजराती जैन साधु। *थूलि भद्द फागु* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

जिन वल्लभ सूरि (आ० का० ल० ई० ग्यारहवीं शती)—जैन प्रचारक। *संघपट्टक* (प्रसिद्ध संस्कृत-ग्रंथ) और *वृद्ध नवकार* (प्राचीन हिंदी में) के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

जिब्रील—एक स्वर्गीय दूत जो खुदा का संदेश हर पैगंबर के पास लेकर आया करता है।

जीमूत—विराट की सभा में दुर्योधन द्वारा भेजा गया एक मल्ल, जिसे भीम ने मारा था (*म० वि० १५.५३ कुं*)।

जीवंती—एक वेश्या जो अपने तोते को 'राम-राम' रटाने से विष्णुलोक गई (*पद्म० कि० १५*)।

जीवन-चरित्र—किसी व्यक्ति का पुस्तकबद्ध जीवन-इतिहास। प्राचीन हिंदी-साहित्य में *गोसाईं चरित*, गोकुलनाथ-कृत *चौरासी और दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता*, नाभादास-कृत *भक्तमाल* तथा प्रियदास-कृत 'भक्तमाल की टीका' आदि जीवन-चरित्र हैं। पर जहाँ उस समय के जीवन-चरित्र महात्माओं के अतिरंजित प्रभावों और कार्यों से भरे पड़े हैं, आज के जीवन-चरित्र सत्य की खोज, ईमानदारी और संतुलन को अपनाते हुए चलते हैं। वर्ण्य जीवन की प्रमुख घटनाओं पर बल देना, उसके कारणों और परिणामों की खोज करना और अप्रधान घटनाओं को छाँट कर उसके जीवन का क्रमिक विकास उपस्थित करना आज के जीवन-चरित्र लेखक के आदर्श हैं। आधुनिक काल में बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखित *सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी*, ब्रजरत्नदास द्वारा लिखित *भारतेंदु की जीवनी* तथा श्रीहरि रामचंद्र दिवाकर द्वारा लिखित *संत तुकाराम* आदि जीवनियाँ उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त *गणेशशंकर विद्यार्थी, वीर केशरी शिवाजी, मीर क़ासिम, महात्माओं के दर्शन* आदि जीवनियाँ हैं। हज़ारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित *रवींद्र के बचपन की जीवनी* भी उल्लेखनीय है। कार्ल मार्क्स, लेनिन, स्टालिन, हिटलर, प्रिंस बिस्मार्क, सुभाषचंद्र बोस आदि की जीवनियाँ भी निकल चुकी हैं। मौलाना अबुलकलाम आज़ाद की जीवनी का भी हिंदी-अनुवाद हो चुका है। दे० *आत्मकथा*।

जीवाराम (आ० का० १८३० ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि। *पदावली* तथा *अष्टयाम* (गद्यमय) के रचयिता।

जुलेखा—मिश्र की राजकुमारी, जो **यूसुफ़** से प्रेम करती थी।

जृंभक—एक अस्त्र जिसे विश्वामित्र ने रामचंद्र को उस समय दिया था, जब उन्होंने ताड़का आदि का वध किया था।

जैतसी रानै पाबू जी रा छंद—किसी अज्ञात कवि का एक डिंगल-काव्य (१५३४ और १५४१ ई० के मध्य), जिसमें बीकानेर के राव जैतसी की बाबर के पुत्र कामरान पर विजय का वर्णन है।

जैन साहित्य—जैन कवियों (**स्वयंभूदेव, देवसेन, माइल्ल ध्वल, पुष्पदंत, ईश्वर सूरि, धनपाल** (१, २, ३), **सोमप्रभ सूरि, रामसिंह मुनि, धर्म सूरि, विजयसेन सूरि, विजयचंद्र सूरि, अभयदेव सूरि, चंद्रमुनि, हेमचंद्र, मेरुतुंग** आदि) द्वारा रचित साहित्य। इस साहित्य की महत्ता इस दृष्टि से विशेष है कि इसमें तत्कालीन अपभ्रंश से निकलती हुई प्राचीन हिंदी का रूप पाया जाता है। साथ ही इस साहित्य द्वारा इतिहास की भी विशेष रक्षा हुई, क्योंकि पौराणिक चरित्रों के अतिरिक्त ऐतिहासिक व्यक्तियों के चरित्र भी इस साहित्य में लिखे गये। जैन कवियों ने चरित्र-काव्य या आख्यान-काव्य के लिये अधिकतर चौपाई-दोहे की पद्धति ग्रहण की है। चौपाई-दोहे की इस परंपरा को जायसी आदि सूफ़ी कवियों ने प्रशस्त किया। इसका पूर्ण विकास *रामचरितमानस* में मिलता है।

जैनेंद्रकुमार (१९०५ ई०-)—उपन्यासकार और कहानी-लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *परख* (१९३०), *तपोभूमि* (१९३६, **ऋषभचरण जैन** के साथ), *सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी* (१९४०), *विवर्त* (उपन्यास), *वातायन, एक रात, नीलमदेश की राजकन्या, दो चिड़ियाँ* (कहानी-संग्रह) आदि हैं।

इनके सभी उपन्यास मनोवैज्ञानिक आधार पर लिखे गये हैं। ये केवल अनुकरण को कला नहीं मानते। इनके मत में उपन्यास में संसार का कुछ उठा हुआ, कल्पित रूप चित्रित किया जाना चाहिये। यद्यपि इनके उपन्यासों में समाज के प्रति नवयुवकों की विद्रोह-भावना के दर्शन मिलते हैं, तथापि ये कोरे बुद्धिवादी नहीं हैं। इनके उपन्यासों में सामाजिक प्रयोग करने की-सी प्रवृत्ति रहती है। इन्होंने स्त्रियों के नैतिक आदर्श को रूढ़िग्रस्त कसौटी से नहीं जाँचा है। इनकी कहानियों में भावुकता और करुण की मात्रा अधिक रहती है और वे कुछ आंतरिक तथ्य की ओर झुकती हुई दिखलाई पड़ती हैं। उनमें मनोवैज्ञानिक अध्ययन भी अधिक रहता है।

जैमिनि—एक आस्तिक ऋषि और 'पूर्व मीमांसा' के प्रणेता। 'ये व्यास के शिष्य जैमिनि हैं या अन्य' यह एक विवादास्पद विषय है। इनके दर्शन को 'जैमिनि दर्शन' भी कहते हैं। इनके दर्शन में उन विषयों पर विचार किया गया है, जिनका संबंध यज्ञ यागादि श्रुति-विहित विषयों से है। जैमिनि का यह मुख्य सिद्धांत है कि वेदविहित ही धर्म है और वेद से विरुद्ध स्मृत्यादि ग्रंथों के वचन अमान्य हैं।

जोधराज—एक कवि। *हम्मीररासो* (१८१८ ई०, **हम्मीरदेव** की वीरता का वर्णन) के रचयिता।

जौहर—राजपूतों में एक प्रथा, जिसके अनुसार नगर वा गढ़ में शत्रु-प्रवेश का निश्चय हो जाने पर स्त्रियाँ दहकती हुई चिता में जल जाती थीं।

ज्ञानदेव—दे० *ज्ञानेश्वर*।

ज्ञानद्वीप—**शेख नबी** (आ० का० १६१९

ई०) का एक प्रेम-काव्य, जिसमें राजा ज्ञानद्वीप और रानी देवजानी की प्रेम-कथा है। दे० *प्रेम-काव्य*।

ज्ञानेश्वर (ज्ञानदेव) (जन्म १२७५ ई०)—महाराष्ट्र के एक महान् संत, प्रसिद्ध शास्त्रवेत्ता और *ज्ञानेश्वरी* (*भगवद्गीता* की टीका, अनू०) के रचयिता।

ज्वर—शिव का एक सेवक। **बाणासुर** की सहायता के लिये इसने कृष्ण पर आक्रमण कर दिया था। कृष्ण के शीतज्वर नामक सेवक द्वारा यह बंदी बनाया गया और कृष्ण के संमुख लाया गया (*भा० १०.६३*)। इसकी उत्पत्ति शंकर के स्वेद से हुई थी। जब इसने सब देवों को त्रास देना आरंभ कर दिया, तब शंकर ने देवताओं की प्रार्थना पर इसे एक पृथक् स्थान दे दिया (*म० शां० २८६.३६-४७ कु०*)।

ज्वालादेवी—एक देवी जिनका स्थान काँगड़े ज़िले में है। तंत्र के अनुसार जब **सती** के शव को लेकर शिव घूम रहे थे, तब यहाँ पर सती की जिह्वा गिरी थी।

ज्वालेंद्रनाथ—राजा **गोपीचंद** के गुरु। गोपीचंद ने इन्हें अपराधी समझ कर कुएँ में डाल दिया था। **गोरखनाथ** के कहने पर गोपीचंद ने इन्हें बाहर निकाला। प्रसन्न होकर इन्होंने गोपीचंद को अमरत्व का आशीर्वाद दिया। दे० *नाथ संप्रदाय*।

झ

झरना—**जयशंकर प्रसाद** की १९२४ से १९२७ ई० तक की कविताओं का संग्रह (१९२७)।

झाँसी की रानी—दे० *लक्ष्मीबाई*।

झूलना—१ मुनि राम गुनि, बान युत गल, झूलन प्रथम, मतिमान (२६ (७, ७, ७, ५) मा० छंद, अंत ग ल)। उ०—यदु बंस प्रभु, तारण तरण, करुणायतन, भगवान। जिय जानि यह, पछिताय फिर, क्यों रहत हौ, अनजान॥ २ सैंतीस यगांत यति, दिशा दस दिशा मनि, जानि रचिये द्वितीय झूलना को (३७ (१०, १०, १०, ७) मा० छंद, अंत य)। उ०—जैति हिमबालिका, असुरकुलघालिका, कालिका मलिका सुरन हेतू।

ट

टोडरमल (१५२३-८६ ई०)—**अकबर** के मंत्री जो प्रायः नीति-संबंधी पद्य-रचना करते थे। इनकी स्फुट रचनाएँ प्राप्त हैं। इन्होंने फ़ारसी लिपि को चलाया।

टॉल्स्टॉय (Tolstoy) (१८२८-१९१० ई०)—एक प्रसिद्ध रूसी लेखक, जिनकी कुछ रचनाएं *युद्ध और शांति*, *अन्ना कारेनिन*, *महापाप*, *पुनर्जीवन*, *शराबी* (उपन्यास), *जिंदालाश*, *तलवार की करतूत*, *अंधेरे में उजाला* (नाटक), *प्रेम प्रभाकर*, *टॉल्स्टॉय की कहानियाँ* (कहानियाँ), आदि नाम से अनूदित हैं। प्रत्यक्ष तथा गांधी-साहित्य के माध्यम द्वारा इनकी विचारधारा का आदर्शोन्मुख हिंदी-साहित्य पर प्रभाव पड़ा है।

ठ

ठाकुर, असनीवाले प्रथम (वर्त्त० १६४३ ई०)—एक रीति-कवि, जिनकी कुछ-एक फुटकर कविताएँ ही मिली हैं।

ठाकुर, असनीवाले द्वितीय (र० का० ल०

१८०३ ई०)—**ऋषिनाथ** कवि के पुत्र, **सेवक** कवि के पितामह, काशिराज के संबंधी देवकीनंदन के आश्रित एक रीति-कवि। *सतसई बरनार्थ* (*बिहारी सतसई* की टीका) के रचयिता।

ठाकुर बुँदेलखंडी (१८२६-१८२३ ई०)—काकोरी निवासी, जैतपुर-नरेश के आश्रित एक कवि। इन्होंने अपनी कविता में लोकोक्तियों का बड़ा अच्छा प्रयोग किया है। इनकी कविता बड़ी सरस और स्वाभाविक होती है। ये बड़े स्वतंत्र प्रकृति के और देश-प्रेमी थे। कभी-कभी **पद्माकर** से इनकी नोंक-झोंक हो जाया करती थी।

ड

डमरू—हर हर सरस रटत नस मल सब डम डम डमरू बजत शिव बम बम (हर ११+हर ११+सर ५+सर ५=३२ व० छंद, सर्व लघु)। उ०—रहत रजत नग नगर न गज तट गज खल कलगर गरल तरल धर।

डॉन क्विक्सॉट—**सर्वान्तेज़** का स्पेनिश भाषा में एक प्रसिद्ध उपन्यास (प्रथम भाग १६०५ ई०, द्वितीय १६१५) (अनू० *विचित्र वीर*)। विश्व के प्रमुख उपन्यासों में इसका स्थान है।

डॉयल, कॉनन (१८५६-१९३० ई०)—एक अंग्रेज़ी लेखक, जो अपनी जासूसी (डिटेक्टिव) कहानियों के लिये प्रसिद्ध हैं।

डारविन, चार्ल्ज़ (Darwin, Charles) (१८०६-८२ ई०)—एक अंग्रेज़ वैज्ञानिक, विकासवाद सिद्धांत के प्रवर्त्तक। इनके ग्रंथों में *ऑन दी ऑरिजिन ऑव् स्पीशीज़ बाइ मीन्ज़ ऑव् नैच्यूरल सिलेक्शन* (*On the Origin of Species by means of Natural Selection*) प्रसिद्ध है। इनके विकासवाद ने वैज्ञानिक जगत् को अत्यधिक प्रभावित किया और प्रत्येक क्षेत्र में इस वाद को लागू करने का अनेक वैज्ञानिकों तथा दार्शनिकों ने प्रयत्न किया।

डॉस्टोयवस्की (Dostoevsky) (१८२१-८१ ई०)—एक रूसी उपन्यासकार और कहानीकार। इनका सर्वोत्कृष्ट उपन्यास *पवित्र पापी* के नाम से अनूदित है।

डिंगल—राजस्थानी भाषा का साहित्यिक रूप।

डिफ़ो, डेनयल (Defoe, Daniel) (१६६० ?-१७३१ ई०)—एक अंग्रेज़ी उपन्यासकार। *रोबिन्सन क्रूसो* (अनू०) के रचयिता।

डिम—रूपक का एक प्रधान भेद। इसमें चार अंक तथा सोलह नायक (देवता, दैत्य वा अवतार) होते हैं। जादू, और रौद्र रस प्रधान रहता है। शृंगार और हास्य रस वर्जित हैं।

डिल्ला—डिल्ला अंत भ, मात्रा सोलह (१६, (८, ८) मा० छंद, अंत भ)। उ०—पुनि मन वचन करम रघुनायक चरण कमल बंदहुँ सब लायक।

डोंबिपा (वर्त्त० ८४० ई० ?)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

ढ

ढाई—पचीस प्रकृतियाँ। दे० *पंचजना*।

ढुंढा—दे० *होलिका*।

ढोला मारवणी चउपही—हरराज का डिंगल में एक कल्पित प्रेम-काव्य (१५६० ई०)। बीकानेर में इस प्रेम-कथा पर दोहों में ढोलै

मारू रा दूहा नामक ग्रंथ की चार प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं।

इसमें नलवरगढ़ के राजकुमार साल्ह (ढोला) और मारवाड़ की राजकुमारी मारव की प्रेम-कथा है।

ढोलै मारू रा दूहा—दे० *ढोला मारवणी चउपही*।

ण

णय णांदि मुनि (र० का० १६४३ ई० के अनंतर)—जैन कवि और *सुदंसण चरिउ* (सुदर्शन चरित्र) के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

त

तंतिपा (वर्त्त० ई० ६ वीं शती)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

तक्षक—कश्यप और **कद्रू** का पुत्र एक नाग। **राजा परीक्षित्** को इसीने मारा था। अपने पिता की हत्या का बदला लेने के लिये **जनमेजय** ने नाग-यज्ञ किया, जिसमें नाग आ-आ कर भस्म होने लगे। तक्षक इंद्र के पास जा छिपा, पर जब इंद्र भी तक्षक के साथ यज्ञ की ओर खिंचने लगे, तब इंद्र ने इसे अपने पास से हटा दिया। **वासुकि** की आज्ञा से आस्तीक ने जनमेजय से यज्ञ बंद करने की प्रार्थना की। अंत में यज्ञ बंद हुआ और तक्षक की प्राण-रक्षा हुई। (*म० आ० ५१-५८*)। दे० *अग्निदेव*।

तक्षशिला—दाशरथि भरत के पुत्र तक्ष द्वारा स्थापित एक प्राचीन नगर जो रावलपिंडी के पास था। यह नगर **गांधार** देश की राजधानी था। बहुत समय तक यह नगर पश्चिम भारत का प्रधान विद्यापीठ रहा। चाणक्य यहीं का स्नातक था।

तगण—दे० *गण*।

तद्गुण—एक अर्थालंकार जिसमें कोई वस्तु अपने गुण को त्याग कर समीपवर्त्ती किसी दूसरी वस्तु के उत्कृष्ट गुण को ग्रहण कर लेती हो। उ०—सिय तुअ अंग रंग मिलि अधिक उदोत, हार बेलि पहिरावौ, चंपक होत। यहाँ सीता के देह के रंग के संसर्ग से श्वेत हार-बेली का रक्तिम चंपक वर्ण-सा हो जाना बताया गया है।

तन्वी—भातन सोभा, भनिय अशुभ सी, जो नहिं सेवत निज पद तन्वी (भ त न स भ भ न य =२४ व० छंद)। उ०—भात न सोभा, भन यह सुबुधा, यद्यपि सुंदर मनहर तन्वी।

तपती—सूर्य और छाया की पुत्री। इनका विवाह पुरुवंशी राजा ऋक्ष के पुत्र संवरण से हुआ था। इनके गर्भ से राजा **कुरु** का जन्म हुआ। इसलिये कौरव और पांडव 'तपती-नंदन' कहलाते हैं (*भा० ६.२२*)।

तमसा—१ अवध में टौंस नामक नदी। यह **सरयू** नदी के १२ मील पश्चिम में बहती है। वाल्मीकि ने अपना प्रारंभिक जीवन इस नदी के किनारे बिताया था (*वा० रा० बा० २*)। २ रीवा में टौंस नामक नदी (*वा० रा० अयो० ४६*)।

तमाल—उन्निस कल गल यति है अत तमाल (१६ (यति अंत) मा० छंद, अंत ग ल)। उ०—राक्षस-कुल-नाशक शिशुपाल कराल! कहाँ गये तुम छाँडि हमें नंदलाल।

तरलनयन—न न न न भई तरलनयन (न न न न=१२ (६,६) व० छंद)। उ०—जननि

जनक सुहृद नितहु, करत रहत सहज हितहु ।

तरुवर—हठयोग के अनुसार मेरुदंड ।

तांडव—पुरुष का नृत्य । यह शिव का प्रलय नृत्य है, जिसमें कठोर मुद्राएँ होती हैं । कोई कहते हैं कि इस नृत्य का प्रवर्त्तक नंदी है । किसी-किसी के अनुसार तंडु नामक ऋषि ने पहिले-पहिले इसकी शिक्षा दी, इसी से इसका नाम तांडव पड़ा है । स्त्रियों के नृत्य को लास्य कहते हैं । लास्य तांडव नृत्य का अनुद्धत और कोमल स्वरूप है ।

ताज (र० का० प्रारंभ १६४४ ई०)—करौली निवासी एक कृष्ण-भक्त मुसलमान महिला जिनके फुटकर कवित्त, सवैये आदि ही प्राप्त हुए हैं । **मीराबाई** की भाँति इन्होंने भी कृष्ण-प्रेम में तन्मय होकर अपने अंतर के उद्‌गार अत्यंत मार्मिक रूप में व्यक्त किये हैं ।

ताटंक—सोलह चौदह कल यति भाखहिं, है ताटंका मा अंता (३० (१६,१४) मा० छंद, अंत म) । उ०—देव ! तुम्हारे कई उपासक, कई ढंग से आते हैं, सेवा में बहुमूल्य भेंट वे, कई रंग की लाते हैं ।

ताड़का—सुकेतु नामक यक्ष की पुत्री, सुंद की पत्नी और **मारीच** की माता । अगस्त्य ऋषि के शाप से यह राक्षसी बनी थी । **विश्वामित्र** की आज्ञा से राम ने इसका वध किया था (*वा० रा० बा० २५-२६*) ।

तानसेन—**अकबर** के नवरत्नों में से एक और विश्वविख्यात गायनाचार्य । ये **हरिदास** के शिष्य थे ।

तारकासुर—एक असुर । इसने तपस्या करके **ब्रह्मा** से यह वर प्राप्त कर लिया कि शिव-पुत्र के अतिरिक्त इसका कोई वध न कर सके । यह समझता था कि न शिव के पुत्र होगा और न यह मारा जाएगा । जब इसके अत्याचार बढ़ गये, तब देवताओं ने शिव-तपस्या भंग करने के लिये **कामदेव** को भेजा । इधर **पार्वती** शिव को पति-रूप में प्राप्त करने के लिये तपस्या कर रही थीं । उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिव ने उनसे विवाह कर लिया । शिव को **स्कंद** नामक पुत्र प्राप्त हुआ । जब यह बालक सात दिन का था, इसने तारकासुर का वध किया (*मत्स्य० १३०-३६, १४५*) ।

तारा—१ सुषेण वानर की पुत्री, बालि की पत्नी तथा अंगद की माता (*वा० रा० कि० १५-२५*) । ये पंचकन्याओं में हैं । २ बृहस्पति की पत्नी जिनसे चंद्रमा ने इनकी इच्छानुसार बुध नामक पुत्र उत्पन्न किया था ।

तालकेतु—पातालकेतु राक्षस का अनुज । दे० *मदालसा* ।

तितली—**जयशंकर प्रसाद** का एक उपन्यास (१६३४ ई०) ।

इस उपन्यास में भारतीय नारीत्व और सतीत्व को मत्तिमान करके लेखक ने भारतीय दांपत्य जीवन के माधुर्य और स्निग्धता के बड़े ही सुंदर चित्र अंकित किये हैं । मधुबन की प्रतीक्षा में तितली ने १४ वर्ष बिताए और जीवन-संग्राम में जुटी रही । तितली के साथ शैला को चित्रित करके लेखक ने भारतीय तथा पाश्चात्य दोनों के संस्कारों की बड़ी सुंदर तुलना की है । शैला का इंद्रदेव से परिणय यह दिखलाता है कि सच्चा प्रेम देश, जाति और वर्ण सबके बंधनों से ऊँचा है । इंद्रदेव के परिवार वालों की कूटनीति और असंतोष का चित्रण करके उपन्यासकार ने सम्मिलित कुटुंब की

विषमताओं का दिग्दर्शन कराया है। *कंकाल* में यथार्थवाद है, किंतु *तितली* में आदर्शवाद का पुट दे दिया गया है। *तितली* में ग्रामीण दृश्यों का भी अच्छा चित्रण किया है और ग्रामीण समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। परंतु इसके पात्र शहर में रहकर ही ग्राम की चिंता करते हैं।

तिब्बत—एक देश जो हिमालय के उत्तर में है।

तिमिध्वज—एक राक्षस। इंद्र ने इसका वध राजा दशरथ की सहायता से किया था (*वा० रा० अयो०* ६)।

तिलक—एक पुष्प। कवि-प्रसिद्धि है कि सुंदरियों के देखने मात्र से ही यह कुसुमित हो जाता है।

तिलतंदुल न्याय—चावल और तिल दोनों मिले रहते हैं, किंतु दिखलाई स्पष्टतः पृथक्-पृथक् पड़ते हैं। अतः जहाँ कहीं दो वस्तुएँ या दो व्यक्ति मिले हुए हों, परंतु उनके भेद पृथक्-पृथक् स्पष्ट हों, वहाँ इस उक्ति का प्रयोग होता है।

तिलोत्तमा—एक अप्सरा, जो अपने सौंदर्य के लिये विशेष प्रसिद्ध है, क्योंकि संसार की सभी सुंदर वस्तुओं से तिल-तिल सौंदर्य का संचय करके **विश्वकर्मा** ने इसका निर्माण किया था। देवताओं के कहने से ब्रह्मा ने इसे **सुंद** और **उपसुंद** को मोहने के लिये भेजा था। देखते ही दोनों इसपर मोहित हो गये और इसके लिये आपस में लड़कर मर गये (*म० आ०* २११-१२)।

तिलोपा (वर्त्त० ९५० ई०?)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

तुंडीरमंडल (तोंड-मंडल)—द्रविड़ देश का एक भाग जिसकी राजधानी कांचीपुर थी।

तुक—किसी छंद के चरणों के अंतिम अक्षरों का मेल। अंत्यानुप्रास।

तुकाराम (१६०७-४९ ई०)—प्रसिद्ध महाराष्ट्री भक्त-कवि, उपदेष्टा, जिनसे शिवाजी दीक्षित होना चाहते थे। इनके अभंग (पद) महाराष्ट्र में पर्याप्त प्रसिद्ध हैं। इन्होंने हिंदी में भी रचना की है।

तुबा—इस्लाम के अनुसार स्वर्ग का एक वृक्ष जो बड़ा पवित्र समझा जाता है।

तुर्गनेव (Turgenev) (१८१८-८६ ई०)—प्रसिद्ध रूसी उपन्यासकार जिनका एक उपन्यास *संघर्ष* नाम से अनूदित है। इनकी कुछ कहानियाँ भी अनूदित हैं।

तुलसी—धर्मध्वज-माधवी की पुत्री और **शंखचूड़** नामक असुर की पत्नी। एक अन्य मत से यह **वृंदा** के शरीर के पसीने से उत्पन्न हुई (*पद्म० उ०* १५)। इसके पातिव्रत्य के बल से शंखचूड़ देवों से पराजित नहीं किया जा सकता था। विष्णु ने कपट से इसका सतीत्व भंग किया। यह जानकर कि विष्णु ने इसका सतीत्व नष्ट किया है, इसने उन्हें शिला हो जाने का शाप दिया। अतः विष्णु शालिग्राम हुए (*ब्रह्मवै०* २.१३-२१)। कामुक हो एक बार यह गणपति के पास गई। गणपति ने इसे वृक्ष हो जाने का शाप दिया। **समुद्रमंथन** के समय जब अमृत बाहर निकला तो उसकी कुछ बूंद पृथ्वी पर गिर गईं। उन्हीं बूँदों में से तुलसी निकली। ब्रह्मा ने इसे विष्णु को दे दिया था (*पद्म० सृ०* ५८-५९, *स्कंद०* २.४.८)।

तुलसीदास—हिंदी के उत्कृष्ट कवि। *गोसाईं चरित्र* और रघुबरदास-कृत *तुलसी चरित* के अनुसार इनका जन्म सं० १५५४ (१४९७ ई०) में हुआ। इस संवत् को ग्रहण करने से इनकी

आयु १२६ वर्ष की बैठती है। *शिवसिंह-सरोज* में लिखा है कि तुलसी सं० १५८३ (१५२६ ई०) के लगभग उत्पन्न हुए थे। मिर्ज़ापुर निवासी रामभक्त रामगुलाम द्विवेदी के आधार पर डा० ग्रियर्सन ने तुलसी का जन्म सं० १५८९ (१५३२ ई०) माना है। *शिवसिंह-सरोज* और तुलसी-चरित के अनुसार इनका जन्म-स्थान राजापुर (ज़िला बाँदा, उत्तर प्रदेश) है। यही पर तुलसी के हाथ की लिखी हुई *रामचरितमानस* की प्रति विद्यमान कही जाती है। रामनरेश त्रिपाठी के अनुसार तुलसी का जन्म-स्थान चित्रकूट के पास सूकरक्षेत्र अर्थात् सोरों है। अब लोगों का यह मत होता जाता है कि तुलसीदास का जन्म सोरों में हुआ और पीछे से राजापुर में जा बसे। बाँदा के गज़ेटियर में भी लिखा है कि राजापुर ग्राम सोरों के संत तुलसीदास द्वारा बसाया गया था। तुलसीदास के भाई नंददास के वंशज भी सोरों में रहते हैं। जनश्रुति के अनुसार तुलसीदास के पिता का नाम आत्माराम तथा माता का नाम हुलसी था। इनका जन्म सरयूपारी ब्राह्मण कुल में हुआ था। *गोसाईं चरित्र* में लिखा है कि जन्म के समय तुलसीदास पाँच वर्ष के बालक के समान थे और इनके पूरे दाँत भी थे। केवल 'राम' शब्द ही इनके मुँह से सुनाई पड़ा। अतः इनका नाम 'रामबोला' पड़ा। राक्षस समझ पिता ने बालक की उपेक्षा की। माता की मृत्यु के उपरांत बालक को मुनिया नामक एक दासी को पालने-पोसने के लिये दे दिया और वह इसे लेकर अपने ससुराल चली गई। पाँच वर्ष पश्चात् जब मुनिया भी मर गई, तब राजापुर में बालक के पिता के पास संदेश भेजा गया, किंतु उन्होंने बालक लेना स्वीकार न किया। अंत में बाबा नरहरिदास ने तुलसी को अपने पास रख लिया और कुछ शिक्षा-दीक्षा दी। वे इन्हें रामकथा सुनाया करते थे। नरहरिदास के साथ तुलसी काशी में आकर पंचगंगा घाट पर **रामानंद** के स्थान पर रहने लगे। वहाँ पर शेषसनातन नामक एक परम विद्वान् ने तुलसी को वेद, वेदांग, दर्शन, इतिहास-पुराण आदि में प्रवीण कर दिया। १५ वर्ष के अध्ययन के पश्चात् तुलसी घर लौटे, पर वहाँ इनके परिवार में कोई नहीं रह गया था और घर भी गिर गया था।

इनका विवाह दीनबंधु पाठक की पुत्री रत्नावली से हुआ था। अपनी पत्नी में ये बहुत अनुरक्त थे और उसे पीहर न भेजते थे। एकबार वह इनकी अनुपस्थिति में अपने भाई के साथ पीहर चली गई। आँधी-तूफ़ान और बढ़ी यमुना की परवाह न कर ये भी अर्द्धरात्रि में वहाँ पहुँचे। इसपर पत्नी ने इन्हें फटकार दी। ये तुरंत लौट पड़े और विरक्त हो गये। वैराग्य लेकर इन्होंने १९ वर्ष तक देशाटन और तीर्थयात्रा की। अयोध्या, चित्रकूट, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम्, बदरिकाश्रम, कैलास और मानसरोवर भी गये। कहते हैं चित्रकूट में ही सूरदास और मीरा का इनसे मिलन हुआ था। यह भी कहा जाता है कि ये अपने बड़े भाई नंददास से मिलने ब्रजभूमि गये थे। पर्यटन करते हुए एकबार इनकी भेंट अपनी पत्नी से हुई थी। इन्होंने *रामचरितमानस (रामायण)* को अयोध्या में सं० १६३१ (१५७४ ई०) में लिखना प्रारंभ किया, किंतु उसका एक बड़ा भाग काशी में ही पूरा हुआ। काशी में ही तुलसीदास ने अपने जीवन का एक बड़ा भाग बिताया। इनका अंतिम जीवन दुःखपूर्ण था। इनकी मृत्यु सं० १६८० (१६२३ ई०) में असी और गंगा के संगम पर बनारस में हुई थी।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की खोज रिपोर्ट के अनुसार तुलसी के ३७ ग्रंथों का पता लगा है, पर इनमें से केवल १२ ग्रंथ

(५ बड़े और ७ छोटे) प्रामाणिक माने हैं। सभा ने उनका प्रकाशन 'तुलसी ग्रंथावली' खंड १ और खंड २ में किया है। रामगुलाम द्विवेदी ने इन्हीं १२ ग्रंथों को तुलसी-कृत माना है—(खंड १)—*रामचरितमानस, रामलला नहछू, वैराग्य संदीपिनी, बरवै रामायण, पार्वती मंगल, जानकी मंगल*। (खंड २)—*रामाज्ञा प्रश्नावली, दोहावली, कवितावली, गीतावली, श्रीकृष्ण गीतावली* और *विनयपत्रिका*। पर *शिवसिंह-सरोज* में १० और ग्रंथों के नाम गिनाए गये हैं, यथा—*रामसतसई, संकटमोचन, हनुमद्बाहुक, रामसलाका, छंदावली, छप्पय रामायण, कड़खा रामायण, रोला रामायण, झूलना रामायण* और *कुंडलिया रामायण*। इनमें से कई एक तो मिलते ही नहीं हैं। *हनुमद्बाहुक* को रामगुलाम ने *कवितावली* के अंतर्गत माना है। कुछ विद्वान् *राम सतसई* के कुछ अंश तुलसी-कृत मानते हैं।

तुलसी हिंदी-साहित्य-गगन के सूर्य माने जाते हैं। इनकी प्रतिभा प्रखर तथा अनुभूति सूक्ष्म है। इस भक्त महाकवि की रचनाओं में इनसे पूर्व की सभी काव्य-भाषाओं (अवधी, ब्रज आदि), सभी काव्य-शैलियों, भाव, छंद एवं विषय आदि का समाहार है।

तुलसी ने ब्रह्म की व्यापकता के लिये ब्रह्म को **अद्वैतवाद** का रूप अवश्य दिया और उसे माया से समन्वित किया भी, पर ये उसे उस रूप में ग्रहण नहीं कर सके। ये भक्त थे, अतः इन्हें भक्ति का सहारा लेकर ब्रह्म को **विशिष्टाद्वैत** में निरूपित करना पड़ा। तुलसी का जीवन के प्रति समन्वयवादी दृष्टिकोण है। ये जीवन में **मलूकदास** आदि की भाँति लोक पक्ष की पूर्णतया उपेक्षा नहीं करते। मानव-हृदय की सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रवृत्तियों का भी तुलसी ने गहरा अध्ययन किया था और मानवी संसार की विभिन्न परिस्थितियों की मनोदशा का इन्हें अधिकारपूर्ण ज्ञान था। तुलसी का संदेश राम-भक्ति है—'जन्म जन्म रति राम पद।' राम-भक्ति का अर्थ है रामाश्रित जीवन—संयम, शील एवं सदाचार जिसके आदर्श हैं। राम-भक्ति के माध्यम से कृष्ण-भक्तों द्वारा प्रचारित शृंगारिक भावनाओं को हटाकर, कर्मयोग की प्रेरणा इन्होंने अपने साहित्य के द्वारा दी है। दे० *रामचरितमानस* तथा *रामकाव्य*। विशेष दे० श्यामसुंदरदास-कृत *गोस्वामी तुलसीदास*, रामचंद्र शुक्ल-कृत *गोस्वामी तुलसीदास*, चंद्रबली पांडेय-कृत *तुलसीदास*, माताप्रसाद गुप्त कृत *तुलसीदास*, रामनरेश त्रिपाठी-कृत *तुलसीदास और उनका काव्य*।

तुलसीराम शर्मा 'दिनेश'—आधुनिक कवि और कृष्ण-चरित्र संबंधी एक काव्य-ग्रंथ के रचयिता।

तुलसी साहब, हाथरस वाले (जन्म १७८८ ई०)—एक संत, आवापंथ के प्रवर्त्तक। *घट-रामायण, शब्दावली* तथा *रत्नसागर* के रचयिता। ये बड़े विद्वान् थे।

तुल्ययोगिता—एक अर्थालंकार, जिसमें अनेक धर्मों में एकता हो। उ०—उस मृदु तनु लतिका के आगे, है शशि, शिरीष, कदली कठोर। इसके तीन भेद हैं—

१ *प्रथम तुल्ययोगिता*—में अनेक उपमेयों व उपमानों का एक ही धर्म एक ही बार कहा जाता हो। उ०—फूले सखा सखी नैन। यहाँ सखा सखी उपमेय हैं, और उनके नेत्रों का धर्म 'फूलना' एक ही है, तथा एक ही बार कहा गया है।

२ *द्वितीय तुल्ययोगिता*—में हित और अहित में तुल्य वृत्ति का कथन हो। उ०—प्रफुल्लता प्राप्त जिसे न राज्य से, न म्लांता भी वनवास से जिसे। मुखांबुज श्री रघुनाथ की वही, सुख-प्रद हो हमको सदैव ही। यहाँ राज्य प्राप्त

होने व वनवास जाने में राम की समान वृत्ति दर्शायी गई है।

३ *तृतीय तुल्ययोगिता*—में उत्कृष्ट गुण वाले उपमानोंके साथ उपमेय का समान वर्णन हो। उ०—मित्र, मातु, पितु, बंधु, गुरु, साहब मेरे राम। यहाँ राम में ही पिता आदि उत्कृष्ट गुण कहे गये हैं।

तुष्यतु दुर्जन न्याय—किसी की बात में कोई अन्य दोष दिखलाने के लिये जब थोड़ी देर के लिये उसकी बात मान ली जाती है, तब इस उक्ति का प्रयोग होता है।

तृणावर्त्त—कंस का भेजा हुआ एक दैत्य, जो आँधी-बवंडर का रूप धारण कर कृष्ण के वध के लिये ब्रज में आया था। बालकृष्ण ने इसका गला घोंटकर इसे मार डाला था (*भा० १०.७*)।

तोटक—ससिसों सुअलंकृत तोटक है (स स स स=१२ व० छंद)। उ०—जय राम सदा सुख धाम हरे, रघु नायक सायक चार धरे।

तोताराम (१८४७-९४ ई०)—अलीगढ़ से निकलने वाले 'भारतबंधु' (पत्र) के संचालक, 'भाषा-संवर्द्धिनी सभा' के संस्थापक, और *कीर्ति-केतु* (नाटक) *केटोकृतांत* (अंग्रेजी के *केटो* का अनुवाद) तथा *स्त्री सुबोधिनी* के रचयिता।

तोमर—१ राजपूत क्षत्रियों का एक प्राचीन राजवंश २ बारह कल गल तोमर (१२ मा० छंद, अंत ग ल)। उ०—तब चले बाण कराल, फुंकरत जनु बहु ब्याल।

तोषलक—कंस की सभा का एक मल्ल, जो कृष्ण द्वारा मारा गया (*भा० १०.४४*)।

तोषनिधि (र० का० ल० १७३४ ई०)—शृंग-वेरपुर (इलाहाबाद) निवासी, एक रीति-कवि। *सुधानिधि* (प्रसिद्ध रस-भेद और भाव-भेद संबंधी ग्रंथ), *विनयशतक* तथा *नखशिख* के रचयिता। इनके लक्षण सरल और शास्त्र-सम्मत हैं तथा उदाहरण बड़े सरस और हृदयग्राही हैं।

त्रिकल—तीन मात्राओं का शब्द।

त्रिकुटी—योग के भाषानुसार भृकुटि के मध्य का स्थान। इसे 'धनुष' भी कहते हैं।

त्रिकूट—१ क्षीरोद सागर में एक पर्वत, जिस-पर लंका बसी हुई मानी जाती है। योग की भाषानुसार यह साधना-पीठ है जहाँ रूपसुंदरी के रूप में भगवती का निवास माना जाता है। २ एक कल्पित पर्वत जहाँ विद्याधर, किन्नर, गंधर्व आदि क्रीड़ा करने आते हैं।

त्रिगर्त—जालंधर का प्राचीन नाम।

त्रिजटा—रावण के अंतःपुर की एक राक्षसी जो एक मत से विभीषण की बहिन थी। सीता के साथ इसका व्यवहार बहुत अच्छा था। यह बड़ी धर्मात्मा, विवेकशील तथा प्रियंवदा थी।

त्रिपथ—कर्म, ज्ञान और उपासना इन तीनों मार्गों का समूह।

त्रिपथगा—**गंगा**। हिंदुओं का विश्वास है कि गंगा तीनों लोकों में बहती है।

त्रिपुर—सोने, चाँदी और लोहे के तीन नगर, जो **तारकासुर** के तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली नामक पुत्रों ने **मय** दानव से बनवाये थे। जब इन असुरों का अत्याचार बढ़गया तब शिव ने एक ही बाण से इन नगरों को नष्ट कर दिया और **त्रिपुरारि** कहलाने लगे (*मत्स्य० १३०-३८, १४५*)। इन्होंने पीछे से तीनों राक्षसों को भी मार डाला। त्रिपुर नगर जब्बलपुर के ७ मील पश्चिम में नर्मदा नदी के तीर पर कहे जाते हैं।

त्रिपुरासुर—**तारकासुर** के तारकाक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली नामक तीन पुत्र। दे० *त्रिपुर*।

त्रिभंगी—१ दस वसु वसु अंगा, यति ज न रंगा, छंद त्रिभंगा गांत भला (३२ (१०,८, ८,६) मा० छंद, अंत ग)। इसमें जगण वर्जित है। उ०—मोहन बनवारी, गिरिवरधारी, कुंज-बिहारी, पग परिये। २ न निसर ससि भमि सगरि लखत सखि ससिवदनी ब्रज की रंगन रंगी श्याम त्रिभंगी (६ न, स स भ म स ग =३४ व० दंडकछंद)। उ०—सजल जलद तनु लसत विमल तनु श्रमकन त्यों झलको है उमगो है बुंद मनो है। ३ तीन स्थान से टेढ़ा खड़ा होने के कारण कृष्ण का एक नाम। यथा—बसत त्रिभंगी लाल।

त्रिमूर्त्ति—१ **ब्रह्मा**, **विष्णु** और **महेश** ये तीनों देवता। २ वह मूर्ति जिसपर ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन तीन देवताओं की मुखाकृति हो, जैसे हस्तिगुफा में।

त्रिया विनोद—मुरली कवि का एक काव्य (लि० का० १७४३ ई०), जिसमें एक व्यभिचारिणी स्त्री की काल्पनिक प्रेम-लीला है।

त्रिलोचन (जन्म १२६७ ई०)—पंढरपुर निवासी एक संत, जिनके पद *ग्रंथ साहब* में पाए जाते हैं। जब अनेक साधु-संत इनके यहाँ आने लगे, तो कहते हैं कि ईश्वर ने स्वयं सेवक बनकर इनकी सहायता की थी।

त्रिवेणी—१ प्रयाग, जहाँ गंगा, यमुना तथा सरस्वती का संगम है। २ हठयोग के अनुसार इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नामक तीन नाड़ियों का संगमस्थान। ३ गंडकी, देविका और ब्रह्मपुत्री नदियों का संगम। ४ तामोर, अरुण और संकोशी नदियों का संगम।

त्रिशंकु—एक सूर्यवंशी राजा। वसिष्ठ तथा उनके पुत्रों ने इनको सदेह स्वर्ग भेजना अस्वीकार कर दिया, पर विश्वामित्र ने इनको सदेह स्वर्ग भेज दिया। इंद्र ने इनको स्वर्ग से नीचे धकेल दिया। विश्वामित्र ने अपने तपोबल से इनको बीच में ही रोक दिया। तभी से त्रिशंकु पृथ्वी और आकाश के बीच में लटके हैं (*वा० रा० बा० ५७-६०*)।

त्रेतायुग—चार युगों में दूसरा जो १२९६००० वर्ष का माना गया है। **रामचंद्र** इसी युग में वर्त्तमान थे।

त्वष्टा—दे० *विश्वकर्मा*।

थ

थान कवि—रायबरेली निवासी एक रीतिकवि। अपने आश्रयदाता दलेलसिंह के नाम पर *दलेल प्रकाश* (१७९१ ई०) के रचयिता। इनकी यह रचना उत्तम कोटि की है।

द

दंडक—१ साधारणतः बड़े-बड़े छंद, जिनकी जातियों की गणना नहीं की जा सकी है। वर्णिक छंदों में १ वर्ण से २६ वर्णों तक के छंदों और उनके भेदों तथा स्वरूपों की गणना की गई है। इससे अधिक वर्णों वाले छंद वर्ण-दंडक कहे जाते हैं। इसी प्रकार ३२ मात्राओं से अधिक मात्राओं वाले छंद मात्रादंडक कहे जाते हैं। वर्णदंडकों के साधारण दंडक और मुक्तक दंडक दो भेद होते हैं। प्रथम में नियमित गणव्यवस्था वाले २६ से अधिक अक्षर होते हैं, द्वितीय में गणव्यवस्था नहीं होती,

केवल २६ से अधिक अक्षर होते हैं। २ एक सूर्यवंशी राजा। एक बार इसने गुरु-पुत्री से बलात्कार किया। इसपर गुरु ने शाप द्वारा इसके राज्य को वन बना दिया। यह वन दंडकारण्य कहलाया (*वा० रा० उ० ८०-८१*)।

दंडकारण्य—महाराष्ट्र, जिसमें नागपुर भी सम्मिलित है। वनवास के समय राम यहाँ बहुत समय तक रहे थे। रामायणानुसार यह प्रदेश विंध्य और सैबल पर्वतों के मध्य में है। इसके एक भाग को **जनस्थान** कहते थे। पार्जिटर का कथन है कि बुंदेलखंड से लेकर कृष्णा नदी तक के सब वनों को दंडकारण्य कहते थे। भवभूति ने दंडकारण्य को जनस्थान के पश्चिम में माना है (*उत्तररामचरित अंक १*)।

दंडी (आ० का० ६०० ई० ?)—संस्कृत लेखक और *दशकुमारचरित* (अनू०), *काव्यादर्श* (अनू०) (अलंकार-शास्त्र) तथा *अवंति सुंदरी कथा* (?) (अपूर्ण गद्य-काव्य) के रचयिता। ये एक प्रसिद्ध कवि थे। इनकी रचना में पदों का लालित्य प्रसिद्ध है जैसा कि—

उपमा कालिदासस्य, भारवेरर्थ गौरवम।
दंडिनः पदलालित्य, माघेसंति त्रयोगुणाः॥

इस सुप्रसिद्ध श्लोक में कहा गया है।

दंभोद्भव—एक चक्रवर्ती राजा जिसने गर्व किया था कि मेरे समान संसार में कोई वीर नहीं है। नर-नारायण ने इसे सींकों से ही मूर्च्छित कर दिया था (*म० उ० ९६; म० वि० ५३.१५ कुं०*)।

दंश—एक असुर। दे० *अलर्क*।

दक्ष प्रजापति—महाभारतानुसार ये ब्रह्मा के दक्षिणांगुष्ठ से उत्पन्न हुए थे (*म० आ० ६७.१० कुं०*)। अपनी पत्नी प्रसूति से इन्हें १६ पुत्रियाँ प्राप्त हुईं, जिनमें १३ का विवाह धर्म से चौदहवीं (स्वाहा) का अग्नि से, पंद्रहवीं (स्वधा) का अग्निष्वात्ता से और सोलहवीं पुत्री सती का शकर से हुआ (*भा० ४.१*)। एक अन्य मत से इनकी ५० कन्याएँ थीं, जिनमें १० का विवाह धर्म से, १३ का कश्यप से और २७ का चंद्रमा से हुआ था। एक बार दक्ष ने यज्ञ किया। पर सती और शिव को उसमें निमंत्रित नहीं किया। बिना निमंत्रण के ही सती अपने पिता के घर चली आईं, पर पिता ने उनका आदर नहीं किया। इस प्रकार पिता द्वारा अपमानित हो, सती यज्ञ-कुंड में कूद पड़ी। यह देखकर शिव के वीर-भद्र आदि गणों ने दक्ष के यज्ञ का ध्वंस कर दिया। वीरभद्र ने दक्ष का वध कर दिया। ब्रह्मादि देवताओं की प्रार्थना पर शिव ने अज (बकरे) का सिर लेकर दक्ष के धड़ पर लगा कर दक्ष को जीवित कर दिया। तभी से दक्ष 'अजमुख' कहलाने लगे (*भा० ४.३-७*)। पुनर्जीवित हो दक्ष ने शिव से क्षमायाचना की।

दक्षिणापथ—दक्षिण भारत। वह प्रदेश जो नर्मदा नदी के दक्षिण में है। आरंभ में इस नाम का प्रयोग उत्तर गोदावरी में आर्यों की बस्ती के लिये होता था।

दग्धाक्षरदोष—छंदशास्त्र में क ख ग घ च छ ज द ध न य श स अक्षर शुभ और शेष अशुभ बताए गये हैं। अशुभ अक्षरों का छंद के आदि में प्रयोग निषिद्ध है, क्योंकि यह दग्धाक्षरदोष है। 'भानु' ने झ ह र भ ष को विशेष दुष्ट ठहराया है। पर इस नियम का अपवाद भी वे इस प्रकार बताते हैं—
मंगल सुर वाचक सबद गुरु होवे पुनि आदि,
दग्धाक्षर को दोष नहिं, अरु गण दोषहिं वादि। इस प्रकार दग्धाक्षरदोष नहीं रहता और इसी कारण जगण, रगण, सगण और

तगण इन अशुभ गणों की अशुभता का भी परिहार हो जाता है।

दत्त (र० का० १७७३ ई०)—चरखारी-नरेश खुमानसिंह के आश्रित एक रीति-कवि। *लालित्यकला* के रचयिता।

दत्तात्रेय—अत्रि और अनसूया से प्रसन्न हो, विष्णु ने दत्तात्रेय नामक अवतार धारण कर, उनके यहाँ जन्म लिया (*भा० ४.१*)। दत्तात्रेय ने वेदों का पुनरुद्धार किया (*ह० वं० १.४१.१०७*)। बाल्यावस्था से ही ये आत्मचिंतन करते थे। इन्होंने **अलर्क, प्रह्लाद, यदु** और **कार्तवीर्य** को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया था (*भा० १.३.११*)।

दधिसागर—पुराणानुसार दही का एक समुद्र। दे० *सप्तसागर*।

दधीचि—शुक्राचार्य के पुत्र एक ऋषि। **वृत्रासुर** का वध इनकी हड्डी से निर्मित वज्र द्वारा हुआ था। देवताओं की प्रार्थना पर इन्होंने सहर्ष अपना शरीर इस कार्य के लिये अर्पित कर दिया था (*म० श० ५१, भा० ६.६-१०*)। दे० *अश्विनीकुमार*।

दनु—दक्ष प्रजापति की कन्या और कश्यप की पत्नी। इसके पुत्र दानव कहलाए (*ब्रह्मांड० ३.६*)।

दमन—एक ऋषि। इन्हीं के प्रसाद से राजा भीम के यहाँ **दमयंती** उत्पन्न हुई (*म० व० ५३*)।

दमयंती—विदर्भ-नरेश भीम की पुत्री और नल (दे० यथा०) की पत्नी (*म० व० ५३-७६*)।

दयानंद सरस्वती (१८२४-८३ ई०)—आर्य-समाज के प्रवर्त्तक, समाज-सुधारक, वेदों के उद्भट विद्वान् व भाष्यकार। *सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि, ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका* आदि ग्रंथों के रचयिता। स्वामीजी तथा उनके प्रवर्तित आर्यसमाज ने हिंदी-प्रचार के लिये महान् कार्य किया है। इनका प्रभाव उत्तर प्रदेश तथा पंजाब पर विशेष पड़ा।

दया बाई (आ० का० १७४३ ई०)—मवात निवासिनी, संत **चरणदास** की शिष्या और *दयाबोध* की लेखिका।

दयालदास (र० का० १६१८ ई०)—मेवाड़ निवासी एक डिंगल कवि। *राणारासो* (मेवाड़ का इतिहास), *रासो को अंग* तथा *अकल को अंग* के रचयिता।

दरद—कश्मीर के उत्तर में दार्दिस्तान।

दरिया साहब, बिहार वाले (१६७४-१७८० ई०)—धरकंधा (आरा) निवासी एक संत, दरिया पंथ के प्रवर्त्तक। *दरिया सागर, ज्ञान दीपक* आदि के रचयिता।

दरिया साहब, मारवाड़ वाले (जन्म १६७३ ई०)—एक संत और दरिया पंथ (मारवाड़) के प्रवर्त्तक, जिन्होंने कविता के क्षेत्र में **कबीर** को गुरु माना है।

दलपत विजय—*खुमानरासो* के रचयिता। इनके विषय में खोज हो रही है।

दलपतिराय और बंसीधर—अहमदाबाद निवासी दो रीति-कवि। *अलंकार रत्नाकर* (१७३५ ई०) के रचयिता।

दशकुमारचरित—**दंडी** (६०० ई० ?) का संस्कृत में एक गद्य-काव्य (अनू०), जिसमें दस कुमार अपनी अपनी यात्राओं, अनुभवों तथा पराक्रमों का मनोरंजक वर्णन करते हैं।

दशम न्याय—दस व्यक्ति विदेश जाकर अपने को गिनने लगे कि कहीं हममें से कोई खोया तो नहीं गया। किंतु जो गिनता वह अपने को छोड़ जाता था। तब एक पथिक ने उन्हें गिनकर उनसे कहा—"दसवें तुम हो"। अज्ञानी व्यक्ति को गुरु से कैसे ज्ञान मिलता है, यही इस उक्ति से बोध होता है।

दशरथ—राजा अज के पुत्र और अयोध्या के एक राजा। पुत्रकामेष्टि यज्ञ करने से इन्हें कौसल्या से रामचंद्र, सुमित्रा से लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न और कैकेयी से भरत नामक पुत्र उत्पन्न हुए (*वा० रा० बा० १८*)। एक अन्य मत से इन्हें कौसल्या, सुमित्रा, सुरूपा (कैकेयी) और सुवेषा से क्रमशः रामचंद्र, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न पुत्र उत्पन्न हुए (*पद्म० पा० ११६, वा० रा० अयो० ११८.६*)। कैकेयी ने देवासुर संग्राम में इनकी प्राण-रक्षा की थी, जिससे प्रसन्न हो इन्होंने उसे कोई दो वर देने का वचन दिया था (*वा० रा० अयो० ६*)। राम के राज्याभिषेक के समय मंथरा के बहकाने से कैकेयी ने दोनों वर माँगे। एक के अनुसार भरत को राज्य और दूसरे के अनुसार राम को १४ वर्ष का वनवास मिलना था (*वा० रा० अयो० ११*)। तदनुसार राम वन चले गये। उनके साथ सीता और लक्ष्मण भी गये। राम के वियोग में दशरथ का प्राणांत हो गया (६४; दे० *श्रवणकुमार*)।

दशरथपुर—अयोध्या का नामांतर।

दशहरा—१ ज्येष्ठ शुक्ला दशमी तिथि जिसे गंगा दशहरा भी कहते हैं। इस तिथि को **गंगा** स्वर्ग से मृत्युलोक में आई थीं। २ दे० *विजयादशमी*।

दशार्ण—महाभारतानुसार नकुल ने पश्चिमी और भीम ने पूर्वी दशार्ण जीते थे। पश्चिमी दशार्ण के अंतर्गत पूर्वी मालवा और भोपाल थे। इनकी राजधानी विदिशा या भिल्सा थी। पश्चिमी दशार्ण के अंतर्गत छत्तीसगढ़ का एक भाग था।

दांते (Dante) (१२६५-१३२१ ई०)—इटली के एक प्रसिद्ध कवि। *दिवीना कोमेदिया* (*Divina Commedia*) के रचयिता। इनकी इस रचना का विश्व-साहित्य में स्थान है। दे० *कामायनी*।

दाऊद (र० का० १३१८ ई०)—एक मुसलमान कवि। *चंदावन* या *चंदावत* (प्रसिद्ध प्रेम कहानी) के रचयिता। इनकी यह रचना अभी तक अप्राप्त है।

दादूदयाल (१५४४-१६०३ ई०)—गुजरात निवासी एक संत और दादूपंथ के प्रवर्त्तक। इन्होंने ५००० पद लिखे थे, जिनमें से अधिकांश साधु-संतों की स्मृति में ही हैं, शेष *दादू की बानी* नामक संग्रह में हैं। मूर्त्ति-पूजा, जाति, आचार, तीर्थ-व्रत, अवतार आदि के विषय में दादू **कबीर** के पूर्णतया अनुयायी हैं, किंतु ये कबीर की भाँति खंडन में नहीं पड़े। इनकी कविता कबीर की अपेक्षा सरस है। भाषा मिली-जुली पश्चिमी हिंदी है, जिसमें राजस्थानी का मेल भी हैं। उसमें खड़ी बोली की क्रियाओं की ओर अधिक झुकाव पाया जाता है। इनकी बानी राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी और सिंधी में भी पाई जाती है। क्षितिमोहनसेन आदि कुछ विद्वान् इनको मुसलमान बतलाते हैं और कहते हैं कि इनका असली नाम दाऊद था, जो पीछे 'दादू' हो गया। इन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग राजपूताने में बिताया और जयपुर के निकट नराना नामक ग्राम में इनका देहांत हुआ। इनके विचारों की विवेचना

आचार्य क्षितिमोहनसेन ने अपने *दादू* नामक बंगाली ग्रंथ में बड़े मार्मिक ढंग से की है।

दानव—दनु और कश्यप के ४० पुत्र। इनमें शंबर, नमुचि, वृत्रासुर, पुलोम, केशी आदि प्रसिद्ध दानव हैं। ये सब राक्षस हैं।

दामोदर मिश्र (आ० का० ई० नवीं शती)—संस्कृत नाटककार और *हनुमन्नाटक* (महानाटक, अनू०) के रचयिता।

दामौ कवि—दे० *लक्ष्मणसेन पद्मावती कथा*।

दारिकपा (वर्त्त० ८४० ई०)—उड़ीसा-नरेश। एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

दावानल—कृष्ण ने जिस दिन **कालिय** का दमन किया, उस दिन देर होने के कारण गौएँ और ब्रजवासी सब बन में ही रह गये थे। रात्रि को वन में आग लग गई। कृष्ण ने उस भयंकर अग्नि को पी लिया और अग्नि को बुझा दिया (*भा० १०.१७*)।

दास—दे० *भिखारीदास*।

दिङ्नाग—१ (आ० का० १००० ई० ?)—संस्कृत नाटककार और *कुंदमाला* (राम के राज्याभिषेक से राम-सीता-लव-कुश-मिलन तक का वर्णन; अनू०) के रचयिता। २ एक बौद्ध दार्शनिक।

दिक्कन्या—दिशारूपी कन्या। पुराणानुसार दिशाएँ ब्रह्मा की कन्याएँ मानी गई हैं।

दिक्पाल—पुराणानुसार दसों दिशाओं के पालन करने वाले देवता। यथा—पूर्व के इंद्र, अग्निकोण के वह्नि, दक्षिण के यम, नैर्ऋतकोण के नैर्ऋत, पश्चिम के वरुण, वायुकोण के मरुत, उत्तर के कुबेर, ईशानकोण के ईश, ऊर्द्ध दिशा के ब्रह्मा और अधोदिशा के अनंत।

दिग्पाल—आदित्य युगल सोहैं, दिक्पाल-छंद माहीं (२४ (१२,१२) मा० छंद)। उ०—
मैं ढूँढ़ता तुझे था जब कुंज और बन में।
तू खोजता मुझे था तब दीन के वतन में॥

दिग्गज—पुराणानुसार वे आठ हाथी जो आठों दिशाओं में पृथ्वी को दबाए रखने और दिशाओं की रक्षा करने के लिये स्थापित हैं। यथा—पूर्व में ऐरावत, पूर्व-दक्षिण में पुंडरीक, दक्षिण में वामन, दक्षिण-पश्चिम में कुमुद, पश्चिम मे अंजन, पश्चिम-उत्तर में पुष्पदंत, उत्तर में सार्वभौम और उत्तर-पूर्व में सप्तीक।

दिति—दक्ष प्रजापति की कन्या और **कश्यप** की पत्नी, जो दैत्यों की माता थी।

दिनकर—दे० *रामधारीसिंह दिनकर*।

दिनेशनंदिनी डालमिया (१९१८ ई०-)—कवयित्री और गद्य-गीत लेखिका। इनकी मुख्य रचनाएँ *उरावती*, *परिछाया* (काव्य), *शबनम*, *उनमन*, *सारंग*, *स्पंदन*, *शारदीय*, *मौक्तिक माल* (गद्य-काव्य) आदि हैं। दे० *गद्य-काव्य*।

दिलीप—अंशुमान् के पुत्र, **भगीरथ** के पिता और रघु के पूर्वज (*वा० रा० बा० ४२*)। एक अन्य मत से कामधेनु-पुत्री नंदिनी की सेवा करके इन्होंने रघु नामक पुत्र प्राप्त किया था (*पद्म० उ० २०२-३*)।

दिवोदास—काशी के राजा। एक बार हैहय-वंशी क्षत्रियों ने काशी पर अधिकार कर लिया। दिवोदास ने भरद्वाज ऋषि की शरण ली। वहाँ इन्होंने पुत्रकामेष्टि यज्ञ कर शत्रु-नाशक प्रतर्दन नामक पुत्र प्राप्त किया। प्रत-

र्दन की सहायता से दिवोदास ने अपना राज्य पुनः प्राप्त कर लिया (म० अनु० ३०)। इनके राज्य में सर्वत्र सुख-शांति श्री और धर्म का राज्य था।

दीनदयाल गिरि, बाबा (१८०२-५८ ई०)—काशी निवासी, एक कवि और *अन्योक्ति कल्पद्रुम* (लौकिक और आध्यात्मिक पक्षों पर सरस अन्योक्तियाँ), *अनुराग बाग* (कृष्ण लीला वर्णन), *वैराग्य दिनेश* (ऋतु वर्णन आदि), *विश्वनाथ-नवरत्न* (शंकर की स्तुति) तथा *दृष्टांततरंगिणी* (नीति संबंधी दोहे) के रचयिता। **भारतेंदु** के पिता **गिरिधरदास** से इनका बड़ा मेल था। इनकी भाषा बड़ी सरल और परिमार्जित है। इनमें भावुकता के साथ चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति भी है। ये अपनी अन्योक्तियों के लिये प्रसिद्ध हैं।

दीपक—एक अर्थालंकार जिसमें वर्ण्य और अवर्ण्य का (एक ही बार कथित) एक ही धर्म होता हो अथवा बहुत सी क्रियाओं का एक ही कारक कहा जाता हो। उ०—सेवक सठ, नृप कृपन, कुमारी, / कपटी मित्र सूल सम चारी। यहाँ कपटी मित्र प्रस्तुत और शेष तीन अप्रस्तुतों को सूल समान बताया है।

दीपकमाला—दीपकमाला है भभौ जगौ (भ भ ज ग=१० व० छंद)। उ०—भाभज गो-कन्या सखी बरी। / देखत द्वै खंडा धनू करी। मंडप के नीचे अरी अली। / दीपक-माला सी लसै लली॥

दीपावली—कार्त्तिक की अमावस्या को होने वाला एक पर्व, जिसमें संध्या के समय गृहों को दीपों से अलंकृत किया जाता है और लक्ष्मी की पूजा होती है।

दुंदुभि—मयासुर और हेमा नामक अप्सरा का पुत्र (वा० रा० उ० १२)। इसने हजारों हाथियों का बल प्राप्त कर भैंसे का रूप धारण कर लिया था। बालि को इसने युद्ध के लिये आमंत्रित किया, पर बालि द्वारा ही इसका वध हुआ। बालि ने इसका शरीर मतंग ऋषि के आश्रम में फेंक दिया। इससे क्रुद्ध हो मतंग ने शाप दिया कि यदि बालि उनके आश्रम में आएगा, तो वह मृत्यु को प्राप्त होगा। इसी कारण सुग्रीव बालि से बचने के लिये मतंग-आश्रम में रहते थे (वा० रा० कि० ११)।

दुंदुभिनिह्राद—दैत्य प्रह्लाद का मामा। काशी में यह रात्रि को व्याघ्र-रूप धारण कर ब्राह्मणों को खा जाता था। शिव ने इसका वध किया और वे व्याघ्रेश्वर कहलाए (शिव० रुद्र० यु० ५८)।

दुःखांत नाटक—पाश्चात्य नाटक का एक प्रकार जिसकी समाप्ति दुःखमयी घटनाओं से हो। शेक्सपियर के दुःखांत नाटकों में तो प्रायः नायक की मृत्यु ही हो जाती है।

दुःशला—धृतराष्ट्र की कन्या और जयद्रथ की पत्नी (भा० ६.२२)। पति की मृत्यु के पश्चात् इसने अपने पुत्र सुरथ को राजसिंहासन पर बैठा कर बहुत दिनों तक राजकाज चलाया था।

दुःशासन—धृतराष्ट्र का द्वितीय पुत्र। **द्रौपदी** को नग्न करने का प्रयास इसीने किया था जिससे क्रुद्ध होकर **भीम** ने इसका रक्तपान करने की प्रतिज्ञा की थी (म० स० ७७)। इस प्रतिज्ञा को उन्होंने पूर्ण किया (म० क० ८३)।

दुर्गम—एक असुर जिसे **दुर्गा** ने मारा था (स्कंद० १.२.६५, देवी भा० ७.२८)।

दुर्गा—विश्वव्यापक आदिमाया, जिनके दुर्गा, देवी आदि नाम हैं। ये सात्विक, राजसी और तामसी शक्तियों से युक्त हैं। ये अत्यंत प्रभावशाली हैं। जो भी देव संकट में इनके पास जाते हैं, वे संकटमुक्त हो जाते हैं। इनके प्रभाव, तथा रूप आदि के सूचक गौरी, सती, पार्वती, उमा, काली, चंडी, भुवनेश्वरी, महामाया, रौद्रा, भद्रा आदि नाम हैं। देवों का संकट दूर करने के लिये इन्होंने अनेक अवतार धारण किये। **महिषासुर** का वध करने से महिषासुरमर्दिनी व महालक्ष्मी, **चंडमुंड** का वध करने से चामुंडा, दुर्गमासुर का वध करने से दुर्गा आदि इनके अनेक नाम पड़े (*देवी० भा० ७.२८*)। आदिमाया ने दक्ष-पुत्री सती और फिर पार्वती के रूप में जन्म लिया। इसलिये इनके सती और पार्वती नाम भी हैं। इनकी अंग-कांति काली होने से इनका नाम काली पड़ा (*कालि० ४६,४२*)। अपना गौरवर्ण करने के लिये इन्होंने घोर तपस्या की और ये सफल हुईं। अतः इनका नाम गौरी पड़ा (४७)। इनका वाहन सिंह है। विशेष दे० *कालि०* व *देवी भा०*। दुर्गा के अन्य पर्य्याय०—चंडिका, कालिका विंध्यवासिनी, महाशक्ति आदि।

दुर्गावती—चंदेल क्षत्रियवंशी महोबा के राजा की अत्यंत गुणवती एवं सुंदर कन्या। इनका विवाह दलपतसाह के साथ हुआ था, पर विवाह के ८ वर्ष पश्चात् ये विधवा हो गई थीं। इन्होंने अपने ३ वर्ष के बालक को राज-सिंहासन पर बैठा कर, राज्य का शासन किया। इनके सुशासन से प्रजा सुखी थी। इनके अतुल ऐश्वर्य की बात अकबर तक पहुँची। अकबर के मध्यभारत के सेनापति आसफखाँ ने १८ हजार सेना लेकर सिंहगढ़ पर आक्रमण कर दिया। पहिले दिन के युद्ध में तो दुर्गावती की विजय हुई, पर दूसरे दिन ये घायल हो गईं। युद्ध में अपनी विजय की कोई आशा न देख इन्होंने स्वयं छुरी से अपना वक्षःस्थल फाड़ लिया, जिससे इनका प्राणांत हो गया। दुर्गावती का नाम एक वीर महिला के रूप में स्मरण किया जाता है। **बदरीनाथ भट्ट** ने *दुर्गावती* नाम से एक नाटक भी लिखा है।

दुर्गेश (आ० का० १८२५ ई०)—एक लेखक जिन्होंने रीवा-नरेश जयसिंह के नाम से *द्वैताद्वैतवाद* नामक ग्रंथ वेदांत पर लिखा।

दुर्मिल सवैया—सगण जब आठ रहें तब तो कवि दुर्लभ 'दुर्मिल-चंद्रकला' (८ सगण=२४ व० छंद)। उ०—इसके अनुरूप कहें किसको, वह कौन सुदेश समुन्नत है। इसका अन्य नाम चंद्रकला भी है।

दुर्मुख—१ दुर्योधन का अनुज जो महाभारत-युद्ध में कर्ण की सहायतार्थ भेजा गया था, पर इसका वध शीघ्र ही हो गया। २ रामचंद्र का एक गुप्तचर। इसी के मुख से राम ने सीता के विषय में लोकापवाद सुना था, जिसके कारण सीता का परित्याग हुआ।

दुर्योधन—धृतराष्ट्र का ज्येष्ठ पुत्र और कौरवों का राजा। धृतराष्ट्र ने कौरवों और पांडवों को साथ-साथ शिक्षा दी। वहीं दोनों में शत्रुता का बीज वपन हुआ। दुर्योधन सब से अधिक भीम से डरता था, क्योंकि गदायुद्ध में वे इससे अधिक प्रबल थे। एक बार इसने भीम को विष देकर गंगा में फेंक दिया था (*म० आ० १२८-२६*)। इसने पांडवों को **लाक्षागृह** में जलाने का भी प्रयत्न किया था (*१४१-४८*)। अंत में इसने युधिष्ठिर को जुआ खेलने के लिये बुलाया और शकुनि की सहायता से उन्हें हरा दिया। जुए में इसने **द्रौपदी** को भी जीत लिया और दुःशासन को उन्हें नग्न कर अपनी

जाँघ पर बिठाने को कहा। धृतराष्ट्र के समझाने पर और कृष्ण की कृपा से ऐसा न हो सका। उसी समय भीम ने दुर्योधन की जाँघ तोड़ने की प्रतिज्ञा की। जुए में हारने के पश्चात् पांडवों को, शर्त के अनुसार, १२ वर्ष बनवास तथा एक वर्ष **अज्ञातवास** करना पड़ा। अज्ञातवास से लौट कर पांडवों ने केवल ५ गाँव माँगे, पर दुर्योधन यह भी देने के लिये तैयार न था। अंत में युद्ध हुआ जिसमें कौरवों की ओर के, दुर्योधन और अश्वत्थामा को छोड़ कर, सभी वीर मारे गये। हार कर दुर्योधन एक जलाशय में जा छिपा। भीम ने जलाशय पर ही पहुँच कर इसकी जाँघ तोड़ कर अपना प्रण पूरा किया। दुर्योधन ने पाँचों पांडवों का सिर लाने के लिये अश्वत्थामा से कहा, किंतु वह अंधेरे में भूल से द्रौपदी के पाँचों पुत्रों के सिर ले आया। अश्वत्थामा (दे० *यथा०*) ने **शिखंडी** और **धृष्टद्युम्न** का वध भी किया। दुर्योधन अपने शत्रु धृष्टद्युम्न और शिखंडी के वध से तो प्रसन्न हुआ, किंतु पांडवों के न मारे जाने के समाचार से इसे दुःख हुआ। इस सुख-दुःख की संधि में पूर्वशापानुसार इसका प्राणांत हुआ। *बिहारी सतसई* में अलंकार के रूप में इस घटना का निर्देश हुआ है।

दुर्वासा—अत्रि और अनसूया (दे० यथा०) के पुत्र एक ऋषि (*भा० ४.१*), जिनकी पत्नी और्व मुनि की पुत्री कंदली थी। ये शरीर, दृष्टि, मन और वाणी से बड़े उद्धत और क्रोधी थे। प्रतिज्ञानुसार इन्होंने अपनी पत्नी के १०० अपराध तो क्षमा कर दिये, किंतु १०१ वाँ अपराध करने पर उसे भस्म कर दिया था (*ब्रह्मवै० ४.२४-२५*)। इसपर और्व मुनि ने इन्हें शाप दिया जिसके कारण इन्हें **अंबरीष** से क्षमा माँगनी पड़ी। इनकी माला का अनादर करने पर इन्होंने इंद्र को शाप दिया था, जिसके कारण इंद्र की लक्ष्मी समुद्र में समा गई थी (*विष्णु० १.९*)। दे० *अक्षयपात्र, कुंती, शकुंतला*। इनके आश्रम भागलपुर ज़िले में कोलगोंग से दो मील उत्तर में 'खड़े पहाड़' पर और गया ज़िले में दुबाउर नामक स्थान पर थे।

दुष्यंत—एक पुरुवंशी राजा। दे० *शकुंतला*।

दूत—१ राजा या राष्ट्र का वह प्रतिनिधि जो राजनीतिक कार्यों से अन्य राष्ट्र में भेजा गया हो या स्थायी रूप से रहता हो। २ नायक का संदेश नायिका तक या नायिका का संदेश नायक तक पहुँचाने वाला व्यक्ति।

दूती—नायक और नायिका को मिलाने वाली।

दूमा, अलेक्सांद्र (१८०३-७० ई०)—एक प्रसिद्ध फ्रांसीसी उपन्यासकार और नाटककार, जिनके दो उपन्यास *तीन तिलंगे* तथा *षड्यंत्रकारी* नाम से अनूदित हैं। इन्होंने अधिकांश ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं।

दूलनदास (आ० का० ल० १७७० ई०)—ज़िला रायबरेली निवासी एक संत-कवि जिनकी १४ गद्दियाँ प्रसिद्ध हैं। ये निर्गुणवादी होते हुए भी कृष्ण में विश्वास रखते थे। ये जगजीवनदास के शिष्य थे।

दूलह (र० का० १७४३-८८ ई०)—**कालिदास त्रिवेदी** के पौत्र, **उदयनाथ कवींद्र** के पुत्र एक रीति-कवि। *कवि-कुल-कंठाभरण* (प्रसिद्ध ग्रंथ) के रचयिता। इन्होंने एक ही छंद में लक्षण और उदाहरण दोनों दिये हैं। इनका अलंकारों का विवेचन बड़ा स्पष्ट और सुबोध है। इसलिये किसी कवि ने कहा है—'और बराती सकल कवि, दूलह दूलहराय।'

दूषण—**खर** का सेनापति, जो पंचवटी-युद्ध में रामचंद्र द्वारा मारा गया था। इसे रावण का भाई भी कहा जाता है (*भा० ९.१०*)।

दृश्यकाव्य—वह काव्य जो रंगमंच पर अभिनय करके दिखलाया जा सके। इसे रूपक भी कहते हैं, क्योंकि इसमें अभिनेता वास्तविक पात्रों का रूप ग्रहण कर दर्शकों के सामने आते हैं।

दृषद्वती—वर्त्तमान चितंग नदी जो ब्रह्मावर्त्त की दक्षिणीय सीमा पर थी।

दृष्टकूट—ऐसी कविता जिसका अर्थ शब्दों के वाच्यार्थ से न समझा जा सके, प्रत्युत प्रसंग या रूढ़ अर्थों से जाना जाए। उ०—ग्रह, नक्षत्र, जुग जोरि अरध करि सोई बनत अब खात—सूर। ग्रह=९, नक्षत्र=२७, जुग ४ को जोड़ (जोरि) कर ४० हुए। ४० का आधा किया (अरध करि) तो बीस (बिस, विष) हुए। कृष्ण के वियोग में गोपिकाएँ कहती हैं कि अब विष खाने के सिवाय कोई चारा नहीं है।

दृष्टांत—एक अर्थालंकार जिसमें दो वाक्य होते हैं, एक उपमेय-वाक्य, दूसरा उपमान-वाक्य। दोनों वाक्यों के पृथक्-पृथक् धर्म होते हैं। दोनों में बिंब-प्रतिबिंब भाव-सा जान पड़ता है अर्थात् एक प्रकार की समता-सी जान पड़ती है। परंतु यह समता बिना 'वाचक' शब्दों के दिखलाई जाती है। उ०—करत करत अभ्यास के जड़ मति होत सुजान। / रसरी आवत जात तें सिल पर होत निसान॥

देव (१६७३-१७६७ ई०)—इटावा निवासी, रीतिकालीन एक प्रमुख कवि, जिनके आश्रयदाता मुग़ल-सम्राट् औरंगज़ेब के पुत्र आज़मशाह, भवानीदत्त वैश्य, इटावा के कुशलसिंह सेंगर, राजा भोगीलाल (१७२६), और पिहानी निवासी अकबरअली खाँ (१७६७) थे। इनको अपने आश्रयदाताओं की खोज में भारत के विभिन्न प्रांतों की खूब यात्रा करनी पड़ी, जिससे इनका अनुभव-जन्य ज्ञान अन्य कवियों की अपेक्षा बहुत बढ़ गया। ये जहाँ गये, वहाँ की स्त्रियों को इन्होंने ध्यानपूर्वक देखा और उनका अत्यंत रोचक वर्णन किया। जन-श्रुति के अनुसार देव के ग्रंथों की संख्या ७२ अथवा ५२ मानी जाती है। *हिंदी नवरत्न* में इनके २८ ग्रंथों के नाम दिये गये हैं, जिनमें से १५ ऐसे ग्रंथ हैं जिन्हें मिश्रबंधुओं ने स्वयं भी देखा है। इनकी रचनाओं में *भाव विलास*, *सुखसागर तरंग* (रस-भेद तथा नायिका-भेद के ग्रंथ), *जाति-विलास*, *रसविलास*, *प्रेमचंद्रिका*, *शब्द रसायन* (रस, अलंकार तथा छंद का ग्रंथ), *नीतिशतक*, *वैराग्य-शतक* आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अधिकांश ग्रंथों में एक-दूसरे ग्रंथों से कविताएँ संकलित कर एक नया नाम दे दिया गया है।

देव कवि और आचार्य दोनों थे। आचार्य रूप से इन्होंने शृंगार रस को प्रधानता दी है। इन्होंने पूर्ववर्ती कवियों की रचनाओं से भावापहरण बहुत कम किया है। शृंगार-वर्णन में कहीं-कहीं इन्होंने मर्यादा का भी ध्यान नहीं रखा है। बाह्य प्रकृति की ओर इनकी दृष्टि कम गई है, किंतु जो वर्णन हैं, वे बहुत सुंदर हैं। ये बहुज्ञ एवं उत्कृष्ट विचारों के कवि थे। इनकी कविता में अलंकार, गुण, लक्षणा, व्यंजना का चमत्कार अच्छा दिखाई पड़ता है। भाषा पर देव का विशेष अधिकार था। इनकी भाषा शुद्ध ब्रज है। भाषा-साहित्य में देव और **मतिराम** इन दो कवियों की भाषा सर्वोत्कृष्ट है। इनकी कविता में यमक, अनुप्रास का अच्छा चमत्कार है। प्रचलित लोकोक्तियों का भी इन्होंने बड़े मनोरम रूप से प्रयोग किया। प्रसाद, समता, माधुर्य, सुकुमारता, अर्थव्यक्ति, समाधि और उदारता नामक गुण इनकी रचना में पाए जाते हैं।

मिश्रबंधुओं ने देव को सूर और तुलसी

के पश्चात् प्रथम स्थान दिया है। इसी कारण साहित्य में देव और बिहारी संबंधी वाद उठ खड़ा हुआ था। पद्मसिंह शर्मा और भगवान-दीन ने बिहारी का पक्ष लिया था। वास्तव में देव और बिहारी में अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। विशेष दे० मिश्रबंधु-कृत *देव सुधा*, नगेंद्र-कृत *देव और उनकी कविता*, भोलानाथ तिवारी-कृत *महाकवि देव*।

देवक—राजा आहुक के पुत्र। इन्होंने अपनी पुत्री देवकी का विवाह वसुदेव से किया था (*भा० ६.२४*)।

देवकी—देवक की पुत्री, वसुदेव की पत्नी तथा कृष्ण (दे० यथा०) की माता। कंस की ये चचेरी बहिन थीं।

देवकीनंदन (र० का० १७८३-१८०३ ई०)—कन्नौज निवासी एक रीति-कवि। *शृंगार चरित्र* (१७८४), *सरफराज चंद्रिका* तथा *अवधूत भूषण* (१८००) (अपने आश्रयदाताओं के नाम पर) के रचयिता।

देवकीनंदन खत्री (१८६१-१९१३ ई०)—प्रसिद्ध उपन्यासकार। *चंद्रकांता*, *नरेंद्र मोहिनी*, *वीरेंद्र-वीर*, *चंद्रकांता संतति*, *कुसुमकुमारी*, *नौलखा हार*, *काजर की कोठरी*, *अनूठी बेगम*, *भूतनाथ* (उपन्यास) आदि के रचयिता। इनके उपन्यासों में घटना बाहुल्य है, और तिलस्मी तथा ऐयारी वर्णनों की अधिकता है। जनता की कौतूहल-प्रियता की तृप्ति करने के कारण इनके उपन्यास बहुत लोक-प्रिय बन गये। ये उपन्यास किसी दूसरी भाषा से अनूदित नहीं थे। हिंदी के प्रारंभिक उन्पयास लेखकों में इन्होंने विशेष ख्याति पाई।

देवगिरि—दौलताबाद का प्राचीन नाम। मुहम्मद तुग़लक़ ने इसे अपनी राजधानी बनाया था।

देवघनाक्षरी—आठ आठ आठ नौ की यति से तैंतीसवर्ण; अंत में तीन लघु हों, देवघनाक्षरी सुखद (३३ (८, ८, ८, ९) चार तुकांत पादों वाला व० दंडक छंद, अंत ३ ल)। उ०—
झिल्ली झनकारैं पिक, चातक पुकारैं बन,
मोरनि गुहारैं उठैं, जुगनू चमकि चमकि।

देवता—स्वर्ग में रहने वाली एक दिव्य अमर जाति। इसके राजा इंद्र हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश प्रमुख देवता हैं, जो 'त्रिदेव' कहलाते हैं। देवों की संख्या ५, ३३ या ३३३९ मानी गई है। दैत्यों से देवताओं की सर्वदा शत्रुता रहती है। देवता दैत्यों के अनुज भी कहे गये हैं।

देवदत्त—एक शाक्यवंशी राजकुमार, जो **गौतम बुद्ध** का चचेरा भाई था। बुद्ध को विशेष कुशल और तेजस्वी देखकर यह मन ही मन उनसे कुढ़ने लगा। यह यशोधरा से भी विवाह करना चाहता था। इसने बुद्ध को अनेक कष्ट पहुँचाए थे।

देवदासी—मंदिरों की दासी या नर्त्तकी। ये जगन्नाथ से लेकर दक्षिण भारत के प्रायः सभी मंदिरों में नृत्य तथा गाने की सेवा करती थीं। इनके माता-पिता बचपन ही में इन्हें मंदिर को अर्पित कर देते थे। अब यह प्रथा समाप्त हो गई है।

देवनागरी—भारतवर्ष की प्रधान लिपि, जिसमें संस्कृत, हिंदी, मराठी आदि भाषाएँ लिखी जाती हैं। **नागरी शब्द की उत्पत्ति के विषय में मतभेद है। कुछ लोग इसका केवल 'नगर की' या 'नगरों में व्यवहृत' ऐसा अर्थ करते हैं। बहुत लोगों का यह मत है कि गुजरात**

(दे० *लाट*) के नगर ब्राह्मणों के द्वारा विशेष रूप से व्यवहृत होने के कारण यह लिपि नागरी कहलाई ।

'नागरी लिपि' का उल्लेख प्राचीन ग्रंथों में नहीं मिलता है । इसका कारण यह है कि प्राचीन काल में यह ब्राह्मी ही कहलाती थी। नागरी का सबसे पहला उल्लेख जैनधर्म ग्रंथ *नंदीसूत्र* में मिलता है, जो जैन विद्वानों के अनुसार ८५३ ई० के पहिले का बना है ।

सबसे प्राचीन लिपि भारतवर्ष में अशोक की पाई जाती है। गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने *प्राचीन लिपि माला* पुस्तक में एक चित्र द्वारा स्पष्ट दिखला दिया है कि किस प्रकार अशोक के समय से नागरी अक्षर क्रमशः रूपांतरित होते-होते बने हैं ।

मि० शाम शास्त्री ने भारतीय लिपि की उत्पत्ति के संबंध में एक नया सिद्धांत प्रकट किया है । उनका कथन है कि प्राचीन समय में प्रतिमा बनने के पूर्व देवताओं की पूजा कुछ सांकेतिक चिह्नों द्वारा होती थी जो कई प्रकार के त्रिकोण आदि यंत्रों के मध्य में लिखे जाते थे । ये त्रिकोण आदि यंत्र 'देवनगर' कहलाते थे । उन 'देवनगरों' के मध्य में लिखे जाने वाले अनेक प्रकार के सांकेतिक चिह्न कालांतर में अक्षर माने जाने लगे । इसी से इन अक्षरों का नाम 'देवनागरी' पड़ा ।

देवपुरस्कार—ओरछा-नरेश प्रदत्त २०००) रुपये का यह पुरस्कार एक वर्ष ब्रज-भाषा और एक वर्ष खड़ी बोली के श्रेष्ठ काव्य पर दिया जाता है । प्रथम पुरस्कार दुलारेलाल भार्गव (*दुलारे दोहावली*), द्वितीय रामकुमार वर्मा (*चित्ररेखा*), तृतीय श्यामनारायण पांडेय (*हल्दी घाटी*), को मिला था ।

देवयानी—**शुक्राचार्य** की पुत्री । असुरों के गुरु शुक्राचार्य संजीवनी विद्या जानते थे । इस कारण जितने असुर युद्ध में मरते थे, उनको वे जीवित कर देते थे । देवताओं ने अपने गुरु बृहस्पति के पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास संजीवनी-विद्या सीखने के लिये भेजा । देवयानी कच से प्रेम करने लगी । असुरों ने कई बार कच को मार डाला, किंतु देवयानी की प्रार्थना पर शुक्राचार्य ने उसे हर बार जीवित कर दिया । देवयानी ने कच के संमुख विवाह-प्रस्ताव किया, किंतु कच ने गुरु-पुत्री होने के कारण अस्वीकार कर दिया । इसपर देवयानी ने कच को शाप दिया कि तुम्हारी विद्या निष्फल होगी । कच ने भी देवयानी को शाप दिया कि तुम्हारा विवाह ब्राह्मण से नहीं होगा । एक बार देवयानी और इसकी सखी शर्मिष्ठा में विवाद हो गया । इसपर शर्मिष्ठा ने इसको कुएं में धकेल दिया। राजा ययाति ने जो उधर से जा रहे थे, इसे कुएँ से बाहर निकाल दिया । देवयानी के कुएं में गिराये जाने पर, शुक्राचार्य और वृषपर्वा (शर्मिष्ठा के पिता) में विवाद हो गया । शुक्राचार्य वृषपर्वा की नगरी छोड़ने के लिये तैयार हो गये । अंत में शुक्र इस बात पर रुके कि देवयानी का जहाँ विवाह हो, शर्मिष्ठा इसकी दासी बनकर जाए । देवयानी और ययाति का विवाह हो गया और शर्मिष्ठा देवयानी की दासी बनी । शुक्राचार्य ने ययाति को शर्मिष्ठा के साथ सहवास न करने का आदेश दिया, परंतु ययाति ने उस आदेश का भंग किया । ययाति को देवयानी से दो तथा शर्मिष्ठा से तीन पुत्र प्राप्त हुए (*म० आ० ७५-८३, भा० ६.१८ आदि*) ।

देवैरे नायक दे री बात—किसी अज्ञात लेखक की एक गद्यमय रचना (लि० का० १७६० ई०),

जिसमें राजा देवरो और राजकुमारी नायकदे की प्रेम-कथा है।

देवव्रत—दे० *भीष्म*।

देवसेन (र० का० ९३३ ई०)—एक प्रसिद्ध जैन आचार्य दोहों में लिखी इनकी *श्रावकाचार* नामक पुस्तक की भाषा अपभ्रंश का अधिक प्रचलित रूप लिये हुए है। दोहों में ही लिखे *दव्व-सहाव-पयास* (द्रव्य-स्वभाव-प्रकाश) नामक इनके ग्रंथ का पीछे से **माइल्ल ध्वल** ने 'गाथा' या साहित्यिक प्राकृत में रूपांतर किया। दे० *जैन साहित्य*।

देवसेना—दक्ष प्रजापति की कन्या। एक बार केशी नामक दानव इनको हर ले गया था, पर इंद्र ने इनकी रक्षा की थी। इनका विवाह **स्कंद** से हुआ था (*म० व० २२९*)।

देवहूति—स्वायंभू मनु की पुत्री, कर्दम मुनि की पत्नी (*भा० ३.१२.५४*) और कपिल की माता (*३.२४*)। कपिल ने इन्हें सांख्यशास्त्र का उपदेश दिया था (*९.३३*)।

देवापि—राजा प्रतीप के पुत्र। प्रसिद्ध है कि ये अबतक सुमेरु पर्वत पर कलापि ग्राम में योगी के वेष में हैं। कलियुग समाप्त होने पर सत्ययुग में ये सोमवंश की पुनः स्थापना करेंगे (*भा० ९.२२*)।

देवीप्रसाद 'पूर्ण', राय (१८६८-१९१४ ई०)—कानपुर निवासी, व्रज-भाषा तथा खड़ी बोली के कवि और नाटककार। *अमलतास*, *वसंत वियोग*, *स्वदेशी कुंडल*, *नए सन् (१९१०) का स्वागत*, *नवीन संवत्सर (१९६७) का स्वागत* (कविताएँ), *चंद्रकला भानुकुमार* (नाटक) और *धाराधर धावन* (मेघदूत का अनुवाद) के रचयिता। इनकी कविता में शृंगारिक वर्णनों के साथ-साथ तत्कालीन देश-भक्ति भावनाओं की भी अभिव्यंजना प्रचुर मात्रा में रहती है। इनका ऋतु-वर्णन **सेनापति** के टक्कर का है।

देहली दीप न्याय—"देहली पर दीपक"। देहली पर रखे हुए दीपक का दोनों कमरों में प्रकाश पहुँचता है। जहाँ पर एक ही शब्द दो ओर लगता हो, वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

दैत्य—**दिति** के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र, जो राक्षस भी कहलाते हैं।

दोधक—दोधक तीन भकार गुरु दो (भ भ भ ग ग=११ व० छंद)। उ०—पाकर मानव देह धरा में / पाशव वृत्ति तजो जितनी हैं।

दोष—साहित्य में वे बातें जिनसे काव्य के गुण में कमी हो जाती है। यह पाँच प्रकार का होता है—पद-दोष, पदांश-दोष, वाक्य-दोष, अर्थ-दोष और रस-दोष। इनमें से हर एक के पृथक्-पृथक् कई गौण भेद हैं।

दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता—दे० *चौरासी और दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता*।

दोहा—जा न विषम तेरा कला, सम शिव दोहा मूल (विषम चरणों में १३ और सम चरणों में ११ मात्राएँ होती हैं। विषम चरणों के आदि में जगण नहीं होना चाहिये)। अंत में लघु होता है। उ०—श्रीरघुबर राजिव नयन, रमारमण भगवान। / धनुष बाण धारण किये, बसहु सु मम उर आन॥ अपभ्रंश साहित्य से ही यह दोहा हिंदी-साहित्य में आया। कालिदास के *विक्रमोर्वशीय* अंक ४ में अपभ्रंश भाषा में यह दोहा शुद्ध रूप में पाया जाता है। यथा—मइँ जाणिअँ मिअलो अणी णिसअरु कोइ हरेइ। / जावाणु णवतलिसामल धाराहरु वरिसेइ॥

दोहवली—**तुलसीदास** का एक ग्रंथ (१५८३ ई० ?), जिसमें नीति, भक्ति, राम-महिमा, नाम माहात्म्य, तत्कालीन परिस्थितियाँ तथा आत्म-विषयक उक्तियाँ ही मिलती हैं। रचना साधारण है। इसमें ५७३ स्फुट दोहे हैं। यह संग्रह ग्रंथ प्रतीत होता है।

दोही—विषमनि पंद्रा साजो कला, सम शिव दोही मूल (विषम १५, सम ११, मा० छंद अंत ल)। उ०—विरद सुमिरि सुधि करत नितही हरि तुव चरन निहार। यह भव जल-निधि तें मुहिं तुरत, कब प्रभु करिहहु पार॥

दौलतराम—बसवा (मध्यप्रदेश) निवासी एक लेखक। इन्होंने रविषेणाचार्य-कृत जैन *पद्मपुराण* का १७६१ ई० में खड़ी बोली-गद्य में अनुवाद किया, जो ७०० पृष्ठ से ऊपर का एक बड़ा ग्रन्थ है। भाषा अधिक परिमार्जित नहीं, पर इससे यह पता चलता है कि 'फ़ारसी-उर्दू से कोई सपर्क न रखनेवाली अधिकांश शिष्ट जनता के बीच खड़ी बोली किस स्वाभाविक रूप से प्रचलित थी।'

द्युमत्सेन—**सत्यवान्** के पिता और शाल्व देश के राजा। दे० *सावित्री*।

द्रविड़—मद्रास से अंतरीप कुमारी तक दक्षिण भारत में एक प्रदेश। इसकी राजधानी **कांचीपुर** थी।

द्रुतमध्या—तीन भ दो ग अयुग्म सुहाए, न ज ज य युग्म बने द्रुतमध्या (विषम ३ भ ग ग, सम न ज ज य)। उ०—रामहिं सेवहु रामहिं गावो, तन मन है नित सीस झुकावो।

द्रुतविलंबित—द्रुतविलंबित सोह न भा भ रा (न भ भ र=१२ व० छंद)। उ०—तनय के बल को वह सोच के, तुरत भूल गया मकराक्ष को। इसका अन्य नाम सुंदरी भी है।

द्रुपद—चंद्रवंशी राजा पृषत के पुत्र और **पंचाल** देश के एक राजा। एक बार इन्होंने **द्रोणाचार्य** का तिरस्कार किया था। द्रोण ने अपने शिष्य पांडवों से द्रुपद को पकड़कर मँगवाया और इनसे आधा राज्य ले लिया (*म० आ० १३८*)। द्रोण-विनाश के लिये इन्होंने यज्ञ किया, जिसमें से **धृष्टद्युम्न** नामक एक बालक और कृष्णा (**द्रौपदी**) नामक एक कन्या निकली। महाभारत-युद्ध में ये द्रोण द्वारा मारे गये। इनके **शिखंडी** नामक एक पुत्र भी था।

द्रुह्यु—**शर्मिष्ठा** से **ययाति** का ज्येष्ठ पुत्र (*अग्नि० २७४*), जिसने ययाति का बुढ़ापा अपने शरीर में लेना अस्वीकार कर दिया था। ययाति ने इसपर इसे शाप दिया कि तेरी कोई अभिलाषा पूर्ण न होगी।

द्रोणाचल—कुमायूँ में द्रोणगिरि (दौनागिरि) पर्वत। लक्ष्मण को शक्ति लगने पर हनुमान यहीं संजीवनी बूटी लेने आये थे।

द्रोणाचार्य—भरद्वाज तथा घृताची अप्सरा के पुत्र। इन्होंने कौरवों और पांडवों को धनुर्विद्या की शिक्षा दी थी (*म० आ० १३२*)। इनकी पत्नी का नाम **कृपी** था। भीष्म की मृत्यु के पश्चात् ये कौरवों के सेनापति बनाए गये थे (*म० द्रो० ७*)। इनके विषय में भविष्यवाणी थी कि ये अपने पुत्र अश्वत्थामा (दे० *यथा०*) की मृत्यु का समाचार सुनकर मरेंगे। कृष्ण ने युधिष्ठिर से *'अश्वत्थामा हतो. नरो वा कुंजरो वा'* कहलवा कर इनकी मृत्यु करवाई थी। धृष्टद्युम्न ने इनका सिर काटा था (*१९२*)। दे० *द्रुपद*।

द्रौपदी—राजा द्रुपद की कन्या (*म० आ० १६६*)। इनका आरंभिक नाम कृष्णा था (दे० *द्रुपद*)।

अर्जुन ने इन्हें स्वयंवर में जीता था। इनका विवाह पाँचों पांडवों से हुआ था (१८४-१६६)। नारद के संमुख पांडवों ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जिस समय एक भाई द्रौपदी के पास हो, दूसरा उस समय वहाँ न जाए, यदि जाए, तो १२ वर्ष उसे वनवास करना पड़े। जब युधिष्ठिर जुए में द्रौपदी को भी हार गये थे, तब भरी सभा में दुर्योधन ने दुःशासन द्वारा इनको बुलवाया। दुर्योधन की आज्ञा से **दुःशासन** ने इनको वस्त्रहीन करने का यत्न किया और दुर्योधन ने अपनी जाँघ पर ताल ठोंक कर इन्हें अपनी जाँघ पर बैठने का संकेत किया। द्रौपदी ने इस संकट में कृष्ण को स्मरण किया, जिनकी कृपा से इनका चीर बढ़ता ही चला गया, जिसे खींचते-खींचते दुःशासन थक गया (*म० स०* ६८)। उसी समय भीम ने प्रतिज्ञा की कि मैं दुर्योधन की जाँघ को तोड़ूँगा तथा दुःशासन के कलेजे का रक्तपान करूँगा (*म० स०* ७७)। युद्ध में भीम ने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की। द्रौपदी के पाँचों पांडवों से पाँच पुत्र उत्पन्न हुए जो **अश्वत्थामा** द्वारा मारे गये। महाप्रस्थान के समय ये सर्वप्रथम मार्ग में गिर पड़ी थीं। इन्होंने जीवन में एक अपराध किया था। पाँचों पांडवों की पत्नी होते हुए भी ये अर्जुन से सबसे अधिक प्रेम करती थीं (*म० महा०* २)। इनकी गणना पंचकन्याओं में है। दे० *जयद्रथ*, *कीचक*। द्रौपदी के पर्य्याय०—पांचाली, सैरंध्री, कृष्णा, याज्ञसेनी, वेदिजा आदि।

द्वापर—चार युगों में तीसरा, जो ८६४००० वर्ष का माना गया है। **कृष्ण** इसी युग में वर्त्तमान थे।

द्वारकाप्रसाद मिश्र (१६०१ ई०-)—कवि और *कृष्णायन* (*रामचरितमानस* के ढंग पर कृष्ण का सप्रमाण गवेषणात्मक चरित्र) के रचयिता। इस काव्य की भाषा अवधी है।

द्वारिका—गुजरात में द्वारका। **जरासंध** के उत्पातों के कारण मथुरा छोड़कर कृष्ण ने इसे अपनी राजधानी बनाया था। दे० *रणछोड़*। कहा जाता है कि कृष्ण के उपरांत द्वारिका समुद्र में विलीन हो गई।

द्विकल—छंदशास्त्र में दो मात्राओं का समूह। यह दो प्रकार का होता है। एक में तो दोनों मात्राएँ पृथक्-पृथक् रहती हैं, जैसे जल, चल इत्यादि, और दूसरे में एक ही अक्षर दो मात्राओं का होता है, जैसे खा, जा, ला इत्यादि।

द्विजेंद्रलाल राय (१८६३-१६१३ ई०)—बँगला भाषा के प्रसिद्ध नाटककार, जिनके नाटक इन नामों से अनूदित हैं—

दुर्गादास, मेवाड़ पतन, शाहजहाँ, उस पार, नूरजहाँ, ताराबाई, भीष्म, चंद्रगुप्त, सीता, मूर्खमंडली, भारत रमणी, पाषाणी, सिंहल-विजय, राणा प्रतापसिंह, सुहराब और रुस्तम, अहल्या।

द्विविद—एक वानर जो सुग्रीव का घनिष्ठ मित्र था और राम की ओर से रावण से लड़ा था। द्वापर युग में भी यह जीवित था। नरकासुर से इसकी बड़ी मित्रता थी। कृष्ण ने जब **नरकासुर** का वध किया, तब यह द्वारिका में जाकर उपद्रव करने लग गया। अंत में बलदेव ने इसका वध कर दिया (*भा०* १०.६७)।

द्वैतवाद—वह दार्शनिक सिद्धांत, जिसमें आत्मा और परमात्मा अर्थात् जीव और ईश्वर दो भिन्न-भिन्न सत्ताएँ मानी जाती हैं। जिस प्रकार **शंकराचार्य** ने *वेदांत सूत्र* का भाष्य करके अपना **अद्वैतवाद** स्थापित किया, उसी प्रकार **मध्वाचार्य** ने उक्त ग्रंथ का अपना भाष्य रचकर द्वैतवाद का मंडन किया।

द्वैताद्वैत—**निंबार्काचार्य** का एक सिद्धांत, जिसमें जीव व्यवस्था-भेद से ब्रह्म से भिन्न भी है तथा अभिन्न भी है, अथवा ब्रह्मरूप में एक है और जगत्-रूप में अनेक है। इस वाद को भेदाभेद भी कहते हैं।

द्वैपायन—दे० *वेदव्यास*।

ध

धनंजय १ (९७४-९३ ई०)—राजा भोज के चचा, राजा मुंज के राजकवि और *दशरूपक* (भारतीय नाट्य-कला परक) नामक संस्कृत ग्रंथ के रचयिता। २ अर्जुन का नामांतर। उत्तरकुरु जीतने से अर्जुन का यह नाम पड़ा।

धनपाल—१ (वर्त्त० ई० १० वीं शती)—जैन कवि और *भविसयत कहा* (भविष्यदंतकथा) के रचयिता। इन्होंने जिस अपभ्रंश भाषा का प्रयोग किया है, वह भाषा जनता की भाषा के बहुत समीप है। दे० *जैन साहित्य*। २ (वर्त्त० ई० ११ वीं शती)—जैन कवि और *तिलक मंजरी* (यह गद्य-काव्य अपनी शैली में समस्त जैन साहित्य में अद्वितीय है) के रचयिता। ३ (वर्त्त० ई० १३ वीं) जैन कवि। इन्होंने धनपाल (ई० ११ वीं शती) कृत *तिलक मंजरी* का कथासार *तिलक सुंदरी कथासार* में लिखा है। दे० *जैन साहित्य*।

धनुर्यज्ञ—एक यज्ञ जिसमें धनुष का पूजन किया जाता था तथा उसके चलाने आदि की परीक्षा भी होती थी। जनक ने सीता के विवाहार्थ इस प्रकार का यज्ञ किया था। कंस ने कृष्ण को छलपूर्वक बुलाने के लिये इसी प्रकार के यज्ञ का अनुष्ठान किया था।

धनुष—दे० *त्रिकूटी*।

धन्ना (जन्म १४१५ ई०)—अजमेर मेरवाड़ा निवासी एक संत, जो जाति से जाट थे। ये आरंभ में मूर्तिपूजक थे, पर बाद में **रामानंद** से दीक्षित होकर ईश्वर के निराकार रूप में लीन हो गये। कहते हैं कि एक बार ईश्वर ने इनका खेत स्वयं बोया था। *भक्तमाल* में इनकी भक्ति की और भी अनेक अलौकिक कथाएँ लिखी हैं।

धन्वंतरि—देवताओं के वैद्य जो **समुद्रमंथन** से निकले १४ रत्नों में से एक थे। **अमृत** का कलश इन्हीं के हाथ में था। ये आयुर्वेद-प्रवर्त्तक देव थे (*भा०* ८.८)। ये **विष्णु** के अवतार माने जाते हैं।

धम्मपद—पाली भाषा में बुद्ध की शिक्षाओं का एक संग्रह।

धरणीदास (जन्म १६१६ ई० —माँझी छपरा) निवासी, एक संत और *प्रेम प्रकाश* तथा *सत्य प्रकाश* के भोजपुरी भाषा में रचयिता। ये एक अच्छे कवि और सच्चे भक्त थे।

धरणी वणिक—तेरी सगी नहीं धरणी है (त र स ग=१० (४,६) व० छंद)। उ०—तेरी सगी, नहीं धरणी है। प्यारे सगी, भली करणी है।

धर्म—ब्रह्मा के मानसपुत्र (*भा०* ३.१२.२५)। दक्ष की १३ पुत्रियों का विवाह इनसे हुआ था (४.१)।

धर्मदास १ (जन्म १४१८ और १४४३ ई० के बीच)—बांधवगढ़ निवासी एक संत। आरंभ में ये साकारोपासक थे, पर बाद में **कबीर** के शिष्य और कबीर की मृत्यु के पश्चात् कबीर पंथी गद्दी के उत्तराधिकारी बने। इनके ग्रंथों

में *सुख निधान* का बहुत ऊँचा स्थान है। कबीर के समान इन्होंने भी 'विरह' पर बहुत कुछ लिखा है। इनके 'शब्द' कबीर के पदों की अपेक्षा हीन हैं। इनकी भाषा प्रवाह-युक्त और स्वाभाविक है। उसपर पूर्वी हिंदी की पूर्ण छाप है। इनकी रचनाओं में खंडन-मंडन बिलकुल नहीं है। कबीर स्वयं कुछ नहीं लिखते थे। इन्होंने ही उनके पदादि का संग्रह किया है। २ (आ० का० १६४३ ई०)—एक कवि और *महाभारत* के हिंदी-पद्य में सफल अनुवादक।

धर्मपा (वर्त्त० ई० नवीं शती)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

धर्मव्याध—मिथिला निवासी एक व्याध, जो अपने माता-पिता का अनन्य भक्त था। इसने **कौशिक** नामक एक तपस्वी वेदाध्यायी ब्राह्मण को धर्म का तत्त्व समझाया था (*म० व० २०६-१६*)।

धर्म सूरि (आ० का० १२०६ ई०)—जैन ग्रंथ-कार और *जंबू स्वामी रासा* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

धर्मारण्य—१ बुद्ध-गया से चार मील पर एक वन। यहीं पर ब्रह्मसर है। २ बलिया और गाज़ीपुर ज़िलों के कुछ भाग। ३ विंध्याचल नगर के १४ मील उत्तर में मोहरपुर (मिर्ज़ा-पुर) ग्राम। ४ हिमालय में **मंदाकिनी** नदी के दक्षिण तट पर एक वन। ५ राजस्थान में कोटा के निकट एक वन जहाँ कण्व-आश्रम था।

धीरप्रशांत—दे० *नायक*।

धीरललित—दे० *नायक*।

धीरेंद्र वर्मा, डा० (१८९७ ई०-)—आधु-निक लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *अष्टछाप हिंदी भाषा का इतिहास, हिंदी भाषा और लिपि, ब्रज-भाषा व्याकरण, आधुनिक हिंदी काव्य* आदि हैं।

धीरोदात्त—दे० *नायक*।

धीरोद्धत—दे० *नायक*।

धुंधु—मधुकैटभ का पुत्र एक राक्षस। उत्तंक ऋषि की प्रेरणा से सूर्यवंशी कवलाश्व ने इसका वध किया था (*ह० वं० १.११*)।

धुंधुकारी—दे० *आत्मदेव*।

धुलेंडी—हिंदुओं का एक त्योहार जो होली जलने के दूसरे दिन चैत बदी १ को होता है। इस दिन प्रातःकाल लोग होली की राख मस्तक पर लगाते हैं। दूसरों पर अबीर, गुलाल, रंग आदि डालते हैं और नाचते-गाते हैं।

धूमकेतु—१ रावण की सेना का एक राक्षस। २ अग्नि का एक नाम।

धूम्रलोचन—**शुंभनिशुंभ** दैत्यों का सेनापति। इसका वध कालिका द्वारा हुआ।

धृतराष्ट्र—विचित्रवीर्य के बड़े पुत्र। इनका जन्म अंबिका से व्यास के नियोग द्वारा हुआ था। **अंबिका** ने सहवास के समय आँखें मूँद ली थीं, अतः धृतराष्ट्र जन्मांध थे (*म० आ० ६७, १०५-१०६, भा० ६.२२.२५*)। गांधारी से इन्हें दुर्योधन आदि सौ पुत्र तथा दुःशला नामक एक पुत्री प्राप्त हुई थी। ये बड़े न्याय-प्रिय थे। कौरवों के दासत्व से द्रौपदी को इन्होंने मुक्त करवाया था। महाभारत-युद्ध के उपरांत गांधारी और कुंती के साथ ये वन को चले गये थे (*भा० १.१३.५६*)।

धृष्टकेतु—**शिशुपाल** का पुत्र। इसकी कन्या करेणुमति का विवाह नकुल से हुआ था (म०

आ० ६३.७८ कुं०)। महाभारत-युद्ध में यह द्रोणाचार्य द्वारा मारा गया *(म० द्रो० १२५)*।

धृष्टद्युम्न—द्रुपद (दे० यथा०) के पुत्र। धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य को उस समय मारा था जब वे पुत्र-शोक में व्याकुल हो शस्त्र छोड़ कर बैठ गये थे *(म० द्रो० १६२)*। धृष्टद्युम्न द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा द्वारा मारे गये *(म० सौ० ८)*।

धेनकासुर—एक असुर जो गर्दभ-रूप धारण कर वृंदावन के एक जलाशय म रहता था। इसका वध बलदेव द्वारा हुआ *(भा० १०.१५)*।

धौम्य—एक ऋषि जिन्होंने **उद्दालक, आरुणि, उपमन्यु** और **वेद** नामक चार शिष्यों की परीक्षा ली थी और उन्हें आज्ञाकारी पाया था।

ध्रुव—एक प्रसिद्ध भक्त। राजा उत्तानपाद की सुनीति और सुरुचि दो रानियाँ थीं, जिनसे क्रमशः ध्रुव और उत्तम दो पुत्र उत्पन्न हुए। राजा सुरुचि और उत्तम के प्रति अधिक प्रेम रखते थे। एक दिन सुरुचि ने राजा की गोद से ध्रुव को उतार कर उत्तम को बिठा दिया। इससे ध्रुव को बहुत मानसिक कष्ट हुआ और यह तपस्या के लिये वन में चला गया। तप पूरा होने पर ध्रुव घर लौटा और राजा बना। शिशुमार की कन्या भ्रमि तथा इला से इसे तीन पुत्र प्राप्त हुए। बाद में यह विष्णु द्वारा प्रदत्त ध्रुवलोक में भेज दिया गया। ध्रुव का लोक अटल और सब नक्षत्रों से ऊपर कहा जाता है *(भा० ४.८-१३, विष्णु० १.१२, लिंग० १.६२, स्कंद० ४.१.१६-२१)*।

ध्रुवदास (र० का० १६२५ ई०)—वृंदावन निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि, जिन्होंने कृष्ण-लीला के साथ भक्ति और प्रेम पर भी बहुत लिखा। इनके *ध्रुवदास-कृत बानी, सिद्धांत विचार, भक्त नामावली* आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। ये कुशल लेखक थे।

ध्रुवस्वामिनी—**जयशंकर प्रसाद** का अंतिम नाटक (१६३३ ई०)।

चंद्रगुप्त की ओर से एक दूती ध्रुवस्वामिनी के पास गई और उसने उसके प्रति चंद्रगुप्त का प्रेम प्रकट किया। रामगुप्त ने गुप्त रूप से सब सुन लिया। उसी समय मंत्री शिखरस्वामी ने आकर शकों द्वारा शिविर के घिर जाने का समाचार दिया और शकराज की संधि की यह शर्त भी सुनाई कि रामगुप्त अपनी महादेवी (ध्रुवस्वामिनी) तथा अन्य सामंतों की स्त्रियों को देदे, नहीं तो वे सब युद्ध में मारे जाएँगे। रामगुप्त शर्तों से सहमत हो गया। ध्रुवस्वामिनी आत्महत्या के लिये प्रस्तुत हो गई। चंद्रगुप्त छद्मवेशी सामंत कुमारों के साथ ध्रुवस्वामिनी के रूप में गया और उसने शकराज को मारकर दुर्ग पर अधिकार कर लिया। राज्यपरिषद् के निर्णयानुसार रामगुप्त के स्थान पर चंद्रगुप्त राजा घोषित किया गया। रामगुप्त ने धोखे से चंद्रगुप्त का वध करना चाहा, किंतु एक सामंत द्वारा स्वयं मारा गया।

यह एक ऐतिहासिक और समस्यात्मक नाटक है। अभिनय की दृष्टि से प्रसाद का यह श्रेष्ठ नाटक माना जाता है।

ध्वनि-काव्य—मुख्य अर्थ की अपेक्षा व्यंग्य (प्रतीयमान) अर्थ की प्रधानता वाला काव्य। आचार्य मम्मट के अनुसार यह उत्तम काव्य है। ध्वनिकार आनंदवर्धन ने ध्वनि को ही काव्य की आत्मा बताया है।

ध्वनि संप्रदाय—अलंकार-शास्त्र के इतिहास में ध्वनि की कल्पना बड़ी ही सूक्ष्म आलोचना तथा गहन अध्ययन की परिचायिका है। ध्वनि

संप्रदाय रस संप्रदाय का ही विस्तृत रूप है। ध्वनि-वादियों ने रस, रीति, गुण, दोष आदि काव्यांगों को अपने दृष्टिकोण से सुव्यवस्थित किया।

रस कभी वाच्य नहीं होता, प्रत्युत व्यंग्य हुआ करता है। व्यंग्य अर्थ को प्राधान्य देकर इस परंपरा का प्रवर्त्तन करने वाले हैं आचार्य आनंदवर्द्धन। रसध्वनि, वस्तुध्वनि तथा आलंकारध्वनि ये तीन ध्वनि के प्रधान भेद हैं। वैयाकरणों की स्फोट-ध्वनि-मीमांसा ने आलंकारिकों को विशेष सहायता दी है। दे० *ध्वनि काव्य*।

न

नंद—१ कृष्ण के पालक पिता, यशोदा के पति और गोपों के प्रधान (*भा० १०.८.४८*)। कंस के भय से वसुदेव ने कृष्ण को इनके यहाँ पहुँचा दिया था (*१०.३.५१*) और इनकी पुत्री महामाया को कृष्ण के स्थान पर ले आए थे। नंद और यशोदा कृष्ण को अपने पुत्र से भी अधिक प्रेम करते थे। एक बार ये जल में डूब गये थे, किंतु कृष्ण ने इन्हें निकाल लिया था (*१०.२८.२–६*)। २ पाटलिपुत्र का राजा जिसने **चाणक्य** का अपमान किया था। इसपर चाणक्य ने चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा नंदवंश का समूल विनाश करवा दिया था।

नंदगाँव—वृंदावन का एक गाँव, जहाँ **नंद** रहते थे।

नंददास (र० का० ल० १५६८ ई०)—**अष्टछाप** के एक प्रसिद्ध कवि और *रासपंचाध्यायी*, *भ्रमरगीत*, *नासिकेत पुराण* (गद्य-ग्रंथ) आदि १६ पुस्तकों के रचयिता। इनका जन्म सोरों में हुआ था। ये तुलसीदास के भाई या गुरुभाई माने जाते हैं। यह भी कहा जाता है कि तुलसीदास इनसे मिलने के लिये व्रजभूमि आए थे।

अष्टछाप के कवियों में सूरदास को छोड़कर ये श्रेष्ठ माने गये हैं। ये अपनी कविता 'बहु जतन करि' लिखा करते थे, इसलिये यह जनश्रुति प्रसिद्ध है 'और सब गढ़िया, नंददास जड़िया।' इनकी रचना बहुत सरस तथा मधुर है। जिन अनुप्रास और चुने हुए पद-विन्यास आदि का अभाव सूरदास की कविता में दिखाई पड़ता है, वे नंददास में पूर्ण रूप से पाए जाते हैं। इनके *भ्रमरगीत* में भावुकता के साथ दार्शनिक तार्किकता का भी प्राधान्य है। गोपियों ने उद्धव को दर्शन की ही तर्क-भूमि में पराजित करने का प्रयत्न किया है। विशेष दे० रामरतन भटनागर-कृत *नंददास*।

नंदन—**इंद्र** का उपवन, जो सब उपवनों से सुंदर माना जाता है।

नंदनवन—दे० *नंदन*।

नंदा—हिमालय में एक ऊँची चोटी, जो हिम से ढकी रहती है। यहाँ नंदादेवी का प्रसिद्ध मंदिर है।

नंदिग्राम—अयोध्या के समीप एक गाँव, जहाँ राम के वनवास-काल में भरत ने तपस्या की थी।

नंदिनी—**कामधेनु** की पुत्री एक गाय, जो सब इच्छाओं को पूर्ण करती है। यह वसिष्ठ के पास थी। इसी की सेवा से अयोध्याधिपति **दिलीप** को रघु नामक पुत्र प्राप्त हुआ था। अष्टवसु ने जब इसे चुराया, तब वसिष्ठ के शाप से उन्हें पृथ्वी पर शांतनु-गंगा-पुत्र के रूप में

जन्म लेना पड़ा था (दे० *गंगा*)। **विश्वामित्र** और वसिष्ठ में इसी के लिये युद्ध हुआ था।

नंदी—एक श्वेत वृषभ, जो शिव का वाहन, द्वारपाल और गणों का स्वामी है। शिलाद मुनि ने पुत्र-प्राप्ति के लिये शिव की घोर आराधना की। प्रसन्न होकर शिव ने इन्हें पुत्र-प्राप्ति का वर दिया। यज्ञ के लिये भूमि खोदते समय उन्हें तीन आँखों वाला और चार हाथ वाला एक पुत्र प्राप्त हुआ। जब यह बालक आठ वर्ष का था, तब इसने शिव की आराधना की। प्रसन्न होकर शिव ने इसे अपना पुत्र बनाना स्वीकार कर लिया। वराहपुराणानुसार नंदी नामक एक ऋषि ने शिव की भक्ति की। प्रसन्न हो, शिव ने इन्हें कोई वर माँगने को कहा। इसपर नंदी ने कहा—'आप मुझे यही वर दीजिये, जिससे आप के प्रति मेरी अचल भक्ति रहे।' यह सुनकर शिव बोले—'तुम मेरे समान रूप विशिष्ट और त्रिलोचन होगे, तथा सब गुणों से विभूषित होगे और पार्श्वचरों के प्रधान समझे जाओगे (*शिव० शत० ६-७*)। इसने रावण को कैलास पर्वत के निकट आने से रोका था। रावण ने इसके वानर-मुख का उपहास किया था। इसपर इसने रावण को शाप दिया कि तुम्हारा शत्रु वानरों की ही सहायता से तुम्हारा वध करेगा (*वा० रा० उ० १६*)।

नई कविता—दे० *प्रयोगवाद*।

नकुल—चतुर्थ पांडव जो **माद्री** के गर्भ से पांडु के क्षेत्रज तथा अश्विनीकुमारों के औरस पुत्र थे (*म० आ० १२४*)। ये अत्यंत सुंदर, नीतिज्ञ और युद्धविद्या तथा अश्वविद्या में दक्ष थे (*म० वि० १२-१३*)। द्रौपदी तथा चेदिराज शिशुपाल की पुत्री करेणुमती से इन्हें एक-एक पुत्र प्राप्त हुआ (*भा० ६.२२*)।

नख-शिख—पूरी देह के अंग प्रत्यंगों के सौंदर्य का वर्णन। इसमें दैवी पात्रों का चरण से प्रारंभ कर ऊपर की ओर और मानवी पात्रों का सिर से प्रारंभ कर नीचे की ओर वर्णन किया जाता है। हिंदी-कवियों ने अनेक *नख-शिख* लिखे हैं। कई कवियों ने प्राचीन परंपरा के अनुसार नायक-नायिका के प्रत्यंग का वर्णन किया है। कवि यह वर्णन आलंबन विभाव के रूप में किया करते हैं।

नगण—दे० *गण*।

नचिकेता—एक बार इनके पिता वाजश्रवा या उद्दालक मुनि ने विश्वजित् यज्ञ किया। इस यज्ञ में अपना सर्वस्व दान कर देना पड़ता है। नचिकेता बार-बार अपने पिता से पूछने लगा—'हे तात ! आप मुझे किसको दान दे रहो हो।' पिता ने चिढ़कर कहा—'तुम्हें देता हूँ मृत्यु को।' नचिकेता यमराज के पास पहुँचे, परंतु यमराज उस समय घर पर नहीं थे। यमराज की प्रतीक्षा में इनको तीन दिन तक उपवास करना पड़ा। अतिथि को भूखा रखने के पाप के प्रायश्चित के रूप में यम ने इनको तीन वर दिये। वरों के अनुसार इन्होंने यमराज से १ क्रोध शांत करके पिता का इनसे पूर्ववत् व्यवहार, २ अग्नितत्त्व का ज्ञान और ३ अमरत्व का ज्ञान प्राप्त किया (*क० उ० १.१, तै० ब्रा० ३.११.८*)।

नट—नाटक के अभिनेता का साधारण नाम, जो पीछे चलकर एक जाति बन गई। इसका मुखिया सूत्रधार होता था। दे० *सूत्रधार*।

नटी—नाटक की अभिनेत्रियों का साधारण नाम। प्रस्तावना में आने वाली सूत्रधार की सहचारी भी इसी सामान्य नाम से पुकारी जाती थी।

नमरूद—एक बादशाह जो खुदाई का दावा करता था। इसने अपने विरोधी **इब्राहिम** को अग्नि में फेंक दिया, किंतु वे बच गये।

नमुचि—प्रसिद्ध दानवराज, वृत्रासुर का अनुयायी (*भा० ६.१०*)। इंद्र ने इसके भय से इससे मित्रता कर ली और कहा कि मैं भीगे या सूखे अस्त्र से तुम्हारा वध नहीं करूँगा। एक दिन विश्वासघात कर, इंद्र ने समुद्र के जलफेन से इसका वध कर दिया। इसपर यह इंद्र के पीछे-पीछे भागा। अंत में ब्रह्मा ने इंद्र और नमुचि को स्नान करवा, इनके पापों का क्षय कर दिया (*म० श० ४३*)।

नमेरू—एक वृक्ष। कवि-प्रसिद्धि है कि सुंदरियों के गान से यह विकसित हो जाता है।

नर—दे० *नरनारायण*।

नरक—वह स्थान जहाँ पापी मनुष्यों की आत्माएँ पाप का फल भोगने के लिये भेजी जाती हैं। यमराज यहाँ के राजा हैं। अंधतामिस्र, रौरव, कुंभीपाक, शूकरमुख, कृमिभोजन आदि २१ नरक हैं।

नरकासुर (भौमासुर)—भूमि-पुत्र एक प्रसिद्ध असुर। विष्णु ने इसे **प्राग्ज्योतिषपुर** का राजा बना दिया। इसका विवाह विदर्भकुमारी माया से हुआ, जिससे **सुमाली** आदि चार पुत्र उत्पन्न हुए। **बाणासुर** के संपर्क से इसमें दुष्टता आ गई। इसने ब्रह्मा से अमरत्व का वर प्राप्त किया और इंद्र को जीत कर इंद्र की माता अदिति के कुंडल छीन लिये। इंद्र की प्रार्थना पर कृष्ण ने इसका वध कर दिया। इसने १६१०० स्त्रियों को बंदी बना रखा था। कृष्ण ने इनको मुक्त कर दिया। ये सब कृष्ण की रानियाँ बनीं। कृष्ण ने अदिति के कुंडल भी लौटा दिये, जो नरकासुर छीन लाया था (*ह० वं० २.६३, भा० १०.५६*)।

नरनारायण—धर्म तथा दक्षपुत्री के पुत्र (*भा० २.७*)। नर-नारायण ने बदरिकाश्रम हिमालय में घोर तपस्या की। इंद्र ने इनकी तपस्या भंग करने के लिये अप्सराएँ भेजीं, किंतु इन्होंने उनकी अप्सराओं से भी सुंदर उर्वशी नामक अप्सरा बना दी (*११.४*)। द्वापरयुग में नारायण कृष्ण और नर अर्जुन के रूप में अवतीर्ण हुए (*१०.८६.६०*)।

नरपति नाल्ह—*बीसलदेवरासो* (११५५ ई०) के रचयिता। इसमें इन्होंने अपने आश्रयदाता अजमेर-नरेश विग्रहराज चतुर्थ (बीसलदेव) के चरित्र का वर्णन किया है।

नरसिंह—दे० *नृसिंह*।

नरसी मेहता (१४१५-८१ ई०)—एक गुजराती भक्त जो दान देने के लिये प्रसिद्ध हैं। एक बार इनके पास धन नहीं रहा था। इसी बीच इनकी बड़ी पुत्री को प्रसव हुआ। कहते हैं कि भगवान् ने स्वयं आकर उस दिन इनकी सहायता की थी।

नरहरि बंदीजन (१५०५-१६१० ई०)—असनी (फतेहपुर) निवासी एक प्रसिद्ध कवि और *रुक्मिणी मंगल*, *छप्पय नीति* तथा *कवित्त संग्रह* के रचयिता। **अकबर** ने इन्हें महापात्र की उपाधि दी थी और इनके एक छप्पय से प्रसन्न होकर, अपने राज्य में गोवध बंद करवा दिया था।

नरेंद्र (१९२३ ई०-)—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *शूल-फूल* (१९३४), *कर्णफूल* (१९३६) (*प्रभात फेरी* में इन दोनों संग्रहों की कविताएँ संकलित हैं), *प्रवासी के गीत*, *पलाशवन*, *मिट्टी और फूल*, *अग्निशस्य* (काव्य-संग्रह) आदि हैं। इनकी

कविताएँ श्रृंगारिक और प्रगतिवादी हैं। श्रृंगारिक रचनाओं में कहीं तो अत्यधिक नैराश्य आ गया है और कहीं पर मधुर कोमल स्मृतियाँ संचित हैं। प्रगतिवादी कवि के रूप में ये समाजवादी जीवन-दर्शन के कट्टर समर्थक बन गये प्रतीत होते हैं। पर यह समर्थन अत्यंत संयत तथा मर्यादित रूप में है।

नरोत्तमदास (आ० का० १५४५ ई०)—बाड़ी (सीतापुर) निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि और *सुदामा चरित्र* तथा *ध्रुव चरित्र* (अप्राप्त) के रचयिता। इनकी छोटी-सी रचना (*सुदामा चरित्र*) ने इनको बहुत लोक-प्रिय बना दिया है।

नर्मदा—मध्यप्रदेश की एक नदी जो अमरकंटक पर्वत से निकलकर खंभात की खाड़ी में गिर जाती है।

नल—१ निषधदेशाधिपति वीरसेन के पुत्र (*वायु० २२६ आदि*), जो विदर्भकुमारी दमयंती के रूप पर मुग्ध हो गये थे। एक बार नल ने एक सुनहले रंग का हंस पकड़ लिया। हंस ने मनुष्य-स्वर में नल से कहा—'आप मुझे छोड़ दें, मैं आपका उपकार करूँगा। मैं दमयंती के समक्ष आपके रूपगुणादि की ऐसी प्रशंसा करूँगा कि वे आपके अतिरिक्त किसी को अपना पति न बनावेंगी।' नल ने हंस को छोड़ दिया। हंस ने भी दमयंती के पास जाकर नल की बहुत प्रशंसा की। दमयंती के पिता भीमसेन ने दमयंती के लिये स्वयंवर रचा। स्वयंवर में नल और देवता भी आए। देवताओं ने नल का स्वरूप धारण कर लिया, किंतु दमयंती ने पहिचान कर नल के कंठ में जयमाला डाल दी। कलि भी इस स्वयंवर में आए थे। विवाह के बारहवें वर्ष कलि ने नल के शरीर में प्रवेश किया और फलस्वरूप नल अपने भाई पुष्कर के साथ द्यूत खेलने में अपना राज्य हार गये। नल दमयंती के साथ वन में चले गये। एक दिन नल दमयंती को सुप्तावस्था में छोड़कर चले गये। दमयंती अत्यंत दुःखी होकर अंत में अपनी माता के घर चली गई। इधर नल को **कर्कोटक** नामक सर्प ने डसा, जिससे नल विरूप हो गये और कलि का प्रभाव भी नष्ट होने लगा। नल ने अयोध्या-नरेश **ऋतुपर्ण** के यहाँ सारथि के रूप में बाहुक नाम से कार्य किया। नल ने उन्हें अश्वविद्या सिखाई तथा स्वयं उनसे द्यूत सीखा। पता लगने पर, दमयंती के पिता ने धोखे से नल को बुलाने के लिये ऋतुपर्ण के यहाँ कहलवाया कि दमयंती का स्वयंवर है। नल ऋतुपर्ण के सारथि बनकर आए और इस प्रकार नल-दमयंती का पुनर्मिलन हुआ। नल ने, जो अब द्यूत में दक्ष हो गये थे, पुष्कर को फिर द्यूत खेलने के लिये बुलाया और उसमें उसे हराकर अपना राज्य पुनः जीत लिया (*म० व० ५३-७८*)। २ राम-सेना का एक वानर, जो **नील** का साथी था। राम-सेना को समुद्र पार उतारने के लिये नल-नील ने समुद्र पर पुल बनाया था।

नल कूबर—कुवेर का पुत्र (*म० स० १०*) और **मणिग्रीव** का भाई। नारद ने मणिग्रीव और इसको तपोवन में स्त्री-क्रीड़ा करते देख, अर्जुन-वृक्ष होने का शाप दिया था (दे० *यमलार्जुन; भा० १०.६-१०*)।

नल्लसिंह भट्ट (आ० का० १२९८ ई०)—एक कवि। *विजयपालरासो* के रचयिता। इनके विषय में खोज हो रही है।

नव नाथ—दे० *नाथ संप्रदाय*।

नवनिधि—महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप,

मुकुंद, कुंद, नील, खर्व। इन निधियों के स्वामी कुबेर हैं और उनके अनुचर यक्षगण रक्षक हैं।

नवरत्न सटीक—**विट्ठलनाथ** (जन्म १४५८ ई०)—का व्रज-भाषा-गद्य में एक ग्रंथ, जिसमें वल्लभ संप्रदाय के सिद्धांत वर्णित हैं।

नवलसिंह कायस्थ (र० का० १८१६-६६ ई०)—झाँसी निवासी, समथर-नरेश हिंदुपति के आश्रित एक भक्त कवि और *रासपंचाध्यायी*, *रामचंद्र-विलास*, *रसिकरंजनी*, *मूल भारत*, *आल्हा-रामायण*, *मूलढोला* आदि के रचयिता।

नवीनचंद्रसेन (१८४७-१६०६ ई०)—बँगला भाषा के प्रसिद्ध कवि, जिनका एक काव्य *पलासी का युद्ध* के नाम से अनूदित है।

नष्ट—प्रस्तार की लंबी प्रक्रिया के बिना ही किसी वर्णिक या मात्रिक छंद के किसी विशिष्ट स्वरूप को बताने वाला **प्रत्यय**। वर्णिक नष्ट में सूची के आधे आधे अंक स्थापित करो और मात्रा नष्ट में पूरे पूरे अंक स्थापित करो। छंद के पूर्णांक से प्रश्नांक घटाओ। जो शेष बचे उसके अनुसार दाहिनी ओर से बाईं ओर के जो-जो अंक क्रमपूर्वक घट सकते हों, उनको गुरु कर दो। मात्रिक में जहाँ-जहाँ गुरु बने उनके आगे की एक-एक मात्रा मिटा दो। यथा—

वर्णिक नष्ट

४ वर्णों में १० वाँ रूप कैसा होगा?
रीति—पूर्णांक ८×२=१६ में से १० घटाए, शेष ६ रहे। ६ में ४ और २ ही घट सकते हैं। इसलिये इन दोनों को गुरु कर दिया। यथा—

अर्द्धसूची १ २ ४ ८
साधारण चिह्न— । । । ।
उत्तर । ऽ ऽ ।
यही १० वाँ भेद हुआ।

मात्रिक नष्ट

६ मात्राओं में ७ वाँ भेद कैसा होगा?
रीति—पूर्णांक १३ में से ७ घटाओ, शेष ६ रहे। ६ में ५ और १ ही घट सकते हैं। अतएव इन दोनों को गुरु कर दिया और उनके आगे की एक-एक मात्रा मिटा दी। यथा—

पूर्णसूची— १ २ ३ ५ ८ १३
साधारण चिह्न— । । । । । ।
उत्तर ऽ . । ऽ . ।
यही ७ वाँ भेद सिद्ध हुआ।

नसृविदग्ध न्याय—"घोड़े का खो जाना और रथ का जल जाना।" किसी रथवान् का एक घोड़ा खो गया और दूसरे का रथ जल गया। परंतु पहिले ने अपने रथ में दूसरे का घोड़ा जोतकर कार्य चलाया। एवं विवशता में परस्पर साहाय्य लेकर कार्यनिर्वाह करने में इस उक्ति का प्रयोग होता है। दे० *अंधपंगु न्याय*।

नहुष—आयु के पुत्र, ययाति के पिता एक प्रसिद्ध राजा। विश्वरूप के मारने से जब इंद्र को ब्रह्महत्या लगी, तब उनकी अनुपस्थिति में इनकी महान् तपस्या को देखकर इन्हें इंद्रपद दिया गया। इंद्रपद प्राप्त होने के बाद, इनको गर्व हो गया और इनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई। इन्होंने इंद्राणी को अपनी पत्नी बनाना चाहा। बृहस्पति की संमति से इंद्राणी ने इनसे सप्तर्षियों द्वारा ढोई हुई पालकी पर बैठकर आने को कहा। इन्होंने सप्तर्षियों को शीघ्रता से चलने के लिये '*सर्प-सर्प*' (चलो-चलो) कहा। इसपर क्रुद्ध होकर अगस्त्य ने इन्हें सर्प हो जाने का शाप दिया। इनकी प्रार्थना पर अगस्त्य ने इन्हें यह भी कहा कि तुम्हारा उद्धार तुम्हारे वंश के युधिष्ठिर नामक एक राजा से होगा। पांडवों के वनवास के समय इसी सर्प (नहुष) ने भीम को पकड़ लिया। जब युधिष्ठिर वहाँ आए, तब उन्होंने भीम को छुड़ाकर इनको शाप-मुक्त किया (*म० उ० ११-१७, भा० ६.१३*)।

मैथिलीशरण गुप्त ने *नहुष* नाम से एक काव्य लिखा है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के पिता गिरिधरदास ने *नहुष* नाम से एक नाटक भी लिखा है।

नांदी—वह आशीर्वादात्मक श्लोक या पद्य जिसका सूत्रधार नाटक आरंभ करने के पहिले पाठ करता है।

नागकन्या—नाग जाति की कन्या। पुराणानुसार नागकन्याएँ अत्यंत सुंदरी व रूपवती होती हैं।

नागबल—**भीम**, जिसमें दस हज़ार हाथियों का बल था।

नागर—एक **अपभ्रंश** भाषा, जिसमें **शौरसेनी** का अधिक प्रभाव था और जो गुजरात व राजपूताने में प्रचलित थी।

नागरी—दे० *देवनागरी*।

नागरीदास, भक्तवर (जन्म १६९९ ई०)—कृष्णगढ़-नरेश एक भक्त कवि और *ब्रजसार*, *रामचरितमाला*, *वैराग्य-वल्लरी*, *जुगलभक्ति-विनोद* आदि ७३ पुस्तकों के रचयिता।

नागरी प्रचारिणी पत्रिका—नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की १८९६ ई० से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका। प्रथम २४ वर्षों तक यह मासिक रही। आरंभ में गौरीशंकर हीराचंद ओझा, मुंशी देवीप्रसाद, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, श्यामसुंदरदास इसके संपादक रहे। वासुदेवशरण अग्रवाल, सुधाकर द्विवेदी, किशोरीलाल गोस्वामी, राधाकृष्णदास, रामचंद्र शुक्ल, केशवप्रसाद मिश्र, लल्लीप्रसाद पांडेय, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र आदि भी इसके संपादक रह चुके हैं।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी—हिंदी की सब से पुरानी संस्था। इस अखिल भारतीय संस्था की स्थापना हिंदी-भाषा-प्रचार और प्राचीन साहित्य के उद्धार एवं उसमें नवीन अभिवृद्धि के उद्देश्य से १६ जुलाई १८९३ ई० में श्यामसुंदरदास, रामनारायण मिश्र और ठाकुर शिवकुमारसिंह द्वारा हुई। इसके कार्यकर्त्ताओं के उद्योग से १८९८ में सरकारी कचहरियों में नागरी का प्रवेश हुआ और अदालती आवेदन पत्र तथा सम्मन आदि नागरी में लिखे जाने लगे। सभा, हिंदी प्रचार का उद्देश्य रखने वाली समूचे भारत में लगभग ५२ संस्थाओं से संबंध रखती है। सभा का कार्य १० विभागों में बँटा हुआ है। इसके अंतर्गत एक आर्यभाषा पुस्तकालय है, जिसमें २०० से ऊपर पत्र-पत्रिकाएँ आती हैं। इसमें लगभग ३५००० मुद्रित तथा लगभग ३००० हस्तलिखित महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं, अन्य देशी-विदेशी भाषाओं के ग्रंथों की संख्या लगभग १५०० है। इस विशाल संग्रहालय में अनेक अनुसंधानकर्त्ता कार्य करते हैं। भारतीय साहित्य और संस्कृति से संबंध रखने वाली अमूल्य वस्तुओं के, जो समय-समय पर विभिन्न स्थानों में पाई जाती हैं, संग्रह के लिये 'भारत कलाभवन' की स्थापना हुई। सभा ने १८९७ से त्रैमासिक 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का प्रकाशन आरंभ किया, जिसका संपादन एक मंडल द्वारा होता है। विविध विषयों के खोजपूर्ण निबंध इसमें प्रति वर्ष प्रकाशित होते हैं। सभा प्रतिवर्ष खोज करके अनेक ग्रंथों का पता भी लगाती है। सभा की ओर से अनेक ग्रंथमालाएँ भी प्रकाशित होती हैं। यह सभा **'हिंदी-साहित्य सम्मेलन'** की जन्मदात्री है। सभा की ओर से अनेक पुरस्कार भी दिये जाते हैं, जिनमें 'राजा बलदेवदास', 'बटुक प्रसाद', 'रत्नाकर', 'छुन्नूलाल', 'जोधसिंह', 'श्यामसुंदरदास'

पुरस्कार प्रमुख हैं। अहिंदी-भाषी क्षेत्रों में हिंदी-साहित्य के विषय में जानकारी प्राप्त कराने के लिये इस सभा ने 'हिंदी रिव्यू' (*Hindi Review*) नामक एक पत्र भी निकाला है।

नागार्जुन (ई० ७ वीं शती)—बौद्धों की महायान शाखा के एक प्रसिद्ध आचार्य। दे० *शून्यवाद*।

नागिनी—योग के भाषानुसार मूलाधार-चक्र (गुह्य स्थान के बीच) की योनि के मध्य में विद्युल्लता के आकार की सर्प की भाँति साढ़े तीन चक्रों में मुड़ी हुई कुंडलिनी, जो सुषम्णा नाड़ी के मुख की ओर है। यह सृजनात्मक शक्ति है और इसी के जागृत होने से योगी को सिद्धि प्राप्त होती है। इसे बंकनाली भी कहते हैं।

नाटक—**रूपक** का सर्व-प्रधान भेद। अपनी प्रधानता के कारण यह शब्द रूपक का पर्य्याय ही बन गया है, और अब तो इसने रूपक शब्द को अपदस्थ ही कर दिया है। *नाट्य-शास्त्र* के अनुसार यह किसी प्रसिद्ध आख्यान (जो कल्पित न हो) को लेकर लिखा जाना चाहिये। इसमें नायक धीरोदात्त और राजा या राजर्षि हो, अंक ५ से १० तक हों (दस अंक होने पर 'महानाटक' कहलाता है), प्रधान रस शृंगार और वीर हों। इसकी भाषा सरल, सुगम और शैली उदात्त हो। यह पूर्वरंग, कविता, गायन आदि से कोमल हो। आधुनिक नाटकों में ये नियम आवश्यक नहीं समझे जाते।

हिंदी में पूर्व-भारतेंदु-काल के नाटकों में बनारसीदास (जन्म १५८३ ई०) का *समयसार*, हृदयराम-कृत *हनुमन्नाटक* (१६२३), जसवंतसिंह-कृत *प्रबोधचंद्रोदय* (ल० १६४३), नेवाज-कृत *शकुंतला* (१६८०), ब्रजवासीदास-कृत *प्रबोधचंद्रोदय* उल्लेखनीय हैं। ये प्रायः संस्कृत के अनुवाद थे। पद्यात्मक संवाद के रूप में होने के कारण ही ये नाटक नाम से पुकारे जाते हैं। *देव माया प्रपंच*, काशिराज की आज्ञा से बना हुआ *प्रभावती* तथा रीवा-नरेश विश्वनाथसिंह-कृत *आनंद रघुनंदन* (१७३३) भी पूर्व-भारतेंदु-काल के नाटक हैं। पर पात्रों के प्रवेश आदि नियमों का पालन करते

सिंह का *शकुंतला* नाटक यद्यपि अनुवाद है, **राधाचरण गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, किशोरीलाल गोस्वामी** (*प्रणनी प्रणय, मयंक-मंजरी*), शालिग्राम (*माधवानल-कामकंदला*) **राधाकृष्णदास** आदि उल्लेखनीय हैं। पर अच्छा प्रभाव डाला। भाषा भी ब्रज-भाषा से हटकर खड़ी बोली की ओर आने लगी, और उर्दू के शब्दों का भी समावेश होना आरंभ हो गया। नाटकों का विषय धार्मिक की अपेक्षा सामाजिक और राजनीतिक होने लगा।

द्विवेदी-युग में सीताराम ने बहुत-से संस्कृत नाटकों का हिंदी अनुवाद किया। **सत्यनारायण कविरत्न** ने **भवभूति**-कृत *उत्तररामचरित* तथा *मालती माधव* और गंगाप्रसाद ने शेक्सपियर के बहुत-से नाटकों का अनुवाद किया। इस युग में बँगला के नाटकों का भी अनुवाद हुआ। कुछ मौलिक नाटक भी लिखे गये। इनमें कुछ तो साहित्यिक कहे जा सकते हैं और कुछ विशेष रूप से पारसी रंगमंच के लिये लिखे गये थे। प्रथम प्रकार के नाटकों में मिश्रबंधु-कृत *नेत्रोन्मीलन*, बदरीनारायण भट्ट-कृत *दुर्गावती*, *चंद्रगुप्त*, *वेनु-चरित*, राय **देवीप्रसाद पूर्ण**-कृत *चंद्रकला-भानुकुमार*, **मैथिलीशरण गुप्त**-कृत *चंद्रहास*, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी-कृत *मधुर-मिलन*, **माखनलाल चतुर्वेदी**-कृत *कृष्णार्जुनयुद्ध*, **चतुरसेन शास्त्री**-

कृत *अमर राठोर, उत्सर्ग, अजीतसिंह,* **बेचन शर्मा पांडेय 'उग्र'**-कृत *महात्मा ईसा*, **रामनरेश त्रिपाठी**-कृत *जयंत*, सुमित्रानंदन पंत-कृत *ज्योत्स्ना* आदि हैं। इन नाटकों में यद्यपि गद्य का प्राधान्य था, तथापि पद्य का भी अच्छा प्रयोग होता था। पारसी रंगमंच के लिये लिखे नाटकों में नारायणप्रसाद 'बेताब'-कृत *रामायण, महाभारत*, राधेश्याम कथावाचकद्वारा लिखित *वीर अभिमन्यु, परमभक्त प्रह्लाद, श्रीकृष्णावतार, उषा-अनिरुद्ध* हरेकृष्ण जौहर-कृत *पति भक्ति* आदि उल्लेखनीय हैं। इन नाटकों में कथा-विस्तार और चमत्कार की ओर अधिक ध्यान दिया जाता था। इस काल में समाज की रुचि धार्मिक विषयों से हटकर ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक विषयों की ओर आने लगी। यथार्थवाद की ओर भी कुछ झुकाव हुआ।

साहित्यिक दृष्टि से **जयशंकर प्रसाद** का कार्य बहुत सराहनीय है। इनके नाटक अधिकतर ऐतिहासिक हैं। उनमें मनोवैज्ञानिकता पर्याप्त मात्रा में है और कहीं-कहीं बड़े सुंदर अंतर्द्वंद्व दिखलाए गये हैं। नाटकों में नाट्य-शास्त्र के नियमों की अवहेलना की गई है। इनके नाटक साधारण रंगमंच के अयोग्य हैं, उनके लिये विशेष रंगमंच चाहिये। प्रसिद्ध आधुनिक नाटककारों में **लक्ष्मीनारायण मिश्र, गोविंदवल्लभ पंत, हरिकृष्ण प्रेमी, उपेंद्रनाथ अश्क, उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविंददास, जगन्नाथप्रसाद मिलिंद** आदि हैं। अन्य नाटककार **सुदर्शन, भगवतीप्रसाद वाजपेयी,** वृंदावनलाल वर्मा, **सत्येंद्र, कैलाशनाथ** भटनागर आदि हैं। आजकल के नाटकों पर **इब्सेन, गॉल्ज़वर्दी, शॉ** आदि का अधिक प्रभाव है। ये आकार में बहुत छोटे हो गये हैं, दो या तीन अंकों से अधिक नहीं। ये प्रायः वर्त्तमान समय से ही संबध रखते हैं और इनमें वस्तुवाद (*realism*) का प्राधान्य रहता है। ये मनोवैज्ञानिक और समस्यात्मक होते हैं। इनमें रंगमंच के विधान व निर्देशन को अधिकाधिक महत्त्व प्राप्त होता जा रहा है। **संकलन-त्रय** के पालन की ओर भी इनकी प्रवृत्ति हो चली है। लक्ष्मीनारायण-कृत *सिंदूर की होली*, पृथ्वीनाथ शर्मा-कृत *दुविधा* और *अपराधी* तथा एकांकी नाटकों में ये प्रभाव विशेषतया दिखाई देते हैं। दे० *एकांकी नाटक* तथा *रेडियो नाटक*। विशेष दे० ब्रजरत्नदास-कृत *हिंदी नाट्य साहित्य*, सोमनाथ गुप्त-कृत *हिंदी नाटक साहित्य का इतिहास*, नगेंद्र-कृत *आधुनिक हिंदी-नाटक*।

नाटकीय रूढ़ियाँ—नाटक देखते समय दर्शक द्वारा जान-बूझ कर अविश्वास को उपेक्षित कर, स्वीकार करली गई कुछ अयथार्थ बातें। कुछ घंटों में अधिक समय की घटना का समेटना, उसी मंच पर विविध स्थानों के दृश्य उपस्थित करना, कमरे आदि के दृश्य में सामने की चौथी दीवाल की अनुपस्थिति आदि अनेक नाटकीय रूढ़ियाँ हैं।

नाटकीय व्यंग्य—रंगमंच पर की गई कोई बात, जिसका दर्शकों के निकट मंच के पात्रों की अपेक्षा कुछ अधिक मूल्य हो। पात्र उतनी घटना जानते हैं जितनी से उनका संबंध रहता है, पर दर्शकों को बहुत अधिक पता रहता है। इसी से व्यंग्य की सृष्टि हो जाती है।

नाट्यशाला—**रंगमंच** का नामांतर।

नाट्य-शास्त्र, भरत का (र० का० ल० दूसरी शती ई० पू०)—देवताओं के मनोरंजनार्थ ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य (कथोपकथन)

सामवेद से गायन; *यजुर्वेद* से अभिनय-कला और *अथर्ववेद* से रस लेकर त्रेतायुग के आरंभ में *नाट्य-वेद* का निर्माण किया। भरतमुनि ने *नाट्य-वेद* के आधार पर *नाट्य-शास्त्र* का निर्माण किया। यह शास्त्र ३६ परिच्छेदों में विभाजित है, जिसमें ५००० श्लोक हैं। नाट्य-मंडप, देवार्चन, तांडव, पूर्वरंग, नांदी, प्रस्तावना, रस, भावादि, अभिनय, नृत्य-भाव, पात्र, प्रवृत्ति, छंद, अलंकार, कथावस्तु, संधि, वृत्ति, हाव-भाव, नायिका-नायक भेद, अभिनय-कला-दर्शक, वादन-यंत्र प्रभृति विषयों पर इसमें विस्तार से लिखा गया है।

नाथ (हरिनाथ)—काशी निवासी एक रीति-कवि। *अलंकार दर्पण* (१७६६ ई०) के रचयिता।

नाथ—मत्स्येंद्रनाथ के अनुयायी योगियों की उपाधि।

नाथ संप्रदाय—आदिनाथ द्वारा प्रवर्तित संप्रदाय जिसमें नव नाथ (**आदिनाथ, मत्स्येंद्रनाथ, गोरखनाथ, गाहिणीनाथ, चर्पटनाथ, चौरंगीनाथ, ज्वालेंद्रनाथ, भर्तृनाथ और गोपीचंदनाथ**) की चर्चा की जाती है। नाथ पंथ दार्शनिकता की दृष्टि से तो शैवमत के अंतर्गत है, किंतु व्यावहारिक दृष्टि से पतंजलि के हठयोग से संबंध रखता है। ईश्वर की भावना शून्यवाद में है, जो वज्रयान शाखा से ली गई है। सिद्धों और नाथ पंथियों ने भाव, भाषा, छंद, अलंकार, नाना मतों का खंडन, गुरु महिमा, पारिभाषिक शब्द आदि विषयों में कबीर आदि संतों को यथेष्ट प्रभावित किया। दे० *सिद्ध साहित्य* तथा *संत साहित्य*। विशेष दे० हजारीप्रसाद द्विवेदी-कृत *नाथ संप्रदाय*।

नाथूराम शंकर शर्मा (१८५९-१९३१ ई०)—ब्रज-भाषा और खड़ी बोली के कवि। *वायस-विजय गर्भ रंडा रहस्य* आदि के रचयिता। इनके काव्य में उपदेशात्मकता की मात्रा अधिक है, किंतु भाषा में चमत्कार के कारण कविता भार-सी नहीं प्रतीत होती। *शंकर सर्वस्व* में इनकी संपूर्ण कविताएँ संगृहीत हैं।

नानक (१४६९-१५३८ ई०)—सिख संप्रदाय के प्रवर्त्तक। तलवंडी (लाहौर) निवासी। कालूचंद्र खत्री तथा तृप्ता के पुत्र, सुलक्षणी के पति तथा श्रीचंद और लक्ष्मीचंद के पिता। बचपन से ही ये साधु-सेवी थे। ये 'नाम' के उपासक हैं, किंतु अन्य साधुओं की भाँति इन्होंने आकाश पाताल के कुलाबे नहीं मिलाये हैं और न उलटबाँसियाँ कही हैं। इन्होंने हिंदू-संस्कृति से संबंध विच्छेद न करते हुए अपने मत में एकेश्वरवाद का प्राधान्य रखा है। ये भजन गाया करते थे, जो *ग्रंथ साहब* में संगृहीत हैं। ये भजन कुछ पंजाबी और कुछ देश की सामान्य काव्य-भाषा हिंदी में हैं जो कहीं-कहीं खड़ी बोली और ब्रज-भाषा के रूप में हैं।

नाभादास (वर्त्त० १६०० ई०)—**अग्रदास** के शिष्य एक प्रसिद्ध राम-भक्त कवि। *भक्तमाल* तथा दो *अष्टयाम* (अवधी तथा ब्रज-भाषा में) के रचयिता। तुलसीदास से इनकी भेंट हुई थी।

नामदेव (१२६०-१३५० ई०)—महाराष्ट्र के एक संत, जिन्होंने हिंदी में पर्याप्त परिमाण में रचनाएँ कीं। आरंभ में ये सगुणोपासक थे। पर बाद में ये ईश्वर का व्यापक रूप सर्वत्र देखने लगे थे। इनकी निर्गुणोपासक भक्ति संबंधी रचनाएँ *ग्रंथ साहब* में संगृहीत हैं। *भक्तमाल* की टीका में इनके संबंध में अनेक अलौकिक घटनाएँ दी गई हैं।

नायक—काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि में प्रधान पात्र। त्याग करने वाला, शीघ्र कार्य करने में कुशल, कृतज्ञ, कुलीन, लक्ष्मीवान्, रूप, यौवन और उत्साह से युक्त तेजस्वी, लोगों के और प्रेम श्रद्धा का पात्र, चतुर और सुशील पुरुष। यह नायक की प्राचीन शास्त्रीय परिभाषा है। आज-कल नायक के लिए कुलीनता तथा सुश्रीकता ये दो गुण आवश्यक नहीं रह गये हैं, और इन गुणों से सर्वथा रहित पुरुषों को भी प्रमुख पात्रों का स्थान दिया जाने लगा है। आचार्य-परम्परा के अनुसार नायक के ये चार भेद हैं—

धीरोदात्त—अपनी प्रशंसा न करने वाला, क्षमायुक्त, अत्यंत गंभीर स्वभाव वाला, महासत्त्व (स्थिर प्रकृति), प्रच्छन्न गर्व रखने वाला, अपनी आन का पक्का दृढ़व्रत नायक। राम और युधिष्ठिर के चरित्र इसी प्रकार के हैं। यह नायक के चार प्रकारों में श्रेष्ठ कहा जाता है।

धीरललित—चिंता रहित रहने वाला, अत्यंत कोमल स्वभाव वाला, और नृत्य-गीत आदि कलाओं में निरंतर आसक्त रहने वाला नायक। *रत्नावली* (संस्कृत नाटिका) के वत्सराज सदृश इस श्रेणी में आते हैं।

धीरप्रशांत—नायक के सामान्य गुणों में अधिकांश से युक्त ब्राह्मण आदि। इनका स्वभाव शांत होता है। यथा *मालतीमाधव* में माधव।

धीरोद्धत—मायावी, प्रचंड, चंचल, घमंडी अभिमानी तथा अपने मुख से अपनी बड़ाई करने वाला नायक। भीमसेन जैसे नायक इसी श्रेणी में आते हैं।

नायक-नायिका-भेद—शृंगार रस के आलंबन और आश्रय नायक और नायिका होते हैं। इक नायक-नायिकाओं के अनेक भेद साहित्य-शास्त्र में किये गये हैं। हिंदी साहित्य के रीतिकाल में नायक-नायिका-भेद को लेकर अनेक रचनाएँ की गई हैं।

नायिका—काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि में प्रधान स्त्री-पात्र। शृंगार रस की आलंबन होने के कारण हिंदी-साहित्य के रीति-काल में इसके भेद-प्रभेदों का विस्तृत विवेचन हुआ है। अवस्था भेद से यह मुग्धा, मध्या और प्रौढ़ा–तीन प्रकार की मानी जाती है। इसके अभिसारिका, प्रोषितपतिका, कलहांतरिता, स्वीकीया, परकीया, सामान्या (वेश्या आदि) आदि अनेक भेद किये गये हैं।

नायिकालंकार—यौवनागम पर नायिकाओं के सत्वसमुद्भूत २० अलंकार होते हैं। भाव, हाव और हेला ये ३ अंगज हैं। शोभा, कांति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य और धैर्य ये ७ अयत्नज हैं। ये अंगज और अयत्नज १० अलंकार नायकों के भी हो सकते हैं। इनके अतिरिक्त लीला, विलास, विच्छित्ति, विलोक, किलकिंचित्, मोट्टामित, कुट्टयित विभ्रम, ललित, मद, विहृत, तपन, मौग्ध्य, विक्षेप, कुतूहल, हसित, चकित और केलि ये १८ अलंकार स्वभावज हैं, पर ये यत्नसाध्य भी हैं। ये सभी स्त्रियों में चमत्कार को बढ़ाते हैं।

नारद—कश्यप के पुत्र (*वायु०* २.६.७८–८०)। भगवान् के नाम, गुण और लीलाओं का कीर्त्तन करते हुए ये त्रिलोक में विचरण किया करते थे। इनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। ये वेदांत, योग, ज्योतिष, वैद्यक, गणित, संगीत आदि अनेक विद्याओं के आचार्य और मर्मज्ञ थे। प्रह्लाद, ध्रुव, अंबरीष इत्यादि महान् भक्तों को इन्होंने भक्तिमार्ग में प्रवृत्त

किया। दक्ष प्रजापति के शाप से ये एक स्थान पर नहीं ठहरते थे। ये कलहप्रिय और पिशुनता से परस्पर व्यक्तियों में झगड़ा कराने में भी बहुत निपुण थे, पर ये निष्प्रयोजन किसी का अहित नहीं करते थे। शांति स्थापित करने के उद्देश्य से ही ये प्रपंच रचते थे। पर्य्याय०—देवर्षि आदि।

नारायण—१ दे० *नरनारायण*। २ दे० *हितोपदेश*। ३ दे० *रामदास*।

नारायणसिंह (आ०का० १७२४ ई०)—ज़िला बलिया निवासी एक संत, 'शिव नारायणी' मत के प्रवर्त्तक। मुग़ल-शासक मुहम्मद शाह इनके शिष्य थे।

नारायणी—कृष्ण की सेना, जिसे उन्होंने महाभारत-युद्ध में दुर्योधन की सहायता के लिए भेजा था।

नालंदा—बौद्धों का एक प्राचीन क्षेत्र और विद्यापीठ, जो मगध में पटना से ३० कोस दक्षिण में और बड़गाँव से ११ कोस पश्चिम में था। किसी-किसी का मत है कि यह स्थान वहाँ था, जहाँ आजकल तेलाढा है। बौद्ध यात्रियों के विवरण से ज्ञात होता है कि पहिले-पहिल महाराज अशोक ने नालंदा में एक मठ स्थापित किया। चीनी यात्री उएनचांग ने लिखा है कि पीछे शंकर और मुग्दलगोमी नामक दो ब्राह्मणों ने इस मठ को फिर से बड़े विशाल आकार में बनवाया। इसकी दीवारें जो इधर उधर खड़ी मिलती हैं, उनमें से कई १५, १६ गज़ ऊँची हैं। कहा जाता है कि इस विद्यापीठ में रहकर **नागार्जुन** ने कुछ दिनों तक उक्त शंकर नामक ब्राह्मण से शास्त्र पढ़े थे। ६३७ ई० में प्रसिद्ध चीनी यात्री उएनचांग ने इस विद्यापीठ में जाकर प्रज्ञाभद्र नामक एक आचार्य से विद्याध्ययन किया था। उस समय इतना बड़ा मठ और इतना बड़ा विद्यापीठ भारत में और कहीं नहीं था। यहाँ सैंकड़ों आचार्य तथा दस सहस्र याजक और शिष्य निवास करते थे। जिस समय काशी में बुद्ध-पक्ष नामक राजा राज्य करते थे, उस समय इस मठ में आग लग गई और बहुत-सी पुस्तकें जल गईं।

निंबार्काचार्य (आ० का० ११७३ और ११६३ ई० के मध्य)—निंबार्क संप्रदाय के आदि आचार्य। *गीतगोविंद* के रचयिता जयदेव के गुरु और *वेदांत पारिजात* (वेदांत सूत्र पर भाष्य) तथा *दशश्लोकी* के रचयिता। इनके सिद्धांतानुसार कृष्ण ही परब्रह्म हैं। राधा और गोपिकाएँ भी उन्हीं के रूप हैं। इनके मत से भक्ति के द्वारा पृथक सत्ता वाला जीव भी ब्रह्म रूप हो सकता है। इसे सायुज्य मुक्ति कहा जाता है। इन्होंने **द्वैताद्वैत** अथवा भेदाभेद का सिद्धांत चलाया।

निकुंभ—१ कुंभकर्ण का एक पुत्र, रावण का मंत्री जो नील वानर द्वारा मारा गया था (*वा०रा० यु० ४३*)। २ एक असुर जिसे कृष्ण ने मारा था।

निगम—दे० *मधुमालती*।

निगमबोध—दिल्ली में यमुना के किनारे, पुराने कलकत्ता द्वार के समीप एक घाट।

निदर्शना—एक अर्थालंकार। जहाँ दो वाक्यों के अर्थ में (विभिन्नता रहते हुए भी) समता-भाव-सूचक ऐसा आरोप किया जाए कि दोनों एक-से जान पड़ें। उ०—जंग जीति जे चहत हैं, तोसों बैर बढ़ाय। / जीवे की

इच्छा करत काल कूट ते खाय ।। इसके दो भेद हैं—

१ *वाक्यार्थ निदर्शना*—उ०—कियो चहैं अपनो तुम्हैं तन-मन दैं व्रजराज, / खेलि जुआ ते बंछहीं सर्पाति के सुखसाज ।। यहाँ वाक्य के बल से उपमा की गई है।

२ *पदार्थ निदर्शना*—उ०—जब कर गहत कमान सर, देत परनि कौ भीति, / भावसिंह मैं पाइए तब अरजुन की रीति ।। यहाँ निदर्शना केवल एक पद 'रीति' के अर्थ के बल निकाली गई है।

निदाघ—दे० *ऋतु*।

निपट निरंजन (जन्म १५३९ ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि, जिन्होंने बहुत-सी स्फुट रचना की।

निबंध—गुलाबराय के अनुसार 'निबंध उस गद्य-रचना को कहते हैं, जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और संबद्धता के साथ किया गया हो।' निबंध चार प्रकार के होते हैं—वर्णनात्मक (इसमें वस्तु को स्थिर रूप में देखकर वर्णन किया जाता है, इसका संबंध अधिकतर देश से है), विवरणात्मक (इसका संबध अधिकांश में काल से है, इसमें वस्तु को उसके गतिशील रूप में देखा जाता है), विचारात्मक (इसमें तर्क का सहारा अधिक लिया जाता है), भावात्मक (इसका संबंध हृदय से है)। इन प्रकार के मिश्रण से भी अन्य बहुत-से प्रकार हो सकते हैं।

हिंदी में निबंध-रचना भारतेंदु-युग से प्रारंभ हुई। उस समय के लेखों में हिंदू सभ्यता और त्योहारों की अच्छी विवेचना रही। इन लेखों में देश की भावनाओं एवं उमंगों की झलक मिलती है, और वे अधिकांश में भावात्मक और वर्णनात्मक होते थे। तत्कालीन लेखकों की प्रवृत्ति धार्मिक होते हुए भी समाज सुधार की ओर थी। हास्य और व्यंग्य-युक्त तथा मधुर और मार्मिक उक्तियों के कारण इस प्रकार के लेख विशेष रोचक होते थे। उस समय के लेखकों में **भारतेंदु, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'** और **अंबिकादत्त व्यास** मुख्य हैं। **महावीरप्रसाद द्विवेदी** के समय में **'सरस्वती'** द्वारा स्फुट निबंधों की संख्या की वृद्धि के साथ विषय-वैचित्र्य और विचार-गांभीर्य भी बढ़ा। इन्होंने *बेकन विचार रत्नावली* नाम से बेकन के अंग्रेजी निबंधों का अनुवाद निकाला। **गंगाप्रसाद अग्निहोत्री** ने चिपलूणकर के मराठी निबंधों का अनुवाद *निबंधमालादर्श* नाम से प्रकाशित करवाया। द्विवेदीजी के लेखों के कई संग्रह निकल चुके हैं। माधवप्रसाद मिश्र के निबंध अधिकतर भावात्मक होते हैं। गोपालराम 'गहमरी' शब्द-चित्र खींचने में बहुत सिद्धहस्त थे। गोविंदनारायण मिश्र के निबंध बड़े साहित्यिक होते हैं। हिंदी में इन्होंने **बाण** और **दंडी** के गद्य का आदर्श उपस्थित करने का प्रयत्न किया है। श्यामसुंदरदास ने विचारात्मक और भावात्मक दोनों प्रकार के निबंध लिखे हैं। रामचंद्र शुक्ल के लेख बड़े गंभीर और विचारपूर्ण हैं। बालमुकुंद गुप्त व्यंग्यात्मक निबंध लिखने में बड़े कुशल थे। *शिवशंभु का चिट्ठा* इनके व्यंग्यात्मक निबंधों का संग्रह है। पद्मसिंह शर्मा के निबंधों की भाषा बड़ी सजीव और ओजपूर्ण है। 'जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी अपनी हास्यप्रियता के कारण हास्यरसावतार कहे जाते हैं।' चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने व्या-

करण जैसे रुक्ष विषय के लेखों में भी विनोद-पूर्ण आकर्षण भर दिया है। अध्यापक पूर्णसिंह के लेखों में काव्य की-सी भावुकता रहती है। इनके अतिरिक्त पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, ब्रजनंदनसहाय, रामदास गौड़, महेश-चरण सिंह आदि लेखक हुए हैं। पत्र-पत्रिकाओं में भी उच्च कोटि के लेख मिलते हैं। आधुनिक निबंधकारों में धीरेंद्र वर्मा, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, गुलाबराय, जैनेंद्रकुमार, वियोगी हरि, महादेवी वर्मा, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', नंददुलारे वाजपेयी, शांतिप्रिय द्विवेदी, प्रभाकर माचवे, सियारामशरण गुप्त, रायकृष्णदास, नलिनीमोहन सान्याल, सद्गुरु-शरण अवस्थी, सत्येंद्र, नगेंद्र, वासुदेवशरण अग्रवाल, रघुवीरसिंह आदि प्रमुख हैं। हिंदी-साहित्य में यद्यपि निबंधों और निबंधकारों की संख्या पर्याप्त मात्रा में बढ़ रही है, तथापि निबंध-साहित्य की जितनी उन्नति होनी चाहिये, उतनी अभी नहीं हो पाई है। विशेष दे० ब्रह्मदत्त शर्मा-कृत *हिंदी-साहित्य में निबंध*।

निमि—राजा जनक के पूर्वज। एक बार इन्होंने वसिष्ठ की अनुपस्थिति में यज्ञ करवा लिया था। जब वसिष्ठ लौटे तब उनका राजा से विवाद हो गया। परिणाम-स्वरूप दोनों ने एक-दूसरे को शाप से विदेह बना दिया। अतः राजा विदेह हो गये। निमि के वंशज इसीलिये विदेह कहलाते हैं। अपनी इच्छानुसार अब ये पलकों पर राज्य करते हैं (*भा० ९.१३, वा० रा० उ० ५५-५७, मत्स्य० २००, विष्णु० ४.५*)। यथा—मनहु सकुचि निमि तजेउ दृगंचल—*तुलसी*। वंश को चलाने की दृष्टि से ऋषियों ने निमि के मृत शरीर को मथकर एक पुत्र उत्पन्न किया। मथने से इनका नाम मिथिल और वंश जनक होने के कारण इनका जनक नाम पड़ा (*वायु० ८.२८*)।

निमिराज—निमि के वंश के राजा, जनक।

नियताप्ति—दे० *अवस्था*।

निराला—दे० *सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'*।

निरुक्ति—वह अर्थालंकार जिसमें किसी शब्द का, उसके प्रसिद्ध से भिन्न कोई अर्थ शब्द के निर्वचन के आधार पर निकल आए। उ०—भए साँचे जू गोपाल राच्यो राधा सों वियोग है।—*दूलह*। यदि आप राधा से वियोग साध सकोगे, तो वास्तव में गोपाल (गो=इंद्रिय, पाल=पालन (संयम) करने वाले) बनोगे।

निरूढ़-लक्षणा—लक्षणा का वह भेद जिसमें शब्द का कोई दूसरा अर्थ व्यवहार के बल पर चल पड़े।

निर्गुण—जो सत्त्व, रज, तम—इन तीनों गुणों से परे हो। दे० *सगुण*।

निर्मला—**प्रेमचंद** का एक सामाजिक उपन्यास (१९२२ ई०)।

उदयभानुलाल वकील की पुत्री निर्मला का वाग्दान भालचंद्र सिन्हा के पुत्र के साथ हुआ। उदयभानु की हत्या के पश्चात् भाल-चंद्र ने इस संबंध को विच्छेद कर दिया, क्योंकि भालचंद्र को उदयभानु की विधवा पत्नी से दहेज मिलने की आशा न रही थी। निर्मला का विवाह अब एक ससंतान विधुर मुंशी तोताराम वकील से हुआ। मुंशी जी ने बहुत चाहा कि निर्मला उनसे प्रेम करे, किंतु वह एक विचित्र संकोच के भार से दबी जाती थी। मुंशी जी की विधवा बहिन रुक्मिणी भी निर्मला को कष्ट देती थी। निर्मला मुंशी जी की अपेक्षा उनके ज्येष्ठ पुत्र मंशाराम से अधिक स्नेह करती थी, और उससे अंग्रेज़ी भी पढ़ती थी। इसपर मुंशी जी शंकित हुए और उन्हें मंशाराम पर इतना क्रोध आया कि

उन्होंने उसे छात्रालय में भेज दिया। मंशाराम को पिता के इस व्यवहार से मानसिक क्लेश व दुःख हुआ और वह बीमार पड़ गया। अस्पताल में ही उसका प्राणांत हुआ। डा० सिन्हा, जिन्होंने मंशाराम की चिकित्सा की थी, वही थे जिनके साथ निर्मला का वाग्दान हुआ था। मंशाराम के अनुज जियाराम ने निर्मला के आभूषणों का बक्स चुरा लिया। जब इसका पता चल गया, तब उसने आत्महत्या कर ली। मुंशी जी का तीसरा लड़का भी साधु होकर भाग खड़ा हुआ। मुंशी जी उसकी खोज में गये। पीछे से डा० सिन्हा ने निर्मला पर अपना प्रेम प्रकट किया। सुधा ने जब अपने पति डा० सिन्हा की भर्त्सना की, तब डा० सिन्हा ने भी आत्महत्या कर ली। निर्मला भी दुःखों में घुट-घुट कर चल बसी। निर्मला का शव बाहर निकला। यह विचार चल रहा था कि कौन दाह करे, कि इतने में मुंशी जी लौट आए।

इसमें विधवा, दहेज प्रथा, बेमेल विवाह आदि समस्याओं पर विचार किया गया है। उपन्यास में घटना की एकात्मता, प्रवाह और गांभीर्य की कमी है। यह करुणरसप्रधान उपन्यास है।

निर्वहण—दे० *संधि*।

निशुंभासुर—दे० *शुंभनिशुंभ*।

निश्चलदास (मृत्यु १८६३ ई०)—दादूपंथी एक विद्वान् संत। *वृत्ति प्रभाकर* और *विचार सागर* के रचयिता। *विचार सागर* में वेदांत का शास्त्रीय ढंग से विवेचन हुआ है। इसकी टीका भी लिखी गई है।

निषध—राजा नल की राजधानी। यह नगर ग्वालियर के ४० मील दक्षिण-पश्चिम में था।

नील—विश्वकर्मा के अंशावतार, राम-सेना के एक वानर और नल के साथी (दे० *नल; भा० ६.१०.१६*)।

नीलकंठ—शिव का एक नाम। समुद्रमंथन से निकले **हलाहल** विष को शिव ने पीकर कंठ में ही रोक लिया। परिणाम-स्वरूप उनका कंठ नीला हो गया। अतः शिव नीलकंठ कहलाते हैं।

नीलदेवी—**भारतेंदु हरिश्चंद्र** का एक ऐतिहासिक नाटक (१८८० ई०)।

एक मुसलमान सेनापति ने एक क्षत्रिय-नरेश को युद्ध में परास्त करने में असमर्थ होकर, रात्रि में आक्रमण कर उसे पकड़ लिया और धर्म-त्याग न करने पर उसे मार डाला। पति का बदला तथा शव लेने के लिये रानी छद्मवेष से सेनापति के शिविर में जाकर, उसका वध कर, पति का शव ले आई।

नीलोत्पल—पद्म का एक भेद। कवि-प्रसिद्धि के अनुसार इसका वर्णन नदी, समुद्र आदि में होना चाहिये और यह दिन में नहीं खिलता।

नूरमुहम्मद (आ० का० १७४४ ई०)—एक सूफ़ी-कवि और *इंद्रावती* तथा *अनुराग बाँसुरी* के रचयिता। ये सबरहद (ज़िला जौनपुर) के रहने वाले थे, पर बाद में अपनी ससुराल भादों (जिला आज़मगढ़) में रहने लगे। इनका हिंदी काव्य भाषा का ज्ञान अन्य सब सूफ़ी कवियों से अधिक था। ये फ़ारसी भाषा के भी अच्छे विद्वान् थे।

नूह—यहूदी, ईसाई और मुसलमान मतों के अनुसार एक पैगंबर। **जल-प्लावन** के समय इन्होंने अपनी नाव पर हर एक जीव का एक-एक जोड़ा रख लिया था, जिससे पुनः सृष्टि की गई।

नृग—एक परम यशस्वी, सत्यवादी और महादानी राजा। ब्राह्मणों के शापवश इन्हें सैकड़ों वर्ष तक कुएँ में गिरगिट बनकर रहना पड़ा था। अंत में कृष्ण ने इनका उद्धार किया और ये बैकुंठ गये *(म० अनु० ७०, भा० १०.६४, वा० रा० उ० ५३-५४)*।

नृसिंह—विष्णु के चतुर्थ अवतार। **हिरण्यकशिपु** के वध के लिये विष्णु ने यह अवतार धारण किया था। इनका आधा शरीर सिंह का और आधा नर का था। इन्होंने भक्त **प्रह्लाद** की रक्षा की थी *(भा० ७.८ आदि)*।

नेति—एक संस्कृत वाक्य *(न इति)*, जिसका अर्थ है 'इति नहीं' अर्थात् 'अंत नहीं है'। उपनिषदों में यह वाक्य ब्रह्म या ईश्वर के संबंध में अनतता सूचित करने के लिये आया है। उ०—नेति नेति कहि वेद पुकारा।—*तुलसी*।

नेपथ्य—नाटक के मंच पर यवनिका के पीछे का भाग। नाटकीय सज्जा को भी नेपथ्य कहते हैं।

नेवाज (वर्त्त० १६८० ई०)—**औरंगजेब** के पुत्र आज़मशाह के आश्रित एक रीति-कवि और *शकुंतला नाटक* के आख्यान को दोहा, चौपाई आदि छंदों में रचने वाले।

नैमिष—**नैमिषारण्य** तीर्थ। यथा—तीरथ वर नैमिष विख्याता—*तुलसी*।

नैमिषारण्य—गोमती नदी के वाम तट पर एक आरण्य *(वा० रा० उ० ६१)*। यह सीतापुर से २० मील और लखनऊ के ४५ मील उत्तर-पश्चिम में स्थित है। इसे अब नीमखार वन कहते हैं। यहाँ साठ हज़ार ऋषियों का आश्रम था। कहा जाता है कि यहीं पर कई पुराणों की रचना हुई।

नौशेरवाँ—फारस का एक बादशाह, जो अपने न्याय के लिये प्रसिद्ध है।

न्याय—१ वह शास्त्र जिसमें किसी वस्तु के यथार्थ ज्ञान के लिये विचारों की उचित योजना का निरूपण होता है। यह छः दर्शनों में से एक है और इसके प्रवर्त्तक मिथिला-निवासी गौतम ऋषि कहे जाते हैं। २ लोक शास्त्र में विशिष्ट प्रसंग में प्रयुक्त होने वाला कहावत की तरह का दृष्टांत-वाक्य। जैसे—**कूपमंडूक न्याय**।

प

पंचकन्या—पुराणानुसार पाँच स्त्रियाँ (**अहल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा** और **मंदोदरी**), जो विवाहित होने पर भी कन्या ही रहीं या कन्या के समान मानी जाती हैं।

पंचकर्पट—हिंदुकुश पर्वत की दक्षिण ढलान पर पंजकोर नामक ज़िला। राजसूय-यज्ञ के समय इसे **सहदेव** ने जीता था।

पंचचामर—जु रोज रोज गोपतीय ढार पंच चामरै (ज र ज र ज ग=१६ व० छंद)। उ०—महेश के महत्त्व का, विवेक बार-बार हो, अखंड एक तत्त्व का, अनेकधा विचार हो। इसे नराच या नागराच भी कहते हैं।

पंचजन—एक दैत्य जिसका वध कृष्ण द्वारा हुआ। कृष्ण ने इसकी अस्थियों से एक शंख बनाया, जिसका नाम पांचजन्य पड़ा *(भा० ६.१८.१४, १०.४५.४०)*।

पंचजना—योग के भाषानुसार पंचतत्त्व—आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी। इन **पाँच तत्त्व की पचीस प्रकृतियाँ हैं**—आकाश (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, अंतःकरण), वायु (प्रान (प्राण), अपान, समान, उदान, व्यान), तेज (आँख, नाक, कान, जीभ, त्वचा), जल (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध), पृथ्वी (हाथ, पैर, मुख, गुह्य, लिंग)।

पंचजन्य—दे० *पंचजन*।

पंचतंत्र—नीति-कथा-साहित्य का संस्कृत में प्राचीन तथा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ (अनू०), जिसे **विष्णुशर्मा** नामक ब्राह्मण ने अमरशक्ति नामक राजा के तीन मूर्ख पुत्रों को पंडित बनाने के लिये रचा था। राजपुत्र इसे पढ़कर छः मास में नीतिशास्त्र में पारंगत हो गये। इस ग्रंथ का उद्गम व उत्पत्ति स्थान *जातक* कथाएँ हैं। ***पंचतंत्र* के इस समय पाँच भाग हैं**—**मित्रभेद,** मित्रलाभ, संधि विग्रह, लब्धप्रणाश और अपरीक्षितकारिकम्। संपूर्ण पुस्तक में पशु-पक्षियों की मनोरंजक कथाएँ हैं। १५७० ई० तक इस पुस्तक का अनुवाद संसार की सभी प्रधान भाषाओं में हो चुका था।

पंचतरु—स्वर्ग के पाँच वृक्ष—मंदार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचंदन।

पंचदेव—पाँच प्रधान देवता—आदित्य, रुद्र, विष्णु, गणेश और देवी।

पंचनाथ—पाँच प्रधान नाथ—बदरीनाथ, द्वारिकानाथ, जगन्नाथ, रंगनाथ और श्रीनाथ। यथा—पंचनाथ कलिपावन जोई। निरखे नर नारायण होई—*गोपाल*।

पंचपुष्प—देवताओं के पाँच प्रिय पुष्प—चंपा, मंजरी, शमी, कमल और कर्णिकार।

पंचभूत—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश।

पंचमकार—वाममार्गियों के अनुसार पाँच मकार—मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन।

पंचवटी—नासिक। यह एक पीठ है। कहा जाता है कि सती की नासिका यहाँ गिरी थी। लक्ष्मण ने शूर्पणखा की नासिका भी यहीं काटी थी। इन्हीं कारणों से पंचवटी का नाम नासिक पड़ा। सीता-हरण और राम का खर-दूषण से युद्ध भी यहाँ पर हुआ था।

पंचवटी—**मैथिलीशरण गुप्त** का एक खंड-काव्य (१६२५ ई०)।

इसमें सीता, राम और लमक्ष्ण के पंचवटी निवास तथा **शूर्पणखा** के कर्ण-नासिका काटने की कथा अंकित है। इसमें लक्ष्मण का उदात्त चरित्र तथा प्रकृति-चित्रण दर्शनीय है। सीता के सौंदर्य तथा प्रकृति के मनोहर रूप के जैसे हृदयाकर्षक संश्लिष्ट चित्र इसमें उपलब्ध होते हैं, वैसे गुप्त जी के काव्यों में अन्यत्र दुर्लभ हैं।

पंचशब्द—पाँच मंगल सूचक बाजे—तंत्री ताल, झाँझ, नगारा और तुरही। यथा—पंच सबद धुनि मंगल गाना—*तुलसी*।

पंच सहेली—छीहल कवि की ६५ दोहों में एक रचना (लि० का० १६४२ ई०), जिसमें पाँच सहेलियों की विरह-वेदना का वर्णन है।

पंचाल—हिमालय और चंबल नदी के बीच गंगा के दोनों ओर का देश। बाद में इसके उत्तर और दक्षिण पंचाल दो भाग हो गये, जिनको गंगा विभाजित करती थी। उत्तर पंचाल की राजधानी अहिच्छत्र थी। दक्षिण पंचाल में द्रौपदी के पिता राजा द्रुपद राज्य

करते थे । द्रुपद की राजधानी कांपिल्य (कंपिल) थी । दे० *कान्यकुब्ज* ।

पंजाबी—पैशाची अपभ्रंश से प्रभावित वह भाषा, जो पंजाब प्रांत के एक भाग में बोली जाती है ।

पंत—दे० *सुमित्रानंदन पंत* ।

पंपा—तुंगभद्रा की एक सहायक नदी, जो ऋष्यमूक पर्वत से निकलती है । ऋष्यमूक पर्वत पर ही राम की भेंट हनुमान और सुग्रीव से हुई थी । यह बळ्ळारी ज़िले (मैसूर राज्य) में है । इसके निकट एक ताल है, जिसे पंपासरोवर कहते हैं ।

पंपाक्षेत्र—बळ्ळारी ज़िले में तुंगभद्रा नदी के दक्षिण का प्रदेश, जिसमें ऋष्यमूक पर्वत और पंपासरोवर है ।

पंपासरोवर—दे० *पंपा* ।

पंमै घोरांधार री बात—किसी अज्ञात लेखक की एक गद्यमय रचना (लि० का० १७६० ई०), जिसमें राजा घोरांधार और कंजोई की पुत्री की प्रेम-गाथा है ।

पचीसी—पचीस का संग्रह । यथा—*वेताल पचीसी*, प्रेमचंद-कृत *प्रेम पचीसी* ।

पजनेस (र० का० ल० १८४३ ई०)—पन्ना निवासी एक रीति-कवि । *पजनेस-प्रकाश* (संग्रह), *मधुर प्रिया* (अप्राप्त) तथा *नखशिख* (अप्राप्त) के रचयिता ।

पठान—अफ़ग़ानिस्तान में, और पाकिस्तान के पश्चिमी सीमांत प्रदेश में बसने वाली एक जाति, जो कट्टर, हिंसा-प्रिय तथा स्वाधीनता-प्रिय होती है । इस जाति के लोगों का रंग गोरा, क़द लंबा तथा शरीर पुष्ट होता है । भूषण आदि कवियों ने 'पठान' शब्द का प्रयोग अफ़ग़ानिस्तान की ओर से आक्रांता के रूप में आये हुए एक जाति विशेष के लिये किया है ।

पतंजलि—१ (आ० का० १५० ई० पू०)—एक प्रसिद्ध ऋषि और *महाभाष्य* (पाणिनि के व्याकरण *अष्टाध्यायी* पर विस्तृत व्याख्या) के रचयिता । *महाभाष्य* संस्कृत व्याकरण का अत्यंत प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है । ये शुंग वंश के प्रथम पुरुष पुष्यमित्र के पुरोहित थे । इन्होंने ही उनका अश्वमेध यज्ञ करवाया था । २ एक प्रसिद्ध ऋषि और *योगशास्त्र* के रचयिता । *योगशास्त्र* चार भागों में विभक्त है । पतंजलि २६ तत्त्व मानते हैं । किसी-किसी के मत से महाभाष्यकार पतंजलि और योगशास्त्रकार पतंजलि एक ही हैं ।

पताका अर्थप्रकृति—दे० *अर्थप्रकृति* ।

पताकास्थानक—जहाँ प्रकरण प्राप्त किसी बात को ऐसे ढंग से कहा जाता है कि घटना की समानता के कारण या समान विशेषणों के कारण नाटक की किसी भावी घटना की सूचना मिल जाती हो, उसे पताकास्थानक कहा जाता है । इसके चार भेद हैं ।

पत्र-पत्रिकाएँ—हिंदी भाषा तथा हिंदी-साहित्य की विविध विधाओं (कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता, निबंध, समालोचना आदि) के प्रसार में अनेक हिंदी पत्र-पत्रिकाओं ने योग दिया है। हिंदी का सर्वप्रथम पत्र 'उद्दंड मार्त्तंड' था, जो १८२६ ई० में कलकत्ते से प्रकाशित हुआ था। यह एक साप्ताहिक पत्र था । १८४६ में राजा **शिवप्रसाद** ने 'बनारस अख़बार' निकाला । इस पत्र की भाषा उर्दू मिश्रित रखी गई, यद्यपि

लिपि देवनागरी थी। आगरे के मुंशी सदासुखलाल ने १८५३ में 'सुधाकर' के प्रकाशन से २ वर्ष पश्चात् एक पत्र 'बुद्धि प्रकाश' के नाम से प्रकाशित किया। यह पत्र कई वर्षों तक चलता रहा। हिंदी का सर्वप्रथम दैनिक पत्र 'समाचार सुधावर्षण' कलकत्ते से १८५४ में प्रकाशित हुआ। भारतेंदु-युग में १०० से ऊपर पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं। इनमें से अधिकांश तो थोड़े ही दिन चलकर बंद हो गई, पर कुछ ने लगातार बहुत दिनों तक हिंदी की सेवा की है। इनमें 'बिहारबंधु', 'भारत-मित्र', 'भारत-जीवन', 'उचितवक्ता', 'दैनिक हिंदोस्थान', 'आर्यदर्पण' 'मित्र विलास', 'ब्राह्मण' (संपादक **प्रतापनारायण मिश्र**), 'हिंदी-प्रदीप' 'आनंद-कादंबिनी', 'कवि-वचन सुधा' और 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' (बाद में हरिश्चंद्र चंद्रिका') साहित्यिक पत्र थे, जिनमें बहुत सुंदर मौलिक गद्य प्रबंध और कविताएँ निकला करती थीं। इन पत्रिकाओं को बराबर आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। इनमें 'भारतमित्र' का प्रकाशन १८७७ में प्रारंभ हुआ। बहुत दिनों तक यह पत्र हिंदी संवादपत्रों में बहुत ऊँचा स्थान ग्रहण किये रहा। भारतेंदुजी भी कभी-कभी इसमें लेख दिया करते थे। भारतेंदु ने १८६८ में 'कवि-वचन सुधा' नामक एक पत्रिका निकाली, जिसमें पहिले पुराने कवियों की कविताएँ छपा करती थीं पर पीछे गद्य-लेख भी रहने लगे। १८७३ में इन्होंने 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' नाम की एक मासिक पत्रिका निकाली जिसका नाम ८ संख्याओं के उपरांत 'हरिश्चंद्र-चंद्रिका' हो गया। हिंदी-गद्य का ठीक परिष्कृत रूप पहिले पहल इसी 'चंद्रिका' से प्रकट हुआ। भारतेंदु ने नई सुधरी हुई हिंदी का उदय इसी समय से माना है। 'कवि-वचन सुधा' की लेख शैली और भाषा पर मुग्ध होकर लाहौर से 'मित्र विलास' नामक पत्र गोपीनाथ के उत्साह से निकला। इसके पहिले पंजाब में कोई हिंदी का पत्र न था। इसकी भाषा बहुत ही तेज़ और ओजस्विनी होती थी। १८७८ में कलकत्ते से 'उचितवक्ता' और 'सारसुधानिधि' दो पत्र निकले। पीछे कालाकाँकर-नरेश रामपालसिंह ने १८८३ में 'हिंदोस्थान' पत्र इंगलैंड से निकाला, जिसमें हिंदी और अंग्रेजी दोनों रहती थीं। भारतेंदु की मृत्यु के पश्चात् १८८६ में यह हिंदी-दैनिक के रूप में निकला और बहुत दिनों तक चलता रहा। इसके संपादकों में मदनमोहन मालवीय, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त उल्लेखनीय हैं। १८८४ में काशी से 'भारत जीवन' पत्र निकला। इस पत्र का नामकरण भारतेंदु ने ही किया था।

१८९९ में 'सरस्वती' नामक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ। नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से श्यामसुंदरदास, राधाकृष्णदास, जगन्नाथ दास 'रत्नाकर', कार्त्तिकप्रसाद खत्री और किशोरीलाल गोस्वामी का एक संपादक-मंडल बनाया गया और 'सरस्वती' की प्रथम संख्या इस मंडल के संपादकत्व में छपी। दूसरे और तीसरे वर्ष श्यामसुंदरदास ने पत्रिका का संपादन किया, चौथे वर्ष से महावीरप्रसाद द्विवेदी ने इसका संपादन किया। 'सरस्वती' के द्वारा द्विवेदी जी ने हिंदी को आज का रूप दिया। द्विवेदी-युग में दैनिक पत्रों में 'भारत मित्र', 'कलकत्ता समाचार'; मासिक पत्रिकाओं में 'इंदु', 'मर्यादा'; साप्ताहिक पत्रिकाओं में 'कर्मयोगी', 'अभ्युदय', 'हिंदी केसरी', 'प्रताप' आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रसाद-युग में एक दर्जन से **अधिक दैनिक** पत्र निकलते रहे। इनमें 'आज', **बनारस**;

'प्रताप', कानपुर; 'हिंदुस्तान', दिल्ली; 'मिलाप', लाहौर; 'भारत', प्रयाग; 'स्वाधीन भारत', बंबई; 'विश्वामित्र', कलकत्ता; 'वर्त्तमान', कानपुर; 'संसार', बनारस; 'अर्जुन', 'नवयुग', दिल्ली; 'स्वतंत्र भारत', 'लोकमान्य', 'राष्ट्रबंधु', कलकत्ता उल्लेखनीय हैं। मासिक पत्रिकाओं में 'सरस्वती', 'माधुरी', 'सुधा', 'चाँद', 'विशाल भारत', 'हंस', 'विश्वामित्र', 'गंगा', 'अरुण', 'भारती', 'वीणा', 'वाणि'; साप्ताहिक पत्रिकाओं में 'प्रताप', 'विश्वामित्र', 'अर्जुन', 'भारत' और 'मिलाप' नामक दैनिक पत्रों के साप्ताहिक अंक और 'प्रताप', 'सैनिक', 'स्वराज्य', 'कर्मवीर', 'जागरण', 'अभ्युदय' आदि उल्लेखनीय हैं।

इस समय जो पत्र-पत्रिकाएँ निकल रही हैं, वे इस प्रकार हैं—

दैनिक—'आज', बनारस; 'नवभारत टाइम्स', 'हिंदुस्तान', नई दिल्ली; **'नवजीवन'**, लखनऊ; 'अमृत पत्रिका', इलाहाबाद।

साप्ताहिक—'हिंदुस्तान', नई दिल्ली; 'धर्मयुग', बंबई।

मासिक—'अजंता', हैदराबाद; 'अवंतिका', पटना; 'आजकल', दिल्ली; 'कल्पना', हैदराबाद; 'जय भारती', पूना; 'ज्ञानोदय', कलकत्ता; 'दक्षिण भारत', मद्रास; 'त्रिपथगा', लखनऊ; 'नई धारा', पटना; 'नया पथ', लखनऊ; 'नया समाज', कलकत्ता; 'नवनीत' बंबई; 'परिमल', इलाहाबाद; 'प्रसाद', काशी, 'भारती', ग्वालियर; 'मानव', अकोला; 'युगचेतना', लखनऊ; 'राष्ट्र भारती', वर्धा; 'राष्ट्रवाणी', पूना; 'विशाल भारत', कलकत्ता; 'वीणा', इंदौर; **'सरस्वती'**, इलाहाबाद; 'सरिता', बनारस; 'साहित्यकार', इलाहाबाद; 'साहित्य संदेश', आगरा; 'हिंदी प्रचारक', काशी।

द्वैमासिक, त्रैमासिक, षाण्मासिक और वार्षिक—'आलोचना', इलाहाबाद, दिल्ली; 'चतुरसेन', दिल्ली; **'नागरी प्रचारिणी पत्रिका'**, काशी, 'राष्ट्रवीणा', अहमदाबाद; **'सम्मेलन पत्रिका'**, प्रयाग; 'साहित्य', पटना; **'हिंदी अनुशीलन'**, इलाहाबाद।

पद—१ श्लोक या किसी छंद का चतुर्थांश। २ ईश्वर भक्ति-संबंधी गीत।

पदपादाकुलक—पदपादाकुलक कला सोला, सम विषम विषम गति अनमोला (१६ मात्राओं और प्रारंभ में द्विकल (दो मात्राओं का एक साथ पढ़ा जाने वाला समूह) होने से बनने वाला छंद)। इसे इंदुकला भी कहते हैं।

पदावली—**विद्यापति** (१३६८-१४७५ ई०) के मैथिली भाषा में पदों का एक संग्रह।

ये पद शृंगार के हैं जिनके नायक और नायिका कृष्ण और राधा हैं। इन पदों का माधुर्य अद्भुत है। विद्यापति शैव थे, किंतु उन्होंने शृंगाररसमय पदों का नायक कृष्ण को बनाया है, क्योंकि कृष्ण तब तक शृंगार रस के नायक के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे।

पद्धरि—पद्धरि ज अंत, कल आठ आठ (१६ (८, ८) मा० छंद, अंत ज)। उ०—निसि दिवस भजहु नद नंदनाम, / **छिय** धरहु ध्यान यह अष्ट जाम। इसके अन्य नाम प्रज्झटिका, पद्धटिका, प्रज्वलय और मौलिक हैं। विशेष—वर्त्तमान काल के कवियों ने जगण-अंत नियम को आवश्यक नहीं माना है।

पद्म (कमल)—जल, जीवन और सुंदरता का प्रतीक एक पुष्प। कवि-प्रसिद्धि है कि १ यह दिन में खिलता है (नदी, जलाशय आदि में होता है), २ इसके मुकुल हरे नहीं होते, ३

इसके पुष्प में लक्ष्मी का वास होता है, और ४ हेमंत तथा शिशिर के अतिरिक्त सभी ऋतुओं में इसका वर्णन होता है। पद्म के कई भेद हैं। नीलकमल कामदेव के पुष्पबाण में प्रमुख है और शिव और शनि की पूजा विशेष रूप से इसी नीलकमल के पुष्पों से होती है। विष्णु की नाभि से उत्पन्न कमल पर ब्रह्मा विराजमान रहते हैं। कमल लक्ष्मी का निवासस्थान माना जाता है।

पद्मकांत मालवीय—आधुनिक कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *त्रिवेणी* (१९२९ ई०), *प्याला* (१९३२), *प्रेम पत्र*, *रुबाइयात पद्म* आदि हैं।

पद्मगुप्त (आ० का० १००५ ई०)—धारा-नरेश मुंज तथा उनके पुत्र सिंधुराज (नवसाहसांक) के राजकवि, *नवसाहसांकचरित* (संस्कृत महाकाव्य, नवसाहसांक की विजय का वर्णन) के रचयिता।

पद्मपुराण—१ दे० *पुराण*। २ दे० *दौलतराम*।

पद्मसिंह शर्मा (१८७६-१९३२ ई०)—निबंधकार और आलोचक। इन्होंने ज्वालापुर महाविद्यालय और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में अध्यापक के रूप में कार्य किया। इनके कुछ लेखों का संग्रह *पद्म-पराग* में मिलता है। इनकी भाषा में उर्दू-फारसी के प्रयोग प्रायः मिलते हैं। भाषा में हास्य-व्यंग्य की मात्रा के साथ एक विशेष धारावाहिकता रहती है। *बिहारी सतसई की भूमिका* में इन्होंने बिहारी की तुलनात्मक समालोचना की है। उसमें इन्होंने बिहारी की उत्कृष्टता दिखाई है। ये **हिंदी-साहित्य-सम्मेलन** के कलकत्ता-अधिवेशन के सभापति निर्वाचित हुए थे।

पद्माकर भट्ट (१७५३-१८३३ ई०)—बाँदा निवासी एक रीति-कवि। ये तैलंग ब्राह्मण थे। इनके पिता मोहनलाल भट्ट एक कवि और संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। उन्हें कई राजाओं से जागीरें प्राप्त थीं। अपने पिता की भाँति पद्माकर का भी अनेक राजा-रावों द्वारा सम्मान हुआ और उनके नामों पर इन्होंने अनेक ग्रंथ लिखे। गोसाईं अनूपगिरि उपनाम हिम्मत बहादुर जब अवध के नवाब के सेनापति नियुक्त हुए, तब ये उनके पास रहने लगे। उन्हीं के नाम पर इन्होंने *हिम्मत बहादुर विरुदावली* लिखी। इसमें हिम्मत बहादुर की वीरता का वर्णन है। वीर रस की यह अपूर्व रचना है। १७९९ में ये सितारे के महाराज रघुनाथ राव (राघोबा) के दर्बार में गये और एक हाथी, एक लाख रुपया और १० गाँव पाये। ये जयपुर के महाराज प्रतापसिंह और उनके पुत्र जगतसिंह के समय में जयपुर में रहे। जगतसिंह के नाम पर इन्होंने *जगद्विनोद* ग्रंथ रचा। वहीं पर इन्होंने *पद्माभरण* (अलंकार-ग्रंथ) दोहों में लिखा।

एक बार ये उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के दर्बार में भी गये। वहाँ इनका अच्छा सत्कार हुआ। महाराणा की आज्ञा से इन्होंने *घनगौरवर्णन* में घनगौर के मेले का वर्णन किया है। भीमसिंह की मृत्यु के उपरांत ये ग्वालियर के महाराज दौलतराव सेंधिया के दर्बार में गये, जहाँ इनका अच्छा सम्मान हुआ। वहाँ के सरदार उदाजी के कहने से इन्होंने *हितोपदेश* का भाषानुवाद किया। ग्वालियर से ये बूँदी आए और वहाँ से अपने घर बाँदा गये। वहीं पर इन्होंने *प्रबोधपचासा* नामक वैराग्य और भक्ति का ग्रंथ रचा। अंतिम समय निकट जानकर गंगातट के विचार से ये कानपुर चले आये और वहीं अपने जीवन के शेष सात वर्ष पूरे किये। तभी इन्होंने अपनी प्रसिद्ध *गंगालहरी* रची। *राम-रसायन* नामक एक दोहे-चौपाई का

ग्रंथ भी इन्हीं का रचा कहा जाता है, जो *वाल्मीकि रामायण* के आधार पर है। यह ग्रंथ निम्न कोटि का है; संभव है यह इनका न हो।

अपनी उत्कृष्ट कल्पना की उड़ान, विषय-विवेचन की विशुद्धता और पदावली की मधुरता व शब्दों की लाक्षणिकता के कारण इन्हें **बिहारीलाल** आदि महाकवियों की पंक्ति में गिना जाता है। ये रीति-काल के अंतिम प्रतिनिधि महाकवि माने जाते हैं। बिहारी को छोड़ ऐसा सर्वप्रिय कवि रीतिकाल के भीतर दूसरा नहीं हुआ। विशेष दे० गंगाप्रसाद सिंह-कृत *पद्माकर की काव्य-साधना*।

पद्माभरण—**पद्माकर भट्ट** (१७५३-१८३३ ई०) का एक सुंदर अलकार-ग्रंथ, जो दोहों में है।

पद्मावत—**मलिक मुहम्मद जायसी** का अवधी भाषा में एक प्रसिद्ध प्रेम-काव्य (१५४० ई०)।

सिंहलद्वीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती अत्यंत रूपवती थी। उसके पास हीरामन नामक एक तोता था, जो पूर्ण पंडित और वाचाल था। दैवगति से वह तोता चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के यहाँ पहुँच गया। एक बार राजा की रानी नागमती ने तोते से पूछा कि क्या मुझसे भी अधिक सुंदरी स्त्री संसार में होगी? तब हीरामन ने पद्मावती की बड़ी प्रशंसा की। इसपर रानी ने डाह से उसे मार डालने के लिये एक दासी को दे दिया। पर दासी ने उसे राजा को सौंप दिया और सब हाल भी कह दिया। राजा ने पद्मावती के रूप का वर्णन सुना तो वह उसके प्रेम में व्याकुल हो, योगी बनकर सिंहल की ओर चला। साथ में १६ हज़ार योगी भी ले लिये। हीरामन मार्ग दिखाता चला। अनेक विस्तृत सागरों को पार कर अपने दल सहित सिंहलद्वीप पहुँचा। वहाँ तोते से संदेश पाकर पद्मावती शिव पूजन के बहाने मंदिर में आई। राजा उसे देखकर मूर्च्छित हो गया। पीछे शिव से सिद्धि प्राप्त कर राजा ने योगियों सहित गढ़ में घुसने की चेष्टा की, पर वह पकड़ा गया, और उसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी गई। पीछे १६,००० योगियों सहित शिव ने गढ़ को घेरा तथा सब देवता उनकी सहायता को आए। उनसे पराजित हो गंधर्व-सेन ने पद्मावती का विवाह रत्नसेन से कर दिया। थोड़े समय तक रहने के पश्चात् रत्न-सेन को नागमती के विरह का पता लगा। राजा और पद्मिनी चित्तौड लौट आए।

ज्योतिष संबंधी अनाचार पर राजा ने राघवचेतन नामक एक ब्राह्मण को देश-निकाला दे दिया। राघव दिल्ली-सुलतान अलाउद्दीन के पास पहुँचा। उसने पद्मावती के अद्वितीय सौंदर्य का वर्णन कर चित्तौड पर चढ़ाई करवा दी। जब युद्ध में अलाउद्दीन रत्नसेन को पराजित न कर सका, तब उसने संधि कर ली। राजा ने एक बार उसे दावत दी और जब दोनों शतरंज खेल रहे थे, अलाउद्दीन ने पद्मावती की एक झलक शीशे में देख ली। जब राजा अलाउद्दीन को बिदा करने बाहरी फाटक पर आया, तब उसे पकड लिया गया। पद्मिनी ने गोरा-बादल नामक दो वीरों के नेतृत्व में डोलियों में सैनिक छिपाकर दिल्ली भेजे। वे राजा को छुडा लाए। उधर रत्नसेन की अनुपस्थिति में कुंभलमेर-नरेश देवपाल ने अपनी दूती भेजकर पद्मावती से प्रेम-याचना की। रत्नसेन ने कुंभलमेर पर चढ़ाई कर दी। युद्ध में दोनों राजा मारे गये। पद्मावती और नागमती राजा के शव के साथ सती हो गईं। उधर पद्मावती को प्राप्त करने के लिये अलाउद्दीन ने चित्तौड़ पर फिर आक्रमण

किया, किंतु वहाँ राख के ढेर के अतिरिक्त उसके हाथ कुछ नहीं लगा।

पद्मावत ५७ खंडों में सूफी परंपरा पर लिखा गया एक प्रबंध-काव्य है। इसमें कथा-वस्तु की ही प्रधानता है। यह कथा अधिकांश में ऐतिहासिक है। कवि-कल्पना के अनुसार इसमें हेर-फेर अवश्य किया गया है। पूर्वार्द्ध कल्पित है, किंतु उत्तरार्द्ध का बहुत कुछ ऐतिहासिक आधार है। राजा की पहिली रानी नागमती का विरह-वर्णन, उसका उन्माद, उसके प्रति पशु-पक्षियों की सहानुभूति आदि सभी विषय स्वाभाविकता के साथ वर्णित हैं। कवि ने प्रेम-साधना द्वारा ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग दर्शाया है। भौतिक प्रेम के साथ इसमें आध्यात्मिक प्रेम की भी झलक मिलती है। जायसी ने स्वयं इस कथा को आध्यात्मिक रूप दिया है। चित्तौड़ शरीर का प्रतीक है, राजा मन का, सिंहल हृदय का, पद्मिनी बुद्धि की, हीरामन गुरु का, नागमती दुनिया-धंधे की, राघव शैतान का और अलाउद्दीन माया का। *पद्मावत* संस्कृत प्रबंध-काव्यों की सर्गबद्ध पद्धति पर न होकर फ़ारसी की मसनवी शैली पर लिखा गया है, पर इसमें शृंगार वीर आदि के वर्णन चली आती हुई भारतीय काव्य परंपरा के अनुसार ही हैं। दे० *मलिक मुहम्मद जायसी*।

प्रेमगाथाओं में इस ग्रंथ का स्थान प्रथम है और प्रबंध-काव्यों में द्वितीय (प्रथम स्थान *रामचरितमानस* को प्राप्त है)। विशेष दे० माताप्रसाद गुप्त द्वारा संपादित *पद्मावत*, वासुदेव शरण अग्रवाल द्वारा संपादित *पद्मावत*।

पद्य—छंदोबद्ध रचना। पद्य के लिये यह आवश्यक नहीं कि वह कवित्वपूर्ण ही हो। ताल, तुक, लय, यति, वर्ण, मात्रा आदि छंदों के नियमों का पालन करने से बनी कोई भी रचना पद्य कही जा सकती है।

पन्ना वीरमदे री बात—एक अज्ञात लेखक की डिंगल में एक गद्य-पद्यमय प्रेम-रचना (लि० का० १८५७ ई०), जिसमें कुँवर वीरमदे और पन्ना की प्रेम-कथा है।

पनिहारी (पंच)—योग के भाषानुसार पाँच गुण—शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध।

पन्ना—चित्तौड़ की एक प्रसिद्ध धाय। महाराणा सांगा के पुत्र विक्रमजित के व्यवहार से असंतुष्ट होकर मंत्रियों ने उसे राज्यच्युत करके वनवीरसिंह नामक एक व्यक्ति को चित्तौड़ के सिंहासन पर बिठा दिया। उस समय राणा सांगा के कनिष्ठ पुत्र उदयसिंह की अवस्था ६ वर्ष की थी। मंत्रियों की इच्छा थी कि उदयसिंह के वयस्क होने पर वनवीर के स्थान पर उदयसिंह को बिठाया जाए। मंत्रियों का यह अभिप्राय वनवीर को ज्ञात हो गया। एक दिन खड्ग लेकर वह महल में गया और धात्री पन्ना से वह उदयसिंह को पूछने लगा। पन्ना ने वनवीर के षड्यंत्र की बातें सुन रखी थीं और उदयसिंह को एक विश्वस्त नापित के हाथ वहाँ से हटा दिया था। उदय के स्थान पर पन्ना ने अपने पुत्र को रख दिया था। जब वनवीर ने उदयसिंह को पूछा, तब पन्ना ने संकेत कर अपने ही पुत्र को उदयसिंह बतला दिया। वनवीर ने उस बालक का वध कर दिया। पन्ना उदयसिंह को लिये हुए कुंभलमेर के सामंत राजा आशाशाह के आश्रय में पहुँची। बाद में उदयसिंह चित्तौड के सिंहासन पर अभिषिक्त हुआ। पन्ना के इस अलौकिक स्वार्थत्याग और स्वामी-भक्ति के कारण इसका नाम चिरस्मरणीय हो गया।

पपीहा—एक पक्षी जो वसंत और वर्षा में

प्रायः ग्राम के पेड़ों पर बैठकर अत्यंत सुरीली ध्वनि में बोलता है। इसकी बोली बहुत ही रसमय होती है और उसमें कई स्वरों का समावेश होता है। किसी-किसी के मत से इसकी बोली में कोयल की बोली से भी अधिक मिठास होती है। कवि-प्रसिद्धि है कि यह अपनी बोली में "पी कहाँ ?" "पी कहाँ ?" अर्थात् "प्रियतम कहाँ है ?" बोलता है। यह भी प्रसिद्ध है कि यह वर्षा का ही जल पीता है। बहुतों ने तो यहाँ तक मान रखा है कि यह केवल स्वाति नक्षत्र में होने वाली वर्षा का ही जल पीता है। इसकी बोली कामोद्दीपक मानी गई है। इसके अटल नियम, मेघ पर अनन्य प्रेम और उसकी बोली की कामोद्दीपकता को लेकर कवियों ने अच्छी-अच्छी उक्तियाँ कही हैं। यद्यपि इसकी बोली चैत से भादों तक बराबर सुनाई पड़ती रहती है, तथापि कवियों ने इसका वर्णन केवल वर्षा के उद्दीपनों में ही किया है। पर्य्याय०—चातक, मेघजीवन, नोकक, शारंग, सारंग, स्तोतक।

पयोष्णी—पूर्णा नदी का प्राचीन नाम। यह तापती की एक सहायक नदी है।

परकीया—१ दूसरे की विवाहिता स्त्री या अविवाहिता कन्या—इन दो भेदों वाली परस्त्री। २ यात्रा आदि में बाहर जाकर परपुरुषों से मिलने वाली कुलटा स्त्री।

परधाम—विष्णु। यथा—अज सच्चिदानंद परधाम—*तुलसी*।

परमहंस—परमात्मा। यथा—परमहंस तुम सब के ईस।—*सूर*।

परमानंददास (जन्म १४९३ ई०)—कन्नौज निवासी, **वल्लभाचार्य** के शिष्य, **अष्टछाप** के कवि और *ध्रुवचरित्र*, *दानलीला* तथा *परमानंददास जी के पद* (पद संग्रह) के रचयिता। यद्यपि इन्होंने कृष्ण की बाल-लीला का विशद वर्णन किया है, तथापि विरह वर्णन संबंधी इनके पद बड़े उत्कृष्ट माने जाते हैं।

परमालरासो—**नागरी प्रचारिणी सभा** द्वारा *महोबाखंड* और *कनवजखंड* नामक दो भागों में प्रकाशित रचना, जिसमें परमाल (परमर्दीदेव) और जयचंद की वीरता की विशेष बड़ाई की गई है। यह रचना *आल्हाखंड* से सर्वथा भिन्न है।

परमेश्वरीदास (१८०३-५५ ई०)—कालिंजर निवासी एक राम-भक्त कवि और *कवितावली* के रचयिता।

परशुराम—विष्णु के छठे अवतार (*मत्स्य० ४७. २४१*)। जमदग्नि और रेणुका के पुत्र (*ब्रह्म० १०*)। ये धनुर्विद्या आदि सब विद्याओं में निष्णात थे। परशु (फरसा) पास रखने से इनका नाम 'परशुराम' पड़ा। ब्राह्मण वंश में उत्पन्न होकर इन्होंने क्षत्रियों की भाँति आचरण किया (दे० *ऋचीक*)। अपने पिता की आज्ञानुसार इन्होंने अपनी माता को मार डाला था, पर पिता से वरदान प्राप्त कर अपनी माता को पुनर्जीवित करवा दिया (दे० *रेणुका, विष्णुधर्म० १.३६, ४८-५०*)। अपने पिता के हत्यारे कार्तवीर्य को तथा उनके अनेक पुत्रों को इन्होंने मार दिया (*म० द्रो० ७०*)। इन्होंने २१ बार पृथ्वी को क्षत्रियरहित कर दिया था (*ब्रह्मांड० ३.४६*)। जनकपुर में रामचंद्र ने जब शिव-धनुष तोड़ा, तब ये बहुत क्रुद्ध हुए और राम-लक्ष्मण से युद्ध करने को तत्पर हो गये थे। पांडव-गुरु द्रोणाचार्य ने अस्त्र-शस्त्र विद्या इन्हीं से सीखी थी। ये अमर कहे जाते हैं। दे० *अलर्क*। परशुराम के पर्य्याय०—रेणुकात्मज, परशुधर, राम, जामदग्नि, भार्गव आदि।

पराशर—वसिष्ठ-पुत्र शक्ति और अदृश्यंती के पुत्र एक ऋषि। धीवर-कन्या **सत्यवती** से इनके द्वारा प्रसिद्ध ऋषि वेदव्यास उत्पन्न हुए थे (*म० आ० ६३, १०५, भा० १.३*)।

परिकर—वह अर्थालंकार जिसमें विशेषण विशेष अभिप्राय वाले रहते हैं। उ०—हिम-कर बदनी तिय निरीख पिय दृग शीतल होत।

परिकरांकुर—एक अर्थालंकार जिसमें विशेष्य विशेष अभिप्राय वाला होता है। उ०—तन की रही सम्हार नहिं, गई प्रेम-रस भोय; / मोहन! लखि तेरी दसा क्यों न भटू असि होय। यहाँ मोहन शब्द की मुख्यता है।

परिणाम—एक अर्थालंकार जिसमें उपमेय द्वारा की जाने वाली क्रिया का उपमान द्वारा किया जाना कहा जाए। उ०—कर कमलन धनु-सायक फेरत। यहाँ कर के उपमान 'कमल' द्वारा 'धनु-सायक फेरना' जो वास्तव में कर द्वारा होना चाहिये, वर्णित है।

परिवृत्ति—एक अर्थालंकार, जिसमें समान, न्यून या अधिक के साथ कुछ विनिमय (लेना-देना, बदला) वर्णित किया जाता है। इसमें कवि कल्पित होने से चमत्कारपूर्णता आ जाती है। उ०—ले लिया हृदय उसने मेरा अपना मादक कटाक्ष देकर। / मैंने भी हृदय उसे देकर पाया है दाहक मदन ज्वर॥ यहाँ पहिले चरण में समान से विनिमय है, दूसरे में न्यून से। इसी प्रकार अधिक से विनिमय भी समझना चाहिये।

परिसंख्या—वह अर्थालंकार जिसमें किसी स्थान पर इस प्रकार स्थापन होता है कि वहाँ उस रूप में न स्थापित होते हुए भी कहीं से वह हटाया गया हो। उ०—दंड यतिन कर भेद जहँ नरतक नृत्य समाज; / जीतै मनसिज सुनिय अस रामचंद्र के राज। यहाँ श्लेष से परिसंख्या है। दंड=सज़ा; फकीरों का डंडा। भेद=भेद-नीति: रागादि का भेद।

परी—कोहकाफ पर बसने वाली कल्पित स्त्रियाँ, जिनके कंधों पर पंख होते हैं। कविता में ये सुंदर रमणियों का उपमान बनाई गई हैं। यथा—हेरि हिंडोरे गगन तें, परी परी सी टूटि—*बिहारी*।

परीक्षा गुरु—**श्रीनिवासदास** (१८५१-८७ ई०) का एक उपन्यास। हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों में इसका विशिष्ट स्थान है।

'इस उपन्यास में दिल्ली के एक सेठ की कहानी है जो चाटुकारों की मिथ्या प्रशंसा से फूल-फूल कर बाहरी तड़क-भड़क और दिखावे के चक्कर में पड़कर ऋण के गहरे जाल में डूबने-उतराने लगता है। एक उदार सज्जन मित्र के द्वारा किसी तरह इस लक्ष्मीवाहन का उद्धार होता है और यह विपत्ति-परीक्षा ही उसका प्रकाश-दर्शक गुरु होती है।'

'विषय-गांभीर्य के विचार से इसका अधिक महत्त्व नहीं। इसमें उपदेश ही प्रबल दिखलाई पड़ता है। कथावस्तु में कोई विशेष रंजन-शक्ति भी नहीं है।'

परीचित्—अर्जुन के पौत्र तथा अभिमन्यु और उत्तरा (दे० यथा०) के पुत्र। एक बार एक काला कलूटा व्यक्ति एक गाय और एक लँगड़े बैल को खदेड़ता हुआ इन्हें मिला। पूछने पर ज्ञात हुआ कि गाय पृथ्वी है और लँगड़ा बैल धर्म है। वह काला व्यक्ति कलियुग था। राजा ने कलियुग को जैसे ही मारना चाहा कलि-युग इनके पैरों पर गिर पड़ा। शरणागत समझ कर राजा ने उसे छोड़ दिया। निवास के लिये कलियुग ने राजा से १४ स्थान माँग

लिये। उन स्थानों में सुवर्ण भी एक था। राजा जब लौट रहे थे, तब इन्होंने ध्यानावस्थित शमीक ऋषि से जल माँगा। जब कोई उत्तर न मिला, तब इन्होंने ऋषि को पाखंडी समझ कर, उनके कंठ में एक मृत सर्प लाकर डाल दिया। शमीक-पुत्र शृंगी को जब यह ज्ञात हुआ, तब उन्होंने इनको शाप दिया कि तुम्हारी मृत्यु सातवें दिन सर्प द्वारा काटने से होगी। वस्तुतः उस दिन राजा सिर पर सुवर्ण-मुकुट पहने हुए थे और सुवर्ण में कलि का निवास होने से इनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई। सातवें दिन तक्षक के काटने से परीक्षित् की मृत्यु हो गई (*भा० १.१६-१९, २.८*)।

परुषा—भाषा की वह वृत्ति जिसमें ओज-प्रधान वर्णों (ओजप्रधान वर्ण—किसी वर्ग के दूसरे चौथे अक्षरों का अपने पहिले अक्षरों से संयोग, टवर्ग, ऊपर या नीचे रेफ (र) का योग, और दीर्घ र, ण) का प्रयोग प्रचुरता से किया जाता है।

पर्य्याय—एक अर्थालंकार जिसमें एक वस्तु का क्रमशः वर्णन होता है। उ०—वर्षा की पहिली बूंद पहिले तपस्विनी पार्वती के पलकों पर ठहरी, फिर अधरों पर, फिर उन्नत पयोधरों पर, फिर त्रिवली में और बहुत देर में नाभि तक पहुँची। यहाँ एक बूंद अनेकों में स्थित है।

पर्यायोक्ति—एक अर्थालंकार जहाँ पर्य्याय शब्द 'प्रकार' और 'व्याज' इन दो अर्थों के आधार पर वर्णन हो। इसके दो भेद हैं—

१ *प्रथम पर्यायोक्ति* (रमणीय प्रकार द्वारा)—जिसमें अभीष्ट का वर्णन सीधी रीति से न करके चमत्कारपूर्ण अन्य प्रकार से किया जाए। उ०—कत भटकत गावत न क्यों, वाही के गुन गाथ। / जाके लोचन ही किये, बिन बलयनि रति हाथ॥ यहाँ अभीष्ट अर्थ तो यह है कि जिसके देखते ही कामदेव भस्म हो गया, किंतु कहा गया है कि जिसके नेत्रों ने रति के हाथों को बिना कंकण के कर दिया—विधवा बना दिया।

२ *द्वितीय पर्यायोक्ति* (रमणीय व्याज द्वारा)—जिसमें किसी रमणीय व्याज द्वारा अभीष्ट साधन का वर्णन किया जाए। उ०—देखन मिस मृग विहंगतरु, फिरैं बिहोरि-बिहोरि। / निरखि-निरखि रघुवीर छवि, बाढ़ै प्रीति न थोरि॥ यहाँ अभीष्ट अर्थ रघुवीर का रूप देखना है और मृग, विहंग, तरु को देखने के लिये बार-बार उद्यान में आना रमणीय व्याज है।

पर्वत—पुराणों में पर्वतों के संबंध में अनेक कथाएँ हैं। एक बार देवताओं ने इनके पंख काट दिये और इन्हें यथास्थान बैठा दिया था। विष्णु ने इनको कामरूपी बनाया था। देवता और दानव इनपर निवास करते हैं।

पलंका—अति दूरवर्त्ती स्थान। प्राचीन भारत-वासी पलंका को बहुत दूर समझते थे। यथा—लंका छोड़ि पलंका परा—*जायसी*।

पलचर—राजपूत जाति के एक उपदेवता का नाम, जो युद्ध में मरे हुए लोगों का रक्त पीता और आनंद से नाचता-कूदता है।

पलटूदास (आ० का १७९३ ई०)—एक संत और पलटूदासी पंथ के प्रवर्त्तक। इन्होंने सूफ़ी-मत से पूरी जानकारी प्रकट की है।

पलायनवाद (*Escapism*)—संसार से दूर एकांत में कल्पनात्मक लोक में चले जाने की अभिलाषा को प्रधानता देते हुए कविता

करना। यह हमेशा आवश्यक नहीं कि पलायनवादी कवि जीवन से दूर भागता है; यह भी संभव है कि वह इस नीरस और अपूर्ण संसार से ऊबकर एक पूर्ण जीवन की खोज में जा रहा हो।

पल्लव—दे० *सुमित्रानंदन पंत*।

पवन—हनुमान के पिता। दे० *अंजना*।

पश्चिमाचल—एक कल्पित पर्वत, जिसके विषय में लोगों की यह धारणा है कि सूर्य इनकी आड़ में छिपता है। इसे अस्ताचल भी कहते हैं।

पश्चिमी हिंदी—एक भाषा जिसकी **ब्रज-भाषा**, कन्नौजी (गंगा दोआब के उत्तर में), बुँदेली (बुँदेलखंड और मध्यभारत के एक भाग में), बाँगरू (हिसार, रोहतक और करनाल के जिलों में तथा दिल्ली के एक भाग में) और **खड़ी बोली** ये पाँच बोलियाँ हैं। प्राचीन साहित्य की दृष्टि से इन सब बोलियों में ब्रज-भाषा सब से प्रधान है। आधुनिक युग में खड़ी बोली ने ब्रज-भाषा का बहुत कुछ स्थान ले लिया है। विशेष दे० धीरेंद्र वर्मा-कृत *ब्रज-भाषा*।

पहलवानदास (आ० का० १६२३ ई०)—भीखीपुर (बाराबंकी) निवासी एक राम-भक्त कवि। *मसलेनामा* के रचयिता।

पहेली—किसी वस्तु अथवा विषय का ऐसा गूढ़ वर्णन, जिसके आधार पर उत्तर देने या उस वस्तु का नाम बताने में बहुत सोच-विचार करना पड़े। दे० *खुसरो*।

पांचजन्य—दे० *पंचजन*।

पांचाली—१ साहित्य में एक प्रकार की रीति या वाक्य-रचना-प्रणाली, जिसमें प्रायः य, र, ल, व, स, ह, वर्ण आते हैं। इसमें बड़े-बड़े समासों से युक्त और कांतिपूर्ण पदावली होती है। २ द्रौपदी का एक नाम।

पांडव—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव, जो कुंती और माद्री के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। ये पांडु के क्षेत्रज पुत्र थे।

पांडु—हस्तिनापुर के राजा, अंबालिका (दे० यथा०) के पुत्र और पांडव के पिता। इनकी मृत्यु अपनी पत्नी माद्री के साथ सहवास करने से हुई (*म० आ० ११८, १२५*)।

पाक—एक दैत्य जिसे इंद्र ने मारा था (*भा० ७.२.४. ८.११*)।

पाटलिपुत्र—पटना। मगध-नरेश अजातशत्रु के दो मंत्रियों ने इसका निर्माण किया था। पहिले मगध की राजधानी गिरिव्रजपुर थी, बाद में अजातशत्रु के पौत्र उदयाश्व ने अपनी राजधानी पाटलिपुत्र बनाई। पाटलिपुत्र को पुष्पपुर और कुसुमपुर भी कहते थे।

पाणिनि (वर्त्त० ६०० ई० पू०)—*अष्टाध्यायी* (प्रसिद्ध व्याकरण-ग्रंथ) के रचयिता एक मनि। ये संस्कृत के सर्वोत्कृष्ट वैयाकरण हैं। इनसे पूर्व भी बहुत-से वैयाकरण हो चुके थे और उनके व्याकरण प्रचलित थे। इन्होंने उन सबको दृष्टि में रखकर अपने नवीन व्याकरण का निर्माण किया। इनके विषय में यह उक्ति सर्वांशतः सत्य है कि इन्होंने सागर को गागर में भर दिया है। इन्होंने उस समय की बोलचाल की शिष्ट भाषा के विवेचन को ही प्रधानता दी है, यद्यपि स्थान-स्थान पर वैदिक भाषा के संबंध में भी कुछ निर्देश कर दिये हैं। यह व्याकरण इतना

सर्वप्रिय हुआ कि इसके संमुख पुराने व्याकरणों का प्रचुर लुप्तप्राय हो गया । विशेष दे० वासुदेवशरण अग्रवाल-कृत *इंडिया इन दि एज ऑफ पाणिनि ।*

पाणिप्रस्थ—दे० *कुरुक्षेत्र* ।

पाताल—पुराणानुसार पृथ्वी के नीचे के सात लोक—अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल और पाताल, जिनपर क्रमशः बल, **शंकर, बलि, मय, तक्षक,** पाणि तथा **वासुकि** का आधिपत्य है । सातवें लोक 'पाताल' के तीस सहस्र योजन नीचे शेष भगवान् निवास करते हैं ।

पाद—प्रत्येक छंद के सामान्यतः किये जाने वाले चार भागों में से एक भाग । इसे चरण भी कहते हैं । कुछ छंदों में पादों की संख्या चार से भी कम होती है । छप्पय, मिलिंदपाद आदि में यह संख्या छः हो जाती है ।

पादाकुलक—चार चतुष्कल पादाकुलका (४ चौकल=१६ मा० छंद) । उ०—सुमति कुमति सब के उर रहहीं / नाथ ! पुराण निगम अस कहहीं । इसके अनेक भेद हैं ।

पारस—एक प्रकार का काल्पनिक पत्थर । इसके स्पर्श से लोहा भी सुवर्ण हो जाता है । यह सत्संग अथवा लाभदायक उपयोगी वस्तु का प्रतीक है ।

पारिजात—एक देववृक्ष जो स्वर्गलोक में इंद्र के कानन में है । यह **समुद्रमंथन** के समय निकला था । इस वृक्ष के पुष्पों की विशेषता यह है कि जो जैसी भी गंध चाहे इससे प्राप्त कर सकता है । जब कृष्ण अदिति के कुंडल लौटाने स्वर्ग गये (दे० *नरकासुर*), तब सत्यभामा भी उनके साथ गई थीं । सत्यभामा के आग्रह पर इंद्र से युद्ध कर कृष्ण पारिजात अपने साथ ले आए थे । बाद में यह लौटा दिया गया था । पारिजात के पर्य्याय०—कल्पद्रुम, कल्पवृक्ष, हरिचंदन, मंदार आदि ।

पार्वती—हिमालय और मेना की कन्या । नारद की आज्ञा से हिमालय ने इनका विवाह शंकर से कर दिया (*स्कंद० १.३.३-१३*) । अनरकेश्वर तीर्थ में स्नान करने से इनका वर्ण गौर हो गया और ये गौरी कहलाईं (*५.१.३०*) । दे० *दुर्गा* । पार्वती के पर्य्याय०—**दुर्गा, उमा,** कात्यायनी, काली, हेमवती, कपर्दिनी, भवानी, रुद्राणी, **अपर्णा, चंडिका,** अंबिका, दाक्षायणी, सती, अंबा, सिंहवाहिनी आदि ।

पार्वती मंगल—**तुलसीदास** का पूर्वी अवधी भाषा में एक काव्य (१५८६ ई०), जिसमें शिव-पार्वतो-विवाह वर्णित है । 'भाषा की दृष्टि से यह रचना *रामचरितमानस* के समकक्ष मानी जाती है, पर शैली की दृष्टि से नहीं ।' इस रचना पर *कुमारसंभव* का प्रभाव प्रतीत होता है ।

पाली—"संस्कृत का व्याकरण-बद्ध रूप साहित्य में प्रतिष्ठा पा गया, किंतु व्याकरण की जटिलता के कारण वह जन-समुदाय के लिये कुछ दुरूह हो गई । वह विद्वानों की ही भाषा रही और जन-समुदाय की भाषा स्वतंत्र रूप से विकसित होती रही । गौतमं बुद्ध ने जनता में अपने सिद्धांतों के प्रसार के निमित्त लोकभाषा को ही अपनाया । बौद्ध लोग उसी जन-समुदाय की भाषा को मागधी या मूल भाषा (सा मागधी मूल भासा) कहते हैं । पीछे से इसकी पाली नाम से प्रतिष्ठा हुई ।' ऐसा प्रतीत होता है कि 'पाली' शब्द का अर्थ पंक्ति के अर्थ में था । मागधी का बुद्ध के समय का रूप बौद्ध शास्त्रों में लिपिबद्ध हो जाने के कारण पाली (संस्कृत

पालि=पंक्ति) कहलाने लगा। कुछ लोग इस मूल भाषा को पहिली प्राकृत कहते हैं। विद्वानों का मत है कि उच्चारण की सुगमता संबंधी प्राकृतिक नियमों के कारण संस्कृत ने प्राकृत का नियम धारण कर लिया। कुछ विद्वान् प्राकृत की व्युत्पत्ति करते हुए बतलाते हैं कि संस्कृत को प्रकृति कहते हैं। उस प्रकृति से उत्पन्न होने वाली भाषा प्राकृत कहलाई—*प्रकृतिः संस्कृतम् तत्र भव तत आगतं वा प्राकृतम्*—हेमचंद्र। उन्होंने संस्कृत से प्राकृत में रूपांतर करने के नियम भी बतलाए हैं। अन्य विद्वानों का मत है कि प्राकृत जन-समुदाय की स्वाभाविक भाषा थी, जिससे संशोधन होकर संस्कृत (संस्कार की हुई) भाषा बनी। इसका समय ५०० ई० पू० से १ ई० पू० माना गया है। पाली का पठन-पाठन श्याम, वरमा, सिंहल आदि देशों में उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार भारतवर्ष में संस्कृत का।

पाशुपतास्त्र—वह अस्त्र जिसे शिव ने अर्जुन की तपस्या से प्रसन्न होकर उसे दिया था।

पिंगल—१ व्रज-भाषा और व्रज-भाषा से प्रभावित राजस्थानी भाषा का प्राचीन नाम। २ छंदशास्त्र को भी पिंगल कहते हैं। इस शास्त्र के प्रणेता पिंगल मुनि हैं।

पिंगला—१ मिथिला की एक वेश्या। एक बार इसे परपुरुष की प्रतीक्षा करते-करते संपूर्ण रात्रि व्यतीत हो गई। निराश हो यह भगवान् की भक्ति करने लगी (*भा० ११.८*)। २ हठयोग और तंत्र में तीन प्रधान नाड़ियों में से एक। यह शरीर के दक्षिण भाग में है और शिव-स्वरूपिणी है।

पिष्टपेषण न्याय—पिसे को पीसना निरर्थक होता है। किए हुए कार्य को फिर से करना व्यर्थ है। इसी प्रकार कथित बात को पुनः निरर्थक बार-बार दुहराने में इस उक्ति का प्रयोग होता है।

पीतांबरदत्त बड़थ्वाल, डा०—प्रसिद्ध आधुनिक आलोचक। इनकी मुख्य रचनाएँ *निर्गुण स्कूल ऑव हिंदी पोइट्री* (अनू० *हिंदी काव्य में निर्गुण संप्रदाय*), *गोस्वामी तुलसीदास*, *रूपक रहस्य*, *गोरख वाणी*, *जायसी का अध्यात्मवाद* आदि हैं।

पीपा (जन्म १४२५ ई०)—गगरौनगढ़-अधिपति एक भक्त, जिनके पद *ग्रंथ साहब* में संगृहीत हैं। ये पहिले **दुर्गा** के उपासक थे, बाद में इन्होंने **रामानंद** का शिष्यत्व ग्रहण किया। पीपा की भक्ति देख सूरसेन राजा भी इनका शिष्य हो गया था। इनके विषय में अनेक अलौकिक जनश्रुतियाँ हैं।

पीयूषवर्ष—दिसि निधि पीयूषवर्ष त अंत लगा (१६ (१०, ६) मा० छंद, अंत ल ग)। इसे आनंदवर्द्धक भी कहते हैं, पर आनंदवर्द्धक में यति का कोई विशेष नियम नहीं है।

पुंड (पुष्य) (आ० का० ७१३ ई०)—एक कवि। इनका निर्देश *शिवसिंह सरोज* में हुआ है। ये राजा भोज के पूर्वज राजा मान के सभासद थे। इन्होंने दोहों में कोई अलंकार-ग्रंथ रचा था। ये हिंदी के आदि कवि कहे जा सकते हैं, पर इनकी कोई रचना प्राप्त नहीं है। अतः **सरहपा** को ही हिंदी का आदि कवि माना जाता है।

पुनरुक्तवदाभास—एक शब्दालंकार जिसमें भिन्न-भिन्न रूपवाले शब्दों में पुनरुक्ति-सी जान पड़े, किंतु वास्तव में उनके भिन्न-भिन्न अर्थ हों। उ०— अली, भौंर गुंजन लगे, होन लगे दल पात। / जहँ-तहँ फूले रूख तरु, प्रिय प्रीतम किमिजात।। यहाँ 'अली और 'भौंर',

'दल' और 'पात', 'रूख' और 'तरु', 'प्रिय' और 'प्रीतम' एकार्थवाची जान पड़ते हैं, किंतु वास्तव में अर्थ भिन्न हैं।

पुनरुक्ति—एक बार कही हुई बात को पुनः कहना। साहित्य में रचना का यह एक दोष माना जाता है।

पुरंजय—दे० *ककुत्स्थ*।

पुराण—हिंदुओं के धर्म-संबंधी १८ विशाल ग्रंथ, जिनमें सृष्टि, प्रलय, प्राचीन ऋषियों और राजाओं के वृत्तांत आदि हैं। इनके रचयिता **वेदव्यास** माने जाते हैं। पुराणों के नाम इस प्रकार हैं—*ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव, भागवत, नारद, मार्कंडेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त्त, लिंग, वराह, स्कंद, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़* और *ब्रह्मांड*। *देवी भागवत* एक १६ वाँ पुराण माना जाता है। इनके अतिरिक्त १८ उपपुराण भी हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—*सनत्कुमार, नरसिंह, नंद, शिवधर्म, दुर्वासा, नारदीय, कपिल, उशनस्, मानव, वरुण, काली, महेश्वर, सांब, सौर, पाराशर, मारीच* और *भार्गव*। *विष्णुधर्मोत्तर* और *बृहद्धर्म* भी उपपुराण माने जाते हैं।

पुरी—दे० *जगन्नाथ*।

पुरुगुप्त—गुप्तवंशी भारत-सम्राट् (४६७-६६ ई०)।

पुरुजित्—**कुंतिभोज** का पुत्र और अर्जुन का मामा। इसने महाभारत-युद्ध में भाग लिया था (*म० उ० १७२.२, भी० २५.५*)। यह द्रोणाचार्य द्वारा मारा गया।

पुरूरवा—बुध और इला के पुत्र एक प्राचीन राजा। इनकी पत्नी का नाम उर्वशी (दे० यथा०) था। उर्वशी से जब इन्हें पाँच पुत्र प्राप्त हो गये, तब इन्हें अपने विषयी जीवन पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ। ज्ञानोदय होने पर इनका सारा मोह चला गया। अंत में इन्होंने परम पद प्राप्त किया (*श० ब्रा० ११.५.१, ह० वं० १.२६*)। सोमवंश के ये मूल पुरुष हैं।

पुरोचन—दुर्योधन का एक मित्र, जिसे उसने पांडवों को **लाक्षागृह** में जलाने के लिये नियुक्त किया था (*म० आ० १४४, १४८*)।

पुलस्त्य—ब्रह्मा के मानसपुत्र जो सप्तर्षियों मे से एक और प्रजापति माने जाते हैं (*भा० ३.१२*)। ये कुवेर, रावण आदि के पितामह थे (*४.१.३६*)।

पुलिंद—दिल्ली के दक्षिण और बुंदेलखंड के पश्चिम में एक प्रदेश।

पुलोम—एक दैत्य जिसे इंद्र ने मार कर उसकी कन्या **शची** से विवाह किया था। दे० *पुलोमजा*।

पुलोमजा—**पुलोम** की पुत्री, शची (*स्कंद० ४.२.८०*)। पर्य्याय०—पौलोमी, इंद्रवधू।

पुलोमा—वैश्वानर दैत्य की पुत्री, **भृगु** की पत्नी और च्यवन ऋषि की माता। जब इन्हें पुलोमा नामक दैत्य हर ले गया, तब गर्भ से निकल कर च्यवन ने राक्षस को भस्म कर दिया था (*म० आ० ५-६*)।

पुष्कर—राजा नल का भाई, जिसने नल को द्यूत में पराजित कर उनका राज्य ले लिया था (*म० व० ५६*)।

पुष्टिमार्ग—वल्लभाचार्य (दे० यथा०) का वह सिद्धांत, जिसके अनुसार ईश्वर के अनुग्रह-स्वरूप प्राप्त भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है।

पुष्पक—एक विमान जिसे **रावण** ने कुवेर से छीन लिया था। लंका-विजय के उपरांत

रामचंद्र इसीसे अयोध्या लौटे थे। बाद में यह विमान कुबेर को लौटा दिया गया था।

पुष्पदंत—१ (र० का० ल० ६७२ ई०)—जैन महाकवि। *महापुराण, जसहर चरिउ* (यशोधर चरित्र) (दोनों चौपाइयों में) और *णयकुमार चरिउ* (नागकुमार-चरित्र) के रचयिता। इनकी भाषा ब्राचड़ अपभ्रंश या उसी से प्रभावित प्रतीत होती है। दे० *जैन साहित्य*। २ एक गंधर्वराज जो चोरी किया करता था। बाद में यह शिव-भक्त हो गया और इसने *शिवमहिम्नःस्तोत्र* की रचना की। ३ एक रुद्र-गण। दक्ष के यज्ञ का ध्वंस करते समय इसने सूर्य का दाँत तोडा था।

पुष्पपुर—पटना का प्राचीन नाम।

पुहकर कवि—मैनपुरी निवासी, एक कवि। **जहाँगीर** ने इन्हें किसी कारणवश कैद कर दिया, किंतु इनके <u>रसरत्न</u> (१६१६ ई०) लिखने पर इन्हें छोड़ दिया।

पुहुपावती—दुःख हरनदास (आ० का० १६७३ ई०) का एक काव्य, जिसमें राजकुँवर और पुहुपावती की प्रेम-कथा है।

पूतना—एक राक्षसी जो **कंस** की प्रेरणा से अपने स्तनों को विषाक्त कर कृष्ण को मारने आई, किंतु कृष्ण ने दूध के बदले इसका सारा रक्त चूस लिया। इससे इसका प्राणांत हो गया (*भा० १०.६*)।

पूरन भगत—दे० *चौरंगीनाथ*।

पूरु—ययाति और शर्मिष्ठा के पुत्र (*म० आ० ६४*)। इनसे यौवन प्राप्त कर **ययाति** ने बहुत समय तक सुख भोग किया। अंत में इनको राज्य देकर वे वन में चले गये (*भा० ६.१६.२३*)।

पूर्णसिंह (१८८१-१९३१ ई०)—निबंधकार। जापान में इनकी भेंट स्वामी रामतीर्थ से हुई थी। 'कन्यादान या नयनों की गंगा', 'पवित्रता', 'आचरण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम', तथा 'सच्ची वीरता', शुद्ध खड़ी बोली में लिखे इनके निबंध प्राप्त हैं। इनके निबंधों में काव्य की-सी भावुकता रहती है। इनकी भाषा में एक विशेष मस्तानापन और स्वाभाविकता है और उसमें सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग रहता है।

पूर्णोपमा—दे० *उपमा*।

पूर्वपर्वत—वह कल्पित पर्वत जिसकी ओट से सूर्य उदय होता है। इसे उदयाचल भी कहते हैं।

पूर्वरंग—वह संगीत या स्तुति आदि जो नाटक आरंभ होने से पहिले विघ्नों की शांति या दर्शकों को सावधान करने के लिये होती है।

पूर्वरूप—एक अर्थालंकार जिसमें समीपवर्ती से लिया हुआ गुण छोड़कर अपना ही पुराना गुण ग्रहण किया जाता है। उ०—मुक्त हार हरि के हिये, मरकत मनिमय होत। / पुनि पावत रुचि राधिका, मुख मुसकानि उदोत। यहाँ मुक्ता हार हरि के रंग में रंग गया था, परंतु फिर अपने ही पूर्व रंग में परिवर्तित हो गया।

पूर्वी हिंदी—उत्तर प्रदेश, मध्यप्रांत तथा मध्य भारत के भागों में बोली जाने वाली भाषा, जिसकी अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी ये मुख्य तीन बोलियाँ हैं। साहित्यिक दृष्टि से इन सबमें **अवधी** ही प्रधान है।

पृथा—दे० *कुंती*।

पृथु—वेन (दे० यथा०) के पुत्र एक सूर्यवंशी राजा। ये आदि राजा माने जाते हैं (*ब्रह्म० ४*)। ये बड़े धर्मात्मा थे। पृथु जब सिंहासन पर बैठे, तब पृथ्वी अन्नहीन हो गई थी। यह जानकर पृथु ने पृथ्वी को लक्ष्य कर बाण चलाने के लिये धनुष उठाया। जब इन्होंने पृथ्वी को भयभीत किया, तब वे गौ का रूप धारण करके बोलीं—'आप मेरे योग्य बछड़ा, दोहनपात्र और दुहने वाले की व्यवस्था कीजिये, मैं समस्त अभीष्ट वस्तुएँ दे दूँगी। आप मुझे समतल कर दें जिससे कि वर्षा-जल बहकर समुद्र में चला जाए।' यह सुनकर पृथ्वी ने देवता, ऋषि, असुर, गंधर्व, नाग, यक्ष, पशु, पक्षी आदि सबको गौ से दूध दुह लेने की आज्ञा दे दी। इसके पश्चात् इन्होंने समस्त भूमंडल को समतल कर दिया। इन्होंने ९९ यज्ञ किये। अंत में सनत्कुमार से ज्ञान प्राप्त कर अपनी पत्नी के साथ ये वन को चले गये (*भा० ४.१५-२४, पद्म० सृ० ८*)।

पृथ्वी—१ एक ग्रह। इनकी उत्पत्ति के संबंध में अनेक कथाएँ हैं। एक के अनुसार ये मधु-कैटभ के मेद (चर्बी) से उत्पन्न हुईं, जिससे इनका नाम 'मेदिनी' पड़ा। एक अन्य मतानुसार ये विराट्पुरुष के रोम-कूपों में भर जाने वाले मैल से उत्पन्न हुईं। ये शेषनाग के फन पर और कच्छप की पीठ पर स्थित कही गई हैं। इनके अनेक नाम हैं। २ जू साजि सिय लैगंई, जगत मातु पृथ्वीसुता (ज स ज स य ल ग=१७ (८, ९) व० छंद)। उ०—अगस्त ऋषिराज जू वचन एक मेरी सुनो / प्रशस्त सब भाँति भूतल सुदेश जी में गुनो।

पृथ्वीराज—१ (११६६-१२११ ई०)—दिल्ली और अजमेर के एक प्रसिद्ध राजा। ये भारत के अंतिम हिंदू-सम्राट् माने जाते हैं। दे० *पृथ्वीराजरासो*। २ (जन्म १५४९ ई०)—बीकानेर-नरेश राजसिंह के भाई, अकबर के राज्य-कर्मचारी और *वेलि किसन रुकमणी री* के रचयिता। १५७८ में जब महाराणा प्रताप ने अकबर से संधि न की, तब इन्होंने महाराणा की प्रशंसा में एक गीत लिखकर भेजा था। इन्होंने छोटे-छोटे पद्य लिखे हैं, जो *साख री गीत* के नाम से प्रसिद्ध हैं।

पृथ्वीराजरासो—**चंदवरदाई द्वारा लिखित हिंदी का प्रथम महाकाव्य** (११९१ ई० ?), जिसका प्रकाशन नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से १९३५ में हुआ।

दिल्ली के राजा अनंगपाल की कमला नामक कन्या का विवाह अजमेर-नरेश सोमेश्वर से हुआ, जिनसे पृथ्वीराज उत्पन्न हुए। उनकी सुंदरी नामक दूसरी कन्या का विवाह कन्नौज-नरेश विजयपाल से हुआ, जिनसे जयचंद उत्पन्न हुए। अनंगपाल ने पृथ्वीराज को गोद ले लिया जिससे दिल्ली तथा अजमेर एक ही राज्य के अंतर्गत हो गये। जयचंद को यह बुरा लगा और जब उसने अपनी कन्या संयोगिता का स्वयंवर किया, तब उसने पृथ्वीराज को आमंत्रित नहीं किया। यही नहीं, उसे अपमानित करने के लिये उसकी स्वर्ण-निर्मित प्रतिमा द्वारपाल के रूप में द्वार पर रख दी। संयोगिता पहिले से ही पृथ्वीराज पर अनुरक्त थी। उसने जयमाला स्वर्ण-प्रतिमा के गले में डाल दी। पृथ्वीराज ने आकर संयोगिता का अपहरण कर दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में जयचंद की सेना से घोर युद्ध हुआ, पर अंत में विजय पृथ्वीराज की ही हुई।

इसी समय शहाबुद्दीन ग़ोरी अपने यहाँ के एक पठान सरदार की प्रेमिका चित्ररेखा पर मुग्ध हुआ। वह सरदार भाग कर पृथ्वी-

राज की शरण में आ गया। ग़ोरी ने उसे लौटा देने के लिये कहलवा भेजा, किंतु पृथ्वीराज ने अपने शरणागत की रक्षा का आदर्श सामने रखकर ऐसा करना अस्वीकार कर दिया। ग़ोरी ने अनेक बार पृथ्वीराज से लोहा लिया, पर प्रत्येक बार पराजित हुआ। इसी बीच पृथ्वीराज ने अनेक विवाह किये और अनेक राजाओं से लड़ाइयाँ लड़ीं। अंत में ग़ोरी पृथ्वीराज को बंदी कर गज़नी ले गया। चंद भी *रासो* को अपने पुत्र जल्हन को देकर वहाँ पहुँच गये। वहाँ एक दिन कवि चंद के संकेत से पृथ्वीराज ने शब्दवेधी बाण से ग़ोरी का वध कर दिया। तत्पश्चात् चंद और पृथ्वीराज एक दूसरे को मार कर मर गये।

रासो अपने समय की सुंदर, सुव्यवस्थित साहित्यिक भाषा का उत्कृष्ट उदाहरण है। इसमें अपने समय में प्रचलित कवित्त, छप्पय, दूहा, तोमर, शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, त्रोटक, आर्या आदि अनेक छंदों का प्रयोग है। प्रधान रस वीर और श्रृंगार हैं। मुख्य कथानक के साथ-साथ अनेकों उपकथाएँ भी प्रायः चलती रहती हैं। यह ग्रंथ हिंदी का प्रथम महाकाव्य माना जाता है, यद्यपि इसमें महाकाव्य के सभी आवश्यक तत्त्व विद्यमान नहीं हैं। भाषा विशेषकर डिंगल है, पर उसका रूप स्थान-स्थान पर भिन्न है। ग्रंथ लगभग २५०० पृष्ठों का है और इसमें ६९ समय अर्थात् अध्याय हैं। इसकी प्रामाणिकता व ऐतिहासिकता के संबंध में एक विवाद खड़ा हो गया है। इस ग्रंथ की मूल प्रति प्राप्त नहीं है। अजमेर-नरेश अमरसिंह (ल० १५८३ ई०) की संरक्षता में तैयार की गई एक प्रति के आधार पर ही इस ग्रंथ का प्रकाशन हुआ है।

***पृथ्वीराज विजय*—जयानक** का संस्कृत में एक अपूर्ण काव्य (११६८ और १२०० ई० के मध्य)।

इसमें पृथ्वीराज और उनके पूर्वजों का वर्णन है। इसमें दिये हुए संवत् तथा घटनाएँ ऐतिहासिक खोज के अनुसार ठीक ठहरती हैं।

पैग़ंबर—ईश्वर का पैग़ाम अथवा संदेश लाने वाले। यथा—मूसा, ईसा और मुहम्मद।

पैग़ंबरी ख़ुदावाद—मुसलमान और ईसाइयों का एकेश्वरवाद, जिसमें पैग़ंबर को प्रधानता दी गई है। इसके अनुसार जो मनुष्य पैग़ंबर के द्वारा ईश्वर की शरण में नहीं जाता, उसका उद्धार नहीं हो सकता।

पैशाची—एक प्राकृत भाषा जिसका प्रचार कश्मीर में था। कश्मीर का उत्तर प्रांत पिशाच या पिशास (कच्चा माँस खाने वाला प्रदेश) कहलाता था, इसी के आधार पर इस भाषा का नाम पैशाची पडा। पजाबी भाषा पर इसका विशेष प्रभाव है। *बृहत्कथा* इसी भाषा में है।

पौंड्रक वासुदेव—करूष देश का एक राजा, जो अपने को नारायण का अवतार वासुदेव घोषित करता था। इसने काट के दो हाथ लगाकर अपने को चतुर्भुज विष्णु बना लिया था और अपने वाहन के लिये काठ का गरुड़ भी बनवा लिया था। इसका कृष्ण से युद्ध हुआ, जिसमें यह मारा गया (*भा० १०.६६*)।

प्रकरण—रूपक का एक प्रधान भेद। इसमें वस्तु कल्पित, श्रृंगार रस प्रधान, नायक मंत्री, कोई धनी वा ब्राह्मण होना चाहिये।

प्रकरी—दे० *अर्थप्रकृति*।

प्रकर्ष—घटनाओं, भावों आदि का एक परा-

काष्ठा तक क्रमिक उत्थान। वस्तु का एक निश्चयात्मक चरम बिंदु।

प्रकृतिवाद—१ सांख्य का सिद्धांत जिसका निरूपण कपिल ने किया था। इसके अनुसार दृश्यमान स्थूल जगत् का मूल (उपादान) कारण प्रकृति माना जाता है। इस प्रकृति के घटक तीन तत्त्व—सत्व, रज और तम माने जाते हैं। जबतक ये तीनों साम्य अवस्था में रहते हैं, इनसे कुछ उत्पन्न नहीं हो सकता। इनमें विषमता उत्पन्न होने पर क्रम से महान्, अहंकार, पंचतन्मात्र, इंद्रिय तथा स्थूल पंचभूतों की उत्पत्ति होती है और उनसे संसार बन जाता है। सत्त्व, रज और तम क्रमशः सुखमय, दुःखमय और मोहमय हैं। इसलिये संसार के सब पदार्थ भी सुख, दुःख या मोह को उत्पन्न करते हैं। २ इसका अभिप्राय उन साहित्यिक रचनाओं के लिये होता है, जिनमें प्रकृति और प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति प्रेम है। अंग्रेज़ी में वर्ड्ज़्वर्थ (१७७०-१८५०), रूपर्ट ब्रुक (१८८७-१९१५) और हिंदी में श्रीधर पाठक, सुमित्रानंदन पंत आदि की रचनाएँ इसके अंतर्गत आती हैं।

प्रक्रम भंग—साहित्य में एक दोष, जब किसी वर्णन में आरंभ किए हुए क्रम आदि का ठीक-ठीक पालन नहीं होता।

प्रगतिवाद—मार्क्सवाद (साम्यवाद) से प्रभावित साहित्य-धारा। इसमें निम्न और दलित वर्ग की समस्या का चित्रण और उच्च वर्ग की शोषक नीति के प्रति क्षोभ, यथार्थ का चित्रण और अंध आदर्श का बहिष्कार, समाज की व्यर्थ की परंपरागत मान्यताओं के प्रति विद्रोह, नारी स्वातंत्र्य, सरल भाषा, चलते छंद, प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ने का यत्न, यह मानना 'कि धर्म, नीति और सदाचार से संबद्ध साहित्य का मूल्यांकन है जन-हित' इत्यादि प्रगतिवाद के पहलू हैं। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की 'वह तोड़ती पत्थर', 'विधवा' और 'भिक्षुक', भगवतीचरण वर्मा की 'भैंसा गाड़ी', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की 'जूठे पत्ते' आदि हिंदी कविताएँ प्रगति के पथ का अच्छा प्रतिनिधित्व करती हैं। उपन्यास-क्षेत्र में यशपाल *(दादा कामरेड)*, राहुल सांकृत्यायन *(सिंह सेनापति)* आदि प्रमुख लेखक हैं। आजकल के कथा-साहित्य में यथार्थवाद के द्वारा मनोविज्ञान को अधिक सहारा मिलता जा रहा है। **अज्ञेय, जैनेंद्रकुमार, भगवतीचरण वर्मा, इलाचंद्र जोशी,** नरोत्तमप्रसाद नागर आदि ने अपने उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक चित्रण पर अधिक महत्त्व दिया है।

प्रघस—रावण की सेना का एक मुख्य सेनापति, जिसे हनुमान ने 'अशोक वाटिका' उजाड़ते समय मारा था *(वा० रा० सुं० ४६)*।

प्रजापति—सृष्टिकर्त्ता। ब्रह्मा, सूर्य, मनु, दक्ष, भृगु, धर्मराज, यमराज, मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ, विवस्वान्, सोम, कर्दम, क्रोध, अर्वाक्, परमेष्ठी और क्रीत ये २१ प्रजापति माने गये हैं।

प्रतापनारायण मिश्र (१८५६-९४ ई०)—कानपुर निवासी, भारतेंदु से प्रभावित तथा उनके अनुयायी। 'ब्राह्मण' (१८८३, साहित्यिक पत्र) के संचालक। *राजसिंह, इंदिरा, राधारानी, युगलांगुरीय* (चारों बँगला से अनूदित), *संगीत शाकुंतल* (अनू०), *कलि कौतुक, भारत दुर्दशा* (रूपक), *कलिप्रभाव, हठी हम्मीर, गोसंकट* (नाटक), *जुआरी-खुआरी* (प्रहसन) तथा सात-आठ काव्य ग्रंथ और अनेक निबंधों के रचयिता। ये

फ़ारसी, संस्कृत और उर्दू में भी कविता करते थे।

इन्होंने दैनिक जीवन के लिये उपयोगी साहित्य को जनसाधारण में प्रचलित मनोरंजक भाषा में उपस्थित कर अनेक नये पाठकों को हिंदी की ओर आकर्षित किया। इनकी शैली में संस्कृत-शब्दों का कुछ प्राचुर्य है। इनकी ब्रज-भाषा पर पश्चिमी अवधी का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव—उपन्यासकार और कहानी-लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *विदा* (१९२८ ई०), *विजय*, *विकास* (१९४१, इसमें आघातों द्वारा पूर्व जन्म की स्मृतियों को जगा कर एक मनोवैज्ञानिक प्रयोग-सा किया गया है) (उपन्यास) आदि हैं। इन्होंने शहरी जीवन के उच्च वर्ग का चित्र उतारा है। इनके उपन्यासों में विदेशी रमणियाँ भी आई हैं। उपन्यासों में एक खल नायक होता है जिसकी धूर्तता का ऐसे समय पर उद्घाटन किया जाता है, जब वह अपनी सफलता की चरम सीमा पर होता है। एक विशेष सीमा के भीतर 'स्त्री-स्वातंत्र्य' का पक्ष लिया गया है। मिले-जुले समाज के अनुरूप ही भाषा भी कुछ मिली-जुली है।

प्रतापसाहि (र० का० १८२३-५३ ई०)—चरखारी-नरेश विक्रमसाहि के आश्रित एक रीति-कवि और *व्यंग्यार्थ-कौमदी*, *काव्य विलास* (दोनों सुंदर रीति ग्रंथ), *जयसिंह प्रकाश* (१८३५), *शृंगार-मंजरी* (१८३२), *शृंगार शिरोमणि* (१८३७), *अलंकार चिंतामणि* (१८३७), *काव्य विनोद*, *रसराज की टीका*, *रत्नचंद्रिका*, *बिहारी सतसई की टीका* (तीनों १८३९), *जुगल नखशिख* (सीता-राम का नखशिख-वर्णन) तथा बलभद्र-कृत *नखशिख की टीका* के रचयिता। आचार्यत्व की दृष्टि से ये श्रीपति और भिखारीदास के और काव्य-कुशलता की दृष्टि से मतिराम और पद्माकर भट्ट के समकक्ष माने गये हैं।

प्रतापसिंह—दे० *चंद कुँवर री बात*।

प्रतापसिंह, महाराणा (मृत्यु १५९७ ई०)—राजपूतकुल-गौरव मेवाड़ के एक राणा, चित्तौड़ाधिपति राजा उदयसिंह के पुत्र। इन्होंने मुग़ल-सम्राट् अकबर का प्रतिद्वंद्वी होकर अपूर्व वीरता का परिचय दिया। १५७६ में अरवली प्रदेश (हल्दीघाटी) में इनका अकबर के पुत्र सलीम से भयंकर युद्ध हुआ था।

प्रतिज्ञा—**प्रेमचंद** का एक उपन्यास (१९०५-६ ई०), जिसमें विधवाओं और अछूतों की समस्या को लिया गया है। लेखक का दृष्टिकोण सुधारवादी है। यह प्रेमचंद की आरंभिक उपन्यास-शैली का द्योतक है।

प्रतिनायक—नायक का प्रतिद्वंद्वी या प्रतिस्पर्द्धी, यथा—राम का रावण। यह धीरोद्धत, पापी और इर्ष्यालु होता है। इसे खलनायक भी कहते हैं।

प्रतिमुख संधि—दे० *संधि*।

प्रतिवस्तूपमा—एक अर्थालंकार जिसमें (१) उपमेय और उपमान-स्वरूप दो वाक्य, (२) दोनों वाक्यों का एक ही धर्म, (३) उस धर्म का समानार्थवाची शब्दों द्वारा पृथक्-पृथक् कथन हो। उ०—चटक न छांड़त घटत हू, सज्जन नेह गंभीर। / फीको परै न बरु फटै, रँग्या चोल-रंग चीर॥ यहाँ सज्जन की प्रीति की दृढ़ता का वर्णन है। पूर्वार्द्ध उपमेय-वाक्य, और उत्तरार्ध उपमान-वाक्य है। 'कम न होना' दोनों का एक धर्म है, जो 'चटक न

छांड़त' और 'फीको परै न' दो एकार्थवाची शब्दों द्वारा प्रकट किया गया है। केवल शब्द पृथक्-पृथक् हैं, अर्थ एक ही है।

प्रतिष्ठान—१ बिठूर। यहाँ ध्रुव का जन्म हुआ था। २ पैठान (औरंगाबाद)। राजा **शालिवाहन** की राजधानी यहीं थी। ३ इलाहाबाद के निकट भूसी नामक नगर। यहाँ पुरूरवा और अन्य राजाओं की राजधानी थी। ४ पठानकोट।

प्रतीकवाद (*Symbolism*)—प्रतीकों का प्रयोग दो रूपों में होता है—१ वैज्ञानिक और शाब्दिक रूप में—जब कोई प्रतीक (शब्द) किसी विशेष वस्तु अथवा विचार का द्योतक होता है; २ जब कोई प्रतीक (शब्द) अपना वास्तविक अर्थ न देकर कोई अन्य अर्थ दे। साधारणतः दूसरे रूप में ही 'प्रतीकवाद' का प्रयोग होता है। एक संप्रदाय के रूप में इसके प्रतिनिधि कवि फ्रांस के वेरलेन (Verlaine; १८४४-९६ ई०), मालार्मे (Mallarme; १८४२-९८) और रैंबो (Rimbaud; १८५४-९१) हैं। प्रतीकवादी विचारों और मनोभावों को सीधी अभिव्यक्ति की अपेक्षा टेढ़े-मेढ़े और पेचीदा संकेतों द्वारा करते हैं। वे विशेष पदार्थों, शब्दों, ध्वनियों आदि से उन विशेष गुणों को प्रकट करना चाहते हैं, जो प्रतीक-रूप में वर्णन की गई उन वस्तुादि में विशेष रूप से पाये जाते हैं। किंतु क्योंकि प्रतीकों के ये गुण पाठकों की दृष्टि में भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, अत इनकी व्याख्या प्राय: अस्पष्ट तथा नाना प्रकार से कर ली जाती है।

हिंदी में चंद्रमा मृदु आभा का, समुद्र प्राचुर्य, विस्तार और गंभीरता का, आकाश सूक्ष्म अनंतता का और चातक निःस्वार्थ प्रेम का प्रतीक है। भक्तकवि चकोर, दीप, पतंग, चातक आदि के प्रतीकों को अपनाते हैं और हालावादी मधु, प्याला, बाला आदि को। रामचंद्र शुक्ल ने *चिंतामणि (पृष्ठ २२४)* में लाक्षणिकता को नई कविता की सबसे बड़ी विशेषता माना है और कहा है कि कुछ वस्तुओं का प्रतीकवत् ग्रहण भी इसी (लाक्षणिकता) के अंतर्गत आ जाता है। सुमित्रानंदन पंत के 'चांदनी का स्वभाव में वास। / विचारों में बच्चों की साँस॥' कविता में संश्लिष्ट प्रतीक-योजना (चांदनी=स्वच्छता, शीतलता और मृदुलता। बच्चों की साँस=भोलापन) का अच्छा उदाहरण है।

प्रतीप—एक अर्थालंकार जिसमें प्रतीप अर्थात् प्रतिकूल वर्णित हो। इसके पाँच भेद हैं—

१ *प्रथम प्रतीप*—जिसमें प्रसिद्ध उपमान को उपमेयवत् वर्णन करना हो। उ०—मुख सौ शोभित सरद शशि कमल सुलोचन सेय।

२ *द्वितीय प्रतीप*—जिसमें उपमान को उपमेय बनाकर निरादर किया जाए। उ०—प्रकृति माधुरी पर कहाँ, गर्व तोहि कसमीर। / नंदन वन तो सम अहै, सोहत परम गंभीर॥

३ *तृतीय प्रतीप*—जिसमें उपमेय के आगे उपमान का निरादर होता हो। उ०—कोयल अपने वचन को काहत करत गुमान। / मधुर बचन बनितान के तेरे बचन समान।

४ *चतुर्थ प्रतीप*—जिसमें उपमेय से उपमान का अनादर होता हो। उ०—सही सरस चंचल बड़े, मढ़े रसीली बास।/ पै, न द्विरेफी इन दृगनि, सरिस कहौं मैं 'दास'॥

५ *पंचम प्रतीप*—जिसमें उपमान उपमेय के आगे व्यर्थ हो जाता हो। उ०—राव भावसिंह जू के दान की बड़ाई देखि, / कहा कामधेनु है कछू न सुरतरु है॥

प्रत्यनीक—एक अर्थालंकार जिसमें शत्रु का प्रतिकार न कर सकने पर शत्रु के किसी साथी आदि के तिरस्कार करने का वर्णन किया जाता है। उ०—हिंदुन के पति सों न बिसाति सतावत हिंदु गरीबन पाइ कै।

प्रत्यय—१ ज्ञान प्रतीति, ज्ञान-साधन। २ व्याकरण में धातु या शब्द के अंत में लगने वाले वे अक्षरसमूह, जो नवीन अर्थ की प्रतीति कराते हैं। ३ छंदशास्त्र में वे साधन जिनसे छंदों के भेद, उनकी संख्या, स्वरूप आदि का बोध होता है। प्रत्यय ९ प्रकार के होते हैं। इनमें **सूची, प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट,** ये चार ही मुख्य हैं, शेष (पाताल, मेरु, खंडमेरु, पताका, मर्कटी) का उन्हीं में अंतर्भाव हो जाता है।

प्रद्युम्न—कृष्ण और रुक्मिणी के पुत्र। दे० *कामदेव*। कामदेव के शत्रु शंबरासुर ने कामदेव के अवतार प्रद्युम्न को समुद्र में फेंक दिया, जहाँ उसे एक मछली ने खा लिया। मछुओं ने उस मछली को पकड़कर शंबरासुर की मायावती नामक एक दासी के हाथ बेच दिया। मायावती ने जब मछली को चीरा, तब उसमें से एक परम सुंदर बालक निकला। नारद ने मायावती से कहा कि यह बालक तुम्हारा पति है। मायावती वास्तव में रति थी। बड़े होने पर मायावती ने प्रद्युम्न को 'महामाया' नाम की विद्या सिखलादी, जिससे प्रद्युम्न ने शंबरासुर का वध कर दिया। प्रद्युम्न-मायावती कृष्ण-रुक्मिणी के साथ द्वारिका में आकर रहने लगे। नारद ने कृष्ण-रुक्मिणी को बता दिया कि प्रद्युम्न उनका खोया हुआ पुत्र है (*विष्णु० ५.२७, ह० वं० २.१०४-८, भा० १०.५५*)।

प्रधानमल्ल निर्वहण न्याय—अधिक बल वाले मल्ल (पहलवान) को जीत लेने पर उससे कम बल वाले मल्ल का स्वयं परास्त हो जाना।

प्रबंध काव्य—दे० *काव्य*।

प्रबोधचंद्रोदय—दे० *कृष्ण मिश्र*।

प्रभाकर वर्द्धन—वर्द्धनवंशी एक राजा (५८०-६०५ ई०), जिनकी राजधानी थानेसर थी। प्रसिद्ध सम्राट् हर्षवर्द्धन इन्हीं का पुत्र था।

प्रभाववाद (*Impressionism*)—साहित्य में एक संप्रदाय जिसके अनुयायी किसी दृश्य, मनोभाव, पात्र अथवा पदार्थ द्वारा हृदय पर पड़े हुए प्रभाव का सूक्ष्म विवरण वा विस्तृत व्याख्या देने की अपेक्षा उसके प्रधान लक्षणों को कुछ रेखाओं (*touches*) द्वारा अभिव्यक्त करने का प्रयत्न करते हैं। प्रभाववादी लेखक थोड़े-से विवरण या घटनाएँ एकत्र करके उसके द्वारा तत्काल पैदा किये गये प्रभाव को चित्रित करता है। प्रभाववादी आलोचक भी अपने ही ऊपर पड़े हुए प्रभाव को महत्त्व देता है। वह शास्त्र का आधार लेने की अपेक्षा अपनी रुचि को मुख्यता देता है। रामचंद्र शुक्ल का मत है कि काव्य में अनुभूति की प्रधानता होते हुए भी प्रभाववादी साधनहीन अधिकारियों पर रोक-टोक न रहने से साहित्य-क्षेत्र में कूड़ा-करकट भर जायेगा।

प्रमाणिका—एक छंद। जरा लगा प्रमाणिका (ज र ल ग=८ व० छंद)। उ०—कुलीन चित्त चैन हो, परंतु मूर्ख ऐं न हो।

प्रमिताक्षरा—प्रमिताक्षराहि सुजसी सबमें (स ज स स=१२ व० छंद)। उ०—अब भी समक्ष वह नाथ खड़े / वह किंतु रिक्त वह हाथ पड़े।

प्रमिला—स्त्रीराज्य की स्वामिनी। पांडवों के अश्वमेध का घोड़ा इन्होंने पकड़ लिया था। अर्जुन का इनसे युद्ध होते समय आकाशवाणी हुई थी कि 'हे अर्जुन, तुम इन्हें पराजित करने में असमर्थ हो, अतः इनसे विवाह कर इन्हें अपनी ओर करलो।' अर्जुन ने वैसा ही किया (*जै० अ०* २१-२२)।

प्रयसा—एक राक्षसी जिसे रावण ने सीता को फुसलाने के लिये नियत किया था।

प्रयाग—इलाहाबाद। एक प्रसिद्ध तीर्थ जो गंगा और यमुना नदियों के संगम पर स्थित है। रामायण-काल में यह नगर कोसल-राज्य का एक अंग था। यहाँ पर अक्षयवट है। दे० *प्रतिष्ठान*।

प्रयोगवाद (नई कविता; *Experimentalism*)—जिस प्रकार प्रतीकवादी (*Symbolists*) मूर्त्तिमत्तावादी (*Imagists*) कवियों ने फ्रांसीसी, अंग्रेजी, अमरीकी कविता में नये-नये प्रयोग (*experiments*) किये हैं, उसी प्रकार हिंदी में भी कुछ आधुनिक कवियों ने विषय, वस्तु, अलंकार, भाषा, शब्दचयन, शैली, छंदबंध सभी दृष्टियों से नये प्रयोग किये हैं। प्रयोगवादी कविता के दो संग्रह *तार सप्तक* (प्रथम संग्रह १९४३ ई० में) नाम से निकल चुके हैं। इन कवियों के मार्ग भिन्न-भिन्न हैं। गुलाबराय के अनुसार प्रयोगवाद ने कविता के क्षेत्र को नया विस्तार दिया है, किंतु दोष इतना ही है कि कहीं-कहीं ये नये मार्ग राजमार्ग और अन्य प्रशस्त पगडंडियों से इतने हटे हुए होते हैं कि प्रयोगवादी साधारणीकरण की परवाह करते हुए भी साधारणीकरण के निकट नहीं आ पाते हैं। दूसरा दोष यह है कि प्रयोगवाद का कोई निश्चित ध्येय नहीं है। निश्चित ध्येय प्रयोग ही है, जिनमें सदा वैविध्य रहेगा। फिर भी प्रयोगवाद में कुछ विशेषताएँ हैं, जो ये हैं—व्यापक सहानुभूति—किसी विषय को कविता के क्षेत्र से बाहर न समझना, यहाँ तक कि धैर्य-धन गधा, चप्पल और चम्मच तक कविता के विषय बन सकते हैं, किंतु वे इसमें भी सीमित नहीं हैं। बाह्य क्षेत्र के अतिरिक्त आंतरिक क्षेत्र में उपचेतन की उलझी हुई संवेदनाओं का भी चित्रण रहता है (यहाँ प्रतीकों को अधिक आश्रय मिलता है)। नवीन उपमाओं (कहीं-कहीं यह नवीनता विलक्षणता और बीभत्सता तक पहुँच जाती है) एवं बुद्धिवाद का प्राधान्य होता है।

इस धारा के अभिभावक **अज्ञेय** हैं। इस श्रेणी के कुछ कवि ये हैं—गिरिजाकुमार माथुर, गजानन मुक्तिबोध, प्रभाकर माचवे, नेमीचंद्र जैन, शमशेर बहादुर आदि।

प्रयोजनवती-लक्षणा—लक्षणा का वह भेद जो प्रयोजन द्वारा वाच्यार्थ से भिन्न अर्थ प्रकट करे।

प्रलंब—मडवर अथवा मंडोर नामक स्थान, जो बिजनौर से ८ मील उत्तर में है। दे० *कण्व*।

प्रलंबासुर—कंस द्वारा वृंदावन में भेजा गया एक असुर, जिसका बलदेव ने खेलते समय मुष्टिक प्रहार से वध कर दिया था (*भा० १०. १८ आदि*)।

प्रलय—भू आदि लोकों का नष्ट हो जाना। पुराणों में संसार के विनाश का वर्णन कई प्रकार से आया है। तोभी अनावृष्टि द्वारा चराचर का नाश, बारह सूर्यों के प्रचंड ताप से जल का शोषण होकर सब कुछ भस्म हो

जाना, फिर लगातार घोर वृष्टि होना, सर्वत्र जल ही जल हो जाना आदि एकसाँ वर्णन है।

प्रवर्षण—किष्किधा के समीप एक पर्वत, जिस पर राम ने अपने वनवासकाल में कुछ समय के लिये निवास किया था। यथा—राम प्रवर्षण गिरि पर छाये।—*तुलसी*।

प्रवेशक—दे० *अर्थोपक्षेपक*।

प्रसन्नराघव—दे० *जयदेव*।

प्रसाद—१ एक काव्य गुण। जहाँ शब्द के सुनने के साथ ही उसके रूढ़ अथवा प्रसिद्ध अर्थ में प्रयुक्त होने के कारण अर्थ की प्रतीति तुरंत हो जाए। २ दे० *जयशंकर प्रसाद*।

प्रसूति—दक्ष की पत्नी और सती की माता।

प्रसेनजित्—निघ्न के पुत्र। एक सिंह ने इन्हें मारकर इनसे **स्यमंतक** मणि ले ली थी (*पद्म० सृ० १३*)।

प्रस्तार—छंद के संपूर्ण भेदों (दे० *सूची*) में प्रत्येक का स्वरूप बताने वाला **प्रत्यय**। आदि में ही जहाँ गुरु मिले, उसी के नीचे लघु लिखो। फिर अपनी दाहिनी ओर ऊपर के चिह्नों की नक़ल उतारो। बाईं ओर जितने स्थान खाली हों, उनमें गुरु के चिह्न रखते चले जाओ जब तक कि सब लघु न आ जावें। जब सब लघु आ जावें, तब उसी को उसका अंतिम भेद समझो। प्रत्येक भेद में इस बात का ध्यान रखो कि यदि वर्णिक प्रस्तार है, तो उसके प्रत्येक भेद में उतने ही उतने चिह्न आते जावें, और यदि मात्रिक प्रस्तार है, तो प्रत्येक भेद में उतनी ही उतनी (कल) मात्राओं के चिह्न आते जावें, न्यूनाधिक नहीं। मात्रिक प्रस्तार में यदि बाईं ओर गुरु रखने से एक मात्रा बढ़ती हो, तो लघु का ही चिह्न रखो। वर्णिक प्रस्तार में पहिला भेद सदैव गुरुओं का रहता है। मात्रिक प्रस्तार में पहिला भेद सदैव गुरुओं का रहेगा और विषम कलों में पहिला भेद सदैव लघु से प्रारंभ होगा।

वर्णिक प्रस्तार ३ वर्ण

SSS
ISS
SIS
IIS
SSI
ISI
SII
III

वर्णिक प्रस्तार ४ वर्ण

SSSS
ISSS
SISS
IISS
SSIS
ISIS
SIIS
IIIS
SSSI
ISSI
SISI
IISI
SSII
ISII
SIII
IIII

मात्रिक समकल प्रस्तार ६ मात्रा

SSS
IISS
ISIS
SIIS
IIIIS
ISSI
SISI
IIISI
SSII
IISII
ISIII
SIIII
IIIIII

मात्रिक विषमकल प्रस्तार ५ मात्रा

ISS
SIS
IIIS
SSI
IISI
ISII
SIII
IIIII

प्रस्तुत—उपमेय। साहित्य में विषय या व्यक्ति जिसका वर्णन प्रत्यक्ष रूप से हो और प्रसंग-वश जिसके साथ दूसरे व्यक्ति का भी (उपमा, तुलना आदि के विचार से) गौणरूप से उल्लेख

या वर्णन होता हो। इसका विपर्याय 'अप्रस्तुत' है।

प्रस्तुतांकुर—एक अर्थालंकार जिसमें अनिच्छित वाच्य रूप प्रस्तुत द्वारा व्यंग्य रूप इच्छित प्रस्तुत का द्योतन होता है। उ०—अलि! कदंब तरु पाय, सुमन भरो, मकरंदमय। / लजि, करील पै जाय, निरस अपत पर से कहा। यहाँ भौंरे से प्रत्यक्ष कथन है, किंतु यह अनिच्छित वर्णन है।

प्रस्रवण—गोदावरी के किनारे औरंगाबाद की पहाड़ियाँ (*वा० रा० अर० ६४*)। भवभूति ने *उत्तररामचरित (अंक १)* में इनका बड़ा सुंदर वर्णन किया है। **जटायु** इनमें से एक पहाड़ी पर रहता था। *वा० रा० कि० २७* के अनुसार किष्किंधा में भी तुंगभद्रा के किनारे प्रस्रवण नामक एक पर्वत है।

प्रह्लाद—दैत्यराज हिरण्यकशिपु के पुत्र। **हिरण्याक्ष** की मृत्यु हो जाने पर हिरण्यकशिपु अत्यंत दुःखी हुआ और तपस्या करने चला गया। पीछे से देवताओं ने दैत्यों पर आक्रमण कर दिया और वे उन्हें पराजित कर, हिरण्यकशिपु की पत्नी कयाधू को हर ले गये। कयाधू उस समय गर्भवती थी। मार्ग में नारद ने उसे अनेक उपदेश दिये जिन्हें वह तो भूल गई, किंतु उसके गर्भस्थ बालक प्रह्लाद ने उन उपदेशों को याद कर लिया।

तपस्या कर हिरण्यकशिपु ने ब्रह्मा से यह वर प्राप्त कर लिया कि मैं न तो रात्रि में मरूँ और न दिन में, न धरती पर और न आकाश में, न मनुष्य से मारा जाऊँ और न पशु से। ब्रह्मा द्वारा रचित सृष्टि के किसी जीव से न मरूँ। देव-दानव मुझे अस्त्र-शस्त्र से न मार सकें। हिरण्यकशिपु देवताओं को जीत कर त्रिलोकी का स्वामी बन गया और अपने को ही ईश्वर समझने लगा। प्रह्लाद राम-महिमा का प्रचार करने लगा। गुरुओं से ताड़ना मिली, पिता से दंड मिला, किंतु सब निरर्थक हुआ। अंत में हिरण्यकशिपु अपने पुत्र का ही शत्रु बनबैठा। प्रह्लाद को काले नागों से डसाया गया, विष दिया गया, पर्वत से गिराया गया, समुद्र में डुबोया गया, किंतु इनका बाल भी बाँका न हुआ। फिर पुरोहितों ने कृत्या नामक राक्षसी को उत्पन्न किया, किंतु उससे पुरोहितों की ही मृत्यु हो गई। प्रह्लाद की बुआ **होलिका**, जो कभी अग्नि में नहीं जलती थी, इन्हें गोद में लेकर बैठी कि ये जल जाएँ, किंतु वह स्वयं ही जल गई। अंत में खड्ग लेकर हिरण्यकशिपु इनको मारने के लिये दौड़ा और बोला कि 'तेरे भगवान् कहाँ हैं?' प्रह्लाद ने उत्तर दिया—'वे सर्वत्र हैं, तुम्हारे खड्ग में भी और इस खंभे में भी।' इसपर हिरण्यकशिपु ने खंभे पर एक घूँसा मारा। घूँसे की भयंकर ध्वनि के साथ खंभा फट गया और उसमें से **नृसिंह** प्रकट हुए। उन्होंने रात-दिन की संधि-बेला में, घर और बाहर के बीच देहली पर बैठ कर हिरण्यकशिपु को अपनी जाँघ पर रखकर बिना अस्त्र-शस्त्र के, अपने नाखूनों से चीर कर मार डाला। प्रह्लाद को राजगद्दी देकर वे अंतर्धान हो गये (*भा० ७.३-१०, विष्णु० १.१६-२१*)।

प्रहसन—**रूपक** का एक प्रधान भेद, जिसमें कथा कल्पित, अंक एक, हास्यरस प्रधान और पात्रगण कोटि के होते हैं। *यथा*—भारतेंदु हरिश्चंद्र-कृत *अंधेर नगरी*, *वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति*, आदि।

प्राकृत—१ यह तीन प्रकार की मानी जाती है—पहिली प्राकृत (दे० *पाली*), दूसरी प्राकृत, तीसरी प्राकृत (दे० *अपभ्रंश*)। दूसरी प्राकृत

को प्राकृत और साहित्यिक प्राकृत भी कहते हैं। जब पहिली प्राकृत साहित्यिक रूप धारण कर लेने के कारण विद्वानों की भाषा हो गई, तब जन-समुदाय की भाषा प्राकृतिक नियमों के अनुसार विकसित होने लगी। कालांतर में इसमें भी साहित्य की रचना होने लगी। इसके पाँच रूप थे—**महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, अर्द्धमागधी, पैशाची**। इसका समय १ ई० से ५०० ई० तक माना गया है। २ बोलचाल की भाषा जिसका प्रचार किसी समय किसी प्रांत में हो अथवा रहा हो। यथा—जो प्राकृत कवि परम सयाने। / भाषा जिन हरि कथा बखाने।।—*तुलसी*।

प्राग्ज्योतिषपुर—कामरूप (आसाम) की राजधानी।

प्राचीन हिंदी—**अपभ्रंश** और आधुनिक हिंदी के बीच की श्रेणी, जिसे अवहट्ट (या अपभ्रष्ट) नाम दिया गया है। इसका समय १००० ई० से १५०० ई० तक माना जाता है।

प्राणचंद्र चौहान (आ० का० १६१० ई०)—एक राम-भक्त कवि और *रामायण महानाटक* के रचयिता। कथोपकथन के रूप में होने के कारण इस काव्य को नाटक कहा जाता है, अन्यथा इसमें नाटकीय तत्त्व बहुत कम हैं। हिंदी में रामचरित के संबंध में यह ही एक नाटक है।

प्राणनाथ (आ० का० १६५३ ई०)—बुंदेलखंड निवासी एक संत, जो 'प्राणनाथी संप्रदाय' के प्रवर्त्तक थे। इन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ *कुलज़म स्वरूप* में सिद्ध करना चाहा है कि वेद और *क़ुरान* में कोई भेद नहीं है। ये पन्ना-नरेश छत्रसाल के विशेष कृपा-पात्र थे।

प्राधा—दक्ष की एक कन्या और **कश्यप** की एक पत्नी, जो पुराणानुसार गंधर्वों और अप्सराओं की माता कही जाती है।

प्राप्त्याशा—दे० *अवस्था*।

प्रियंगु—एक वृक्ष। कवि-प्रसिद्धि है कि स्त्रियों के स्पर्श से यह विकसित हो उठता है।

पर्य्याय०—फल, फलिनी।

प्रिय-प्रवास—**अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'** का एक महाकाव्य (१९१४ ई०), जिसमें करुण, विप्रलंभ शृंगार और वात्सल्य के वियोग पक्ष का प्राधान्य है। इसमें कृष्ण को असाधारण शक्ति-संपन्न, राष्ट्र-रक्षक महामानव के रूप में उपस्थित किया गया है। कृष्ण में लीला और विलास की अपेक्षा कर्त्तव्य-बुद्धि अधिक है। राधा भी दुःखी जनों के लिये आर्द्र-हृदय है और उसमें सेवा-भाव भरा हुआ है। काव्य में मानवी प्रकृति के अतिरिक्त बाह्य प्रकृति का भी अच्छा वर्णन हुआ है। यह खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य है। इसमें संस्कृत के वर्णवृत्तों का प्रयोग है। इन छंदों के प्रयोग का फल यह हुआ कि इनकी कविता को तुक से तो स्वतंत्रता मिल गई, किंतु भाषा इतनी संस्कृतमयी हो गई कि कहीं-कहीं समूचे पद के अंत में केवल एक ही क्रिया 'थी' या 'है' का प्रयोग पाया जाता है, शेष सब शुद्ध संस्कृत है। इसमें अलंकारों की अच्छी छटा दिखलाई पड़ती है। *प्रिय-प्रवास* के कारण ही 'हरिऔध' की विशेष ख्याति हुई। यह काव्य मंगलाप्रसाद पारितोषिक द्वारा भी सम्मानित हुआ। विशेष दे० कृष्णकुमार सिन्हा-कृत *हरिऔध और उनका प्रिय-प्रवास*।

प्रियव्रत—स्वायंभुव मनु का एक पुत्र। इन्होंने पृथ्वी की सात परिक्रमाएँ की थीं। इनके रथ

के पहियों से जो लीकें बनीं, वे ही सात समुद्र हुए। उनसे पृथ्वी में सात द्वीप हो गये (*भा० ५.१*)।

प्रियादास (आ० का० १७१२ ई०)—एक प्रसिद्ध राम-भक्त कवि और *भक्तरसबोधिनी (भक्तमाल* की टीका) के रचयिता।

प्रीतम—दे० *अलीमुहिब खाँ 'प्रीतम'*।

प्रेक्षागृह—नाटकीय रंगमंच भवन का नामांतर।

प्रेम-काव्य—प्रेम-मार्गी कवियों (**मलिक मुहम्मद जायसी, उसमान, कुतबन, मंझन, शेखनबी, कासिमशाह, नूरमुहम्मद, पुहकर कवि, काशीराम, हरसेवक मिश्र, फ़ाज़िलशाह** आदि) द्वारा रचित साहित्य।

प्रेम-मार्गी परंपरा का प्रौढ़ रूप उक्त सूफ़ी कवियों तथा अन्य हिंदू कवियों में मिलता है। इन कवियों की प्रेम-रचनाएँ भारतीय चरित्र काव्य की सर्गबद्ध शैली पर न होकर फ़ारसी की मसनवियों के ढंग पर रची गई हैं। सभी प्रेम-काव्यों के पात्र प्रायः हिंदू नायक-नायिका आदि ही हैं। इनमें भौतिक प्रेम द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की अभिव्यंजना की गई है। (हिंदुओं ने जो प्रेम-कथाएँ लिखी हैं, उनमें किसी सूफ़ी सिद्धांत के निरूपण करने का प्रयत्न नहीं किया गया है।) प्रेम-काव्य की समस्त परंपरा दोहा और चौपाई छंदों का ही प्रयोग किया गया है। इन काव्यों की भाषा बोलचाल की अवधी है। कहीं-कहीं उसमें अरबी, फ़ारसी के शब्दों का भी समावेश है। प्रधान रस शृंगार (वियोग) है। इनके द्वारा प्रेम-काव्य की परंपरा में आख्यायिका-साहित्य का यथेष्ट विकास हुआ।

प्रेम-कवि हिंदू-मुसलमानों के खंडन-मंडन के पचड़े में नहीं पड़े। इन्होंने मानव हृदय को स्पर्श करने वाली प्रेम की मधुर और कोमल वृत्ति का सहारा लिया। अतः इनके काव्य में लोक-प्रिय होने की संभावना अवश्य थी, किंतु वह संभावना राम और कृष्ण की सगुण भक्ति की मधुर धारा और प्रेम लीलाओं के प्रभाव के आगे वास्तविकता में परिणित न हो सकी। कई विद्वानों का मत है कि प्रेम-काव्यों में इस्लाम धर्म का प्रचार किया गया है। विशेष दे० कमल कुलश्रेष्ठ-कृत *हिंदी प्रेमाख्यानक काव्य*।

प्रेमचंद (१८८०-१९३६ ई०)—प्रसिद्ध उपन्यासकार। जन्म लहमी (काशी)। आठ वर्ष की अवस्था में इनकी माता का देहांत हो गया था। इनका वास्तविक नाम धनपतराय था। सौतेले भाई और सौतेली माँ का व्यवहार इनके प्रति अच्छा न था। इनका प्रथम विवाह संतोषजनक सिद्ध नहीं हुआ। इन्होंने अपनी पत्नी को त्याग दिया और १९०५ में शिवरानी देवी (कहानी लेखिका) के साथ दूसरा विवाह कर लिया। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण अपनी शिक्षा को अधूरी छोड़कर इनको अध्यापक होना पड़ा। इसके पश्चात् सरकारी शिक्षा विभाग में ये सब-डिप्टी इन्स्पेक्टर हो गये। १९२० के असहयोग आंदोलन में इन्होंने नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। इसके पश्चात् इन्होंने 'मर्यादा' व 'माधुरी' पत्रों का संपादन किया। काशी में इन्होंने अपना प्रेस भी खोला, जहाँ 'हंस' और 'जागरण' का ये संपादन करते थे।

प्रेमचंद ने उर्दू में कहानियाँ लिखना प्रारंभ किया था। उनकी कहानियाँ उर्दू के श्रेष्ठ पत्र 'जमाना' में प्रकाशित होती थीं।

उर्दू रचनाओं में इन्होंने अपना नाम दौलतराय रखा है। १९१४ में इन्होंने उर्दू छोड़कर हिंदी-जगत् में प्रवेश किया। इनकी मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं।

उपन्यास—सेवासदन (१९१८), *वरदान*, *प्रेमाश्रम* (१९२२), *रंगभूमि* (१९२४), *कायाकल्प* (१९२६), *निर्मला* (१९२८), *प्रतिज्ञा* (१९२९), *ग़बन* (१९३१), *कर्मभूमि* (१९३२), *गोदान* (१९३६)।

प्रसिद्ध कहानी-संग्रह—*नव निधि, प्रेम पचीसी, प्रेम द्वादशी, मानसरोवर* (८ भाग)। इनकी कहानियाँ संख्या में ३०० के लगभग हैं।

अन्य रचनाएँ—*करबला, प्रेम की वेदी, संग्राम, रूठी रानी* (नाटक), *कुछ विचार* (निबंध), *दुर्गादास, महात्मा शेख़ सादी, रामचर्चा* (जीवनियाँ), *गल्परत्न, गल्प समुच्चय* (संपादित कहानी-संग्रह), *अहंकार, सुखदास, आज़ाद कथा, चाँदी की डिबिया, टॉल्स्टॉय की कहानियाँ, सृष्टि का आरंभ* (अनूदित रचनाएँ)।

इनके साहित्य में तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों का भली भाँति चित्रण हुआ है। सरकार, ज़मींदार, साहुकार, छोटे सरकारी अफ़सर, पुलिस, वकील और पंडे-पुजारी किसानों का खूब शोषण कर रहे थे। ज़मींदार-प्रथा के विरुद्ध गाँवों में काफ़ी असंतोष फैल रहा था। उधर मज़दूर वर्ग में भी पूँजीवाद के विरुद्ध पर्याप्त उत्तेजना बढ़ चुकी थी। प्रेमचंद ने अपने साहित्य में इन समस्त समस्याओं और उलझनों का यथार्थ चित्रण किया। इनके उपन्यासों के पात्रों में पूर्ण सजीवता रहती है। इनसे पूर्व चरित्र-चित्रण पर इतना ध्यान नहीं दिया जाता था। ये पात्र जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों से लिये गये हैं। इन्होंने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की छाया में एक ऐसे कल्याणकारी साहित्य का निर्माण किया, जिसकी देश, काल, समाज, राष्ट्र और भारतीय मानव को उस समय आवश्यकता थी।

कहानी-क्षेत्र में भी इन्होंने बहुत ही मौलिक तथा आदर्श कार्य किया है। इनकी कहानियों में मार्मिकता अधिक रहती है, तथा उनका प्रभाव हृदय पर अधिक गंभीर पड़ता है। इन्होंने नारी, ग्राम, मनोविज्ञान, राजनीति तथा समाज संबंधी कहानियाँ लिखी हैं।

इनके नाटक हिंदी-साहित्य में अधिक मान्य नहीं हैं, पर कला की दृष्टि से वे निजी महत्त्व रखते हैं।

इनकी भाषा मुहावरेदार हिंदी है, जिसको हिंदुस्तानी कहना अधिक उपयुक्त होगा। भाषा मधुर एवं ओजपूर्ण तथा अविरल गति से चलती है। इनके पात्रों की भाषा उनकी सामाजिक स्थिति के अनुकूल बदलती रहती है। विशेष दे० मन्मथनाथ गुप्त-कृत *कथाकार प्रेमचंद*, इंद्रनाथ मदान-कृत *प्रेमचंद—एक विवेचन*, नंददुलारे वाजपेयी-कृत *प्रेमचंद*, शिवरानी प्रेमचंद-कृत *प्रेमचंद घर में*, सत्येंद्र-कृत *प्रेमचंद—उनकी कहानी कला*, *मानसरोवर* की भूमिका।

प्रेमरतन—फ़ाज़िल शाह (१८४८ ई० में ये छतरपुर-नरेश प्रतापसिंह के दरबार में थे) का एक काव्य, जिसमें नूरशाह और माहे मुनीर की प्रेम-कथा है। दे० *प्रेम-काव्य*।

प्रेमसखी (आ० का० १७३४ ई०)—एक राम-भक्त कवि। *जानकी राम को नखशिख, होरी छंदादि प्रबंध* तथा *कवित्तादि प्रबंध* के रचयिता।

प्रेमाख्यान—प्रेम की कहानियों वाले काव्य-ग्रंथ। हिंदी-साहित्य में सूफ़ियों ने अनेक अद्भुत प्रेमाख्यान लिखे हैं। दे० *प्रेम-काव्य*।

प्रेमाश्रम—**प्रेमचंद** का एक उपन्यास (१९२२ ई०)।

ज्ञानशंकर और उनके चाचा प्रभाकर-शंकर की लखनपुर में ज़मींदारी आधी-आधी बँट गई। ज्ञानशंकर अपने एक मात्र साले की मृत्यु पर ससुराल गया, जहाँ पर उसकी विधवा साली गायत्री ने उसको अपनी ओर आकर्षित किया। जब परिस्थिति विषम होने लगी, तब गायत्री गोरखपुर की अपनी ज़मींदारी में चली गई। इधर लखनपुर में खाता-पीता किसान मनोहर ज्वालासिंह मैजिस्ट्रेट के पास पहुँचा और बेगार बंद करने की आज्ञा प्राप्त की। ज्ञानशंकर के बड़े भाई प्रेमशंकर अमेरिका से लौट आए। वे दीवानखाने में रहते और गाँव वालों को कृषि तथा अन्य विषयों पर परामर्श देते थे। कुछ समय बाद गायत्री ने ज्ञानशंकर को अपनी स्टेट का मैनेजर बना लिया। जब गायत्री को रानी की उपाधि मिली, तब ज्ञानशंकर द्वारा किये गये प्रबंध पर सब प्रसन्न हुए। इधर लखनपुर में बेगार के प्रश्न पर दंगा होने वाला था, किंतु प्रेमशंकर ने उसे रोक दिया। ज्ञानशंकर के कारिंदा गौसखाँ ने मनोहर की पत्नी विलासी को कुछ बुरा-भला कह दिया। इसपर मनोहर के पुत्र बलराम ने गौसखाँ की हत्या कर दी और फरार हो गया। मनोहर और गाँव वाले जेल भेजे गये। जेल में मनोहर ने ग्लानि से आत्महत्या कर ली। उधर ज्ञानशंकर ने गायत्री की संपत्ति और प्रेम की प्राप्ति के लिये कृष्ण-लीला का ढोंग रचा। अपने श्वसुर रायबहादुर कमलानंद के बुरा-भला कहने पर ज्ञानशंकर ने उसे विष दे दिया, किंतु योग-विद्या जानने के कारण वह विष के प्रभाव से बच गया। ज्ञानशंकर लखनऊ पहुँचा। गायत्री भी वहाँ चली गई। उसने ज्ञानशंकर को कृष्ण मान लिया और स्वयं राधा बनी। ज्ञानशंकर की पत्नी विद्यावती ने जब यह सब कुछ देखा, तब वह सहन न कर सकी और स्वयं भी संसार से चल बसी। गायत्री तीर्थाटन करने निकली, किंतु पर्वत पर चढ़ती हुई फिसल कर नीचे गिर पड़ी, जिससे उसकी मृत्यु हो गई। इन सब घटनाओं से ज्ञानशंकर के चरित्र में अभूतपूर्व परिवर्तन हो गया। गायत्री ने ज्ञानशंकर के पुत्र मायाशंकर को गोद ले रखा था। कुछ समय बाद चुनाव हुए। ज्ञानशंकर और मायाशंकर दोनों निर्वाचित हो गये। प्रेमशंकर ने प्रेमाश्रम खोला। इस कार्य से प्रभावित हो मायाशंकर ने सारी संपत्ति प्रेमाश्रम में देदी। ज्ञानशंकर भी प्रेमाश्रम में सम्मिलित होना चाहता था, किंतु उसे लज्जा मालूम हुई। वह गंगा में कूद पड़ा।

यद्यपि समस्त उपन्यास में किसानों और ज़मींदारों के पारस्परिक संबंध और उससे उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर लेखक ने अपने विचार व्यक्त किये हैं, तथापि वे विचार उस सीमा तक नहीं जाते जिसपर पहुँच कर ज़मींदारी प्रथा ही स्वयं त्याज्य समझ ली जाए। उपन्यास में गाँव के पटवारी, महाजन, ज़मींदारों के मुंशी और कारिंदों, वकीलों, डाक्टरों, पुलिस अफ़सरों तथा ताल्लुकेदारों के काले कारनामों का भी अच्छा चित्रण हुआ है।

प्रोषितपतिका—अनेक कार्यों से परवश होकर जिसका प्रिय कहीं दूर देश को चला गया हो, अतएव जो कामवेग से पीड़ित हो, वह नायिका। यह नायिका के आठ अवस्था-भेदों में से एक है।

प्रोषितभर्तृका—दे० *प्रोषितपतिका*।

प्लॉट—उपन्यास, नाटक, काव्य या कहानी आदि की **कथावस्तु**।

प्लेटो (Plato)—दे० *अफ़लातून*।

फ

फ़रहाद—फ़ारस का एक संगतराश, जिसने वहाँ की राजकुमारी **शीरीं** की प्राप्ति के लिये पर्वत बेसतून से शीरीं के महल तक दूध की नहर खोदी थी। शीरीं के पति ख़ुसरो परवेज ने फ़रहाद को शीरीं की मृत्यु की झूठी सूचना दी, जिसपर फ़रहाद ने आत्महत्या कर ली। शीरीं को जब यह ज्ञात हुआ, तब उसने भी प्राण त्याग दिये।

फ़रिश्ता—मुसलमानी धर्मग्रंथों के अनुसार ईश्वर का दूत।

फ़र्रुख़सियर—मुग़लवंशी एक भारत-सम्राट् (१७१३-१९ ई०)।

फलयोग--नाटक में वह स्थान जहाँ फल की प्राप्ति अथवा उसके नायक के उद्देश्य की सिद्धि हो जाती है।

फलागम—दे० *अवस्था*।

फ़ाज़िलशाह—दे० *प्रेमरतन*।

फ़िरंगी—१ यूरोप का निवासी। *यथा*—हबशी रूमी और फिरंगी। बड़ बड़ गुनी और तेहि संगी—*जायसी*। २ यूरोप देश की बनी तलवार। *यथा*—चमकती चपलान, फेरत फिरंगै भट—*भूषण*।

फ़िरदौसी (ल० ९५०-१०२० ई०)—फ़ारसी कवि और *शाहनामा* के रचयिता।

फ़ीरोज़ तुग़लक़—एक शासक (१३५१-८८ ई०)।

फ़ोर्ट विलियम कॉलिज (Fort William College)— दे० *गद्य*।

फ्रांस, अनातोल (France, Anatole) (१८४४-१९२४ ई०)—एक प्रसिद्ध फ्रांसीसी उपन्यास-कार और लेखक। नोबल पुरस्कार विजेता। इनका एक उपन्यास *अहंकार* नाम से अनूदित है। इनकी व्यंग्यपूर्ण रचनाओं ने कई हिंदी-लेखकों को प्रभावित किया है।

फ्रॉयड (Freud) (१८५६-१९३९ ई०)—यूरोप के एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक और मनो-विश्लेषण के आविष्कारक। इन्होंने मन के 'चेतन' और 'उपचेतन' ये दो भाग निर्धारित किये। पर सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य जो इन्होंने स्थापित किया, वह यह था कि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से मनुष्य के पारस्परिक आकर्षण-विकर्षण का आधार उसकी काम-भावना है। इनकी इस फ्रायड प्रवृत्ति का प्रभाव परवर्ती विश्व-साहित्य पर बहुत पड़ा है। हिंदी के अनेक आधुनिक उपन्यासकार इस प्रवृत्ति से पर्याप्त प्रभावित हैं।

ब

बंकनाली—दे० *नागिनी*।

बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय (१८३८-९४ ई०)—बंगला भाषा के प्रसिद्ध उपन्यासकार और लेखक, जिनकी रचनाएँ इन नामों से अनूदित हैं—

उपन्यास—*आनंद मठ, इंदिरा, कपालकुंडला, कृष्णकांत का दानपत्र, सीताराम, चंद्रशेखर, चौबे का*

चिट्ठा, देवी चौधरानी, मृणालिनी, युगलांगुरीय, कृष्णकांत का वसीयतनामा, रजनी, राजसिंह, दुर्गेशनंदिनी, राधारानी, विष वृक्ष ।

निबंध—*बंकिम निबंधावली* (दो भाग) ।

कहानी—*लोक रहस्य* ।

बंग—बंगाल । ब्रह्मपुत्र और पद्मा नदियों के बीच का प्रदेश ।

बँगला—बंगाल प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा । **चंडीदास** और **चैतन्य महाप्रभु** इस भाषा के उच्च कोटि के धार्मिक कवि थे । आधुनिक बँगला-साहित्य में **रवींद्रनाथ ठाकुर, बंकिमचंद्र** आदि प्रसिद्ध लेखक हुए हैं । बँगला-साहित्य ने हिंदी-साहित्य को पर्याप्त प्रभावित किया है ।

बंदी—दे० *अष्टावक्र* ।

बंध काव्य—अक्षरों के ऐसे विन्यास-विशेष वाला काव्य, जिसमें छंदों के अक्षरों को विशेष प्रकार से रखने से नाना प्रकार के बंध बनते हों ।

बंसीधर—दे० *दलपतिराय और बंसीधर* ।

बक—१ कंस द्वारा भेजा गया बगुले की आकृति का एक असुर, जो कृष्ण को मारने के लिये ब्रज गया था । बक ने कृष्ण को निगलना चाहा किंतु कृष्ण और अन्य ग्वालबालों ने इसके मुख में घुसकर इसे मार डाला *(भा० १०.११)* । २ एक असुर । लाक्षागृह की घटना के उपरांत पाँचों पांडव अपनी माता कुंती के साथ अनेक वनों में घूमते हुए एकचक्रा नगरी में एक ब्राह्मण के घर जा ठहरे । उस नगर में राक्षसों का राजा बक रहता था, जो प्रतिदिन एक मनुष्य को खाता था । उस दिन उस ब्राह्मण के पुत्र या कन्या की बारी थी । कुंती ने उसके स्थान पर अपने पुत्र भीम को भेज दिया । भीम ने बक का संहार कर दिया *(म० आ० १५७-६४)* ।

बकुल (मौलश्री)—एक वृक्ष जिसके विषय में प्रसिद्धि है कि सुंदरियों के स्पर्श से यह फूलों से लद जाता है ।

बख्तावरजी—मेवाड़ निवासी एक डिंगल कवि, जिन्होंने १८४३ ई० के लगभग *केहरप्रकाश* आदि ११ ग्रंथ लिखे ।

बख्शी हंसराज (जन्म १७४२ ई०)—पन्नानरेश के आश्रित एक कवि । *स्नेह-सागर, विरह-विलास, रामचंद्रिका* तथा *बारहमासा* के रचयिता ।

बच्चन—दे० *हरिवंश राय बच्चन* ।

बड़वाग्नि (बड़वानल)—**कामदेव** को भस्म करने के लिये शिव द्वारा उत्पन्न अग्नि, जिसे ब्रह्मा ने बड़वा या घोड़ी के रूप में समुद्र में छोड दिया था । दे० *और्व* ।

बदरिकाश्रम—गढ़वाल (उत्तर प्रदेश) में बदरीनाथ । यह श्रीनगर (गढ़वाल) से ५५ मील उत्तर-पूर्व में हिमालय पर है । नर-नारायण (दे० यथा०) का मंदिर अलकनंदा के स्रोत के निकट नर-नारायण पर्वतों के ठीक बीच में है । यहाँ पर गर्म चश्मा है । कहा जाता है कि यह मंदिर **शंकराचार्य** ने बनवाया था । इसे बदरीवन, बदरीनारायण और बदरीनाथ भी कहते है ।

बदरीनाथ भट्ट (१८९१-१९३४ ई०)—आगरा निवासी एक लेखक, जिनकी मुख्य रचनाएँ *दुर्गावती, चंद्रगुप्त* (नाटक) आदि हैं । इन्होंने *हिंदी* नाम से हिंदी भाषा और इतिहास से

संबंधित एक पुस्तक भी लिखी थी। इनके नाटकों में हास्य रस का पुट अधिक है।

बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' (१८५५-१९२२ ई०)—मिर्ज़ापुर निवासी, लेखक, कवि, समालोचक। 'आनंद कादंबिनी' तथा 'नागरी नीरद' (साहित्यिक पत्रों) के संचालक। इनके नाटकों में *वीरांगना रहस्य* उल्लेखनीय है। *प्रेमघन सर्वस्व* में इनकी कविताएँ संगृहीत हैं। श्रीनिवासदास-कृत *संयोगिता स्वयंवर* की आलोचना करके इन्होंने हिंदी में आधुनिक समालोचना का सूत्रपात किया। इन्होंने ब्रज-भाषा और खड़ी बोली में कविता की, जो देश-प्रेम, हिंदी-प्रचार और तत्कालीन समाज की जातीय भावनाओं से संबंधित है। इनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों का बाहुल्य है।

बनयन, जॉन (१६२८-८८ ई०)—एक अंग्रेज़ी धर्म-प्रचारक और *पिलग्रिम्ज़ प्रोग्रेस* (अनू० *यात्रा स्वर्णोदय*) आदि के रचयिता।

बनवारी (र० का० १६३३-४३ ई०)—वीर रस के एक कवि। शाहजहाँ का दरबारी सलावतखाँ अमरसिंह राठौर को गंवार कहने लगा। उसके मुख से 'ग' इतना ही निकला था कि भरे दरबार में अमरसिंह ने उसका वध कर दिया। कवि ने अमरसिंह की इस वीरता का ओजस्वितापूर्ण वर्णन किया है।

बनादास (आ० का० १८३३ ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि, और *रामायण, हनुमंत विजय* आदि ३२ ग्रंथों के रचयिता।

बनारसीदास (जन्म १५८६ ई०)—एक जैन कवि और *अर्द्ध कथानक* (हिंदी साहित्य में पहिला आत्म-चरित, जिसमें अपनी हीनताओं के वर्णन में भी लेखक ने संकोच नहीं किया है।), *समयसार नाटक, बनारसी पद्धति, कल्याण मंदिर भाषा, नाम माला* आदि के रचयिता। इनकी कविता अध्यात्म रस में डूबी हुई बड़ी ऊँची श्रेणी की है।

बनारसीदास चतुर्वेदी (१८९२ ई०-)—प्रसिद्ध पत्रकार और संस्मरण-लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *रेखाचित्र, संस्मरण, हमारे आराध्य, सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी* आदि हैं। ये 'विशाल-भारत' के संपादक रहे हैं।

बब्बर (आ० का० १०५० ई०)—त्रिपुरी (जबलपुर) निवासी और राजा कर्ण कलचुरी के दरबारी कवि। इनकी केवल स्फुट रचनाएँ प्राप्त हैं। इनकी शैली प्रौढ़ है।

बभ्रुवाहन—अर्जुन और मणिपुर-नरेश चित्रवाहन की पुत्री चित्रांगदा (दे० यथा०) का पुत्र। चित्रवाहन की मृत्यु के पश्चात् यह मणिपुर का राजा बना। महाभारत-युद्ध के पश्चात् पांडवों ने अश्वमेध यज्ञ किया, तो अश्व की रक्षा के लिये अर्जुन की नियुक्ति हुई। अर्जुन और उलूपी के उकसाने से बभ्रुवाहन और अर्जुन में घोर संग्राम हुआ। बभ्रुवाहन ने अर्जुन को मूर्च्छित कर दिया, किंतु उलूपी (दे० यथा०) ने संजीवनी विद्या से अर्जुन को सुध में ला दिया (*म० आश्व० ७९-८१*)। अर्जुन की यह पराजय वसुगण और गंगा के शाप से हुई थी, क्योंकि अर्जुन ने गंगा-पुत्र भीष्म को शिखंडी की ओट में होकर मारा था।

बरवै—विषमनि रविकल बरवै, सम मुनि साज (विषम पादों (१, ३) में १२ मात्राएँ, सम पादों (२, ४) में ७, ७ मात्राएँ और सम पादों के अंत में जगण वाला छंद)। तगण का प्रयोग भी पाया जाता है। उ०—अवधि शिला का उर पर, था गुरु भार। /

तिल तिल काट रही थी, दृग-जलधार ।।
बरवै रामायण इसी छंद में लिखी हुई है।

बरवैनायिकाभेद—**रहीम** (१५५३-१६२५ ई०) का सबसे सफल काव्य, जिसमें अवधी भाषा के सौंदर्य के साथ-साथ नायिकाओं के बड़े भावपूर्ण और सरस चित्र पाये जाते हैं।

बरवै रामायण—**तुलसीदास** का अवधी भाषा में तथा बरवै छंद में लिखा एक काव्य (१६१२ ई० ?), जिसमें राम-कथा वर्णित है। इसमें ७ कांड और ६९ छंद हैं। 'अलंकारिता के आधिक्य के कारण यह ग्रंथ पहिले का मालूम पड़ता है, किंतु रहीम के अनुकरण में होने के कारण पीछे का ठहरता है' (रहीम ने प्रथम बार बरवै छंद का प्रयोग किया है)।

बर्बरिक—भीमसेन का पौत्र तथा घटोत्कच का पुत्र। अपने पितामह को न पहचान कर इसने उनसे युद्ध भी किया था। महाभारत-युद्ध में इसने गर्व किया था कि मैं सेना सहित सब कौरवों को एक ही मुहूर्त में यमलोक पहुँचा दूंगा। इसपर कृष्ण ने इसका मस्तक काट डाला था। बर्बरिक पूर्व जन्म में सूर्यवर्चा नामक एक यक्ष था, जिसे ब्रह्मा ने गर्व करने के कारण शाप दिया था कि तुम्हारी मृत्यु विष्णु के अवतार द्वारा होगी (*स्कंद० १.२.६०-६६*)।

बलदास (आ० का० १६३० ई०)—एक राम-भक्त कवि और *चित्रावोधन* के रचयिता।

बलभद्र मिश्र (र० का० ल० १५८० ई०)—ओरछा निवासी, महाकवि केशवदास के बड़े भाई, एक कवि। *नखशिख*, *बलभद्री व्याकरण*, *हनुमन्नाटक*, *गोवर्द्धन सतसई टीका* और *दूषण विचार* के रचयिता। इनकी रचना में रीतिकाल की कविता अपना प्रारंभिक रूप ग्रहण करती प्रतीत होती है।

बलराम—रोहिणी के पुत्र और कृष्ण के अग्रज। कंस ने देवकी के छः पुत्रों को मार डाला। सातवें पुत्र शेषनाग के अवतार थे। योगमाया से वे वसुदेव की दूसरी पत्नी रोहिणी के गर्भ में चले गये, जिससे बलराम का जन्म हुआ (*भा० १०.२*)। कृष्ण की भाँति ये भी नंद के यहाँ गोकुल में पले थे। गदायुद्ध में ये अतिनिपुण थे। भीम और दुर्योधन गदा-युद्ध में इनके शिष्य थे (*म०, उ० ७ १५७, श० ३५*)। ये स्वभाव के बड़े उद्दंड थे। इनके अस्त्र हल और मूसल थे। यमुना को इन्होंने अपनी इच्छानुसार अपनी ओर मोड़ लिया था (*विष्णु० ५.२५*)। दे० *धेनकासुर*, *प्रलंबासुर*, *रुक्मी*। बलराम के पर्य्याय०—बलदेव, हलधर, रौहिणेय, बलभद्र, राम, कालिंदीभेदन, मूसल-पाणिक आदि।

बलि—प्रह्लाद-तनय विरोचन के पुत्र, एक प्रसिद्ध दानशील और पराक्रमी दैत्यराज। इन्होंने विश्वजित् नामक यज्ञ किया, जिससे इंद्र बहुत भयभीत हो गये। बलि का शासन तीनों लोकों में व्याप्त देखकर दुःखी और चिंतित इंद्र की माता अदिति ने विष्णु की स्तुति की, जिससे विष्णु ने अदिति का पुत्र होकर जन्म लेना स्वीकार किया। बलि अपने गुरु शुक्राचार्य की संमति से सौवाँ अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे कि अपनी माता अदिति की आज्ञानुसार विष्णु ने वामन (बावन आँगुर गात) रूप धारण कर ब्राह्मण के वेष में इनसे तीन पग भूमि दान में माँगी। जब भूमि देने का प्रश्न आया, तब वामन ने अपना विराट्-

रूप धारण कर लिया, और एक पग से पृथ्वी, दूसरे से स्वर्ग और तीसरे से पाताल नाप लिया। इसी समय ब्रह्मा ने भगवान् के चरण धो कर कमंडल में चरणामृत भर लिया, जिससे बाद में गंगा पृथ्वी पर प्रकट हुईं। जब वामन ने बलि से दक्षिणा माँगी, तब इन्होंने अपना शरीर समर्पित कर दिया। वामन बहुत प्रसन्न हुए और इनको पाताल लोक में ले गये और वहीं इन्हें राज्याभिषिक्त कर दिया। वहाँ पर विष्णु इनके द्वारपाल हैं। इस प्रकार इंद्र को बलि द्वारा स्वर्ग के छिन जाने का भय नहीं रहा (*वामन० २३-३१, भा० ८.१५-२३*)।

बसंत—दे० *वसंत*।

बहिर्लापिका—काव्य-रचना में एक प्रकार की पहेली, जिसमें उसका उत्तर पहेली के शब्दों के बाहर रहता है। यथा—श्याम बरन की है एक नारी, माथे ऊपर लागे प्यारी। / जो मानुस इस अरथ को खोले, कुत्ते की वह बोली बोले—*खुसरो*। उत्तर=भौं।

बहुला—एक गौ, जिसके सत्यव्रत की कथा पुराणों में है और जिसके नाम पर लोग व्रत रखते हैं।

बांकीदास (१७७१-१८३३ ई०)—डिंगल-कवि और २७ ग्रंथों के रचयिता। इनके ग्रंथों से राजपूताने के इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

बाइबल ईसाइयों की धर्म-पुस्तकें। दे० *ईसा*।

बाईसी—बाईस का संग्रह। यथा—*खटमल बाईसी* आदि।

बाण (वर्त्त० ६३०-४५ ई०)—**हर्षवर्द्धन** के राजकवि और *हर्षचरित* तथा *कादंबरी* (गद्य-काव्य) के रचयिता। इन्होंने *चंडिकाशतक*, *पार्वती परिणय* (अनू०, नाटक) आदि छोटे ग्रंथ भी लिखे हैं। हज़ारीप्रसाद द्विवेदी ने *बाणभट्ट की आत्मकथा* नाम से एक ऐतिहासिक उपन्यास लिखा है।

बाणासुर—दैत्यराज बलि का ज्येष्ठ पुत्र। यह बड़ा वीर, गुणवान् और शिव-भक्त था। कृष्ण से युद्ध के उपरांत इसने अपनी कन्या उषा (दे० *यथा०*) का विवाह कृष्ण-पौत्र अनिरुद्ध से कर दिया था (*भा० १०.६३*)।

बानी—संत-महात्माओं का उपदेश। जैसे दादूदयाल की बानी, कबीर की बानी, आदि।

बापू—मोहनदास कर्मचंद गांधी। हिंदी तथा गुजराती में 'बापू' शब्द का अर्थ पिता है। राष्ट्र महात्मा गांधी को बापू शब्द से राष्ट्र-पिता के रूप में स्मरण करता है।

बाबर—मुग़लवंशी दिल्ली बादशाह (१५२६-३० ई०)।

बाबालाल (आ० का० १६४३ ई०)—मालवा निवासी एक संत-कवि, जो **शाहजहाँ** के पुत्र दारा शिकोह के गुरु थे।

बारहमासा—वह पद्य या गीत जिसमें बारह महीनों की प्राकृतिक विशेषताओं का वर्णन किसी विरही या विरहिनी के मुख से करवाया गया हो।

बालकृष्ण—**कृष्ण** का बालरूप।

बालकृष्ण नायक (आ० का० १७०८ ई०)—**चरणदास** के शिष्य एक संत, जिन्होंने निर्गुण पंथ की परंपरा में होकर भी विष्णु के साकार रूप की उपासना की। *ध्यान मंजरी* और *नेह प्रकाशिका* इनके मुख्य ग्रंथ हैं।

बालकृष्ण भट्ट (१८४४-१९१४ ई०)—प्रयाग

निवासी, एक लेखक। *कलिराज की सभा, रेल का विकट खेल, बाल विवाह, वेणुसंहार, जैसा काम वैसा परिणाम, चंद्रसेन, दमयंती स्वयंवर, पृथु चरित* (नाटक), *शिक्षादान, आचार विडंबन, नई रोशनी का विष* (प्रहसन), *नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान एक सुजान* (उपदेशात्मक उपन्यास) आदि के रचयिता। माइकेल मधुसूदनदत्त-कृत *पद्मावती* तथा *शर्मिष्ठा* के अनुवादक। श्रीनिवासदास-कृत *संयोगिता स्वयंवर* के आलोचक और *हिंदी शब्द सागर* के संपादकों में से एक। 'हिंदी प्रदीप' (१८७६, साहित्यिक पत्र) का संचालन कर ये ३२ वर्ष तक उसके संपादक रहे। इस पत्र में सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक लेख होते थे। *साहित्य सुमन* में इनके निबंध संगृहीत हैं। गद्य में समालोचना के सूत्रपात का श्रेय इन्हें और **बद्रीनाथ चौधरी 'प्रेमघन'** को ही प्राप्त है। इनकी शैली में संस्कृत शब्दों का प्राचुर्य है। स्थान-स्थान पर इन्होंने बोल-चाल के चलते शब्दों का प्रयोग किया है। इनका हास्य **प्रतापनारायण मिश्र** की अपेक्षा अधिक शिष्ट, संयत और साहित्यिक होता था। इनके निबंधों में गंभीर अध्ययन और पांडित्य का परिचय मिलता है।

बालकृष्ण राव (१९१३ ई०-)—कवि और *कौमुदी* (१९३१), *आभास* (१९३५), *कवि और कवि* (काव्य-संग्रह) आदि के रचयिता। इनकी रचनाओं के विषय प्रेम तथा देश-भक्ति हैं।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (१८९७ ई०-)—कवि और *कुंकुम, क्वासि* (काव्य-संग्रह) आदि के रचयिता। 'विप्लव-गान' इनकी प्रसिद्ध कविता है। ये एक राष्ट्रिय कार्यकर्त्ता हैं। इनकी कविता में क्रांतिकारी विचारधारा के साथ-साथ प्रेम और विरह-वेदना का भी प्रमुख स्थान है। कविता में करुण की मात्रा अधिक रहती है।

बालखिल्य—साठ हज़ार ऋषिगण (*भा० ४.१*)। ये ब्रह्मा के रोमों से उत्पन्न, महर्षि क्रतु तथा सन्नति के पुत्र कहलाते हैं। ये आकार में अँगूठे के बराबर थे। कश्यप ऋषि के लिये समिधा लाते हुए जब ये गिर गये, तब इनकी प्रार्थना पर भगवान् ने इनका उद्धार किया था।

बाल भक्ति (आ० का० १६६३ ई०)—एक राम-भक्त कवि और *नेह प्रकाश* तथा *दयाल मंजरी* के रचयिता।

बालमुकुंद गुप्त (१८६५-१९०७ ई०)—उर्दू साहित्य में इनकी अच्छी ख्याति थी। मदन-मोहन मालवीय के अनुरोध से ये हिंदी में लिखने लगे। *शिवशंभु का चिट्ठा* इनकी व्यंग्यात्मक रचनाओं का संग्रह है। इन्होंने 'बंगवासी' और 'भारतमित्र' पत्रों द्वारा हिंदी की विशेष सेवा की है। इनके व्यंग्यपूर्ण लेखों में राजनीति की मात्रा अधिक रहती है।

बालाबक्श (१८५५-१९३१ ई०)—जयपुर-राज्य निवासी एक डिंगल-कवि और १९ ग्रंथों तथा अनेक फुटकर कविताओं के रचयिता। इन्होंने **नागरी-प्रचारिणी सभा** को १२०००) रुपये दान दिये, जिनसे इनके नाम पर एक पुस्तकमाला प्रकाशित हो रही है।

बालि—किष्किंधापुरी का कपिराज, जो इंद्र का पुत्र (दे० *ऋक्षराज*), **अंगद** का पिता और सुग्रीव का अग्रज था। यह इतना वीर था कि रावण (दे० यथा०) तक को इसने बंदी कर लिया था। सुग्रीव (दे० यथा०) की पत्नी का हरण कर इसने सुग्रीव को नगरी से बाहर भगा दिया था। सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत पर

रहते थे। शापवश बालि उस पर्वत पर नहीं जा सकता था (*वा० रा० कि० ८-११*, दे० *दुंदुभि*, *मतंग*)। रामचंद्र की सुग्रीव से भेंट उसी पर्वत पर हुई। सुग्रीव ने सीता को खोजने में राम की सहायता का वचन दिया और उसके बदले में राम ने बालि का वध किया (१६)। इसकी पत्नी **तारा** पंचकन्याओं में गिनी जाती है।

बावनी—बावन का संग्रह। यथा—*शिवा बावनी* आदि।

बाह्लिक—बल्ख का प्राचीन नाम। यह स्थान घोड़ों के लिये प्रसिद्ध है।

बाहुक—दे० *नल*।

बिंदु अर्थप्रकृति—दे० *अर्थप्रकृति*।

बिडालाक्ष—महिषासुर का सेनापति एक दैत्य, जिसका वध दुर्गा द्वारा हुआ।

बिल्वखल्वाट न्याय—धूप से व्याकुल एक गंजा व्यक्ति छाया के लोभ से बेल के वृक्ष के नीचे बैठा ही था कि एक बेल उसके सिर पर गिरा। कोई कार्य करने पर जब विपत्तियाँ एक के बाद एक आती जाएँ, तब इस उक्ति का प्रयोग होता है।

बिल्हण—कल्याण के चालुक्य राजा, छठे विक्रमादित्य (१०७६-११२६ ई०) के राजकवि। *विक्रमांकदेव चरित* (ऐतिहासिक काव्य, विक्रमादित्य का चरित) तथा *चौरपंचाशिका* (अनू०, गीतिकाव्य) के संस्कृत में रचयिता।

बिहारी—द्वै चारै छै आठ रच्यो, रास बिहारी (२२ (१४, ८) मा० छंद, दो चौकल, तीन त्रिकल और अंत में पाँच कल)। उ०—जीते असंख्य शत्रु रहा दर्प दिखाता।

बिहारीलाल (जन्म १६०३ ई०)—इनका जन्म बसुआ गोविंदपुर (ग्वालियर राज्य) में बताया जाता है। ये जाति से माथुर ब्राह्मण (चतुर्वेदी) थे। ये जयपुर के महाराजा जयसिंह के आश्रित थे। इनका बाल्यकाल बुंदेलखंड में और युवावस्था मथुरा में व्यतीत हुई थी। ससुराल में अनादर पाकर ये जयपुर दरबार में पहुँचे। वहाँ निम्न दोहे से इन्होंने अपनी धाक जमा ली—नहिं परागु नहिं मधुर मधु, नहिं बिकास इहिं काल। / अली कली ही सों बिंध्यौ, आगे कौन हवाल॥ इस दोहे ने अभीष्ट कार्य किया और अंतःपुर में लीन रहने वाले महाराज जयसिंह विलासिता त्याग, राजकार्य में प्रवृत्त हुए। बिहारी ने सात सौ दोहे लिखे, जो *बिहारी सतसई* के नाम से प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि महाराज जयसिंह के द्वारा इन्हें अपने दोहों की रचना पर वायदे के अनुसार सात सौ अशर्फियाँ प्राप्त न हुईं। उसके लिए इन्होंने मृदु उपालम्भ के अतिरिक्त कुछ भी नहीं कहा। यद्यपि इन्होंने कोई लक्षण-ग्रंथ नहीं लिखा, तथापि शृंगार संबंधी जितने विभाव, अनुभाव, संचारी भाव हाव आदि हैं, *सतसई* में उन सभी के उदाहरण मिलते हैं। हिंदी-साहित्य में यह *सतसई* ही इनका अक्षय कीर्त्ति स्तंभ है। इसके दोहे केवल दोहे ही नहीं हैं, प्रत्युत उनमें कवि के सूक्ष्म निरीक्षण, अलौकिक प्रतिभा, विविध पांडित्य आदि स्पष्ट लक्षित होते हैं। बिहारी की भाषा के संबंध में रामचंद्र शुक्ल का कथन है—'बिहारी की भाषा चलती होने पर भी साहित्यिक है। वाक्य-रचना व्यवस्थित है और शब्दों के रूपों का व्यवहार एक निश्चित् प्रणाली पर है। यह बात बहुत कम कवियों में पाई जाती है। ब्रज-भाषा के बहुत-से कवियों ने शब्दों को तोड़-मरोड़ कर विकृत किया है। **भूषण** और **देव** ने शब्दों का बहुत अंग भंग किया है और

कहीं-कहीं मन घड़ंत शब्दों का भी व्यवहार किया है। बिहारी की भाषा इस दोष से भी बहुत कुछ मुक्त है।'

बिहारी श्रृंगारी कवि हैं। इन्होंने संयोग और वियोग की सभी अवस्थाओं का अच्छा वर्णन किया है। वियोग पक्ष में अतिशयोक्ति का सीमोल्लंघन हुआ है। श्रृंगार संबंधी किसी प्रसंग को इन्होंने अछूता नहीं छोड़ा। मधुर रस के लियें इन्होंने माधुर्यमयी ब्रज-भाषा का प्रयोग कर मणि-कांचन संयोग उपस्थित कर दिया है।

बिहारी ने दोहे जैसे छोटे-से छंद में बहुत-से भाव भरकर समास गुण का परिचय दिया है। इन्होंने सौंदर्य के व्यापक चित्र दिये हैं और अलंकारों की अपेक्षा शारीरिक सौंदर्य को अधिक महत्त्व दिया है। इन्हें जीवन का विस्तृत अनुभव था। बहुज्ञता के साथ-साथ इनका निरीक्षण भी व्यापक है। श्रृंगारी कवि होते हुए भी इन्होंने भक्ति संबंधी दोहे लिखे हैं। कहीं-कहीं हास्य रस का पुट अच्छा दिया है (यथा—को घटि, ये वृषभानुजा, वे हलधर के वीर)। इनकी रचना में कहीं-कहीं उर्दू शैली भी दृष्टिगोचर होती है।

यद्यपि *गाथा सप्तशती*, *आर्या सप्तशती*, *श्रृंगार सतसई* आदि कई प्राकृत और हिंदी की सतसई विद्यमान हैं, तथापि पैनी दृष्टि, अनोखी सूझ, पद-लालित्य और शब्दों की अर्थ-व्यंजना के कारण *बिहारी सतसई* अद्वितीय है। वह *सतसई* श्रृंगार रस का भी श्रृंगार है। *सतसई* के विषय में प्रसिद्ध है—'सतसैया के दोहरा, ज्यौं नाविक के तीर। देखन में छोटे लगैं, घाव करें गंभीर॥' *बिहारी सतसई* की विविध भाषाओं में पचासों टीकाएँ लिखी गई हैं। इस प्रकार बिहारी-संबंधी एक अलग साहित्य ही खड़ा हो गया है। श्रृंगार रस के ग्रंथों में जितनी ख्याति *बिहारी सतसई* की हुई है उतनी और किसी की नहीं। यद्यपि बिहारी के दोहों को अनेक क्रमों में रखा गया है, तथापि औरंगज़ेब के तृतीय पुत्र **आज़मशाह** ने जो क्रम रखा है, वह सबसे प्रसिद्ध है। विशेष दे० जगन्नाथदास 'रत्नाकर'-कृत *कविवर बिहारी* व *बिहारी रत्नाकर*।

बिहारी सतसई—दे० *बिहारीलाल*।

बीज अर्थप्रकृति—दे० *अर्थ प्रकृति*।

बीजांकुर न्याय—"बीज और अंकुर"। बीज से अंकुर निकलता है और अंकुर से वृक्ष होकर पुनः बीजोत्पत्ति होती है। अर्थात् एक दूसरे पर अवलंबित वस्तु।

बीभत्स—घृणित वस्तु से उठने वाली ग्लानि से प्रकट होने वाले, लाल वर्ण और महाकाल देवता वाला रस। जुगुप्सा स्थायी-भाव; घृणित वस्तु आलंबन; उसकी घृणित दशाएँ उद्दीपन; थूकना, आँख मींचना आदि अनुभाव; मोह, आवेगादि इसके संचारी-भाव हैं। उ०—फाड़ि नखन शव आंतड़िनि, रुधिर मवाद निकारि। / लेपति अपने मुखन पै हरसि प्रेत-गन नारि॥ यहाँ शव आलंबन, आंतड़ी चीरना उद्दीपन, आँखें मीचना, नाक सिकोड़ना अनुभाव, आवेग आदि संचारी और जुगुप्सा स्थायी-भाव है।

बीरबल (आ० का० १५८३ ई०)—**अकबर** के प्रसिद्ध मंत्री जो, बड़े ही वाक्चतुर और प्रत्युत्पन्नमति थे। इनके और अकबर के बीच होने वाले विनोद और चुटकले उत्तर भारत के गाँव-गाँव में प्रसिद्ध हैं। ये स्वयं ब्रज-भाषा के अच्छे कवि थे, और कवियों का सत्कार करते थे। इनकी फुटकर रचनाओं का

संग्रह भरतपुर में प्राप्त हुआ है। अकबर ने इनको कविराय की उपाधि दी थी।

बुँदेली (बुँदेलखंडी)—बुंदेलखंड में बोली जाने वाली भाषा। इस भाषा में लोक-साहित्य है और इसका प्रभाव केशवदास, तुलसीदास, बिहारीलाल आदि पर पड़ा है। बुंदेलखंड के कवियों ने प्रायः ब्रज-भाषा को ही अपनाया है। *आल्हाखंड* में बुंदेली का प्रभाव अधिक है। दे० *पश्चिमी हिंदी*।

बुद्ध—दे० *गौतम बुद्ध*।

बुध—बृहस्पति की पत्नी तारा के गर्भ से उत्पन्न चंद्रमा के औरस पुत्र। इला से इन्हें पुरूरवा नामक पुत्र प्राप्त हुआ था (*पद्म० सृ० ८, १२*)। बुध के पर्य्याय०—सोम्य, चंद्रसुत, जारज, चंद्रज आदि।

बुल्ला साहब (आ० का० १६६३-१७६८ ई०)—भुरकुड़ा (गाज़ीपुर) निवासी एक संत, जो गुलाल साहब के गुरु थे। इनके अधिकांश शब्दों में 'सुरत' और 'दसम द्वार' का वर्णन है।

बृहत्कथा—गुणाढ्य का पैशाची भाषा में लोक-कथाओं का एक संग्रह (८७ ई०)।

बृहत्कथा का नायक राजा उदयन का राजकुमार था, जिसकी रानी **मदनमंजूषा** को मानसवेग हर ले गया था। राजकुमार ने अपने मंत्री गोमुख की सहायता से रानी को पुनः प्राप्त किया।

बृहद्रथ—दे० *जरासंध*।

बृहस्पति—देवताओं के गुरु। इनकी पत्नी **तारा** को चंद्रमा हर कर ले गये थे। इन्हें उनसे बुध नामक पुत्र प्राप्त हुआ। अपने बड़े भाई उतथ्य की पत्नी से इन्होंने भरद्वाज नामक पुत्र को जन्म दिया था। बृहस्पति ने लोकायत दर्शन की रचना की। लोक में इसका प्रचार चार्वाक (दे० यथा०) द्वारा हुआ। बृहस्पति के पर्य्याय०—गुरु, सुरगुरु, सुराचार्य, गीष्पति, वाचस्पति, धिषण, जीव आदि।

बेंटिंक, विलियम (Bentinck, William)—बंगाल के गवर्नर-जनरल (१८२८-३४ ई०)।

बेकन, फ्रांसिस (Bacon, Francis) (१५६१-१६२६ ई०)—एक प्रसिद्ध निबंधकार, जिनके निबंध *बेकन विचार रत्नावली* के नाम से अनूदित हैं। दे० *निबंध*।

बेचन शर्मा पांडेय 'उग्र' (१९०१ ई०-)—उपन्यासकार, कहानी-लेखक और नाटककार। इनकी मुख्य रचनाएँ *चंद हसीनों के खतूत* (१९२७), *दिल्ली का दलाल, बधुआ की बेटी* (उपन्यास), *दोज़ख की आग, इंद्र धनुष* (कहानी-संग्रह) आदि हैं। "इन्होंने समाज का नग्न चित्र खींचना चाहा है और कभी-कभी मानव-सुलभ कमज़ोरियों का ऐसा चित्र उतारा है कि लोगों को अपनी कौतूहल-तृप्ति के लिये इनकी ओर आकर्षित होना पड़ता है। **बनारसीदास चतुर्वेदी** ने इनकी रचनाओं को 'घासलेटी साहित्य' कहा है, पर यह बात इनकी सभी रचनाओं के विषय में नहीं कही जा सकती।" इनकी भाषा ज़ोरदार और चटपटी है।

बेन—दे० *वेन*।

बेनी—१ एक संत-कवि जो संभवतः **नामदेव** (१२७०-१३५० ई०) से पहिले वर्त्तमान थे। इनकी रचनाओं में हठयोग के साधन से

अध्यात्म की शिक्षा दी गई है। इनकी भाषा प्राचीन और असंस्कृत है। २ (वर्त्त० १६४३ ई०)—असनी के वंदीजन एक रीति-कवि, जिनके केवल फुटकल कवित्त प्राप्त हैं।

बेनी प्रवीन (र० का० प्रारंभ १८०७ ई०)—लखनऊ निवासी एक रीति-कवि। *नवरस-तरंग* (प्रसिद्ध ग्रंथ, इसमें मुख्यतया शृंगार और नायिका-भेद का वर्णन है), *शृंगार भूषण* तथा अपने आश्रयदाता नानाराव के नाम पर *नानाराव प्रकाश* के रचयिता। इनके ऋतुओं के वर्णन में तत्कालीन ऐश्वर्यवान् लोगों के भोग-विलास की सामग्री का अच्छा चित्रण है। इनकी ब्रज-भाषा **मतिराम** और **पद्माकर** की टक्कर की है।

बेनी बंदीजन (र० का० १७९२-१८२३ ई०)—अवध के वज़ीर महाराज टिकैतराय के आश्रित एक रीति-कवि। *टिकैतराय प्रकाश*, *रसविलास* तथा *भँडौवा संग्रह* के रचयिता। ये हास्य और व्यंग्य के प्रसिद्ध लेखकों में से एक हैं।

बेनी माधवदास—दे० *गोसाईं चरित्र*।

बेलि किसन रुकमणी री—दे० *वेलि किसन रुकमणी री*।

बेहुला—एक पतिव्रता स्त्री जो अपने पति के शव को महीनों तक केले की बनी हुई नाव में लेकर बहती रही। अंत में मनसादेवी को इनकी दशा पर तरस आ गया और उन्होंने इसके पति को पुनर्जीवित कर दिया।

बैताल (जन्म १६७७ ई०)—चरखारी-नरेश विक्रमसाहि के आश्रित एक कवि जिनकी कुंडलियाँ प्रसिद्ध हैं।

बैरीसाल—असनी के रहने वाले, जाति से ब्रह्मभट्ट, एक रीति-कवि। *भाषाभरण* (१७५८ ई०; अलंकार-ग्रंथ) के रचयिता।

बोधा (र० का० १७७३-१८०३ ई०)—राजापुर (बांदा) निवासी, पन्ना-नरेश के आश्रित एक रीति-कवि, जिन्होंने 'सुभान' वेश्या के विरह में *विरहवारीश* लिखा। *इश्कनामा* इनकी दूसरी पुस्तक है। इनका प्रेम-काव्य परंपरा-बद्ध नहीं है। उसमें प्रेम का स्वच्छंद और स्वतंत्र उल्लास दिखाई पड़ता है।

ब्रज—पुराना गोकुल या महावन। मथुरा के निकट यमुना के पार एक ग्राम, जहाँ नंद ने कृष्ण को पाला था (*भा० १०.३*)। बाद में ब्रज नाम का प्रयोग वृंदावन और उसके आस-पास के गाँवों के लिये होने लगा। यहाँ वे स्थान हैं, जहाँ नंद का घर था, महामाया का जन्म हुआ था, कृष्ण ने पूतना-वध किया था और जहाँ यमलार्जुन थे। गोकुल अथवा नये गोकुल को वल्लभाचार्य ने पुराने गोकुल की नक़ल पर बनवाया। इसमें भी वही प्रसिद्ध स्थान हैं जो पुराने गोकुल में हैं। नये गोकुल में नंद के महल को औरंगज़ेब ने मसजिद में परिवर्तित कर दिया था।

ब्रजनंदन सहाय—उपन्यासकार। *सौंदर्योपासक*, *राधाकांत* (१९१२ ई०), *आदर्शमित्र* आदि के रचयिता। इनके उपन्यासों में घटना-वैचित्र्य और चरित्र-चित्रण की अपेक्षा भावावेश की मात्रा अधिक है।

ब्रज-भाषा—शौरसेनी अपभ्रंश से उत्पन्न वह भाषा, जो ब्रज-मंडल में बोली जाती है। सूरदास आदि कृष्ण-भक्त कवियों की रचनाएँ इसी भाषा में हैं। रीतिकाल के कवियों ने भी इसी भाषा में रचनाएँ की थीं। आजकल भी इसमें साहित्य की रचना होती है।

ब्रज-मंडल—मथुरा के आस-पास ८४ कोस का क्षेत्रफल, जिसमें राधा-कृष्ण-लीला से संबंधित अनेक स्थान और ग्राम हैं। यहाँ १२ वन और २४ उपवन हैं, जिनकी परिक्रमा भाद्र मास में की जाती है। यहाँ वे स्थान हैं जहाँ मधु नामक दैत्य का गढ़ था, धेनुकासुर, अघासुर, प्रलंबासुर का वध हुआ था। इसी क्षेत्र के अंतर्गत ब्रज, गोवर्द्धन पर्वत (दे० यथा०) हैं, और मथुरा है जहाँ कंस का वध हुआ था। दे० *भतरौंड़*।

ब्रजरत्नदास—आधुनिक लेखक और *हिंदी-नाट्य-साहित्य* (१९३८ ई०), *खड़ी बोली हिंदी-साहित्य का इतिहास*, *उर्दू साहित्य का इतिहास*, *भारतेंदु हरिश्चंद्र* (आलोचना) आदि के रचयिता।

ब्रजवासीदास—वल्लभ संप्रदाय के अनुयायी, वृंदावन निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि। *ब्रज विलास* (१७७० ई०) के रचयिता तथा *प्रबोध चंद्रोदय* नाटक के अनुवादक।

ब्रह्म—एक मात्र नित्य चेतन सत्ता, जो जगत् का कारण और सत्, चित्, आनंद-स्वरूप है।

ब्रह्मदत्त—एक रीति-कवि और *विद्वद्विलास* (१८०३ ई०) तथा *द्वीप प्रकाम* (१८०८) के रचयिता।

ब्रह्मा—**ब्रह्म** के तीन सगुण रूपों में से सृष्टि की रचना करने वाला रूप। समुद्र में भगवान् जब योगनिद्रा में शयन करने लगे, तब उनकी नाभि से एक कमल उत्पन्न हुआ। उससे ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई (*मत्स्य० १६८-६९*)। इन्होंने शतरूपा नाम की एक स्त्री उत्पन्न की, जो इनके चारों ओर घूमने लगी। ये भी उसपर मुग्ध हो चारों ओर देखने लगे। अतः इनके चार मुख हो गये (*३*)। पुराणों में ये वेदों के प्रकटकर्त्ता कहे गये हैं। कर्मानुसार मनुष्य के शुभाशुभ फल या भाग्य को गर्भ के समय स्थिर करने वाले ये ही माने जाते हैं। इनके क्रमश दस मानसपुत्र हुए—मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रचेता, वसिष्ठ, भृगु और नारद। इन्हें प्रजापति भी कहते हैं (*ब्रह्मांड० २.९*)। इनकी अनेक पत्नियों में सरस्वती और सावित्री प्रसिद्ध हैं। एक बार ब्रह्मा ने सावित्री की अनुपस्थिति में पृथ्वी की एक गोपकन्या गायत्री से विवाह कर यज्ञ पूरा किया था। गायत्री वेदमाता और पूज्य कहलाने लगीं। उनके नाम का एक मंत्र प्रसिद्ध हो गया (*स्कंद० ६.१.१९४*)। **ब्रह्मा** के पर्य्याय०—स्वयंभू, चतुरानन, परमेष्ठी, पितामह, हिरण्यगर्भ, विधि, अब्जयोनि, कमलासन, रजोमूर्त्ति आदि।

ब्रह्मावर्त्त—सरस्वती और दृषद्वती नदियों के मध्य का प्रदेश, जहाँ आर्य लोग पहिले-पहिल आकर बसे थे। यहीं से उन्होंने ब्रह्मऋषि-देश पर अधिकार किया था (*मनु संहिता २*)। बाद में इसका नाम कुरुक्षेत्र पड़ा। इसकी राजधानी एक मत से करवीरपुर (*कालि० ४८, ४९*) और दूसरे मत से बर्हिष्मती (*भा० ३.२२*) थी।

ब्राचड़—एक **अपभ्रंश** भाषा जो सिंध में प्रचलित थी।

ब्राह्मण ग्रंथ—वेदों के व्याख्यात्मक, मुख्यतया कर्मकांड प्रतिपादक ग्रंथ। प्रधान ब्राह्मण इस प्रकार हैं—**ऋग्वेद** के *ऐतरेय* और *शांखायन*। *शुक्ल यजुर्वेद* के *शतपथ* और *काण्व* और *तैत्तिरीय संहिता* का *तैत्तिरीय ब्राह्मण*। *सामवेद* के *तांड्य महा-ब्राह्मण*, *पंचविंश जैमिनीय* तथा *दैवत ब्राह्मण*। *अथर्ववेद* का *गोपथ ब्राह्मण*। प्रायः इन ब्राह्मणों के अंतिम भाग आरण्यक और उपनिषद हैं। पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार इन ब्राह्मणों का र० का० ८००-५०० ई० पू० है।

ब्राह्मी लिपि—भारतवर्ष की वह प्रधान लिपि जिससे नागरी, बँगला आदि आधुनिक लिपियाँ निकली हैं। इस लिपि का सबसे प्राचीन नमूना अशोक के शिला-लेखों में मिलता है।

भ

भँड़ौवा संग्रह—**बेनी बंदीजन** (र० का० १७६२-१८२३ ई०) का एक हास्यपूर्ण काव्य, जिसमें समकालीन कवियों, कंजूस दानियों आदि का उपहास किया गया है। व्यंग्य संबंधी हिंदी-साहित्य का यह प्रथम ग्रंथ है।

भक्तनामावली—**ध्रुवदास** का एक ग्रंथ (१६१४ ई०), जिसमें १६ भक्तों का संक्षिप्त चरित्र वर्णित है। अंतिम नाम **नाभादास** का है।

भक्तमाल—**नाभादास** (१६०० ई०) का एक प्रसिद्ध ग्रंथ, जिसमें २०० भक्तों का परिचय ३१६ छप्पयों में दिया गया है। इन छप्पयों में कोई तिथि आदि का निर्देश नहीं है। भक्तों की कुछ प्रधान और प्रसिद्ध बातों का ही वर्णन किया गया है। इस ग्रंथ का उद्देश्य भक्तों के प्रति जनता में पूज्य-बुद्धि का प्रचार करना जान पड़ता है। भक्तों के संबंध में जो बातें कही गई हैं, वे इतनी अस्पष्ट हैं कि टीका की सहायता के बिना उनको समझा नही जा सकता। इसकी टीका **प्रियादास** ने १७१२ ई० में लिखी थी। यद्यपि नाभादास किसी संप्रदाय के प्रवर्त्तक नहीं हैं, तथापि उनके धार्मिक विचार लोगों की मौखिक परंपरा पर आश्रित हुए प्रतीत होते हैं, क्योंकि प्रियादास अपनी टीका में उन बातों का निर्देश करते हैं, जिनको नाभादास ने छोड़ दिया था।

भक्ति-काव्य—वह काव्य जिसमें परमेश्वर की भक्ति और उनका गुण-गान तथा प्रार्थना, स्तुति, उपासना आदि प्रधान विषय हों। हिंदी-साहित्य में इसकी रचना उस समय हुई जबकि भारत में मुसलमानों के पैर जम चुके थे। राजपूतों की शक्ति समाप्त-सी हो चुकी थी। अपने ही सामने मंदिरों का विध्वंस तथा मूर्त्तियों का अपमान देखकर जनता दुःखी हुई। धीरे-धीरे देश में निराशा छा रही थी। चारों ओर से निराश्रित जनता भगवान् को ही पुकारने लगी। भक्ति-काव्य की रचना में हिंदुओं के साथ मुसलमान भक्त कवियों ने भी सहयोग किया। संत-धारा हिंदुओं की ओर से हिंदू-मुसलिम एकता स्थापित करने की इच्छा का फल थी। **कबीर** इस धारा के प्रवर्त्तक थे। कबीर का पालन-पोषण यद्यपि मुसलमान के घर में हुआ था, तथापि रामानंद का शिष्यत्व ग्रहण करने के कारण उनपर हिंदू धर्म के संस्कार पर्याप्त मात्रा में पड़ चुके थे। प्रेम-धारा मुसलमान संतों और सूफियों की सद्भावना का फल थी। **जायसी** इस शाखा के प्रधान कवि थे। कुछ लोग अपना स्वत्व और धार्मिक व्यक्तित्व पृथक् रखना चाहते थे। ये लोग मुसलमानों से विरोध नहीं रखते थे, पर उनसे मिलने की इच्छा भी नहीं रखते थे। यह धारा दो उपधाराओं में बही। एक धारा के प्रमुख कवि कृष्ण-भक्त **सूरदास** थे और दूसरी के राम-भक्त **तुलसीदास**। इस विवेचन का यह अभिप्राय न समझा जाए कि भक्ति-काल मुसलमानों से प्रभावित है। 'हमारे कवियों ने कविता सामग्री अपने प्राचीन साहित्य से ली (दे० *गोरखनाथ, संत-काव्य*), किंतु उन्हें कुछ उत्तेजना मुसलमानों से अवश्य मिली।' इन चार शाखाओं के कवियों में पर्याप्त अंतर होते हुए भी कुछ बातें (नाम

की महत्ता, भक्ति-भावना का प्राधान्य, गुरु-भक्ति, शास्त्र-ज्ञान की अपेक्षा निजी अनुभव पर विशेष बल, अहंकार का त्याग, साधु-संगति की महिमा आदि) समान रूप से पाई जाती हैं। दे० *प्रेम-काव्य, संत-काव्य, राम-काव्य, कृष्ण-काव्य*।

भग—एक देवता। दक्ष का यज्ञ विध्वंस करते हुए **वीरभद्र** ने इनकी आँख फोड़ दी थी (*भा० ४.५.१७–२०*)।

भगण—दे० *गण*।

भगदत्त—नरकासुर का पुत्र और कौरव पक्ष का एक वीर। महाभारत-युद्ध में यह अर्जुन द्वारा मारा गया (*म० द्रो० २९*)।

भगवंतराय खीची (र० का० १७६० ई०)—असोथर-नरेश, एक राम-भक्त कवि और *रामायण* (अप्राप्त) तथा हनुमान की स्तुति संबंधी कविताओं के रचयिता।

भगवतीचरण वर्मा (१९०८ ई०-)—कवि और उपन्यासकार। इनकी मुख्य रचनाएँ *मधुकण* (१९३२), *प्रेम संगीत* (१९३७), *मानव* (१९४०) (काव्य-संग्रह), *चित्रलेखा* (१९३४), *तीन वर्ष* (१९३६), *टेढ़े मेढ़े रास्ते* (१९४६) (उपन्यास) आदि हैं। इनकी कविता में एक नैराश्य और अतृप्ति की झलक रहती है। इनके प्रेम में पार्थिवता कुछ अधिक है। 'नूरजहाँ की क़ब्र पर' नामक कविता में कथानक और भावावेश का अच्छा सम्मिश्रण है। देश की परिस्थितियों से प्रभावित होकर ये प्रगतिवाद की ओर बढ़े हैं। 'भैंसा गाड़ी' इनकी ऐसी ही कविता है। *चित्रलेखा* उपन्यास में यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि पाप और पुण्य के बीच में कोई भेदक रेखा नहीं खींची जा सकती। *टेढ़े मेढ़े रास्ते* में गांधीवाद, समाजवाद और आतंकवाद का तुलनात्मक अध्ययन है।

भगवतीप्रसाद वाजपेयी (१८९९ ई०-)—उपन्यासकार और कहानी-लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *प्रेम पथ*, *पतिता की साधना* (१९३६), *दो बहिनें* (१९४०), *निमंत्रण* (१९४२) (उपन्यास), *खाली बोतल* (१९४०), *पुष्करिणी* तथा *उतार चढ़ाव* (कहानी-संग्रह), *छलना* (नाटक) आदि हैं। "इनका प्रिय विषय एकमात्र प्रेम है। स्त्री एवं पुरुष का रूपाकर्षण, संमिलन की उत्कट अभिलाषा, अतृप्ति का ताप आदि वर्णन करने में इनकी वृत्ति अधिक रमती है। स्त्री के अंगों का व्योरेवार मनमोहक चित्रण इनके उपन्यासों में स्थल-स्थल पर मिलता है।" विशेष दे० शिवनारायण श्रीवास्तव-कृत *हिंदी-उपन्यास*।

भगवत् रसिक (र० का० १७७३-९३ ई०)—वृंदावन निवासी, टट्टी संप्रदाय के अनुयायी एक कवि, जिनके छप्पय आदि बड़े ही मनोहर और पवित्र-प्रेम के परिचायक हैं।

भगवद्गीता—*महाभारत* में भीष्मपर्व (२५-४२) के अंतर्गत एक प्रसिद्ध श्रेष्ठ प्रकरण। इसमें कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग का उपदेश है, जो कृष्ण ने अर्जुन का मोह छुड़ाने के लिये उन्हें युद्धस्थल में दिया था। हिंदू धर्म में यह सब संप्रदायों द्वारा मान्य ग्रंथ है। इसपर अद्वैतवादी, विशिष्टाद्वैतवादी, द्वैतवादी, शुद्धाद्वैतवादी, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य आदि सब आचार्यों ने अपने-अपने संप्रदाय की पुष्टि में भाष्य किये हैं। वर्त्तमान काल के विद्वानों में लोकमान्य तिलक का कर्मयोग प्रतिपादक *गीतारहस्य* नामक ग्रंथ अत्यंत प्रसिद्ध है। माधव-

राय सप्रे ने इस विशाल ग्रंथ का मराठी से हिंदी में सुंदर अनुवाद किया है।

भगवानदास खत्री (आ० का० १८०० ई०)—एक राम-भक्त लेखक और *महारामायण* (गद्यमय) के रचयिता।

भगवानदीन 'दीन' (१८६६-१९३० ई०)—ब्रज-भाषा और खड़ी बोली के कवि, *वीर-पंच-रत्न* (वीर चरित्रात्मक कविताएँ), *रामचंद्रिका*, *दोहावली*, *कवितावली* तथा *बिहारी सतसई* के टीकाकार। इन्होंने जन-सुबोध भाषा में प्राचीन वीरात्माओं की गुणावली का गान किया है। इनकी फुटकर रचनाएँ *नवीन बीन* में संगृहीत हैं।

भगीरथ—राजा दिलीप के पुत्र एक सूर्यवंशी राजा। कपिल के शाप से सगर (दे० यथा०) के साठ हज़ार पुत्रों के भस्म हो जाने के कारण, सगरवंशी राजाओं ने गंगा को पृथ्वी पर लाने के लिये बहुत प्रयत्न किया। अंत में भगीरथ घोर तपस्या करके गंगा (दे० यथा०) को पृथ्वी पर लाए और अपने पूर्वजों का उद्धार किया। इसलिये गंगा को 'भागीरथी' भी कहते हैं (*म० व० १०८, भा० ६.६*)। गंगा को पृथ्वी पर लाने के बाद भगीरथ ने फिर राज्य किया।

भट्टकेदार (वर्त्त० ११६८ ई०)—कवि और *जयचंद प्रकाश* (राजा जयचंद की प्रशंसा में लिखा एक ग्रंथ, जो अभी तक अप्राप्त है) के रचयिता।

भट्टनारायण (आ० का० ८४० ई०)—संस्कृत-नाटककार और *वेणीसंहार* (अनू०, *महाभारत* की एक कथा के आधार पर) के रचयिता।

भट्टि (आ० का० ल० ६१० ई०)—संस्कृत-कवि और *भट्टि काव्य* (अनू०, महाकाव्य, इसमें रावण-वध वर्णित है, किंतु इसका वास्तविक प्रयोजन संस्कृत व्याकरण के जटिल नियमों और प्रयोगों के उदाहरणों को प्रस्तुत करना है) के रचयिता। *भट्टि काव्य* में प्रायः ३५०० श्लोक २० सर्गों में आबद्ध हैं।

भतरौड़—मथुरा और वृंदावन के मध्य में एक स्थान जहाँ कृष्ण ने चौबाइनों से भात मँगवा कर खाया था। यथा—भटू जमुना भतरौड़ लौं औंड़ी—*रसखान*।

भद्र—रामचंद्र का एक सभासद। दे० *दुर्मुख*।

भद्रकाली—दुर्गा की एक मूर्त्ति जो १६ हाथों वाली मानी जाती है।

भद्रसेन—दे० *चंदन मलयगिरि री बात*।

भद्रा—केकयराज की एक कन्या और कृष्ण की एक पत्नी (*भा० १०.६१*)।

भयानक—भयंकर वस्तु के कारण उत्पन्न होने वाला, कृष्ण वर्ण, काल देवता तथा स्त्री और नीच पुरुषों के आश्रय वाला रस। भय स्थायी-भाव; भयकारक व्यक्ति आलंबन, भयकारिणी चेष्टाएँ उद्दीपन; स्वेद कंप, रोमांचादि अनुभाव; त्रास चितादि इसके संचारी-भाव हैं। उ०—नभ से झपटत बाज लखि, भूल्यो सकल प्रपंच। / कंपित तन व्याकुल नयन, लावक हिल्यो न रंच॥ यहाँ बाज आलंबन, उसका झपटना उद्दीपन, चेहरे पर हवाइयाँ उड़ना, शरीर काँपना, नेत्र व्याकुल होना आदि अनभाव और आवेग, मोह, त्रास, दैन्य आदि संचारी भाव तथा भय स्थायी-भाव है।

भरत—१ राजा दशरथ तथा कैकेयी के पुत्र (*वा० रा० बा० १८*), और **मांडवी** के पति (७३)। कैकेयी ने इनको राज्य दिलवाया था (*वा० रा०*

अयो० ११)। अपने पिता के प्राणांत के उपरांत राम को अयोध्या लौटाने के लिये ये चित्रकूट गये थे। राम के अयोध्या न आने पर, उनकी पादुका को सिंहासन पर रखकर उनके अयोध्या लौट आने तक ये शासन करते रहे (*१०४*)। राम के लौटने पर इन्होंने उन्हें राज्य सौंप दिया। तक्ष और पुष्कर नामक इनके दो पुत्र थे। २ **शकुंतला** से उत्पन्न दुष्यंत के पुत्र। ये बड़े प्रतापी और सार्वभौम राजा हुए। बचपन में ही ये इतने वीर थे कि सिंह के बच्चों के साथ खेला करते थे। सबको दमन करने के कारण इनका नाम 'सर्वदमन' पड़ा। विदर्भराज की तीन कन्याओं से इनका विवाह हुआ था। महर्षि कण्व इनके पुरोहित थे (*म० आ० ७४, भा० ९.२०*)। ३ राजा ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र। इन्होंने कोटि वर्ष तक दया, धर्म और भक्ति-मार्गावलंबी होकर राज्य किया और फिर वन को चले गये। इनके राज्य में पूर्णतया सुख और शांति थी। पुराणानुसार इन्हीं के नाम पर भारत देश का नाम **भारतवर्ष** पड़ा (*भा० ५.४, वायु० १.३३.५२, ब्रह्मांड० २.१४.६२, विष्णु० २.१.३२*)। तपस्या करते हुए वन में इनका एक मृग के बच्चे से प्रेम हो गया। इसी कारण अगले जन्म में इन्हें मृग होना पड़ा। उससे अगले जन्म में ये ब्राह्मण बने। भगवान् की भक्ति में ये ऐसे लीन रहते थे कि ये अंध, बधिर और मूक की भाँति जड़वत् भ्रमण करते थे। इसीलिये इन्हें 'जड भरत' भी कहते हैं। एक बार राजदूत इनकी बलि देना चाहते थे, किंतु इनकी योग्यता देखकर उन्होंने इनका संरक्षण किया (*भा० ५.७-१२, विष्णु० २.१३-१४*)। ४ एक प्रसिद्ध मुनि जो *नाट्य-शास्त्र* (दे० यथा०) के प्रणेता माने जाते हैं।

भरतवाक्य—नाटक के अंत में आने वाले आशीर्वाद-युक्त पद्य। यह उस समय उपस्थित पात्रों में श्रेष्ठ पात्र के द्वारा नायक को फल-प्राप्ति के साथ-साथ दिये गये आशीर्वाद के रूप में प्रयुक्त होता है। यूनानी नाटकों में कोरस द्वारा वस्तु के उपसंहार की यह क्रिया संपन्न होती थी।

भरथरी—दे० *भर्तृनाथ*।

भरद्वाज—१ एक प्रसिद्ध ऋषि। इनका आश्रम प्रयाग के निकट था। वनवास के समय रामचंद्र सर्वप्रथम इन्हीं के आश्रम में आए थे, पर इनका आश्रम अयोध्या के निकट समझ कर वे चित्रकूट चले गये। ये अद्वितीय रामानुरागी थे (*वा० रा० अयो० ५४-५५*)। २ **द्रोणाचार्य** के पिता एक ऋषि।

भर्तृनाथ (वर्त्त० ई० १३ वीं)—एक राजा जिन्होंने अपनी रानी पिंगला से माता कहकर भिक्षा प्राप्त की, और **गोरखनाथ** का शिष्यत्व ग्रहण किया। इन्हें भरथरी या भर्तृहरि भी कहते हैं। इनके जीवन की घटनाओं के गीत बनाकर आजकल जोगी लोग गाया करते हैं।

भर्तृहरि—एक संस्कृत कवि। *शतकत्रय* (*श्रृंगार-, नीति* और *वैराग्य*; अनू० *त्रिशतक*) के लेखक। कुछ विद्वान् इन भर्तृहरि और *वाक्यपदीय* के रचयिता भर्तृहरि (मृत्यु ल० ६५० ई०) को एक ही मानते हैं। दूसरे विद्वान् इनको पृथक्-पृथक् मानते हैं।

भवन—एक अत्यंत दयालु भक्त, जो जाति से राजपूत थे।

भवभूति (आ० का० ११४८ ई०)—कन्नौज-नरेश यशोवर्मा के राजकवि, संस्कृत के प्रसिद्ध नाटककार। *महावीर चरित* (अनू०, राम-विवाह

से लेकर राम के राज्याभिषेक तक का वर्णन), *उत्तररामचरित* (अनू०, राज्याभिषेक के पश्चात् राम का जीवन चरित्र) तथा *मालती माधव* (मालती और माधव की प्रेम-कथा) के रचयिता।

भस्माकूट—एक पर्वत जिसपर शिव का वास माना जाता है।

भस्मासुर (वृकासुर)—एक दैत्य। इसने शिव से वर प्राप्त किया था कि यह जिसके सिर पर हाथ रखेगा, वह भस्म हो जाएगा। पार्वती को प्राप्त करने के लिये इसने शिव को ही भस्म करना चाहा, किंतु विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर नृत्य के बहाने से इसका हाथ इसके ही सिर पर रखवा दिया, जिससे यह स्वयं भस्म हो गया (*भा० १०.८८*)।

भागवत—अठारह पुराणों में एक प्रसिद्ध पुराण। वैष्णव संप्रदायी बड़ी भक्ति से इसकी पूजा किया करते हैं। इस पुराण की रचना इतनी सुंदर और मधुर है कि साहित्य जगत् में भी इसने उच्च स्थान प्राप्त किया है। कृष्ण-माहात्म्य का प्रचार और मानव-हृदय में धर्मभाव का जागरण *भागवत* के ये ही दो प्रधानतम उद्देश्य हैं। *भागवत* के दशम स्कंध में जो कृष्ण की लीला का वर्णन किया गया है, वह अत्यंत मधुर है। हिंदी में इस स्कंध के आधार पर अनेक ग्रंथ लिखे गये, जैसे *सूरसागर*, *रासपंचाध्यायी* आदि। यह पुराण द्वादश स्कंधों में विभक्त है। दे० *पुराण*।

भाट—१ राजाओं का यश वर्णन करने वाला कवि। २ इस नाम से उक्त जाति।

भाण—**रूपक** का एक प्रधान भेद। इसमें अंक एक, हास्यरस प्रधान और पात्र भी एक होता है जो ऊपर को मुँह उठाकर आकाशभाषित के ढंग से किसी कल्पित पात्र से बातचीत करता है।

भान कवि—राजा जोरावरसिंह के पुत्र और राजा रनजोरसिंह बुंदेले के आश्रित एक रीति-कवि तथा *नरेंद्र भूषण* (१७८८ ई०) के रचयिता।

भानुदास (वर्त्त० १४९८ ई०)—एक महाराष्ट्री भक्त और कवि, जिन्होंने हिंदी कविता में राम और श्याम दोनों को समान रूप से माना है।

भानुप्रताप—**केकय** देश का एक राजा। कालकेतु राक्षस छल द्वारा इसका पुरोहित बन गया। राजा ने जब ब्रह्मभोज किया, तब कालकेतु ने उसमें मनुष्यादि का मांस पकवा दिया। आकाशवाणी द्वारा पता लगने पर ब्राह्मणों ने राजा को सपरिवार राक्षस बन जाने का शाप दिया। यह राजा दूसरे जन्म में **रावण** हुआ।

भानुमती—राजा भोज की कन्या और विक्रमादित्य की रानी, जो अत्यंत रूपवती और इंद्रजाल-विद्या की ज्ञाता थी।

भारत-दुर्दशा—**भारतेंदु हरिश्चंद्र** का एक रूपक (१८७६ ई०), जिसमें भारत के अतीत गौरव की स्मृति है, अश्रुजनक वर्त्तमान है और भविष्य-निर्माण की भव्य प्रेरणा है। इसके पात्र भारत, दुर्दैव, दुर्दशा, मदिरा आदि हैं।

भारत-भारती—**मैथिलीशरण गुप्त** का एक काव्य (१९१२ ई०), जिसमें भारत के अतीत काल की गौरवपूर्ण अवस्था तथा वर्त्तमान काल की विपन्नावस्था पर प्रकाश डाला गया है। साथ

ही उज्ज्वल भविष्य की ओर भी संकेत है। यह अपने समय की सबसे प्रसिद्ध रचना थी।

भारतवर्ष—वह प्रदेश जो उत्तर में हिमालय, दक्षिण में समुद्र, पूर्व में किरात और पश्चिम में यवनों के प्रदेश से घिरा हो (*विष्णु० २.३, मार्क० ५७*)। इस प्रदेश का 'भारतवर्ष' नाम भरत (दे० *यथा०*) नामक एक सम्राट् के नाम पर पड़ा। भरत से पूर्व इस प्रदेश का नाम 'अजनाभवर्ष' (*भा० ५.७*) और 'हेमवतवर्ष' (*लिंग० १.४६*) था। एक राजा के आधीन होने से 'भारतवर्ष' नाम एक राजनीतिक धारणा का प्रतीक है, जबकि **'जंबुद्वीप'** एक भौगोलिक नाम है। दे० *सिंधु*।

भारती वृत्ति—दे० *वृत्ति*।

भारतेंदु—दे० *हरिश्चंद्र, भारतेंदु*।

भारतेंदु हरिश्चंद्र—दे० *हरिश्चंद्र, भारतेंदु*।

भारवि (आ० का० ६३४ ई०)—विष्णुवर्द्धन के सभापंडित, संस्कृत-कवि और *किराता-र्जुनीयम्* के रचयिता। इस कवि की प्रसिद्धि अर्थगौरव अर्थात् महत्त्वपूर्ण उक्तियों के कारण है जैसे कि *उपमाकालिदासस्य भारवेरर्थ-गौरवम्'*। इस श्लोकपाद में कहा गया है।

भाषा काव्य संग्रह—महेशदत्त शुक्ल का हिंदी साहित्य के इतिहास से संबंध रखने वाला ग्रंथ (१८७३ ई०), जिसमें पहिले कुछ प्राचीन कवियों की कविताएँ संगृहीत हैं, फिर उन्हीं कवियों के जीवन-चरित्र तथा समय आदि संक्षेप में दिये गये हैं।

भास (समय ५०० ई० पू० ?)—संस्कृत नाटककार। *दूतवाक्य, कर्णभार, दूत घटोत्कच, उरु-भंग, मध्यम व्यायोग* (अनू०), *पंचरात्र* (अनू०), *अभिषेक, बालचरित, अविमारक, प्रतिमा* (अनू०), *प्रतिज्ञा यौगंधरायण* (अनू०), *स्वप्न वासवदत्तं* (अनू०), तथा *चारुदत्त* के रचयिता। इनकी गणना संस्कृत के सर्व-प्रथम नाटककारों में है। **कालिदास** ने इनका नाम बड़े आदर से लिया है। कुछ समय पूर्व यह विवाद चला था कि उपरोक्त नाटकों के रचयिता भास हैं, या कोई अन्य। पर अब अधिकांश विद्वानों का यह मत है कि इन नाटकों के रचयिता भास ही हैं।

भिखारीदास (र० का० १७२८-५० ई०)—प्रतापगढ़-नरेश पृथ्वीसिंह के भ्राता हिंदूपतिसिंह के आश्रित एक रीति-कवि। *रससारांश, छंदोर्णव-पिंगल* (१७४२), *काव्य निर्णय* (१७४६), *शृंगार निर्णय* (१७५०), *नाम प्रकाश* (कोष), *विष्णुपुराण भाषा, छंद प्रकाश, शतरंजशतिका* तथा *अमरप्रकाश* (संस्कृत *अमरकोष* भाषा-पद्य में) के रचयिता। इनका *काव्य निर्णय* नामक ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है। इन्होंने सभी काव्यांगों पर विवेचन किया है। इनकी भाषा साहित्यिक और परिमार्जित है। इनकी गणना उच्च-कोटि के कवियों में है। ये 'दास' के नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

भीउँ—युधिष्ठिर के अनुज, भीमसेन। यथा—जैसे जरत लच्छ घर साहस कीन्हा भीउँ—*जायसी*।

भीखा (१७१३-६३ ई०)—**गुलाल साहब** के शिष्य और भीखा पंथ के प्रवर्त्तक, आज़मगढ़ निवासी एक संत, जिनके सिद्धांतों का *राम जहाज* ग्रंथ में निरूपण है।

भीम—१ पांडु के क्षेत्रज, तथा वायु और कुंती के औरस पुत्र। ये पाँच पांडवों में से एक थे। ये बड़े पराक्रमी और बलवान् थे। गदा-युद्ध के लिये ये प्रसिद्ध हैं। यह कला इन्होंने बल-

राम से सीखी थी । अपने जन्म के समय जब ये अपनी माता की गोद से पत्थर पर गिरे थे, तब वह पत्थर टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो गया था । ईर्ष्या से दुर्योधन ने इन्हें विष देकर नदी में फेंक दिया था, किंतु ये नागलोक में जा पहुँचे और वहाँ से दस हज़ार हाथियों का बल प्राप्त कर घर लौटे (*म० आ० १२८-२६*) । **लाक्षागृह** से पांडवों की इन्होंने रक्षा की थी । हिडिंब (दे० यथा०) राक्षस का वध करके इन्होंने उसकी बहिन हिडिंबा से विवाह किया था (*१५२-५५*) । अज्ञातवास (दे० यथा०) के समय इन्होंने **कीचक** का वध किया था । द्रौपदी (दे० यथा०) का अपमान करने वाले **दुर्योधन** की इन्होंने जाँघ तोड़ी और **दुःशासन** का रक्तपान किया (*म० क० ८३*) । **जरासंध** और एक सौ कौरवों का वध इन्होंने ही किया था । महाप्रस्थान के समय ये भी युधिष्ठिर के साथ थे (*म० महा० २*) । दे० *जटासुर, बक, बर्बरीक, भीम के हाथी, नहुष, अश्वत्थामा* । 'भीम' शब्द अब एक बलवान् मनुष्य के लिये प्रयुक्त होने लगा है। २ विदर्भ देश के राजा और दमयंती के पिता। ३ गुजरात शासक (१०२२-६३ ई०) ।

भीम के हाथी—एक मुहावरा । कहा जाता है कि भीम ने सात हाथी आकाश में फेंक दिये थे, जो आज तक वायुमंडल में घूमते हैं । इस मुहावरे का प्रयोग ऐसे पदार्थ या व्यक्ति के लिये होता है, जो कभी न लौटे । यथा—अब मन भयौ भीम के हाथी सुपने अगम अपार—*सूर* ।

भीष्म—कुरुदेश के राजा शांतनु और गंगा (दे० यथा०) के पुत्र (*म० आ० ६३*) । दे० *अष्टवसु* । शांतनु दासराज की कन्या सत्यवती पर आसक्त थे । दासराज ने यह शर्त लगाई थी कि सत्यवती का पुत्र ही राज्य का अधिकारी बने । दासराज की यह बात सुनकर शांतनु अंतस्तप्त होने लगे । पिता की इस चिंता को दूर करने के लिये देवव्रत ने भीष्म प्रतिज्ञा की कि मैं आजन्म ब्रह्मचारी रहूँगा । इसपर शांतनु ने इन्हें वर दिया कि तुम्हारी मृत्यु तुम्हारी इच्छानुसार होगी (*१००*) । अपने पिता के सुख के लिये प्रतिज्ञानुसार ये आजन्म ब्रह्मचारी रहे और कभी राज्य करने की इच्छा नहीं की । महाभारत-युद्ध में प्रथम दस दिन तक ये कौरवों के सेनापति रहे । दस दिन युद्ध करने पर भीष्म ने अर्जुन के बाण से व्यथित होकर शरशय्या ग्रहण की (*म० भी० ११८-१६*) । दे० *शिखंडी* । उस समय सूर्य दक्षिणायन था, इसलिये इन्होंने प्राण-त्याग नहीं किया । मृत्युशय्या पर पड़े-पड़े इन्होंने युधिष्ठिर को अत्यंत शिक्षाप्रद उपदेश दिये थे, जो *म० शां०* में हैं। भीष्म के पर्य्याय०—गंगापुत्र, गांगेय, पितामह, शांतनुसुत ।

भीष्म अंतर्वेदी (आ० का० १६२४ ई०)—*श्रीमद्भागवत* के दोहा-चौपाई में अनुवादक ।

भीष्मक—विदर्भ-नरेश जो कृष्ण की पत्नी रुक्मिणी के पिता थे (*भा० ३.३.३, १०.५२*) ।

भुक्तिवाद—रस की व्याख्या के ४ संप्रदायों में से एक । दे० *रस संप्रदाय* ।

भुजंगप्रयात—यचौ युक्त ताता भुजंगप्रयाता (४ यगण=१२ व० छंद) । उ०—निराकार आकार तेरा नहीं है, किसी भाँति का मान मेरा नहीं है ।

भुजंगी—य तीनों लगाके भुजंगी रचौ (य य य ल ग=११ व० छंद) । उ०—न माधुर्य का लेश भी पार है, / महामोद भागीरथी सी भारी ।

भुवनेश्वर—एक प्रसिद्ध तीर्थ, जो उड़ीसा में पुरी के पास है।

भुवाल (ई० दसवीं शती)—*भगवद्गीता* के दोहा, चौपाई में अनुवादक। भाषा और छंद की दृष्टि से इनका समय १७ वीं शती प्रतीत होता है।

भुशुंडी—दे० *काक भुशुंडी*।

भुसुकपा (वर्त्त० ८०० ई०)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

भूपति (राजा गुरुदत्तसिंह)—अमेठी-नरेश, एक रीति-कवि और *सतसई* (१७३४ ई०), *कंठाभूषण* तथा *रसरत्नाकर* के रचयिता। ये सहृदय और काव्य-मर्मज्ञ थे।

भूरिश्रवा—कौरव पक्ष का एक चंद्रवंशी राजा, जो महाभारत-युद्ध में सात्यकि द्वारा मारा गया (*म० द्रो० १४३*)।

भूर्जपत्र—एक वृक्ष। इसकी छाल ग्रंथ, लेख आदि लिखने में काम आती थी। उत्तर भारत के हस्तलिखित संस्कृत ग्रंथ प्रायः इसी पर लिखे मिलते हैं। कवि-प्रसिद्धि के अनुसार इस वृक्ष का वर्णन हिमालय में होना चाहिये।

भूषण--तिकवाँपुर निवासी, वीररस के प्रसिद्ध कवि, **मतिराम** व **चिंतामणि** के भाई, छत्रपति **शिवाजी** तथा पन्ना-नरेश **छत्रसाल** के आश्रित। इन्हें चित्रकूट के सोलंकी राजा रुद्र ने 'कवि भूषण' की उपाधि दी थी। तभी से ये 'भूषण' के नाम से प्रसिद्ध हो गये। इनके जन्म तथा समय के संबंध में मतभेद है। **शिवसिंह सेंगर** ने इनका जन्म १६८१ ई० (सं० १७३८) माना है और मिश्रबंधुओं ने १६३५ ई० (सं० १६९२) बतलाया है। इनका वास्तविक नाम किसी को ज्ञात नहीं। शिवाजी से इन्हें एक कविता पर लाखों रुपये, कई गाँव तथा हाथी प्राप्त हुए थे। छत्रसाल ने एक बार इनकी पालकी में अपना कंधा लगाया था। इनके *शिवराज-भूषण*, *शिवा बावनी* तथा *छत्रसाल दशक* ये तीन ग्रंथ हैं।

इन्होंने वीर रस की कविता की है और शिवाजी में चारों प्रकार का वीरत्व दिखाया है। इनको हिंदुत्व का पूर्ण अभिमान था। काव्य के साथ-साथ इन्होंने इतिहास का अच्छा निर्वाह किया है। इनकी वाणी में ओज गुण की प्रधानता है, किंतु वह कुछ अव्यवस्थित-सा है। इन्होंने शब्दों की तोड़-मरोड़ बहुत की है। कहीं-कहीं इनके अलंकारों के लक्षण कुछ अस्पष्ट और दूषित भी हैं। इनकी भाषा तो ब्रज है, पर उसे सुबोध बनाने के लिये उसमें संस्कृत तथा अरबी, फारसी के शब्दों के लेने में भी संकोच नहीं किया गया है। विशेष दे० देवचंद्र विशारद-कृत *शिवराज भूषण*, भागीरथ प्रसाद-कृत-*भूषण विमर्श*।

भृंग—एक पतिंगा जो कीड़े का ढोला पकड़ कर उसे मिट्टी से ढक देता है। यह उसपर बैठकर और डंक मार-मार कर इतने ज़ोर से भिन्न-भिन्न शब्द करता है कि वह कीड़ा भी इसी की तरह का हो जाता है। यथा—भइ मति कीट भृंग की नाईं—*तुलसी*।

भृगु—ब्रह्मा के मानसपुत्र एक प्रसिद्ध ऋषि। इन्होंने ब्रह्मा, विष्णु और शिव की परीक्षा की थी कि उनमें कौन बड़ा है। शिव पार्वती के साथ शयन कर रहे थे, अतः उन्हें कहा कि तुम 'भग-लिंग' हो जाओ और इसी रूप में तुम्हारी पूजा हो। ब्रह्मा अपने कार्य में व्यस्त होने से इन्हें मिल न सके, अतः उन्हें कहा कि तुम्हारी कोई भी पूजा न करे। विष्णु सो रहे थे,

उन पर इन्होंने पाद-प्रहार किया। विष्णु क्रोधित न हुए और उनसे पूछा कि आपको कहींचोट तो न आई? इससे भृगु प्रसन्न होगये और विष्णु को श्रेष्ठ घोषित कर दिया (*भा० १०.८९*)। इनका एक आश्रम बलिया में था। इसी बलिया में राजा **बलि** की राजधानी थी।

भृगुकच्छ—बड़ौच नगर का प्राचीन नाम। कहा जाता है कि **बलि** ने यहाँ यज्ञ किया था, जब विष्णु ने वामन रूप में उनका राज्य दान में ले लिया था।

भृगुरेखा—विष्णु की छाती पर वह चिह्न, जो **भृगु** मुनि के पाद-प्रहार से हुआ था (*भा० १०. ८९*)।

भेंट—'किसी लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति के साथ पत्र-कार और लेखक की भेंट के बाद उनसे पूछे गये प्रश्नों के आधार पर लिखा गया उसके व्यक्तित्व पर संक्षिप्त लेख।'

भेदकातिशयोक्ति—दे० *अतिशयोक्ति*।

भेदपा (वर्त्त० ई० नवीं शती)—एक वज्र-यान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

भेदाभेद—दे० *द्वैताद्वैतवाद*।

भैंसासुर—दे० *महिषासुर*।

भैरवी—तांत्रिकों के अनुसार एक देवी, जो महाविद्या की एक मूर्त्ति मानी जाती है। इसे चामुंडा भी कहते हैं।

भोगवता—१ पाताल गंगा। २ *महाभारत* के अनुसार एक प्राचीन नदी का नाम।

भोज (९४३-१०२२ ई०)—मालवे के एक प्रसिद्ध राजा। कहते हैं कि भोज बहुत वीर, प्रतापी, संस्कृत के पंडित, गुणग्राही, कवि, दार्शनिक और ज्योतिषी थे। इनके *चंपूरामायण* आदि ग्रंथ प्राप्त हैं। इनकी सभा सदा बड़े-बड़े पंडितों से सुशोभित रहती थी। भोज के विषय में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं, जो *भोजप्रबंध* नामक एक संस्कृत ग्रंथ में संगृहीत हैं।

भोजपत्र—दे० *भूर्जपत्र*।

भोजपुरी—**मागधी** अपभ्रंश से उत्पन्न वह भाषा, जो पश्चिमी बिहार और बनारस आदि ज़िलों में प्रचलित है। इस भाषा के मधुर गीत प्रसिद्ध हैं।

भोटिया—भूटान देश की भाषा।

भौंरा—एक पतिंगा जिसका रंग प्रायः नीला-पन लिये चमकीला काला होता है। इसकी पीठ पर दोनों परों की जड़ के पास का प्रदेश पीले रंग का होता है। यह गुंजार करता हुआ उडा करता है और फूलों का रस पीता है। साहित्य में यह नायक तथा प्रेमी का प्रसिद्ध उपमान है। कवि-प्रसिद्धि है कि यह चंपा के फूल पर नहीं बैठता।

भौमासुर—दे० *नरकासुर*।

भ्रम—**भ्रांति** नामक अर्थालंकार का अन्य नाम।

भ्रमरगीत—वह गीत या काव्य जिसमें भ्रमर को संबोधन करके **उद्धव** के प्रति ब्रज की गोपियों का उपालंभ हो। **सूरदास** से लेकर **जगन्नाथदास 'रत्नाकर'** तक ब्रज-भाषा के अनेक कवियों ने *भ्रमरगीत* लिखे। दे० *नंददास*। भ्रमरगीतों में ज्ञान की अपेक्षा प्रेम व भक्ति का उत्कर्ष दिखाया गया है।

भ्रमरविलसिता—मो भा न लगा, भ्रमरविल-सिता (म भ न ल ग=११ (४, ७) व० छंद)।

उ०—मैं भै नाला, गुरु जन में । रैहौं माधो, चरण शरण में ।

भ्रांति—एक अर्थालंकार जिसमें किसी वस्तु को, दूसरी वस्तु के साथ उसकी समानता देखकर, भ्रम से वह दूसरी वस्तु ही समझ लेना वर्णित होता है । उ०—नाक का मोती अधर की कांति से, / बीज दाडिम का समझ कर भ्रांति से, / देख उसको ही हुआ शुक मौन है, / सोचता है अन्य शुक यह कौन है । यहाँ मोती में अनार और नाक में तोते का चमत्कारपूर्ण सादृश्यमूलक भ्रम है ।

म

मंकणक—एक तपस्वी ब्राह्मण जो अपने हाथ से रक्त की धारा निकलते देख इतने प्रसन्न हुए कि भावावेश में नाचने लगे । इनकी तपस्या के प्रभाव से संपूर्ण जगत् इनके नृत्य की गति में गति मिलाकर नाचने लगा । अंत में शिव ने इन्हें दर्शन दिये और इन्होंने अपना नृत्य बंद कर दिया (*म०,व० ८३, श० ३८ आदि*)।

मंगल—शंकर के एक पुत्र । शंकर ने इनकी स्थापना नवग्रह में की थी । पृथ्वी ने इनका पालन किया, अतः इन्हें 'भौम' भी कहते हैं (*शिव० रुद्र० पा० १०*) । पर्य्याय०—अंगारक, कुज, भूमिसुत, लोहितांग ।

मंगलाप्रसाद पारितोषिक—प्रति वर्ष १२००) रुपये का यह पुरस्कार हिंदी की किसी मौलिक रचना पर दिया जाता है । श्री गोकुलचंद रईस इस पारितोषिक के दाता हैं । इसका प्रारंभ १९२२ ई० में हुआ । अब तक निम्न विद्वानों को यह पुरस्कार प्राप्त हो चुका है—पद्मसिंह शर्मा (*बिहारी सतसई की टीका*), गौरीशंकर हीराचंद ओझा (*प्राचीन लिपिमाला*), प्रो० सुधाकर (*मनोविज्ञान*), त्रिलोकीनाथ वर्मा (*हमारे शरीर की रचना*), वियोगी हरि (*वीर सतसई*), प्रो० सत्यकेतु (*मौर्य साम्राज्य का इतिहास*) गंगाप्रसाद उपाध्याय (*आस्तिकवाद*), डा० गोरखप्रसाद (*फोटोग्राफी की शिक्षा*), मुकुंद स्वरूप (*स्वास्थ्य विज्ञान*), जयचंद विद्यालंकार (*भारतीय इतिहास की रूपरेखा*), चंद्रावती लखनपाल (*शिक्षा मनोविज्ञान*), रामदास गौड़ (*विज्ञान हस्तामलक*), अयोध्यासिंह उपाध्याय (*प्रिय-प्रवास*), मैथिलीशरण गुप्त (*साकेत*), जयशंकर प्रसाद (*कामायनी*), रामचंद्र शुक्ल (*चिंतामणि*), वासुदेव उपाध्याय (*गुप्त साम्राज्य का इतिहास*), संपूर्णानंद (*समाजवाद*), बलदेव उपाध्याय (*भारतीय दर्शन*), महावीरप्रसाद श्रीवास्तव (*सूर्य-सिद्धांत का विज्ञान भाष्य १-२*), शंकरलाल गुप्त (*क्षय रोग*), महादेवी वर्मा (*आधुनिक कवि, नीरजा, और रश्मि*), हजारीप्रसाद द्विवेदी (*कबीर*), डा० रघुवीरसिंह (*मालव में युगांतर*) कमलापति त्रिपाठी (*बापू और मानवता*), संपूर्णानंद (*चिद्विलास*) आदि ।

मंच निर्देश—नाटक के लिखित अंश में नाटककार द्वारा दिये गये निर्देश । प्राचीन नाटकों में ये निर्देश अत्यंत सूक्ष्म रहते थे, पर अब नवीन नाटकों (विशेषतः रेडियो-नाटकों और एकांकी नाटकों) में ये बहुत अधिक—दो-तीन पृष्ठ तक—लंबे होने लग गये हैं ।

मंचित (र० का० १७६३ ई०)—मऊ निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि और *कृष्णायन* तथा *सुरभिदान लीला* के रचयिता ।

मंछाराम—जोधपुर निवासी एक डिंगल-कवि और *रघुनाथ रूपक* (१८०६ ई०) (एक रीति-ग्रंथ जिसके उदाहरणों में *रामायण* की कथा क्रम से कही गई है) के रचयिता ।

मंजुभाषिणी—स ज सा ज गा कहत मंजुभाषिणी (स ज स ज ग=१३ व० छंद)। उ०—सजि साज गौरि सदनै गई लिये। कर पुष्प माल सिय माँगती हिये। इसे कनकप्रभा, सुनंदिनी, प्रबोधिता और कोमलालापिनी भी कहते हैं।

मंझन—एक सूफ़ी कवि और *मधुमालती* (१५०५ ई०, प्रेम-काव्य) के रचयिता। दे० *प्रेम-काव्य*।

मंडन (वर्त्त० १६५६ ई०)—जैतपुर (बुंदेलखंड) निवासी, एक रीति-कवि। *रस-रत्नावली रस विलास*, *जनक पचीसी*, *जानकी जू को ब्याह* तथा *नैन-पचासा* के रचयिता। इनके पद तथा कवित्त और सवैये भी मिलते हैं।

मंडूकप्लुति न्याय—'मेढक की कूद'। सहसा प्रस्तुत विषय छोड़कर किसी अन्य विषय की ओर थोड़ी देर के लिये मुड़ना।

मंत्रयान—बौद्ध धर्म की **महायान** शाखा का परिवर्तित रूप, जिसमें तंत्र-मंत्र की प्रधानता थी। यह शाखा ४००-७०० ई० के लगभग अपने प्रचार में व्यापक रूप से कार्य करने लग गई थी।

मंथरा—कैकेयी की कुबड़ी चेरी, जिसने उसे भड़का कर रामचंद्र को वनवास दिलवाया था (*वा० रा० अयो० ७-६*)।

मंदर (मंदराचल)—दे० *समुद्रमंथन*।

मंदराचल—दे० *समुद्रमंथन*।

मँदला—दे० *अनाहद*।

मंदाकिनी—१ कालीगंगा वा मंदाग्नि नदी, जो केदार पर्वत से निकलती है। २ चित्रकूट पर्वत के समीप से बहने वाली नदी (*वा० रा० अयो० ६५*)।

मंदाक्रांता—मंदाक्रांता, कर सुमति को, मां भनो तात गा गा (म भ न त त ग ग= १७ (४, ६, ७) व० छंद)। उ०—जो दो प्यारे हृदय मिलके एक ही हो गये हैं, / क्यों धाता ने विलग उनके गात को यों किया है।

मंदार—एक पुष्प। कवि-प्रसिद्धि है कि रमणियों के कोमल वचनों से यह पुष्पित हो जाता है।

मंदोदरी—रावण की पटरानी, मय दानव और हेमा नामक अप्सरा की कन्या तथा मेघनाद की माता (*स्कंद० ५.३.३५*)। इन्होंने रावण से अनुरोध किया था कि वह सीता को लौटा दे। ये **पंचकन्याओं** में से एक हैं।

मकरध्वज—**अहिरावण** का एक द्वारपाल और हनुमान का पुत्र। हनुमान के स्वेद से मिला हुआ जल एक मकरी द्वारा पिये जाने से इसका जन्म हुआ था (*आ० रा० सारकांड ११*)।

मकराक्ष—खर का एक राक्षस पुत्र, जो पंचवटी युद्ध में रामचंद्र द्वारा मारा गया (*वा० रा० यु० ७८-७६*)।

मकरी—एक अप्सरा जो दुर्वासा के शाप से मकरी बन गई थी। संजीवनी लाते समय हनुमान जब जलाशय में स्नान करने लगे, तब उनके चरण-स्पर्श से यह फिर अप्सरा बन गई थी।

मक्का—अरब में मुसलमानों का एक प्रसिद्ध तीर्थ, जहाँ **मुहम्मद** का जन्म हुआ था। हज करने के लिये मुसलमान यहीं जाते हैं।

मगण—दे० *गण*।

मगध—दक्षिण बिहार। **जरासंध** के समय इसकी राजधानी गिरिव्रजपुर (वर्त्त० राजगिर) थी। मगध-नरेश अजातशत्रु ने अपनी राजधानी पाटलिपुत्र बनाई।

मगहर—गंगा के पार और काशी के संमुख एक स्थान, जहाँ कबीर का देहांत हुआ था। **त्रिशंकु** की छाया पड़ने के कारण यह स्थान अपवित्र माना जाता है। विश्वास है कि इस स्थान पर मृत्यु प्राप्त करने वाला पुण्यक्षीण होकर नरकवासी होता है। **कबीर** ने इस परंपरा पर अपना अविश्वास प्रकट करने के लिये यह स्थान चुना था। दे० *काशी*। गोरखपुर के समीप भी मगहर नामक एक ग्राम है। कुछ लोगों का विश्वास है कि कबीर का देहांत यहीं हुआ था।

मगही—**मागधी** अपभ्रंश से उत्पन्न वह भाषा जो बिहार में बोली जाती थी।

मघ—पुराणानुसार एक द्वीप, जिसमें म्लेच्छ रहते हैं।

मघवाप्रस्थ—**इंद्रप्रस्थ** नामक प्राचीन नगर। यथा—फिरि आए हस्तिनापुर पारथ **मघवाप्रस्थ** बसायो—*सूर*।

मघा—एक नक्षत्र। जिस समय सूर्य इस नक्षत्र में रहता है, उस समय खूब वर्षा होती है। उस वर्षा का जल बहुत अच्छा माना जाता है। यथा—मनहुँ मघा-जल उमगि उदधि रुष चले नदी नद नारे—*तुलसी*।

मछंद्रनाथ—दे० *मत्स्येंद्रनाथ*।

मजनूं—क़ैस नामक अरब के एक सरदार का पुत्र, जो **लैला** नाम की कन्या पर आसक्त होकर उसके प्रेम में पागल (मजनूँ) हो गया था। लैला-मजनूँ के प्रेम का कथानक प्रसिद्ध है।

मणिग्रीव—**कुबेर** का पुत्र। दे० *नलकूबर*।

मणिदेव—दे० *गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव*।

मणिद्वीप—पुराणानुसार रत्नों का बना हुआ एक द्वीप, जो **क्षीरसागर** में है। यह त्रिपुर सुंदरी देवी का निवास-स्थान माना जाता है।

मणिपुर—**कलिंग** देश की राजधानी। **बभ्रुवाहन** यहाँ राज्य करता था।

मणिमाल—सजि जो भरी सु लखात सुंदर, हीय में मणिमाल (स ज ज भ र स ल= १९ (१२,७) व० छंद)।

मतंग—१ एक ऋषि। ये एक चांडाल और ब्राह्मणी के पुत्र थे। ब्राह्मण बनने के लिये इन्होंने घोर तप किया। इंद्र ने इन्हें समझाया कि लाखों वर्षों तक अनेक जन्म धारण कर तपस्या के उपरांत ब्राह्मण माता-पिता प्राप्त होते हैं। यह जानकर इन्होंने इंद्र से अपनी अक्षय कीर्त्ति माँगी, जो इंद्र ने प्रदान की (*म० अनु० २७-२९*)। २ एक ऋषि जो **शबरी** के गुरु थे (*वा० रा० अर० ७४*)। ये ऋष्यमूक पर्वत पर रहते थे। इन्होंने बालि को शाप दिया था कि यदि वह उस पर्वत पर आएगा तो उसकी मृत्यु हो जाएगी (दे० *दुंदुभि, वा० रा० कि० ११*)।

मतिराम (जन्म ल० १६१७ ई०)—तिकवाँपुर निवासी **भूषण** तथा **चिंतामणि** के भाई और बूंदी-नरेश भावसिंह के आश्रित एक प्रमुख रीति-कवि। *रसराज* (रस-ग्रंथ) तथा *ललित ललाम* (अलंकार-ग्रंथ) के रचयिता। रस और अलंकार की शिक्षा के लिये इनके ये दोनों ग्रंथ बड़े उपयोगी हैं। *साहित्य सार, लक्षण शृंगार* और *मतिराम सतसई* (इसमें बिहारी के

दोहों के समान सरस दोहे हैं) इनके अन्य ग्रंथ हैं। दोहों में इनके लक्षण विशेष रूप से स्पष्ट और सुबोध हैं। इनके उदाहरण काव्य रस से परिपूर्ण हैं। इनकी रचनाओं की सरसता अत्यंत स्वाभाविक है, न तो उनमें भावों की कृत्रिमता है, न भाषा की। रीतिकालीन कवियों में ऐसी सुंदर भाषा बहुत कम पाई जाती है। इन्होंने जैसे उत्कृष्ट कवित्त और सवैये कहे हैं, वैसे ही ये दोहे बनाने में भी समर्थ हुए हैं।

मत्तगयंद—सात भगण मिला गुरु दो रच लो तुम 'मत्तगयंद' सवैया (७ भ ग ग=२३ व० छंद)। उ०—हो रहते तुम नाथ जहाँ, रहता मन साथ सदैव वहीं है, / मंजुल मूर्त्ति बसी उर में, वह नेक कभी टलती न कहीं है। इसे मालती और इंदव भी कहते हैं।

मत्तमातंगलीलाकर—राजभी नौ लसें तो कहें छंद विज्ञान वेत्ता उसे मत्तमातंगलीलाकरम् (९ रगण=२७ व० दंडक छंद)। उ०—योग ज्ञाना नहीं यज्ञ दाना नहीं वेद माना नहीं या कली माहिं मीता कहूँ।

मत्ता—होवे मत्ता म भ स ग युक्ता (म भ स ग=१० (४,६) व० छंद)। उ०—मो भा संगा, ब्रज तिय रामा। ध्यावैं माधो, तजि सब कामा।

मत्स्य—१ विष्णु के प्रथम अवतार। प्रलय के समय इन्होंने मत्स्य का रूप धारण कर **मनु** (भागवतानुसार राजा सत्यव्रत, जिन्हें भगवान् ने वैवस्वत मनु बना दिया, *भा० ८.२४*) की नाव को हिमगिरि के शिखर तक पहुँचाया था (*श० ब्रा० १.८-१.१, मत्स्य० १-२*)। दे० *शंखासुर*, *हयग्रीव*। २ दे० *मत्स्यदेश*।

मत्स्यगंधा—**सत्यवती** का एक नाम। धीवर-कन्या होने से सत्यवती के शरीर से मत्स्य की गंध आती थी, अतः सत्यवती का यह नाम पड़ा।

मत्स्यदेश—जयपुर प्रदेश जिसमें अलवर और भरतपुर का कुछ भाग सम्मिलित था।

मत्स्येंद्रनाथ—**गोरखनाथ** के गुरु, प्रसिद्ध साधु और हठयोगी। इनकी रचित संस्कृत की किसी कौलीय (वाममार्गीय) पुस्तक का पता चला है। कहते हैं कि जब शिव योग-विद्या का रहस्य पार्वती को समझा रहे थे, तब ये मत्स्य-रूप से सुन रहे थे। अतः इनका यह नाम पड़ा। इनको मीननाथ या मछंदरनाथ भी कहते हैं। नैपाल में ये पद्मपाणि बोधिसत्व का अवतार माने जाते है।

मथुरा—शूरसेन प्रदेश की राजधानी, जहाँ कृष्ण का जन्म हुआ था। शत्रुघ्न ने मधु नामक दैत्य का वध करके इस नगर को बसाया था (*वा० रा० उ० ७०*)। दे० *ब्रजमंडल*। पर्य्याय०—मधुपुरी, मधुरा।

मदनमोहन मालवीय (१८६०-१९४६ ई०)—एक प्रसिद्ध राष्ट्रिय नेता और हिंदी व अंग्रेज़ी के अनुपम वक्ता तथा हिंदू-विश्वविद्यालय, काशी के संस्थापक।

मदन सतक—दाम कवि का एक काव्य (लि० का० १६६७ ई० और १६७० ई० के मध्य), जिसमें मदन कुमार और चंपकमाल का प्रेम वर्णित है।

मदालसा—विश्वावसु गंधर्व की विदुषी कन्या और ऋतुध्वज की पत्नी। इन्हें पातालकेतु नामक दैत्य पाताल में उठा कर ले गया था। गालव मुनि ने राजा शत्रुजित् के पुत्र ऋतुध्वज से तपस्या में विघ्न डालने वाले पातालकेतु

के मारने की प्रार्थना की। ऋतुध्वज पाताल गये और मदालसा से विवाह कर लिया। जैसे ही ऋतुध्वज मदालसा को लेकर चले, पातालकेतु भी दानवों की सेना लेकर पहुँच गया। ऋतुध्वज ने पातालकेतु समेत समस्त दानवों का वध कर दिया। पातालकेतु के छोटे भाई तालकेतु ने छल से ऋतुध्वज के गले का आभूषण ले लिया और मदालसा से कहा कि ऋतुध्वज दैत्यों से युद्ध करते मारे गये हैं। पति की मृत्यु की सूचना पाकर पतिव्रता मदालसा ने प्राण त्याग दिये। अंत में ऋतुध्वज के परम मित्र नागराज अश्वतर ने शिव से वरदान प्राप्त कर मदालसा को अपने फण में से पुनः प्रकट कर दिया (*मार्क १८-३४*)। इन्होंने अपने पुत्रों को शिक्षा देते समय जो धर्मनीति और राजनीति की बातें कहीं थी, वे बड़ी उपयोगी हैं।

मदिरा—सात भकार गुरु इक हो जब पिंगल भाखत तो मदिरा (सात भ, ग=२२ व० छंद)। उ०—भा सत गौरि गुसांइन को बर राम धनू दुइ खंड कियो।

मदीना—अरब का एक नगर, जहाँ **मुहम्मद** की समाधि है।

मद्र—रावी और चनाब नदियों के बीच का प्रदेश। नकुल-सहदेव का मामा शल्य यहाँ राज्य करता था।

मधु—दे० *मधुकैटभ*।

मधुकर (आ० का० ११८३ ई०)—एक कवि जिन्होंने राजा **जयचंद** की प्रशंसा में *जय मयंक जस चंद्रिका* ग्रंथ की रचना की थी। यह रचना अभी तक अप्राप्त है।

मधुकैटभ—मधु और कैटभ नामक दो दैत्य, जो विष्णु के कर्णमैल से उत्पन्न हुए। जब ये ब्रह्मा को मारने लगे, तब विष्णु ने इनका वध कर दिया (*ह० वं० ३.१३,२७*)।

मधुपुरी—दे० *मथुरा*।

मधुमालती—१ **मंझन** का एक प्रेम-काव्य (१५४४ ई०), जिसमें कनेसर के राजकुमार मनोहर और महारस की राजकुमारी मधुमालती का प्रेम वर्णित है। पहिले अप्सराएँ मनोहर को मधुमालती की चित्रसारी में पहुँचा देती हैं। वे एक दूसरे पर मोहित हो जाते हैं, पर वे शीघ्र ही पृथक् कर दिये जाते हैं। अंत में फिर उनका मिलन हो जाता है। इसमें विरह का अच्छा महत्त्व दिखाया गया है। प्रेमा और ताराचंद का त्याग अत्यंत सराहनीय है। काव्य में आध्यात्मिक तथ्यों का भी निरूपण हुआ है। इसकी कथा *मृगावती* की कथा से अधिक रुचिकर है। दे० *प्रेम-काव्य*। २ निगम कवि-कृत **एक** प्रेम-काव्य (लि० का० १७४१ ई०)। दे० *प्रेम-काव्य*।

मधुशाला—**हरिवंशराय बच्चन** की कविताओं का एक संग्रह (१९३५ ई०)।

मधुसूदनदास (र० का० १७८२ ई०)—मथुरा निवासी, एक राम-भक्त कवि और *रामचरितमानस* की शैली पर *रामाश्वमेध* के रचयिता। ग्रंथ का कथानक *पद्म०* से लिया गया है। 'प्रबंध-काव्य-पटुता, कवित्वशक्ति तथा पदावली की प्रांजलता आदि गुणों ने इस काव्य को *रामचरितमानस* के समान स्तर पर ला बैठाया है।'

मधुसूदन, माइकेल (१८२४-७३ ई०)—बँगला भाषा के एक प्रसिद्ध कवि, नाटककार और लेखक, जिनकी रचनाएँ इन नामों से अनूदित हैं—

काव्य—*मेघनाद-वध*, *विरहिणी व्रजांगना*, *वीरांगना*।

नाटक—*कसौटी*, *कृष्णकुमारी*, *पद्मावती*, *वीर नारी*।

मध्यदेश—कुरुक्षेत्र, इलाहाबाद, हिमालय और विंध्याचल से घिरा हुआ प्रदेश।

मध्वाचार्य (११९७-१२७६ ई०)—दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य, द्वैतवाद के प्रतिपादक। इन्होंने *वेदांत दर्शन* के अतिरिक्त *भगवद्गीता*, *ऋग्वेद* के प्रथम ४० सूक्तों और दस उपनिषदों का भी द्वैतवाद-समर्थक भाष्य किया है। इनके सिद्धांत के अनुसार विष्णु ही अविनाशी ब्रह्म हैं। जीव ब्रह्म से उत्पन्न हुआ है, किंतु ब्रह्म स्वतंत्र है और जीव परतंत्र, ब्रह्म आराध्य है और जीव आराधक। दोनों में समानता कैसी? कृष्ण ब्रह्म हैं और उनकी भक्ति ही ब्रह्म को पाने का एक मात्र साधन है। इनके संप्रदाय में **राधा** मान्य नहीं है।

मनसा—जरत्कारु मुनि की पत्नी और **आस्तीक** की माता एक देवी। दे० *बेहुला*।

मनियारसिंह (र० का० ल० १७८४ ई०)—काशी निवासी, एक भक्त कवि। *महिम्न भाषा*, *सौंदर्य-लहरी*, *हनुमत् छब्बीसी* तथा *सुंदरकांड* के रचयिता।

मनीराम मिश्र—कन्नौज निवासी एक रीति-कवि। *छंद छप्पनी* (१७७२ ई०) तथा *आनंदमंगल* (*भागवत* के दशम स्कंध का पद्यबद्ध अनुवाद) के रचयिता।

मनु—सूर्य के पुत्र (*वा० रा० बा० ७०.२०*), जो मनुष्यों के आदि पुरुष माने जाते हैं। **जल-प्लावन** के समय इनकी नाव को मत्स्य (दे० यथा०) ने हिमालय के शिखर तक पहुँचा दिया था। मनु और मत्स्य की कथा भिन्न-भिन्न ग्रंथों में भिन्न-भिन्न प्रकार से मिलती है (*श० ब्रा० १.८.१.१*, *मत्स्य० १-२*, *भा० १.३.१५ ८.२४. म० व० १८७*)। इन्होंने **श्रद्धा** (दे० *कामायनी*) या **शतरूपा** से मानव जाति की सृष्टि की। पुराणानुसार एक कल्प में १४ मनु होते हैं। आजकल ७ वें मनु (मनु वैवस्वत) का अधिकार है। मानव धर्मशास्त्र अथवा *मनु स्मृति* के लेखक के रूप में वैवस्वत मनु की अत्यधिक ख्याति है।

मनोहर (र० का० १५७० ई०)—**अकबर** के एक दरबारी कवि और *शत प्रश्नोत्तरी* के रचयिता। ये अधिकतर दोहों में ही रचना करते थे, जिनमें नीति और शृंगार की सूक्तियाँ रहा करती थीं।

मन्सूर (मृत्यु ९१९ ई०)—सूफी मत के आचार्य जो '*अनलहक़*' अर्थात् '*अहं ब्रह्मास्मि*' (मैं ब्रह्म हूँ) कहा करते थे। इनका यह मत इस्लाम के विरुद्ध था, अतः इन्हें फाँसी दे दी गई थी।

मम्मट (ई० ११ वीं शती का उत्तरार्द्ध)—कश्मीर निवासी। संस्कृत साहित्य के प्रमुख अलंकार-शास्त्री तथा *काव्य प्रकाश* के रचयिता। इनके ग्रंथ का संस्कृत के अलंकार-साहित्य में बड़ा महत्त्व है। इस ग्रंथ के आधार पर संस्कृत में तो अनेक ग्रंथ लिखे ही गये, हिंदी का अलंकार-साहित्य भी इसका बहुत ऋणी है।

मय—एक प्रसिद्ध दानव जो शिल्प-शास्त्रज्ञ था। इसकी पुत्री मंदोदरी रावण की पत्नी थी (*वा० रा० उ० १२*)। जब **अग्निदेव** खांडववन को जला रहे थे, तब कृष्ण ने तक्षक के निवास-स्थान से मय दानव को भागते देखा।

कृष्ण ने दानव को मारने के लिये चक्र उठाया, पर मय अर्जुन के पैरों पर गिर पड़ा। अर्जुन और कृष्ण ने उसे अभयदान दिया (म० आ० २५४.३६)। कृष्ण के आदेश पर मय ने युधिष्ठिर के लिये ऐसा दिव्य सभागृह बनाया कि उसमें दुर्योधन जल में स्थल और स्थल में जल का भ्रम कर दो-तीन बार गिर पड़ा था। मय ने मैनाक पर्वत से एक गदा लाकर भीमसेन को दी, और देवदत्त नामक शंख लाकर अर्जुन को दिया था (म० स० १.३)। इसका राज्य मयराष्ट्र (वर्त्तमान मेरठ) में था।

मयूर—एक पक्षी। कवि-प्रसिद्धि है कि वर्षा ऋतु में ही यह नृत्य करता है। यह भी कवि-प्रसिद्धि है कि यद्यपि ऊपर से मयूर बहुत सुंदर प्रतीत होता है, तथापि नीचे से यह काला होता है।

मयूरध्वज—रत्नपुर-नरेश एक प्राचीन राजा। कृष्ण ने ब्राह्मण-रूप धारण कर इनसे कहा—'मेरे पुत्र को एक सिंह ने पकड़ लिया है। यदि आप अपना अर्द्धशरीर न्योछावर कर दें, तो वह सिंह मेरे पुत्र को छोड़ सकता है।' राजा की आज्ञा से रानी और पुत्र राजा का शरीर काटने को प्रस्तुत हुए। उसी समय राजा के वाम-नेत्र से एक अश्रु टपक पड़ा। यह देखकर ब्राह्मणरूपी कृष्ण ने इनका मनःक्लेशप्रदत्त शरीर लेना नहीं चाहा और रोने का कारण पूछा। उत्तर में राजा ने कहा—'मैं द्विखंड होने की यंत्रणा से नहीं रोता हूँ। मेरा दक्षिण अंग तो ब्राह्मण कार्य में जा रहा है, केवल वाम अंग रह जाता है, जिससे उस अंग को भारी दुःख है। इसीसे केवल वाम-नेत्र से ही अश्रु टपका है।' राजा के ऐसे वचन सुनकर कृष्ण प्रसन्न हुए और राजा का आलिंगन किया (जै० अ० ४१-४६)।

मराठी—**महाराष्ट्री** अपभ्रंश से निकली एक भाषा, जो बंबई प्रांत, बरार, मध्य प्रांत में बोली जाती है। मुकुंदराज, **ज्ञानदेव**, **एकनाथ तुकाराम**, **रामदास**, मोरोपंत (१७२६-९४ ई०) आदि इस भाषा के प्रसिद्ध प्राचीन लेखक हैं। आधुनिक मराठी साहित्य बहुत विस्तृत है। बँगला की भाँति उपन्यास-साहित्य इसका प्रधान अंग है।

मरियम—ईसा की कुमारी माँ। कहते हैं कि इन्हें पवित्रात्मा से गर्भ रह गया था।

मरु (मरुधर, मरुस्थल)—मारवाड़ देश का प्राचीन नाम।

मरुधर—मारवाड़ देश का प्राचीन नाम।

मलद (**मलज**)—शाहबाद ज़िले का पूर्वी भाग। **ताड़का** यहीं रहती थी।

मलयगिरि—कवि-प्रतीति के अनुसार दक्षिण भारत का एक पर्वत, जो उत्तम चंदन के लिये प्रसिद्ध है। मलय पर्वत की ओर से आने वाली वायु को मलयानिल कहते हैं, क्योंकि इसमें चंदन की महक होती है।

मलार—एक प्रसिद्ध राग जो वर्षा ऋतु में रात्रि के दूसरे पहर गाया जाता है।

मलिक मुहम्मद जायसी (१४९३-१५४३ ई०)—**जायस** निवासी, शेख मुहीउद्दीन के शिष्य, प्रेम-मार्गी शाखा के प्रतिनिधि एवं श्रेष्ठ सूफ़ी कवि। *पद्मावत* (१५४०), *अखरावट*, *आखरी कलाम* आदि के रचयिता। अमेठी के राजगृह में इनका बड़ा सम्मान था। अमेठी में इनकी समाधि अमेठी-नरेश के कोट के सामने बनी हुई है। इनकी एक आँख बचपन में चेचक से जाती रही थी और मुख आकृति भी बहुत

बिगड़ गई थी। कहते हैं कि शेरशाह इनके रूप को देखकर हँसा था। इसपर ये बोले 'मोहिका हँसेसि कि कोहरहि ?' ये बहुश्रुत थे। इन्होंने अपने काव्य में ज्योतिष, हठयोग, शतरंज आदि के ज्ञान का अच्छा परिचय दिया है। इनका विरह-वर्णन बड़ा विशद है। विरहग्रस्त प्रेमी और प्रेमिका के साथ इन्होंने सारे संसार की सहानुभूति दिखाई है। कहीं-कहीं यह विरह-वर्णन अत्युक्ति की मात्रा को पहुँच गया है, किंतु इसके साथ ही अनुभूति की तीव्रता भी दिखाई देती है।

इनकी भाषा बोलचाल की पूर्वी अवधी है। इनकी अलंकार-योजना बड़ी सुंदर है। जायसी की अक्षय कीर्त्ति का आधार *पद्मावत* है। दे० *प्रेम-काव्य*, *भक्ति-काव्य*। विशेष दे० रामचंद्र शुक्ल-कृत *जायसी*, कमल कुलश्रेष्ठ-कृत *मलिक मुहम्मद जायसी*, माताप्रसाद गुप्त द्वारा संपादित *पद्मावत*।

मलूकदास (१५७४-१६८२ ई०)—कड़ा (इलाहाबाद) निवासी एक संत और कवि। इनकी गद्दियाँ नैपाल और काबुल तक में स्थापित हुई। इनकी *ज्ञान बोध* और *रत्नखान* नामक दो पुस्तकें हैं। इन्होंने कवित्त भी लिखे हैं। इनकी भाषा सुव्यवस्थित और सुंदर है। आलसियों का गुरुमंत्र 'अजगर करै न चाकरी पंछी करै न काम। दास मलूका कह गये सब के दाता राम॥' इन्हीं का बनाया हुआ है।

मल्लदेश—मुल्तान देश का प्राचीन नाम। राम ने लक्ष्मण-पुत्र चंद्रकेतु को इस देश का राजा बनाया था।

मसनवी—उर्दू-फ़ारसी की वह कविता जिसके हर शेर के दोनों मिसरों का काफ़िया एक, पर हर शेर का काफ़िया जुदा हो।

मसूद (आ० का० ११२३-४८ ई०)—एक मुसलमान लेखक, जिनके विषय में खोज हो रही है। इनकी रचना भी अप्राप्त है।

महबूब (जन्म १७०१ ई०)—एक कवि। स्फुट कविता के अतिरिक्त इनका कोई ग्रंथ नहीं मिलता। इनकी रचना रसीली, अनुप्रास-पूर्ण तथा मनोहर है।

महमूद ग़ज़नी—ग़ज़नी-मुलतान (९९८-१०३० ई०)। इसने भारत पर १७ बार आक्रमण किये। इसने ही प्रसिद्ध सोमनाथ के मंदिर को १०२५ ई० में लूटकर विध्वस्त किया था।

महाकल्प—पुराणानुसार उतना काल जितने में ब्रह्मा की आयु पूरी होती है।

महाकाली—महादेव की शक्ति।

महाकाव्य—**प्रबंध-काव्य** का एक भेद। साहित्यशास्त्रानुसार वह सर्गबद्ध काव्य-ग्रंथ, जिसका नायक कोई देवता, राजा या धीरोदात्त, गुणसंपन्न क्षत्रिय होता है। इसमें शृंगार, वीर या शांत रस में से कोई एक रस प्रधान होता है। बीच-बीच में अन्य रसों का समावेश होना आवश्यक है। इसमें कम से कम आठ सर्ग अवश्य होने चाहिए। संध्या, रात्रि प्रभात, मृगया, पर्वत, वन, ऋतु, सागर, संभोग, विप्रलंभ, मुनि, पुर, यज्ञ, रणप्रयाण, विवाह आदि का यथास्थान वर्णन होना चाहिए।

महाकाव्य शैली पर लिखे गये ग्रंथ प्रबंध काव्य के नाम से भी पुकारे जाते हैं।

महात्मा गांधी—दे० *मोहनदास करमचंद गांधी*।

महादेव—दे० *शिव*।

महादेवी वर्मा (१६०७ ई०-)—जन्म फरुखाबाद। १६१६ में ही इनका विवाह हो गया था। विवाह के पश्चात् इन्होंने मिडल से लेकर एम० ए० तक की परीक्षाएँ पास कीं। अब ये प्रयाग महिला-विद्यापीठ की आचार्या हैं। इनके काव्य इस प्रकार हैं—

नीहार (१६३०)—१६२४-२८ तक के ४७ गीतों का संग्रह, जिसमें बालिकाओं की-सी विस्मय-पूर्ण अनुभूति है। नीहार के धुँधलेपन के समान लेखिका के भाव और विचार भी अस्पष्ट-से हैं।

रश्मि (१६३२)—३५ गीतों का एक संग्रह, जिसमें अनुभूति के साथ चिंतन और प्रकाश है। हृदय के धुंधले भावों का प्रकटीकरण भी एक गति और रूप पकड़ता प्रतीत होता है।

नीरजा (१६३५) और *सांध्य-गीत* (१६३६)—क्रमशः ५८ और ४५ गीतों के संग्रह। इनमें भावना के प्राधान्य के साथ लक्ष्य की झाँकी भी है, साहित्य और संगीत का सुंदर समन्वय है तथा तीव्र वेदना है। *नीरजा* पर कवयित्री को सेकसरिया पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

दीपशिखा (१६४२)—५१ गीतों का संग्रह। इसमें दीपशिखामयी तपन के साथ मंद मधुर स्निग्ध प्रकाश है। इसमें बंधनों में रहकर घुलते रहने की चाह है। महादेवी वर्मा कुशल चित्रकार भी हैं। इनकी रचना *दीपशिखा* अपने हाथ से बनाए सुंदर चित्रों की पृष्ठभूमि पर इनके ही अक्षरों में छपी है। इनकी अन्य रचनाएँ *अतीत के चलचित्र*, *शृंखला की कड़ियाँ*, *स्मृति की रेखाएँ* (निबंध) और *हिंदी का विवेचनात्मक गद्य* हैं। 'इन्होंने आध्यात्मिक वियोग की सुंदर अभिव्यक्ति की है। इनकी कविता में दुःख की तीव्र अनुभूति है। ये दुःख को मनुष्य का जन्म-सिद्ध अधिकार मानती हैं। इनके रहस्यवाद की यह विशेषता है कि ये मनुष्य की सीमाबद्धता से संकुचित नहीं होतीं, उसकी लघुता को ही उसका गौरव समझती हैं। ये ससीम में भी असीम को देखती हैं और एक कण में ही असीमता के दर्शन कर लेती हैं। इन्होंने प्रकृति के विराट् रूप में भी उसके दर्शन करने का प्रयत्न किया है। इनपर बौद्ध धर्म का प्रभाव पड़ा है। ये स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं चाहतीं। अमरता को जीवन का ह्रास मानती हैं।' इनकी भाषा संस्कृत-गर्भित है। इनके भावों में छायावाद-काल की सुकुमारता पूर्ण रूप से परिलक्षित होती है और भाषा ने भी उसी कोमलता का अनुसरण किया है। इन्हें आधुनिक युग की 'मीरा' कहा जाता है। विशेष दे० 'आधुनिक कवि' सीरीज़ की *महादेवी वर्मा* नामक पुस्तक की भूमिका, विश्वंभर 'मानव'-कृत *महादेवी*।

महाप्रलय—पुराणानुसार वह समय जब संपूर्ण सृष्टि का विनाश हो जाता है। ऐसा समय प्रत्येक कल्प अथवा ब्राह्म दिन के अंत में आता है।

महाभारत—**वेदव्यास** द्वारा रचित, **गणेश** द्वारा हस्तलिखित, संस्कृत का एक परम प्रसिद्ध प्राचीन ऐतिहासिक महाकाव्य (अनू०), जिसमें मुख्यतया कौरवों और पांडवों का वृत्तांत है। इसमें १८ पर्व हैं—

आदि, सभा, वन, विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शांति, अनुशासन, आश्वमेधिक, आश्रमवासिक, मौसल, महाप्रस्थानिक और स्वर्गारोहण।'

पांडु की मृत्यु के पश्चात् जन्मांध **धृतराष्ट्र** ने

युधिष्ठिर को अपना उत्तराधिकारी बना दिया, किंतु कौरवों (धृतराष्ट्र के पुत्रों) के षड्यंत्रों (दे० *लाक्षागृह*) से बचने के लिये पांडवों को बाहर निकलना पड़ा। **पंचाल** देश में पहुँच कर **अर्जुन** ने स्वयंवर में द्रौपदी को जीता। धृतराष्ट्र ने पांडवों को आधा राज्य दे दिया और उन्होंने **इंद्रप्रस्थ** नगर बसाया। **शकुनि** की सहायता से **दुर्योधन** ने जुए में युधिष्ठिर से राज्य, सेना और द्रौपदी (दे० यथा०) तक को जीत लिया और यह शर्त रखी कि यदि पांडव १२ वर्ष वनवास और एक वर्ष अज्ञातवास (दे० यथा०) करें, तो उन्हें उनका राज्य लौटा दिया जाएगा। शर्त के अनुसार पांडव वनवास को चले गये १३ वर्ष की अवधि समाप्त होने पर और कृष्ण के समझाने पर भी दुर्योधन एक सूई की नोक भर भूमि भी देने को तैयार नहीं हुआ। अंत में अठारह दिन तक कुरुक्षेत्र में युद्ध हुआ, जिसमें कौरवों पर पांडवों की विजय हुई। धर्मराज **युधिष्ठिर** ने **अश्वमेध** यज्ञ किया और उनका राज्यभिषेक हुआ। **अश्वत्थामा** ने पांडवों के शिविर में पहुँच कर द्रौपदी के पाँचों पुत्रों की हत्या कर दी। यदुकुल विनाश और कृष्ण की मृत्यु सुनकर पांडव संसार की असारता से खिन्न होकर, **परीक्षित्** को राज्य दे, महाप्रस्थान के लिये चल दिये। गंगोत्री (दे० यथा०) के निकट द्रौपदी, नकुल, सहदेव, अर्जुन और भीम का देहांत हो गया। **युधिष्ठिर** को इंद्र अपने साथ विमान में बिठाकर सशरीर स्वर्ग ले गये। युधिष्ठिर के साथ एक कुत्ता (धर्मराज) भी था। मूलकथा में **अभिमन्यु, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, भीष्म, कुंती, भीम, कर्ण,** शल्य आदि और भी मुख्य पात्र हैं।

महाभारत का तीन चौथाई से अधिक भाग उपाख्यानों से भरा पड़ा है! इनमें शकुंतलोपाख्यान (दे० *शकुंतला*), सावित्री-सत्यवान् कथा (दे० *सावित्री*), नलोपाख्यान (दे० *नल*) आदि मुख्य हैं। अधिकांश हिंदी-साहित्य संबंधी उपाख्यान संक्षेप से यथास्थान इस ग्रंथ में भी दे दिये गये हैं। आख्यानों आदि के संग्रह के अतिरिक्त *महाभारत* में धर्म, तत्त्व-ज्ञान, व्यवहार, राजनीति आदि विषयों का भी बहुत विस्तृत विवेचन किया गया है। *महाभारत* को भारतीय संस्कृति का विश्वकोष कहा गया है। इसके संबंध में यह कहा गया है—'*यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्*,' अर्थात् जो यहाँ है, वह अन्यत्र भी मिल सकता है, पर जो यहाँ नहीं है, वह अन्यत्र भी नहीं है। *रामायण, महाभारत* और मेवाड़ के वीरों की कथाओं के आधार पर ही अधिकतर भारतीय साहित्य का निर्माण हुआ है।

महाभाष्य—**पाणिनि** के व्याकरण *अष्टाध्यायी* पर **पतंजलि**-कृत प्रसिद्ध भाष्य।

महारस—दे० *अमृत*।

महाराजा गजसिंह जी रो रूपक—सिणढायच फटेराम का एक डिंगल-काव्य (१७४७ ई०), जिसमें बीकानेर के महाराजा गजसिंह की प्रशस्ति है।

महाराजा रतनसिंह जी री कविता—देसणोक (बीकानेर) के वीठू भोमौ (र० का० १८३८ ई०) का एक डिंगल-काव्य, जिसमें बीकानेर के महाराजा रतनसिंह और उनके पुत्र कुँवर सिरदारसिंह की प्रशंसा है।

महाराणा प्रताप—दे० *प्रतापसिंह, राणा*।

महाराष्ट्र—गोदावरी और कृष्णा नदियों के

बीच का प्रदेश। इसका प्राचीन नाम अश्मक अथवा अस्सक था। इसकी प्राचीन राजधानी प्रतिष्ठानपुर (पैठान) थी।

महाराष्ट्री—एक प्राकृत भाषा जो वर्त्तमान महाराष्ट्र और मध्यभारत के बहुत से भागों में बोली जाती थी। जब यह भाषा साहित्यिक बन गई, तब जन-समुदाय की भाषा ने अपभ्रंश का रूप धारण कर लिया और वह महाराष्ट्री अपभ्रंश कहलाई। दे० *मराठी*।

महावीर (मृत्यु ५२७ ई० पू०)—जैन धर्म के चौबीसवें और अंतिम तीर्थंकर, जिन्होंने जैन धर्म को व्यवस्थित रूप देकर उसका संगठन किया। इनका जन्म कुंड ग्राम (वैशाली) में हुआ था। इन्होंने ३० वर्ष की अवस्था में संन्यास लेकर १२ वर्ष तक कठोर तपस्या की। ४८ वर्ष की अवस्था में इन्हें श्रेष्ठ ज्ञान की प्राप्ति हुई और इन्होंने ३० वर्ष तक जैन धर्म का प्रचार किया।

महावीरप्रसाद द्विवेदी (१८७०-१९३८ ई०)—तार-बाबू, टेलीग्राफ़-इन्स्पेक्टर आदि पदों पर कार्य करने के बाद इन्होंने २० वर्ष तक 'सरस्वती' पत्रिका का सपादन किया। इन्होंने खड़ी बोली में स्वयं भी कविता रच कर खड़ी बोली का पक्ष लिया और इसके कवियों को प्रोत्साहन दिया। इन्होंने संस्कृत छंदों के प्रयोग का समर्थन कर कविता को तुक के बंधन से मुक्त करवाने का यत्न किया। अयोध्यासिंह उपाध्याय ने *प्रिय-प्रवास* में इसी शैली को अपनाया। इनकी कविता में इतिवृत्तात्मकता अधिक थी, पर इनका महत्त्व कवि होने में इतना नहीं है, जितना कवि-निर्माता होने में। मैथिलीशरण गुप्त आदि कवियों ने इनका ऋण स्वीकार किया है। इनका महत्त्व इससे प्रतीत होता है कि हिंदी-साहित्य में ये एक युग-प्रवर्त्तक माने जाते हैं।

इनके मौलिक लेखों के संग्रह *साहित्य सीकर, रसज्ञ रंजन* आदि नामों से निकले हैं। इनके लेख विचारपूर्ण होते थे। इन्होंने *बेकन विचार रत्नावली* के नाम से **बेकन** के अंग्रेजी निबंधों का अनुवाद निकाला। 'सरस्वती' द्वारा स्फुट निबंधों की संख्या की वृद्धि के साथ विषय-वैचित्र्य और विचार-गांभीर्य भी बढ़ा। इनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्द अधिक रहते थे। इन्होंने भाषा में व्याकरण की शुद्धता और विराम चिह्नों की सुव्यवस्था पर विशेष बल दिया। दे० *समालोचना*। विशेष दे० उदयभानुसिंह-कृत *महावीरप्रसाद द्विवेदी तथा उनका युग*।

महिरावण—दे० *अहिरावण*।

महिषासुर—रंभासुर का पुत्र एक दैत्य, जिसने सूर्य, चंद्र, इंद्र आदि सब देवताओं पर विजय प्राप्त कर ली थी। इनका वध दुर्गा द्वारा हुआ (स्कंद० *१.३.१०-११,३.१.६-७*)।

महीपा (ई० नवीं शती)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

महेश—दे० *शिव*।

मांडवी—राजा जनक के भाई कुशध्वज की कन्या और दाशरथि **भरत** की पत्नी (*वा० रा० बा० ७३*)।

मांडव्य—एक ऋषि जो मौन रहकर तपस्या करते थे। एक बार सुलक्षण नामक एक राजा का घोड़ा चोरी हो गया। जब इनसे चोरी के विषय में पूछा गया, तब ये मौन रहे। राजा ने अपराधी समझ कर इन्हें शूली

पर चढ़वा दिया, पर ये मरे नहीं। यह देखकर राजा ने इनसे क्षमायाचना की। प्रयत्न करने पर भी शूल इनके शरीर से निकाला न जा सका। इन्होंने शूल सहित ही कठिन तपस्या की। तभी से ये 'अणीमांडव्य' (अणी=शूल) कहलाने लगे (*पद्म० उ० १४१*)। धर्मराज ने इन्हें बतलाया था कि बाल्यावस्था में इन्होंने एक पतिंगे की पूँछ में एक सींक गाड़ दी थी। उसीके परिणाम-स्वरूप इन्हें शूली मिली। इसपर इन्होंने कहा कि चौदह वर्ष तक बालक अबोध होता है, अतः उस अवस्था तक किये गये कर्मों का पाप नहीं लगना चाहिये। कुपित हो इन्होंने धर्मराज को शाप दिया, जिसके कारण उन्हें विदुर के रूप में शूद्र-योनि में जन्म लेना पड़ा (*भा० ३.५.२०*)। एक बार एक पतिव्रता ब्राह्मण स्त्री अपने पति को कंधे पर बैठाकर अंधेरी रात्रि मे उसे एक वेश्या के घर ले जा रही थी। अंधकार में ब्राह्मण का पैर मांडव्य ऋषि को स्पर्श हो गया। इसपर ऋषि ने शाप दिया—'जिसका पैर मुझे लगा है, वह सूर्योदय होते ही मृत्यु को प्राप्त होगा।' पतिव्रता स्त्री ने अपने पातिव्रत्य के प्रताप से सूर्योदय ही रोक दिया। बाद में अनुसूया की प्रार्थना पर, उस पतिव्रता ने सूर्य को उदय होने दिया, किंतु ब्राह्मण के मरते ही, अनुसूया ने उसे पुनर्जीवित कर दिया। अनुसूया ने ब्राह्मण का कुष्ठ भी दूर कर दिया (*स्कंद ५.३.१६६–७२,६.१३५–३८, म० आ० १०७–१०८*)।

मांधाता—एक सूर्यवंशी राजा जो अपने पिता युवनाश्व की कोख से उत्पन्न हुए थे। इंद्र ने इन्हें अपना अंगूठा चुसा कर पाला था। अपनी पत्नी बिंदुमती से इन्हें ३ पुत्र और ५० कन्याएँ प्राप्त हुईं। इन्होंने अनेक यज्ञ किये और अपने बल से एक ही दिन में समस्त पृथ्वी पर अधिकार कर लिया। इनके समय में पृथ्वी 'मांधाता क्षेत्र' कहलाती थी (*विष्णु० ४.२ आदि*)। ये बड़े धर्मात्मा और दानी थे (*भा० ९.५*)। दे० *सौभीर*।

माइल्ल धवल (ई० दसवीं शती उत्तरार्ध)—जैन आचार्य **देवसेन** के शिष्य और *दव्व सहाव पयास* (द्रव्य स्वभाव प्रकाश) के रचयिता। इनका यह ग्रंथ पहिले पुरानी हिंदी, फिर गंभीर प्राकृत में लिखा गया। पुरानी हिंदी में ग्रंथ रचना होने से इससे हिंदी के रचना-काल पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। *हरिवंश पुराण* (जैन धर्म के चरित नायकों का वर्णन) भी इन्होंने लिखा है।

माखनलाल चतुर्वेदी (१८८८ ई०-)—कवि, 'कर्मवीर' (पत्र) के संपादक। *हिमकिरीटिनी*, *हिमतरंगिनी* (काव्य-संग्रह), *कृष्णार्जुन-युद्ध* (साहित्यिक और अभिनेय नाटक), *साहित्य देवता* (गद्य-काव्य) तथा *वनवासी* (कहानी-संग्रह) के रचयिता।

राष्ट्रिय कार्यकर्त्ता होने से ये राष्ट्रिय भावना को बड़े मार्मिक रूप में व्यक्त करते हैं। इनकी राष्ट्रिय कविताओं में एक करुण कथा रहती है, जो उन्हें कोमलता और रसार्द्रता प्रदान करती है। ये एक बड़े भावुक भक्त भी हैं। *हिमकिरीटिनी* में कुछ कविताएँ परमात्मा को संबोधित करके लिखी गई हैं। इनकी भाषा सुबोध है। ये 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से कविता करते हैं। ये **हिंदी साहित्य सम्मेलन** के प्रधान भी रह चुके हैं।

मागधी—एक **प्राकृत** भाषा जिसका प्रचार मगध (बिहार) में था। जब इस भाषा ने भी

साहित्यिक रूप धारण कर लिया, तब जन-समुदाय की भाषा मागधी-अपभ्रंश कहलाई। बौद्धों ने इसी भाषा को अपनाया था। दे० *पाली*। इसी भाषा से बिहारी, उड़िया, असमिया और बँगला भाषाओं की उत्पत्ति हुई।

माघ (वर्त्त० ल० ८०० ई०)—संस्कृत-कवि और *शिशुपालवध* (अनू०) के रचयिता। इनके विषय में कहा है—*'उपमाकालिदासस्य, भारवेरर्थ-गौरवम्। दंडिनः पदलालित्यं, माघे संतित्रयोगुणाः॥* अर्थात् माघ में उपमा, अर्थगौरव और पदलालित्य तीनों गुण उत्कृष्ट मात्रा में पाये जाते हैं।

मातलि—इंद्र का सारथि।

मात्रा—एक लघु स्वर को उच्चारण करने में जो समय लगता है, वह मात्रा कहलाता है। मात्रिक छंदों के लक्षण में इन मात्राओं का विचार किया जाता है।

मात्रागण—दे० *गण*।

मात्रिक छंद—मात्राओं की गणना के आधार पर गिने जाने वाले छंद। इनका अन्य नाम जाति भी है।

माद्री—पांडु की एक पत्नी। एक ऋषि के शापवश पांडु इनसे संभोग नहीं कर सकते थे (*म० आ० ११८*)। अतः अश्विनीकुमारों द्वारा इनसे नकुल और सहदेव उत्पन्न हुए। कामातुर हो एक दिन राजा ने इनसे संभोग किया, जिससे उनकी मृत्यु हो गई। माद्री भी पांडु के साथ सती हो गई (*१२२-२५*)।

माधवप्रसाद मिश्र (१८७१-१९०७ ई०)—निबंधकार। जन्म कूँगड़ (भिवानी, पंजाब)। 'सुदर्शन' (१९००, पत्र) के संपादक और विशुद्धानंद आदि के जीवन-चरित्रों के रचयिता। इनके निबंध भावात्मक होते थे और धारा-वाहिक शैली पर चलते थे। इनमें देश-भक्ति की भावना पर्याप्त रहती थी।

माधवानल कामकंदला—यह प्रेम-कथा प्रमुख रूप से तीन कवियों (वाचक **कुशल लाभ**, **'आलम'**, और **गणपति**) द्वारा लिखी गई है।

इस ग्रंथ में माधवानल और कामकंदला की प्रेम-कथा वर्णित है। *माधवानल प्रबंध दोग्धबंध* में भी यही कथा है।

माधवानल कामकंदला चरित्र—वाचक कुशललाभ का डिंगल में एक प्रेम-काव्य (१५५९ ई०)। दे० *माधवानल कामकंदला*।

माधवानल प्रबंध दोग्धबंध—गणपति कवि की डिंगल भाषा में एक प्रेम-कहानी (१५२७ ई०)। दे० *माधवानल कामकंदला*।

माधुर्य—ओज, प्रसाद आदि काव्य-गुणों में से एक। अंतःकरण को द्रवित करने वाला आनंदविशेष माधुर्य है। सानुनासिक और र ण अक्षरों वाली, ट ठ ड ढ आदि कठोर अक्षरों रहित और समास रहित रचना माधुर्य-पूर्ण होती है।

माधो—१ कृष्ण। २ रामचंद्र। यथा—आधो पल माधो जू के देखे बिन सोई शशि सीता को बदन कहूँ होत दुखदाई है—*केशव*।

मान—मेवाड़ निवासी, एक डिंगल-कवि। *राजविलास* (१६८० ई०, उदयपुर के महाराणा राजसिंह की वीरता का वर्णन) के रचयिता।

मानवीकरण—'मूर्त्त और अप्राण पदार्थों में रूपक की भाँति मानवीय भावनाओं का आरोप। देव ने इसका प्रयोग अलंकार-रूप

में किया था, पर हिंदी में तब इसे अलंकार नहीं माना गया था। आज अलंकार-रूप में इसका प्रचुरता से प्रयोग होता है।' सुमित्रा-नंदन पंत 'छाया' को संबोधन कर कहते हैं—कहो कौन हो दमयंती-सी तुम तरु के नीचे सोई ? / हाय तुम्हें भी त्याग गया क्या अलि नल-सा निष्ठुर कोई ?

मानसपुत्र—वह पुत्र या संतान जिसकी उत्पत्ति संकल्प मात्र से हुई हो।

मानसरोवर (मानस)—हिमालय की एक प्रसिद्ध झील, जिसकी उत्पत्ति के विषय में कहा जाता है कि ब्रह्मा ने अपने संकल्प मात्र से इसे उत्पन्न किया था (*वा० रा० बा० २४.८*)। यह भी कहा जाता है कि हंस इसमें मोती चुगते हैं। यह १५ मील लंबी और ११ मील चौड़ी झील है। यात्री इसकी परिक्रमा ४ से ६ दिन में करते हैं।

मानसरोवर—**प्रेमचंद** (१८८०-१९३६ ई०) की कहानियों का एक प्रसिद्ध संग्रह, जो आठ भागों में है। प्रथम भाग की भूमिका कहानी के इतिहास पर यथेष्ट प्रकाश डालती है।

मानसिंह, महाराजा (जन्म १७८२ ई०)—जोधपुर-नरेश, जिन्होंने हिंदी और संस्कृत में लगभग २५ ग्रंथ लिखे।

मानसिंह, द्विजदेव महाराजा (१८२३-७३ ई०)—अयोध्या-नरेश एक रीति-कवि। *शृंगार बत्तीसी* तथा *शृंगार लतिका* (ऋतु-वर्णन) के रचयिता।

माया—१ परमेश्वर की अव्यक्त बीजरूप शक्ति जो प्रपंच की कारणभूता है। २ गौतम बुद्ध की माता का नाम।

मायावती—दे० *प्रद्युम्न*।

मायावाद—वह सिद्धांत जिसके अनुसार ईश्वर के अतिरिक्त सृष्टि की समस्त वस्तुओं को अनित्य तथा असत्य माना जाता है, और जगत् की इस रूप में व्याख्या की जाती है कि भ्रम के कारण जगत् सत्य प्रतीत होता है।

मारीच—**ताड़का** और **सुंद** का पुत्र एक दानव। यह रावण का मामा था। रावण की आज्ञा से इसने हेममृग बनकर रामचंद्र को धोखा दिया था, जिसके फल-स्वरूप रावण द्वारा सीता का हरण हुआ। रामचंद्र का बाण लगते ही इसने अपने असली रूप में आकर शरीर छोड़ दिया था (*वा० रा० अर० ३१,३५-४४*)।

मारुति—दे० *हनुमान*।

मार्कंडेय—एक महातपस्वी ऋषि। इंद्र ने इनकी तपस्या भंग करने के लिये बहुत विघ्न डाले, पर इन्होंने अपनी सब इंद्रियों को वश में कर रखा था। नरनारायण ने प्रसन्न होकर इन्हें दर्शन दिये। इनकी प्रार्थना पर नरनारायण ने इनको वटपत्रशायी बालमुकुंद भगवान् के श्वास द्वारा उनके उदर में भेज दिया, जिससे वहाँ इन्होंने समस्त ब्रह्मांड के दर्शन किये। इनकी तपस्या से प्रसन्न हो, शिव ने इन्हें अजर और अमर हो जाने का वरदान दिया था (*भा० १२.८-१०*)।

मार्क्स, कार्ल (१८१८-८३ ई०)—एक प्रसिद्ध जर्मन विचारक, जिनके मौलिक विचारों ने अर्थशास्त्र के परंपरागत सिद्धांतों में क्रांति उत्पन्न कर दी थी। इनका मत है कि इतिहास की प्रत्येक बड़ी घटना के आधार में कोई अर्थशास्त्र-समस्या होती है। इनका यह भी कथन है कि उत्पत्ति के साधनों पर राज्य

का अधिकार होना चाहिये और प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यतानुसार कार्य मिलना चाहिये और उसकी आवश्यकतानुसार सुख-सुविधा के साधन उपलब्ध होने चाहिये। इनके विचारों का परवर्त्ती साहित्य पर बहुत प्रभाव पड़ा है।

मालती—कवियों की बड़ी पुरानी परिचित पुष्पलता। कवि-प्रसिद्धि है कि इसके वसंत में पुष्पित होने का वर्णन नहीं होना चाहिये।

मालव—मालवा राजा भोज के समय इसकी राजधानी धारानगर थी। इसकी प्राचीन राजधानी अवंती या उज्जयिनी थी। ७-८ वीं शती से पूर्व मालव देश का नाम अवंती था।

मालादीपक—एक अर्थालंकार जिसमें सादृश्य, भाव-रहित **दीपक** और **एकावली** के मिलने से होता है। उ०—नाक में नथुनी, नथुनी में लटकन। / लटकनि माँहि मोती मोती अधर पै राजै री ।।—*दूलह*।

मालिनी—१ पश्चिम में प्रलंब और पूर्व में अपरताल प्रदेशों के बीच में बहने वाली एक नदी। यह अब विजनौर के पास गंगा में मिल जाती है। शकुंतला के पालक-पिता कण्व का आश्रम इसी के तीर पर था। दे० *कण्व*। २ न न म य य गणों से सोहती मालिनी है (न न म य य=१५ (८,७), व० छंद)। उ०—सहृदय जन के जो, कंठ का हार होता, / मुदित मधुकरी का, जीवनाधार होता।

माल्यकृत—नाटक में उपयोगी मालाएँ तैयार करने वाला माली।

माहिष्मती—इंदौर से ४० मील दक्षिण में नर्मदा के दक्षिण तीर पर एक नगरी। यह **कार्त्तवीर्य** की राजधानी थी।

मिथिला—दे० *विदेह*।

मिथ्याध्यवसिति—एक अर्थालंकार जिसमें कोई एक असंभव या मिथ्या बात निश्चित करके तब कोई दूसरी बात कही जाती है; और इस प्रकार वह दूसरी बात भी मिथ्या हो जाती है। उ०—खल वचनन की मधुरता चाखि साँप निज सौन। / रोम-रोम पुलकित भयो, कहत मोहि गहि मौन ।। साँप के न तो कान होते हैं न रोम।

मिलिंदपाद—वह पद्य जिसके छः चरण हों। आधुनिक कवियों ने इन पद्यों का निर्माण किया है।

मिश्रबंधु—हिंदी-साहित्य में प्रसिद्ध बंधुत्रय। इनके नाम गणेशबिहारी मिश्र (जन्म १८६५ ई०), श्यामबिहारी मिश्र (जन्म १८७३ ई०), रायबहादुर शुकदेवबिहारी मिश्र (जन्म १८७८ ई०) हैं। ये तीनों भाई उच्च राजकर्मचारी रहे। इन तीनों ने मिल-कर हिंदी में बहुत-सी रचनाएँ कीं, जिनमें से प्रमुख ये हैं—

देव ग्रंथावली (संपादित), *हिंदी-नवरत्न*, *भूषण ग्रंथावली*, *मिश्रबंधुविनोद* (४ भाग), *नेत्रोन्मीलन* (नाटक), *पुष्पांजलि*, *सुमनांजलि*, (निबंध) *पद्य पुष्पांजलि* (काव्य), *देव सुधा*, *हिंदी साहित्य का इतिहास* (१९३८) आदि।

हिंदी ग्रंथों का गहन अध्ययन करके इन्होंने हिंदी-साहित्य का एक खोजपूर्ण इति-हास लिखा। मिश्रबंधुओं की भाषा सरल तथा सुबोध है। जटिलता और व्याकरण की दुरूहता से ये बचे रहे। इन्होंने ब्रज-भाषा और

खड़ी बोली दोनों में ही कविता की है। काव्य में उपदेशात्मक प्रवृति अवश्य है, पर इन्होंने भावात्मक कविता भी की है।

मिश्रालंकार—दे० *अलंकार*।

मीराबाई (१४६८-१५६३ ई०)—जन्म मेड़ता (राजस्थान), मृत्यु द्वारिका। मेड़ता के राव रत्नसिंह की पुत्री और मेवाड़ के महाराणा सांगा के सुपुत्र भोजराज की पत्नी, जो विवाह के सात वर्ष पश्चात् विधवा हो गई थीं। आरंभ से ही ये कृष्ण की अनन्य भक्ता थीं। विधवा होने पर कृष्ण की उपासना ये पति के रूप में करने लगीं। साधु-संगति और कृष्ण-लीला के अतिरिक्त अन्य किसी कार्य में ये रुचि नहीं रखती थीं। इसपर इनका बहुत विरोध किया गया। इनके देवर ने इन्हें मारने के लिये इन्हें विष-मिश्रित दूध भी पिलाया, किंतु इनपर विष का कोई प्रभाव न हुआ। रात-दिन के विरोध से तंग आकर ये वृंदावन और फिर वहाँ से द्वारिका चली गईं। *नरसीजी का मायरा*, *गीतगोविंद की टीका*, *रागगोविंद* तथा *राग सोरठा के पद* इनकी ये चार रचनाएँ प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि इनकी तुलसीदास से भेंट तथा उनसे पत्र-व्यवहार हुआ था।

इनकी प्रेम-पीड़ा में निजीपन अधिक है। इन्होंने गोपियों का विरह-वर्णन न कर अपना विरह निवेदन किया है। इनके पदों से इनकी तीव्रानुभूति का परिचय मिलता है। मीरा ने अपनी तन्मयता के कारण अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की है, और हृदय की तीव्र संवेदना के कारण ही इनकी वाणी में इतना बल आ सका है। क्योंकि इन्होंने अपने इष्टदेव कृष्ण की उपासना प्रियतम या पति के रूप में की है, अतः इनकी कविता में रहस्य भावना पाई जाती है। इनकी बानी का गुजरात में बहुत आदर है। इनके पद कुछ राजस्थानी में और कुछ शुद्ध ब्रज-भाषा में हैं। विशेष दे० भुवनेश्वरनाथ मिश्र-कृत *मीरा की प्रेम साधना*, ब्रजरत्नदास-कृत *मीरा माधुरी*।

मुंड—एक राक्षस। दे० *शुंभनिशुंभ*।

मुकरी—वह कविता जिसमें पहिले कही हुई बात से मुकरते हुए कुछ और ही बात बना कर कही जाए। इसे 'कह-मुकरी', 'मुकरनी' और 'सखि' भी कहते हैं। यथा—मेरा मोसे सिंगार करावत, / आगे बैठ के मान बढ़ावत। / वासे चिक्कन ना कोउ दीसा, / ऐ सखी साजन? ना सखि सीसा॥ **खुसरो** ने इस प्रकार की बहुत-सी मुकरियाँ कही हैं। भारतेंदु ने भी मुकरनियाँ लिखी हैं।

मुक्तक—दे० *काव्य*।

मुक्तक-गद्य—संस्कृत शास्त्रकारों द्वारा समास-रहित गद्य को दिया गया नाम।

मुक्तक छंद—छंदशास्त्र के किसी भी बंधन को स्वीकार न करने वाला छंद। महावीरप्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने *प्रिय-प्रवास* संस्कृत वृत्तों में लिखा। इस प्रकार तुकबंदी का बंधन पहिले ही जाता रहा। जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत और अंत में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने छंद को छंदशास्त्र के नियमों से बिल्कुल ही मुक्त कर दिया। अब यह आवश्यक नहीं कि छंद की सभी पंक्तियाँ बराबर वर्णों या मात्राओं की हों। छंद केवल ताल और लय पर आश्रित रहता है। उ०—विजन बन-वल्लरी पर / सोती थी सुहाग भरी—/

स्नेह-स्वप्न मग्न / जुही की कली, / दृग बंद किये शिथिल पत्रांक में ।

मुक्ता (मोती)—कवि-प्रसिद्धि है कि स्वाती नक्षत्र में बरसे पानी की जो बूंदें समुद्र की सीपियों में गिर जाती हैं, वे मोती बन जाती हैं । भारत में मोती ताम्रपर्णी नदी में ही मिलते हैं ।

मुख संधि—दे० *संधि* ।

मुचुकुंद—मांधाता के पूत्र, एक सूर्यवंशी राजा। एक बार इन्होंने देवलोक में जाकर अनेक असुरों को पराजित कर देवताओं की रक्षा की थी । इंद्र ने इन्हें वरदान दिया था कि जो भी तुम्हें सोते हुए जगाएगा, वह तुम्हारी दृष्टि पड़ते ही भस्म हो जाएगा (दे० *कालयवन, भा० १०.५१, विष्णु० ५.२३ आदि*) । एक बार जब कुवेर ने अपने राक्षसों द्वारा इनकी सेना का नाश प्रारंभ किया, तब ये अपने पुरोहित वसिष्ठ की निंदा करने लगे । तब महर्षि ने अपने तप के प्रभाव से सब राक्षसों का नाश कर दिया। कुवेर के इस उपालंभ पर कि 'तुम पुरोहित की सहायता से पौरुष दिखाना चाहते हो', इन्होंने अपने बाहुबल से पृथ्वी को जीतकर राज्य किया (*म०, उ० १३२.६-११, शां० ७४*) ।

मुद्गल—एक ऋषि जो बड़े धर्मात्मा, दानी और परोपकारी थे । दुर्वासा ने इनकी परीक्षा ली थी, जिसमें ये सफल रहे (*म० व० २६०*)।

मुद्रा—१ एक अर्थालंकार जिसमें प्रकृत या प्रस्तुत अर्थ के अतिरिक्त पद्य में कुछ और भी साभिप्राय नाम निकलते हों । उ०—सुनि मुरली-सुर-धुनि सखि गो मति को सुबिबेक । / जमुनायकु को हित भयो, सरसइ हिय धरि टेक ।। यहाँ प्रस्तुत अर्थ के अतिरिक्त सुरधुनि (गंगा) गोमति (गोमती) जमुना और सरसइ (सरस्वती) नदियों के नाम भी सूचित होते हैं । २ हठयोग में विशेष अंग विन्यास । ये मुद्राएँ पाँच होती हैं—खेचरी, भूचरी, चाचरी, गोचरी और उन्मनी ।

मुद्राराक्षस—**विशाखदत्त** (ई० ४ वीं शती) का संस्कृत में एक प्रसिद्ध नाटक (अनू०) ।

इसमें वर्णित है कि किस प्रकार चाणक्य नंद के राजभक्त मंत्री राक्षस को चंद्रगुप्त मौर्य का मंत्री बनाने में सफल होता है । इस नाटक की कथा से ही मिलती-जुलती कथा *चंद्रगुप्त* नाटक की है ।

मुबारक, सैयद मुबारक अली विलग्रामी (जन्म १५८३ ई०)—एक रीति-कवि जिन्होंने दस अंगों को लेकर सौ-सौ दोहे बनाए थे । इनका प्राप्त ग्रंथ *अलक शतक* और *तिल शतक* उन्हीं के अंतर्गत है । इनकी कविता सरस और भावपूर्ण है ।

मुर—भौमासुर का अनुयायी एक दैत्य । भौमासुर को मारते समय, कृष्ण ने इसका वध किया था (*भा० १०.५६*) ।

मुरली—दे० *प्रिया विनोद* ।

मुरारिदान—जोधपुर-नरेश के आश्रित एक कवि और *यशवंत यशोभूषण* (१८५४ ई०, अलंकार-ग्रंथ) के रचयिता । अलंकारों के शुद्ध लक्षण निरूपण करने में इन्होंने अच्छा श्रम किया है और उत्तम पांडित्य दिखाया है ।

मुरारिदास (१८३८-१९०७ ई०)—सूरजमल के दत्तक पुत्र एक कवि और *डिंगलकोष* तथा *वंश-समुच्चय* के रचयिता । इनकी कविता प्राकृत-मिश्रित ब्रज-भाषा में है ।

मुष्टि—दे० *मुष्टिक*।

मुष्टिक—एक मल्ल जो मल्ल-युद्ध में बलराम द्वारा मारा गया था। कंस ने मल्ल-युद्ध का आयोजन कृष्ण और बलराम को मारने के लिये किया था (*भा० १०.४४*)।

मुहणोत नेणसी—जोधपुर-नरेश जसवंतसिंह के मंत्री एक डिंगल-लेखक और *मुहणोत नेणसी री ख्यात* (१६६३ ई०, ऐतिहासिक गद्य-ग्रंथ) के रचयिता।

मुहम्मद (ल० ५७०-६३२ ई०)—जन्म मक्का (अरब)। इस्लाम धर्म के प्रवर्त्तक। मक्के में जब इनका विरोध हुआ, तब ये मदीने चले गये। उसी समय से हिजरी सन् प्रारंभ होता है। *कुरान* इन्हीं पर प्रकट हुआ था।

मुहम्मद तुग़लक़—दिल्ली बादशाह (१३२५-५२ ई०)।

मुहम्मदशाह—दिल्ली बादशाह (१७१६-४८ ई०)।

मूर्त्तविधान—'कलाकार द्वारा किसी वस्तु या भाव को प्रस्तुत करते समय उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक आदि की कल्पना के सहारे उस भाव का सहायक एक बिंब या चित्र खींचना। कलाकार का अपना अनुभव उसकी कल्पना द्वारा खींचे गये ऐसे रूपों या चित्रों द्वारा ही उसके अभीष्ट अभिप्राय को स्पष्ट कर उसे सफल बनाता है और यह रूपविधान या मूर्त्तविधान ही उसकी वास्तविक सफलता है। इस शैली को मूर्त्तविधान कहते हैं। इससे मूर्त्त और अमूर्त्त भावों का संबंध तो स्थापित होता ही है, वर्ण्यविषय भी समृद्ध हो जाता है।'

मूर्तिमत्तावाद (*Imagism*)—आधुनिक अंग्रेजी और अमरीकी कवियों के एक दल द्वारा प्रवर्त्तित एक वाद, जिसमें विचारों और मनोभावों की अभिव्यक्ति के लिये यथार्थ मूर्त्तियों का प्रयोग किया जाता है। इस संप्रदाय के अनुयायी प्रतीकवादियों (*Symbolists*) की रहस्यात्मकता और अस्पष्टता से दूर रहते हैं। मूर्त्तिमत्तावादी कविता के विषय के लिये पूर्ण स्वतंत्रता, छंदों की अपेक्षा लयमयी भाषा की घोषणा करते हैं। वे एक भी ऐसा शब्द प्रयोग न करने का आदेश देते हैं, जो भाव-अभिव्यक्ति में योग न दे। इस संप्रदाय के प्रवर्त्तक कवि इंगलैंड में ह्यूम (T. E. Hulme; १८८१-१९१७ ई०), फ्लिंट (F. S. Flint), रिचर्ड ऑल्डिंगटन (Richard Aldington; १८९२-) और एलियट (T. S. Eliot; १८८८-) और अमरीका में एज्रा पाउँड (Ezra Pound; १८८५-), हिल्डा डूलिट्ल ("H. D.", Hilda Doolittle; १८८६, बाद में श्रीमती रिचर्ड ऑल्डिंगटन) और ऐमी लोवेल (Amy Lowell; १८७४-१९२५) हैं। ये कवि भी चीनी, जापानी, फ्रांसीसी और शास्त्रीय यूनानी कविता से प्रभावित थे। दे० *प्रयोगवाद*।

मूर्त्तविधानवाद—कल्पना के साथ मूर्त्त चित्र उपस्थित कर देने वाली शैली। दे० *मूर्त्तविधान*।

मूसा—यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म के पैग़ंबर, जिन्हें खुदा का नूर (प्रकाश) तूर पर्वत पर दिखाई पड़ा था, जिसे देखकर ये अचेत हो गये थे। खुदा के नूर से यह पर्वत भस्म हो गया था।

मृगमंदा—कश्यप और क्रोधा की पुत्री और पुलह की पत्नी। इससे पशु आदि प्राणियों की उत्पत्ति हुई।

मृगावती—**कुतबन** का एक प्रेम-काव्य (१५०१ ई०)।

इसमें वर्णित है कि किस प्रकार चंद्रगिरि का राजकुमार कंचनपुर की राजकुमारी मृगावती और रुक्मिणी से विवाह करने में समर्थ होता है। चंद्रगिरि के राजकुमार और मृगावती में प्रेम हो गया। मृगावती उड़ने की विद्या में निपुण थी। वह राजकुमार को छोड़कर कहीं उड़ गई। राजकुमार उसके वियोग में वियोगी हो गया और उसकी खोज में निकल पड़ा। मार्ग में उसने एक राक्षस के चंगुल से बचाई हुई रुक्मिणी नामक एक राजकुमारी से विवाह किया। अंत में उसे मृगावती प्राप्त हो गई। वह अपनी दोनों रानियों के साथ लौट आया। राजकुमार की मृत्यु पर दोनों रानियाँ सती हो गईं। 'कथा के बीच-बीच में प्रेममार्ग की कठिनाइयों का अच्छा वर्णन है, जो साधक के लिये बड़ा उपदेशप्रद है। इसमें रहस्य-भावना से भरे हुए भी कई स्थल हैं।' दे० *प्रेमकाव्य*।

मृच्छकटिक—**शूद्रक** (तृतीय शती ई० पू० ?) का संस्कृत में एक प्रकरण (रूपक) (अनू०), जिसमें उज्जायिनी की वेश्या वसंतसेना और चारुदत्त ब्राह्मण की प्रेम-लीला है। इसका कथानक बड़ा रोचक है। इसमें चरित्र चित्रण की प्रधानता है।

मृतसंजीवनी—एक बूटी जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसके खिलाने से मृत भी जी उठता है। दे० *द्रोणाचल*।

मेकल—अमरकंटक पर्वत का प्राचीन नाम। इस पर्वत से नर्मदा नदी निकलती है।

मेघदूत—**कालिदास** का संस्कृत में एक खंड-काव्य (अनू०), जिसमें एक निर्वासित यक्ष अपनी स्त्री को मेघ द्वारा संदेश भेजता है। वर्णन बहुत चित्ताकर्षक है। इसे आजकल गीति-काव्य कहा जाता है।

मेघनाद—रावण का एक वीर पुत्र। इसने जन्मते ही रोते समय, मेघ के समान गंभीर नाद किया था, इससे इसका नाम मेघनाद पड़ा (*अध्या० रा० उत्तरकांड १२*)। रावण का इंद्र से जब युद्ध हुआ, तब इसने इंद्र को बंदी बना लिया था। इसलिये यह 'इंद्रजित्' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। ब्रह्मा की आज्ञा से इसने इंद्र को मुक्त कर दिया था, किंतु इस शर्त पर कि अग्निदेव से मुझे ऐसा दिव्य रथ मिले कि जबतक मैं उस पर बैठा रहूँ, मुझे कोई न मार सके (*वा० रा० उ० २९-३०*)। लक्ष्मण इसका वध तभी कर सके थे, जब राम ने इसके दिव्य रथ को चूर-चूर कर दिया था (*वा० रा० यु० ९०*)। इसकी पत्नी का नाम सुलोचना (दे० यथा०) था। मेघनाद के पर्य्याय०—शक्रारि, इंद्रजित्, रावणात्मज।

मेनका—एक अप्सरा। इसने इंद्र की आज्ञा से विश्वामित्र की तपस्या भंग की और विश्वामित्र के संयोग से **शकुंतला** को जन्म दिया। राजा पृषत् भी इसपर मोहित हुआ था। पृषत् को इससे द्रुपद नामक पुत्र प्राप्त हुआ।

मेना—**हिमवान्** की पत्नी और **पार्वती** की माता।

मेरु—दे० *सुमेरु*।

मेरुतुंग—प्रसिद्ध जैन आचार्य और *प्रबंध चिंतामणि* (१४१८ ई०, ऐतिहासिक व्यक्तियों और राजाओं का चरित्र-वर्णन) के रचयिता। इन आख्यानों के अंतर्गत बीच में अपभ्रंश के पद्य

भी उद्धृत हैं। इस ग्रंथ में कुछ दोहे धाराधिपति राजा भोज के चाचा मुंज के नाम से भी हैं। मुंज के दोहे अपभ्रंश के बहुत ही पुराने नमूने कहे जा सकते हैं। दे० *जैन साहित्य*।

मैकाले (Macaulay), लार्ड—(१८००-५९ ई०) सुप्रीम कौन्सिल के सर्वप्रथम ग्राईन-सदस्य, जो कलकत्ता में १८३५ से १८४० तक रहे। इन्होंने हिंदुस्तानियों को देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा देने के स्थान पर अंग्रेज़ी के माध्यम की व्यवस्था की।

मैत्रेयी—एक बड़ी विदुषी, ब्रह्मवादिनी स्त्री और याज्ञवल्क्य की पत्नी। इनका याज्ञवल्क्य से संवाद का अनेक बार उल्लेख है (बृ० उ० २.४,४.५)।

मैथिली (विहारी)—मागधी प्राकृत से उत्पन्न एक भाषा। **विद्यापति** इसके सबसे बड़े कवि हुए हैं। विद्यापति के बाद इस भाषा में और भी कवि हुए हैं। संस्कृति और शब्द-भंडार की दृष्टि से इसका संबंध उत्तर प्रदेश से है। इस भाषा के शब्दों के उच्चारण भी बंगाली की अपेक्षा हिंदी से अधिक मिलते हैं। इस भाषा का एक रूप **भोजपुरी** है।

मैथिलीशरण गुप्त (१८८६ ई०-)—जन्म चिरगाँव (झाँसी)। इनके पिता सेठ रामचरण गुप्त एक अच्छे कवि थे। अतः गुप्त जी में कविता-शक्ति पैतृक थी। **महावीरप्रसाद द्विवेदी** से इन्हें प्रोत्साहन मिला। १९०६ में इनकी खड़ी बोली की कविताएँ 'सरस्वती' में निकलने लगीं। यद्यपि ये परम वैष्णव हैं, तथापि सब धर्मों के प्रति उदार और सहिष्णु हैं। इनकी रचनाएँ इस प्रकार हैं—

काव्य—*रंग में भंग* (१९१०), *जयद्रथ वध* (१९१०), *भारत भारती* (१९१२), *पद्य-प्रबंध*, *किसान* (वर्त्तमान भारतीय किसानों की करुणाजनक अवस्था का वर्णन), *वैतालिक*, *शकुंतला*, *पत्रावली*, *पंचवटी* (१९२५), *स्वदेशी संगीत*, *हिंदू*, *त्रिपथगा* (*वक-संहार*, *वनवैभव* तथा *सैरंध्री* का संग्रह), *शक्ति*, *गुरुकुल* (सिख गुरुओं का वर्णन), *विकट भट* (जोधपुर के एक सरदार देवीसिंह, तथा उसके पुत्र और पौत्र की वीरता का वर्णन), *झंकार* (रहस्यवादी रचनाएँ), *साकेत* (१९३२), *यशोधरा* (१९३३), *मंगलघट*, *द्वापर* (कृष्ण-चरित्र वर्णन), *सिद्धराज* (१९३६), *नहुष* (मनुष्य के शुभ कर्मों द्वारा उत्थान, दुष्कर्मों से पतन व पुनरुत्थान के लिये दृढ़ संकल्पों की कथा), *कुणालगीत* (१९४२) (महाराजा अशोक के पुत्र कुणाल की कष्ट-सहिष्णुता और त्याग-वृत्ति का वर्णन), *काबा और करबला* (हुसैन और उनके परिवार की कष्टपूर्ण कथा के सहारे मुस्लिम संस्कृति का वर्णन), *अर्जन और विसर्जन* (इसमें ईसाई संस्कृति प्रतिबिंबित है), *विश्व वेदना*, *मौर्य विजय*, *अजित्* आदि।

नाटक—*तिलोत्तमा*, *चंद्रहास* (१९१६), *अनघ* (१९२५)।

अनूदित रचनाएँ—*वीरांगना*, *मेघनाद वध*, *पलासी-युद्ध*, *विरहिणी व्रजांगना* (बँगला से), *उमरखैयाम* की रुबाइयों का अनुवाद, भास-कृत *स्वप्नवासवदत्ता* का अनुवाद।

इनकी रचनाओं में स्वदेश प्रेम, समाज सुधार, राजनीतिक आंदोलन, सत्याग्रह, अहिंसा, विश्वप्रेम, किसानों और श्रमजीवियों के प्रति प्रेम और सम्मान आदि की झलक मिलती है। इनकी प्रतिभा का पूर्ण विकास *साकेत* और *यशोधरा* महाकाव्यों में दिखाई देता है। इनकी भाषा शुद्ध एवं संस्कृतगर्भित

होते हुए भी सुबोध है। इन्होंने नये छंदों का निर्माण किया है। अलंकारों का प्रयोग बड़ा कौशलपूर्ण हुआ है। भाषा में लक्षणा और व्यंजना के सहारे अच्छा चमत्कार उत्पन्न किया गया है। विशेष दे० गिरीश-कृत *गुप्तजी की काव्यधारा*, सत्येंद्र-कृत *गुप्तजी की कला*, श्यामनंदन-कृत *गुप्तजी की कृतियाँ*।

मैनसात—**साधन** का एक काव्य (लि० का० १६६७ के और १६७० ई० के मध्य), जिसमें मालन रतना द्वारा रानी मैना के पातिव्रत्य की परीक्षा की कथा वर्णित है।

मैनाक—हिमालय और मेना का पुत्र (*ह० वं० १.१८*) एक पर्वत। इंद्र ने जब पर्वतों के पंख काटने प्रारंभ किये, तब यह समुद्र में जा छिपा था। इसी कारण अबतक यह पंखों वाला कहा जाता है। समुद्र की प्रेरणा से इसने लंका जाते समय हनुमान को अपने शिखर पर आश्रय दिया था (*वा० रा० सुं० १.१०५*)। यथा—सिंधु बचन सुनि कान तुरत उठ्यौ मैनाक तब—*तुलसी*।

मोटनक—ता जा ज लगा कहि मोटनका (त ज ज ल ग=११ व० छंद)। उ०—तू जो जलै गोप लली भरिकै। दीनो हरि को बिनती करिकै।

मोती—दे० *मुक्ता*।

मोपासाँ (Maupassant) (१८५०-९३)—एक फ्रांसीसी लेखक, जिनके दो उपन्यास *यौवन की भूल* और *स्त्री का हृदय* तथा अनेक कहानियाँ—*मोपासाँ की कहानियाँ* और *मानव हृदय की कथाएँ* नाम से अनूदित हैं।

मोरध्वज—दे० *मयूरध्वज*।

मोहन—१ (आ० का० १६१० ई०)—मथुरा निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि और *केलिकल्लोल* के रचयिता। २ (आ० का० १८४१ ई०)—अत्रिग्राम (त्रिकूट) निवासी, एक भक्त कवि और *चित्रकूट माहात्म्य* के रचयिता।

मोहनदास करमचंद गांधी (महात्मा गांधी) (१८६९-१९४८ ई०)—राष्ट्रपिता, और बीसवीं शती के विख्यात संत-राजनीतिज्ञ। जन्म पोरबंदर (सौराष्ट्र)। १८९१ में इन्होंने इंगलैंड से बैरिस्ट्री की परीक्षा पास की। दक्षिण अफ्रीका में इन्होंने वकालत प्रारंभ की। वहाँ ये रस्किन, टोल्स्टोय की पुस्तकों तथा *भगवद्गीता* से प्रभावित हुए। १९१५ में अहमदाबाद में साबरमती के तट पर आश्रम स्थापित किया। इसके पश्चात् इन्होंने किसानों तथा मज़दूरों के कई आंदोलनों में भाग लिया। १९१९ में 'रौलट ऐक्ट' का विरोध किया। जलियानवाला बाग़ में गोलीकांड के पश्चात् देश में उत्तेजना फैल गई। १९२० में इन्होंने असहयोग आंदोलन प्रारंभ कर दिया। १९२१ तक २०-२५ हज़ार व्यक्ति जेलों में पहुँच चुके थे। कांग्रेस में परिवर्तनवादी और अपरिवर्तनवादी दो पक्ष हो गये थे। इन्होंने १९३० में दांडी की यात्रा कर 'नमक सत्याग्रह' प्रारंभ कर दिया। कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि बनकर 'गोलमेज़ सम्मेलन' में सम्मिलित होने के लिये ये लंदन गये। अस्पृश्यता निवारण के संबंध में लोगों में जागृति पैदा करने के लिये इन्होंने ११ दिन का उपवास किया। १९३३ में 'हरिजन' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन भी किया। १९३४ में इन्होंने कांग्रेस से त्यागपत्र देकर ग्रामोद्योग का कार्य प्रारंभ कर दिया। ये सेवाग्राम (वर्धा) में रहने लगे। १९४२ में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव

कांग्रेस द्वारा पास किये जाने पर इन्हें जेल भेज दिया गया। १९४४ में इनकी पत्नी कस्तूरबा का जेल में देहांत हो गया। १५ अगस्त, १९४७ को भारत स्वाधीन हो गया, और जनवरी १९४८ में इनकी हत्या कर दी गई।

गांधीजी को हिंदू-मुसलिम एकता, सत्य एवं अहिंसा, ग्रामोद्योग, अस्पृश्यता-निवारण चरखा, खादी में अटल विश्वास था। दक्षिण भारत में हिंदी के प्रचार का श्रेय मुख्यतया इन्हीं को था। इनकी लिखी अंग्रेज़ी और गुजराती पुस्तकों का भारत की प्रायः सभी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। स्वाधीनता-प्राप्ति के लिये महात्मा गांधी द्वारा चलाये हुए अनेक आंदोलनों पर लेखकों तथा कवियों ने अनेक रचनाएँ कीं। स्वयं महात्मा गांधी को लक्ष्य करके अनेक कविताएँ लिखी गईं। गांधी जी के सिद्धांतों पर भी रचनाएँ हुईं। इस प्रकार हिंदी-साहित्य पर गांधी जी का प्रभाव पर्याप्त मात्रा में पड़ा। दे० *बापू*।

मोहनलाल द्विज (आ० का० ११९० ई०)—कवि और *पत्तलि* (कृष्ण की बारात के भोजन की सामग्री का वर्णन) के रचयिता। भाषा आदि की दृष्टि से इनका समय १८ वीं शती मानना चाहिये।

मोहनलाल मेहतो 'वियोगी' (१८९२ ई०-)—कवि। *अछूत* (१९२५), *निर्माल्य* (१९२६), *एक तारा* (१९२७), *कल्पना* (१९३५) (काव्य-संग्रह) आदि के रचयिता।

मोहनलाल विष्णुलाल पांड्य (जन्म १८५१ ई०)—काशी निवासी, *पृथ्वीराज रासो* के प्रथम 'समय' (अध्याय) के संपादक, *अंग्रेज़ स्तोत्र*, *प्रेम-प्रबोधनी*, *वसंत-प्रबोधनी* के रचयिता, भारतेंदु-कृत 'हरिश्चंद्र-चंद्रिका' के प्रकाशक।

मोहिनी—दैत्यों और देवताओं ने मिलकर समुद्र को मथा और अमृत आदि रत्न निकाले। जब अमृत बाँटने का प्रश्न आया, तब विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर लिया और अपनी माया भरी चितवन से दैत्यों को मोहित कर उनसे अपने को पंच स्वीकार करा लिया। मोहिनी ने दैत्यों और देवताओं को पृथक्-पृथक् पंक्ति में बिठा दिया। फिर इन्होंने दैत्यों को तो अपनी चितवन से मुग्ध किये रखा और देवताओं को अमृत पिलाने लगीं (दे० *राहु*, *भा० १.३,८.८-१२*)।

मौर्य—क्षत्रियों का एक वंश जिसमें सम्राट् चंद्रगुप्त और अशोक उत्पन्न हुए थे।

मौलिएर (Moliere) (१६२२-७३ ई०)—एक फ्रांसीसी सुखांत-नाटककार, जिनके कई नाटक *मार मार कर हकीम*, *ठोंक-पीट कर वैद्यराज*, *आँखों में धूल*, *हवाई डॉक्टर*, *साहब बहादुर*, *नाक में दम*, *लाल-बुझक्कड़ और प्राणनाथ* नाम से अनूदित हैं। अपने समय की सामाजिक बुराइयों का उप-हास ही इनके नाटकों का विषय है।

य

यक्ष—एक देव-योनि (*विद्याधरोऽप्सरो-यक्ष-रक्षो-गंधर्व-किन्नराः / पिशाचो गुह्यकः सिद्धो भूतोऽमी देव-योनयः—अमरकोष स्वर्गवर्ग ११*)। ये कुबेर के धन के रक्षक माने जाते हैं।

यगण—दे० *गण*।

यज्ञदत्त शर्मा (१९१६ ई०-)—आधुनिक

उपन्यासकार। इनका मुख्य उपन्यास *इन्सान* (१६४१) है।

यज्ञपत्नी—यज्ञ करने वाले माथुर ब्राह्मणों की वे स्त्रियाँ, जो अपने पतियों के मना करने पर भी कृष्ण के लिये भोजन लेकर वन में गई थीं।

यति—पद्य की पंक्ति के बीच और अंत में ठहरने का नियमित स्थान। यति-नियम का पालन न करने से यति-भंग का दोष हो जाता है।

यत्न अवस्था—दे० *अवस्था*।

यथार्थवाद (*Realism*)—इसका प्रयोग साहित्यिक रचनाओं के लिये होता है, जिनका निर्माण "वास्तविक" जीवन के अनुकरण पर हुआ है और जो अपना विषय वास्तविक संसार से लेती हैं। यथार्थवादी लेखक वह है जो अपनी सामग्री के प्रयोग में एक बाह्य (*objective*) और छायाचित्रीय (*photographic*) दृष्टिकोण अपनाता है। रचना में वह अपनी आत्मगत (*subjective*) धारणाएँ और भावनाएँ व्यक्त नहीं करता। इस प्रकार यथार्थवादियों का मत है कि सत्य की प्राप्ति के लिये एक पूर्णतया निर्पेक्ष दृष्टिकोण अपनाना सम्भव है। इसलिये यथार्थवादी साहित्य में ये विशेषता सूचक चिह्न बहुधा दृष्टिगोचर होते हैं—स्थानीय दृश्य और वातावरण, समकालीन घटनाओं और रीतियों का उल्लेख, स्थानों और पात्रों का सूक्ष्म विवरण (चाहे विषय के साथ उनका संबंध कितना ही नगण्य हो), ग्रामीणता का खुला और शुद्ध चित्रण, व्यापार और विज्ञान के पारिभाषिक तथा अन्य शब्दों का प्रयोग, दस्तावेज़, पत्र, संस्मरण आदि का अंतःनिवेश। यथार्थवाद शब्द का प्रयोग स्वाभाविकतावाद (*Naturalism* के साथ) विशेष रूप से १६ वीं और २० वीं शती के उन उपन्यासकारों के लिये भी हुआ है, जिन्होंने यथार्थवादी सिद्धांतों को स्वीकार किया अथवा उनका प्रयोग किया। स्वच्छंदतावादियों (*Romantics*) ने यथार्थवाद का घोर विरोध किया है। आधुनिक कथा-साहित्य में यथार्थवाद-चित्रण पर बड़ा बल दिया जा रहा है। पर यथार्थवाद जीवन के असुंदर और अश्लील रूप का ही माध्यम बन गया है, जबकि आदर्शवाद में जीवन की उदात्त और सदाचारपूर्ण भावनाओं का समर्थन रहता है।

यथासंख्या (यथाक्रम)—एक अर्थालंकार जिसमें जिस क्रम से कुछ प्रथम कहा हो, उसी क्रम से तत्संबंधी अन्य वस्तुओं का कथन होता हो। उ०—अमिय, हलाहल, मदभरे, स्वेत, स्याम, रतनार / जियत, मरत, झुकि झुकि परत, जेहि चितवत एक बार। —*रसलीन*।

यदु—यदुवंशियों के आदि पुरुष, और ययाति तथा देवयानी के पुत्र (*म० आ० ८२*)। ययाति ने इन्हें अपना बुढ़ापा लेने के लिये कहा (८४), किंतु इन्होंने अस्वीकार कर दिया। इसपर ययाति ने इन्हें पूरा राज्य न देकर थोड़ा भाग दिया (*भा० ६.१६.२३*)।

यदुकुलनाश—दे० *सांब*।

यम—विवस्वत् और संज्ञा (दे० यथा०) के पुत्र (*मत्स्य० ११.६*) और यमुना के भाई। ब्रह्मा की आज्ञा से ये समस्त प्राणियों को कर्मानुसार फल का विधान करते हैं (*पद्म० सृ० ८*)। मांडव्य (दे० यथा०) के शाप से इन्हें विदुर के रूप में जन्म लेना पड़ा (*भा० १.१३.*

१५)। युधिष्ठिर इन्हीं के पुत्र थे (दे० *कुंती*)। यम के पर्य्याय०—वैवस्वत, सूर्यपुत्र, काल, अंतक, कृतांत, धर्म, धर्मराज, यमुनाभ्राता, यमराज, कीनाश आदि।

यमक—एक शब्दालंकार जिसमें कोई शब्द अथवा कुछ अक्षर उसी रूप में और उसी क्रम से पुनः आते हैं, किंतु उनका अर्थ बदल जाता है। उ०—कनक कनक तें सौगुनो मादकता अधिकाय।—*बिहारी*। यहाँ कनक के दो अर्थ हैं—१ सुवर्ण, २ धतूरा।

यमराज—दे० *यम*।

यमलार्जुन—कुबेर के दो पुत्र—नलकूबर और मणिग्रीव। ये धन, सौंदर्य और ऐश्वर्य से पूर्ण थे। एक बार ये दोनों नारद के संमुख भी मदिरापान से उन्मत्त अप्सराओं के साथ जल-क्रीड़ा करते रहे। इसपर नारद ने इन दोनों को यमलार्जुन होने का शाप दिया, अतः ये नंद-यशोदा के घर यमलार्जुन बने। कृष्ण ने इन वृक्षों को उखाड़ कर इनका उद्धार किया था (*भा० १०.१०*)।

यमुना—उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध नदी। पुराणानुसार ये सूर्य और संज्ञा की पुत्री तथा यम की बहिन थीं। इनका नाम यमी था (*भा० ६.६.४०,८.१३ ६*)। यमुना के पर्य्याय०—सूर्यसुता, **कालिंदी,** शमनस्वसा, कृष्णा, अर्कजा, तरणिजा।

यमुनाष्टक—**वल्लभाचार्य** की एक पद्यमय रचना, जिसका अनुवाद **विट्ठलनाथ** (जन्म १४५८ ई०) ने **ब्रज-भाषा-गद्य** में किया था।

यमुनोत्तरी—हिमालय की बंदरपुच्छ श्रृंखला में एक पवित्र स्थान, जहाँ से यमुना नदी निकली है। रामायणानुसार इसके 'यामुन' और 'कलिंदगिरि' नाम भी हैं।

ययाति—राजा नहुष के पुत्र और देवयानी के पति। शुक्राचार्य ने इन्हें वृद्ध हो जाने का शाप दिया था (दे० *देवयानी*)। अपने पुत्र पुरु की युवावस्था लेकर इन्होंने १००० वर्ष तक सुख भोगा, किंतु बाद में पुरु की युवावस्था उसे लौटा कर ये तप के लिये निकल गये। दे० *यदु*। ययाति को देवयानी से दो पुत्र (यदु और तुर्वसु) और **शर्मिष्ठा** से तीन पुत्र (अनु, द्रुह्यु और पुरु) प्राप्त हुए (*म० आ० ७५-९३, भा० ९.१८-१९ आदि*)।

यवक्रीत—भरद्वाज ऋषि का पुत्र, जिसे इंद्र ने उपदेश दिया था कि वेदों का ज्ञान बिना स्वाध्याय के संभव नहीं है (*म० व० १३५-३८*)।

यवनिका—नाटक में रंगमंच पर बाह्य पर्दा। इस शब्द को लेकर यह विवाद उठ खड़ा हुआ था कि भारतीय नाटक तथा रंगमंच पर यूनानी प्रभाव है। परंतु अनेक प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध हो गया है कि भारतीय नाटक स्वतंत्र रूप में ही विकसित हुआ है।

यशपाल (१९०४ ई०-)—प्रगतिवादी उपन्यासकार और *दादा-कामरेड* (१९४१), *वो दुनियाँ, चक्कर क्लब, देश द्रोही* आदि के रचयिता। *दादा-कामरेड* में समाजवादी विचारधारा का परिचय मिलता है, किंतु वह केवल बौद्धिक ही है, 'क्रियात्मक रूप से उसका नायक अपने आदर्शों की अपेक्षा अपनी वासनाओं को मूर्तिमान् करता है।'

यशोदा—**नंद** की पत्नी और कृष्ण की पालिका-माता (*भा० १०.२.९*)। पर्य्याय०—जसुमति, यशुदा, नंदरानी, नंदमहरि।

यशोदानंदन (जन्म १७७१ ई०)—एक रीति-कवि। *बरवै-नायिका-भेद* के रचयिता। कोमलता और सरसता की दृष्टि से इनकी यह रचना **रहीम** से टक्कर लेने वाली कही जाती है।

यशोधरा—गौतम बुद्ध की पत्नी और राहुल की माता। गौतम इन्हें और राहुल को सोते छोड़, तप के लिये वन चले गये थे।

यशोधरा—**मैथिलीशरण गुप्त** का एक काव्य (९३२ ई०), जिसमें **गौतम बुद्ध** की पत्नी **यशोधरा** की जीवन-गाथा है।

इसमें सच्चे त्याग का आदर्श दिखलाया गया है। यशोधरा में आँचल के दूध के रूप में राहुल के प्रति वात्सल्य है और आँखों के पानी के रूप में वियोगिनी की गर्वमयी वेदना है। यशोधरा का इस बात का दुःख नहीं कि वे वन को चले गये, किंतु दुःख इसका है कि वे उसे पथ की बाधा समझ कर उससे बिना कहे चले गये। यही है वर्त्तमान युग की नारी का गौरव। यशोधरा तथा उसके साथ *साकेत* में कवि की प्रतिभा का पूर्ण विकास मिलता है।

याज्ञवल्क्य—वैशंपायन के शिष्य एक ऋषि (*विष्णु० ३.५*)। एक बार किसी सभा में समय पर न आने के कारण इन्हें ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त लगा। वैशंपायन ने इनसे कहा—'तुम अभी छोटे हो, तुम्हारे स्थान पर मैं प्रायश्चित्त कर दूँगा।' पर ये अपने हठ पर अड़े रहे। इसपर क्रुद्ध होकर गुरु ने कहा—'मेरे द्वारा पढ़ी हुई *यजुर्वेद* की शाखा और समस्त ज्ञान वमन कर दो और मेरी शिष्यता छोड़ दो।' गुरु की आज्ञा का पालन कर इन्होंने पढ़ी हुई विद्या को वमन कर दिया (*वायु० १.६१, भा० १२.६*)। बाद में इन्होंने सूर्योपासना कर सूर्य से *शुक्लयजुर्वेद* प्राप्त किया और उसपर *शतपथ ब्राह्मण* नामक प्रसिद्ध भाष्य लिखा। इनकी मैत्रेयी और कात्यायनी दो पत्नियाँ थीं। मैत्रेयी ने ब्रह्मविद्या से परम पद प्राप्त किया। भरद्वाज-कन्या कात्यायनी से इन्हें तीन पुत्र प्राप्त हुए (*स्कंद० ६.१.१२९-३०*)। परम विदुषी महिला गार्गी से इनका शास्त्रार्थ हुआ था। एक बार राजा जनक ने सुवर्ण मंडित शृंग वाली सहस्र गौओं को सभा में एकत्र किया और कहा कि जो कोई ब्रह्मनिष्ठ हो, वह इन गौओं को ले जाए। याज्ञवल्क्य अपने शिष्य द्वारा उन्हें अपने आश्रम में ले गये (*वायु० १.६०*)। इनकी रचित एक *याज्ञवल्क्य स्मृति* भी है। इस स्मृति का दायभाग प्रकरण आज भी क़ानून के रूप में माना जाता है।

यात्रा-साहित्य—शिक्षा, सूचना तथा मनोरंजन के लिये लिखा गया यात्राओं के विवरण का साहित्य। हिंदी में शिवप्रसाद गुप्त-कृत *पृथ्वी प्रदक्षिणा*, रामनारायण मिश्र तथा गौरीशंकर प्रसाद-कृत *यूरोप यात्रा के छः मास*, महेशप्रसाद-कृत *मेरी ईरान यात्रा*, रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी-कृत *पैरों में पंख बाँध कर* (इंगलैंड की यात्रा संबंधी) आदि पुस्तकें हैं। **राहुल सांकृत्यायन** ने तिब्बत और हिमालय की यात्रा के संबंध में खूब लिखा है। इनकी *सोवियत भूमि* भी पर्याप्त प्रसिद्ध है। **धीरेंद्र वर्मा** के यात्रा संबंधी लेख भी मनोरंजक और ज्ञानप्रद हैं। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने भी *मेरी कैलास यात्रा* लिखी है।

यारी साहब (आ० का० १६६८-१७२३ ई०)—दिल्ली निवासी एक संत, जिनके कवित्त, झूलने और साखियाँ प्रसिद्ध हैं।

युग—पुराणानुसार काल के चार विभाग—सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग।

युधिष्ठिर—पांडु के क्षेत्रज, और धर्म तथा कुंती के औरस पुत्र। ये पांडवों में ज्येष्ठ थे। ये बड़े सत्यवादी और धर्मपरायण थे। धृतराष्ट्र ने इन्हें युवराज बनाया था (*म० आ० १३६*)। पिता के इस व्यवहार से असंतुष्ट होकर दुर्योधन पांडवों का सौभाग्य नष्ट करने की चेष्टा करने लगा (*१४८*)। दे० *दुर्योधन*। महाभारत-युद्ध में कृष्ण ने इनसे यह बात असत्य कहलवानी चाही थी कि 'अश्वत्थामा मारा गया।' अंत में विवश होकर इन्होंने इतना कहा—'अश्वत्थामा मारा गया, हाथी या मनुष्य।' पिछला वाक्यखंड इन्होंने कुछ धीरे से कहा। सत्य को छिपाने का इनके संपूर्ण जीवन में यही एक उदाहरण मिलता है (*म० द्रो० १९०*)। महाभारत-युद्ध के अनंतर ये सिंहासन पर बैठे थे (*म० आश्व० १*)। बाद में अर्जुन-पौत्र परीक्षित को राज्य देकर ये अपने भाइयों और द्रौपदी के साथ महाप्रस्थान के लिये चल दिये। मार्ग में जब द्रौपदी और इनके भाइयों की मृत्यु हो गई, तब इंद्र इन्हें सशरीर स्वर्ग ले गये। इनके साथ एक कुत्ता (धर्मराज) भी था। पर्य्याय०—धर्मराज, अजातशत्रु, कुरुराय, कौंतेय।

यूनुस—एक पैग़ंबर। इन्हें एक मछली खा गई थी, पर बाद में ये उसके पेट में से निकल गये थे।

यूरीपिडीज़ (Euripides) (४८०-४०६ ई० पू०)—एक महान् यूनानी दुःखांत नाटककार। इनके ९० नाटकों में से केवल १२ प्राप्त हैं।

यूसुफ़—एक प्रेमी जो अपने उच्च चरित्र के लिये प्रसिद्ध है। मिस्र की राजकुमारी **ज़ुलेखा** ने इसकी सुंदरता को देखकर इससे प्रेम-याचना की। किंतु इसके अस्वीकार करने पर इसे कारागार में भेज दिया गया। ठीक तथ्य ज्ञात होने पर इसे मिस्र का राजा बना दिया गया और ज़ुलेखा से इसका विवाह भी हो गया। ये अपनी सुंदरता के लिये भी प्रसिद्ध हैं।

योगकन्या—यशोदा की कन्या, जिसे वसुदेव ने कृष्ण के स्थान पर देवकी के पास लिटा दिया था। **कंस** ने इसे मार डाला था।

योग चंद्र मुनि (ई० १२ वीं शती)—प्रसिद्ध जैन दोहाकार। *योगसार* (आध्यात्मिक ग्रंथ) के रचयिता। इनके इस ग्रंथ में हिंदी अपना स्पष्ट रूप ग्रहण करती प्रतीत होती है। दे० *जैन साहित्य*।

योगमाया—१ भागवती। विष्णु की माया। २ वह कन्या जो यशोदा के गर्भ से उत्पन्न हुई और जिसे कंस ने मार डाला था। यह स्वयं देवी थी (*भा० १०.४*)। ३ जगत् को उत्पन्न करने वाली भगवान् की शक्ति।

र

रंगभूमि—**प्रेमचंद** का तृतीय मुख्य उपन्यास (१९२४ ई०)।

पाँडेपुर, बनारस का अंधा सूरदास अपनी भूमि ईसाई पूँजीपति जॉनसेवक को सिगरेट का कारखाना खोलने के लिये नहीं बेचना चाहता था। जॉनसेवक की पुत्री सोफिया इंदु की सखी थी। इंदु कुँवर भरतसिंह की पुत्री तथा बनारस म्युनिसिपल बोर्ड के प्रधान राजा महेंद्रकुमार की पत्नी थी। सोफिया और इंदु के भाई

विनयसिंह में प्रेम प्रारंभ हो गया। पता लगने पर विनय की माता जाह्नवी ने विनय को जनसेवा के कार्य के लिये उदयपुर भेज दिया। सोफिया और इंदु की मैत्री के फल-स्वरूप महेंद्रकुमार ने जॉनसेवक को सूरा की भूमि दिलवा दी। सोफिया मजिस्ट्रेट क्लार्क से मित्रता करके उससे जॉनसेवक द्वारा सूरदास की भूमि लेने की आज्ञा रद्द करवानी चाही। महेंद्रकुमार ने इसे अपने आत्मसम्मान का प्रश्न बना लिया। उनके प्रयत्नों से क्लार्क का तबादला हो गया और वह बनारस से उदयपुर चला गया। इस प्रकार विनय और क्लार्क दोनों उदयपुर पहुँच गये। दोनों में संघर्ष हो रहा था। इस संघर्ष में विनय को जेल भी जाना पड़ा। सोफिया क्लार्क के पास उदयपुर पहुँच गई। वह क्लार्क से केवल इसलिये संबंध रखे हुए थी कि इस उपाय से वह विनय का कुछ उपकार कर सकेगी। विनय जेल से छूट गया। उसी दिन क्लार्क की नीति के विरोध में प्रदर्शन किया जा रहा था। विनय क्लार्क के बँगले पर पहुँचा। वीरपालसिंह नामक राजद्रोही सोफिया को उठा कर घने वन में ले गया। विनय की सोफिया और वीरपालसिंह से भेंट हुई। सोफिया की यह धारणा हो गई थी कि विनय जनता का पक्ष छोड़कर अधिकारियों से मिल गया है, इसलिये उसने विनय को खूब फटकारा। बनारस जाते समय विनय की भेंट सोफिया से ट्रेन में संयोगवश हो गई। सोफिया ने सच्ची स्थिति का परिचय पा लिया था। उसने विनय से क्षमा माँगी। एक वर्ष एकांत स्थान में निवास करने के पश्चात् विनय और सोफिया बनारस आगये।

सूरदास की ख्याति और प्रतिष्ठा बढ़ती जा रही थी। अब एक नई समस्या उपस्थित हो गई। जॉनसेवक ने यह प्रस्ताव किया कि उसके कारखाने के मज़दूरों के लिये पाँडेपुर की बस्ती खाली की जाए। सूरदास ने प्रतिज्ञा की कि वह सत्याग्रह करेगा। विनय और सोफिया स्वयंसेवकों का नया संघटन करने में तत्पर हो गये। महेंद्रकुमार ने पांडेपुर के मकानों के गिराने की आज्ञा दे दी। सभी मकान गिराए जा चुके थे, केवल सूरदास की झोंपड़ी ही रह गई थी। सूरदास अपनी झोंपड़ी के पास चुपचाप खड़ा रहता। हज़ारों की भीड़ इस दृश्य को देखने आती। स्वयंसेवकों के जत्थे शांति बनाए रखने की चेष्टा कर रहे थे, किंतु उत्तेजना बढ़ती जाती थी। अचानक एक गोली सूरदास को आकर लगी। वह निश्चेष्ट होकर गिर पड़ा। विनय के संबंध में जनता पूरी तरह विश्वस्त न थी। उसने अपना देशप्रेम सिद्ध करने के लिये आत्महत्या कर ली। इंद्रदत्त नामक एक और स्वयंसेवक सैनिकों की गोली का शिकार हुआ। संध्या होते ही हज़ारों लाखों की भीड़ शहीदों के शव को लेकर गंगा-तट पर पहुँची। सूरदास को यद्यपि गोली गहरी लगी थी, पर उसमें असाधारण जीवट था। अस्पताल में उसकी चिकित्सा होती रही। सोफिया, जाह्नवी, इंदु, भरतसिंह सभी उसकी शुश्रूषा कर रहे थे। यहाँ तक कि राजा महेंद्रकुमार और जॉनसेवक भी उसे देखने आए थे। सोफिया विनय के निधन से अत्यंत संतप्ता थी। अगले ही दिन वह गंगा में डूब गई।

इस उपन्यास में प्रेमचंद ने औद्योगिक सभ्यता के दुर्गुणों की ओर विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट कराया है। ग्रामीण जीवन की सरलता और स्वच्छता के स्थान पर

औद्योगिक सभ्यता की जटिलता, पूँजी का केंद्रीकरण, मजदूरों के नैतिक पतन आदि दुर्गुणों का उल्लेख किया गया है। साथ ही इस उपन्यास में देश में १६२० ई० के आस-पास घटित राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। छोटी-छोटी घटनाओं के विस्तृत विवेचन से कथावस्तु आवश्यकता से अधिक लंबी हो गई है। इसलिये आकार की दृष्टि से *रंगभूमि* प्रेमचंद का सब से बड़ा उपन्यास है। यह दो भागों में लिखा गया है। इसमें लेखक ने पहिली बार चरित्र-प्रधान उपन्यास लिखने में सफलता प्राप्त की है। पर कथावस्तु के अनावश्यक विस्तार की भाँति अनावश्यक पात्रों की भी इसमें कमी नहीं है।

रंगमंच—विशेष प्रकार से बनाया गया मंच, जिसपर नाटक का अभिनय हो। यद्यपि अभिनेयत्व के अभाव के कारण किसी नाटक को हेय नहीं ठहराया जा सकता, तथापि नाटक का मुख्य लक्ष्य तो उसका रंगमंच पर अभिनय ही है और इसी कारण उसे दृश्य काव्य माना गया है। भरतमुनि ने *नाट्यशास्त्र* में तीन प्रकार की नाट्यशालाओं (*चतुरस्र*—जिसकी लंबाई चौड़ाई बराबर हो, *विकृष्ट*—जिसकी लंबाई चौड़ाई से दूनी हो और *त्र्यस्र*—त्रिकोण के आकार की) का उल्लेख किया है। इनके भी आकार के हिसाब से ज्येष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ तीन भेद हैं। विकृष्ट ही स्पष्टतः इनमें अधिक उपयोगी ठहरता है। नाट्यशाला में दो सम भाग रहते थे। पीछे का भाग अभिनय के लिये और आगे का भाग दर्शकों के लिये। पिछले भाग के दो और भाग रहते थे। सबसे पिछले भाग को नेपथ्य-गृह कहते थे, जो सूचनाएँ देने, ध्वनि करने या वस्त्र-वेष बदलने के काम आता था। नेपथ्य के बाहर के रंगमंच के दो भाग होते थे—रंगशीर्ष और रंगपीठ। दोनों के बीच यवनिका रहती थी। शीर्ष पीठ से कुछ ऊँचा रहता था और इसमें विशेष अभिनय होता था। नेपथ्य-गृह और रंगशीर्ष के बीच में दो द्वार होते थे। रंगपीठ या परदे के अगले भाग में नृत्य-गान होता था और सूत्रधार यहीं से वस्तु की सूचना देता था। इसी में एक ओर संगीत-समाज का भी स्थान नियत रहता था। आगे का भाग दर्शकों के लिये होता था, जिसमें भिन्न-भिन्न वर्ण के लोगों के लिये पृथक्-पृथक् बैठकें होती थीं।

जब हिंदी नाटक लिखे जाने आरंभ हुए, तब उर्दू का बोलबाला था। पारसी थिएट्रिकल कंपनियाँ व्यावसायिक ढंग पर चल रही थीं। पोशाकों में वे देश-काल का ख्याल नहीं करते थे। कृष्ण को बिरजिस पहनाकर खड़ा कर देते थे। भारतेंदु-युग के आस-पास शीतला-प्रसाद त्रिपाठी-कृत *जानकी-मंगल*, श्रीनिवासदास-कृत *रणधीर और प्रेममोहिनी*, भारतेंदु-कृत *सत्य हरिश्चंद्र* का सफल अभिनय हुआ। **राधेश्याम कथावाचक,** बेताब आदि ने कुछ ऐसे नाटक अवश्य दिये जो पारसी ढंग के रंगमंच की अनुकूलता प्राप्त कर सके। **द्विजेंद्रलाल राय,** जयशंकर प्रसाद, बेचन शर्मा पांडेय 'उग्र', माखनलाल चतुर्वेदी आदि के नाटकों का भी साहित्यिक उत्सवों पर अभिनय होता रहता है। एकांकी नाटकों के प्रचलन से भी अभिनय-कला को कुछ प्रोत्साहन मिला है। पर यह सब कुछ होते हुए भी हिंदी रंगमंच बहुत पिछड़ा हुआ है।

रंतिदेव—एक बड़े धर्मनिष्ट तथा कर्मपरायण राजा। इनके यज्ञीय पशुओं की रुधिर-धारा

से एक नदी प्रवाहित हो गई थी, जिसका नाम चर्मरावती (चंबल) था (*म० द्रो० ६७*)। इन्होंने अपनी सारी संपत्ति ब्राह्मणादि को बाँट दी थी। एक बार इनके राज्य में अकाल पड़ा। इनके कुटुंब को ४८ दिन तक उपवास करना पड़ा। इसके बाद जब कहीं से इन्हें भोजन मिला, तब वह भी इन्होंने एक शूद्र और एक चांडाल को दे दिया (*भा० ९.२१*)।

रंभ—एक दैत्य जिसने अग्नि से वर प्राप्त कर **महिषासुर** नामक पुत्र को प्राप्त किया था (*शिव० उमा० ४६*)।

रंभा—एक अप्सरा जिसे इंद्र ने विश्वामित्र की तपस्या भंग करने के लिये भेजा था, पर विश्वामित्र ने शाप देकर शिला बना दिया था (*म० अनु० ६.११ कुं०*)। एक बार यह **नलकूबर** के पास जा रही थी। मार्ग में रावण ने इससे अशिष्ट व्यवहार किया। इसपर नलकूबर ने रावण को शाप दिया कि यदि फिर कभी किसी स्त्री पर बलात्कार करोगे, तो तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी (*वा० रा० उ० २६*)।

रक्तबीज—शुंभ और निशुंभ का सेनापति एक दैत्य, जिसके रक्त की बूँदों से राक्षस उत्पन्न होते थे। चामुंडा ने विकराल रूप धारण करके इसका वध किया था (*देवी० भा० ५.२७-२९*)।

रगण—दे० *गण*।

रक्षा-बंधन—श्रावण-शुक्ला पूर्णिमा को होने वाला एक त्योहार, जिसमें बहिनें अपने भाइयों की कलाई पर रक्षा-सूत्र (राखी) बाँधती हैं।

रघु—रघुवंश के आदि पुरुष, **अज** के पिता, एक सूर्यवंशी राजा। इन्होंने विश्वजित् यज्ञ किया था। ये अपनी शूरता, विद्वत्ता एवं उदारता के लिये प्रसिद्ध हैं (*स्कंद० २.८.४*)। राजा दिलीप ने नंदिनी की सेवा करके इनको प्राप्त किया था (*पद्म० उ० २०३*)।

रघुनाथ (र० का० १७३३-५३ ई०)—काशी-नरेश बरबिंडसिंह के सभासद एक रीति-कवि। *रसिक मोहन, काव्य कलाधर, जगतमोहन* (१७५०, कृष्ण की दिनचर्या) तथा *लश्क महोत्सव* (खड़ी बोली में) के रचयिता।

रघुवर शरण (आ० का० १८५० ई०)—एक राम-भक्त कवि। *राममंत्र-रहस्य, जानकी जी को मंगलाचरण* तथा *बना* (दूलह राम) के रचयिता।

रघुराजसिंह (१७२३-७९ ई०)—रीवा-नरेश एक भक्त कवि। *राम स्वयंवर, रुक्मणी-परिणय, आनंदाम्बुनिधि, रामाष्टयाम* आदि के रचयिता।

रघुवंश—**कालिदास** का संस्कृत में एक महाकाव्य (अनू०)। इसमें रघुवंश के कई राजाओं का काव्यात्मक वर्णन है, परंतु दिलीप, रघु और राम के लोकोत्तर चरित्रों को प्रधानता दी गई है। इसमें १९ सर्ग हैं। यह कालिदास का श्रेष्ठ महाकाव्य है। संस्कृत महाकाव्य की बृहत्त्रयी में इसका स्थान प्रथम है।

रघुवीरसिंह, डा० (१९०८ ई०-)—निबंधकार और लेखक। *शेष स्मृतियाँ, सप्तदीप, जीवन धूलि, जीवन कण* (सब निबंध-संग्रह), *बिखरे फूल, मालव में युगांतर* आदि इनकी रचनाएँ हैं।

रचना (आ० का० १८१३ ई०)—एक राम-भक्त कवि। *सत्योपाख्यान* के रचयिता।

रज्जब (आ० का० १६०० ई०)—एक दादू-पंथी संत। *छप्पय* नामक ग्रंथ के रचयिता।

रज्जुसर्पन्याय—अज्ञानी व्यक्ति भ्रमवश या अंधकार में रस्सी को सर्प समझ लेता है। मायामय जगत् सत्य तभी तक दिखलाई पड़ता है, जबतक ब्रह्म का ज्ञान नहीं होता। अतः प्रमाद से या भ्रमवश एक वस्तु में अन्य का आरोप करने पर इस उक्ति का प्रयोग होता है।

रणछोड़—कृष्ण का एक नाम जब वे **जरासंध** के आक्रमणों से बचने के लिये रणक्षेत्र छोड़ कर मथुरा से द्वारिका चले गये थे। कहते हैं कि मीराबाई द्वारिका में रणछोड़ की मूर्त्ति में विलीन हो गई थीं।

रतन कवि (जन्म १७४१ ई०)—एक रीति-कवि। अपने आश्रयदाता श्रीनगर (गढ़वाल) नरेश फतेहसाही के नाम पर *फतेहभूषण* (१७७३) तथा *अलंकार दर्पण* (१७७०) के के रचयिता। *फतेह भूषण* एक सुंदर अलंकार-ग्रंथ है, जिसमें लक्षणा, व्यंजना, काव्यभेद, ध्वनि, रस, दोष आदि का विस्तृत वर्णन है। उदाहरणों में शृंगार के पद्यों के अतिरिक्त अपने आश्रयदाता की प्रशंसा के कवित्त बहुत दिये हैं। कवि का निरूपण विशद है, उदाहरण भी बहुत ही मनोहर और सरस हैं। ये एक उत्तम श्रेणी के कवि हैं।

रतनबावनी—**केशवदास** (१५५५-१६१६ ई०) का एक काव्य, जिसमें उन्होंने अपने आश्रयदाता इंद्रजीतसिंह के बड़े भाई रत्नसिंह की वीरता का छप्पयों में अच्छा वर्णन किया है। यह वीर रस का एक सुंदर काव्य है।

रति—**कामदेव** की पत्नी जो अत्यंत रूपवती थीं। शिव ने जब कामदेव को भस्म किया, तब इन्होंने शिव से प्रार्थना कर यह वरदान प्राप्त किया था कि कामदेव अनंग होकर सर्वदा बने रहेंगे (*पद्म० सृ० ४३*)। बाद में इन्होंने प्रद्युम्न (दे० यथा०) की पत्नी मायावती के रूप में जन्म ग्रहण किया।

रत्नहरि (आ० का० १८४१ ई०)—एक राम-भक्त कवि। *दूरादूरार्थ दोहावली*, *चमक दमक दोहावली*, *राम रहस्य पूर्वार्ध* तथा *राम रहस्य उत्तरार्ध* के रचयिता।

रत्नावली—१ महाकवि **तुलसीदास** की पत्नी। ये कवयित्री भी थीं। इनके कुछ पद प्राप्त हुए हैं। इन्हीं के व्यंग्य-वचनों के कारण तुलसी में विरक्ति के भाव जागृत हुए थे। २ एक अर्थालंकार जहाँ मुख्य प्रस्तुत अर्थ के साथ ही अन्य वस्तुओं के नाम भी आ जाएँ। उ०—रसिक, चतुर-मुख, लक्ष्मिपति, सकल ज्ञान के धाम। यहाँ मूल अर्थ है—हे रसिक तुम चतुरों में प्रमुख, धनवान और समस्त ज्ञान के घर हो—इसी के साथ इसमें चतुर मुख (ब्रह्मा), लक्ष्मिपति (श्रीपति विष्णु) और सकल ज्ञान के धाम (शिव) के नामों का भी संकेत मिलता है। ३ **हर्षदेव**-रचित एक संस्कृत नाटक (अनू०)।

रथोद्धता—रानिरी लगत ये रथोद्धता (र न र ल ग=११ व० छंद)। उ०—भारतीय जन ! वेद-भारती, / ध्यान दे सुनहुँ वो पुकारती।

रनेसाँस (Renaissance)—कला और साहित्य का पुनरुद्धार, जो इटली में ई० १४ वीं शती से प्रारंभ हुआ और १५ वीं और १६ वीं शती तक चलता रहा। इंगलैंड में इस पुनरुद्धार का प्रचार एरेज़मस (Erasmus), मोर (More) आदि 'ऑक्सफोर्ड विद्वानों' द्वारा हुआ।

रमैनी—कबीर के 'बीजक' का दोहा-चापाइयों से युक्त एक भाग।

रविदास (अ० का० १३८८ और १५१८ ई० के मध्य)—काशी निवासी, **रामानंद** के शिष्य एक संत, रैदास पंथ के प्रवर्तक और **मीराबाई** के गुरु (?)। ये जाति से चमार थे। इनके संबंध में अनेक अलौकिक कथाएँ कही जाती हैं। इनके पद *ग्रंथ साहब* में संगृहीत हैं। *रविदास की बानी* और *रविदास के पद* इनकी रचनाओं के संग्रह हैं। इनकी कविता सुबोध है।

रवींद्रनाथ ठाकुर (१८६१-१९४१ ई०)—बँगला भाषा के उत्कृष्ट कवि, उपन्यास-नाटक कहानीकार जिनकी बहुत-सी रचनाएँ इन नामों से अनूदित हैं—

काव्य—*कलरव, गीतांजलि, फलसंचय, रवींद्र-कविताकानन, साधना*।

उपन्यास—*आँख की किरकिरी, आश्चर्य घटना, उलझन, कुमोदिनी, कौन किसी का, दो बहिनें, गोरा, चार अध्याय, ठकुरानी बहु का वर, मुकुट, योगायोग, विचित्र रहस्य, त्याग का मूल्य, नाव दुर्घटना, राजर्षि, नीरजा, नष्ट नीड़, फुलवाड़ी*।

नाटक—*चिरकुमार सभा, डाकघर, नटी की पूजा, माली, मुक्त धारा, राजा-रानी, विसर्जन, व्यंग्य कौतुक*।

कहानी—*रवींद्र कथाकुंज, रूस की चिट्ठी, पाँच सदस्य, चतुरंग, चाँद सितारे*।

विविध—*रवींद्र साहित्य* (२४ भाग)।

विषय और शैली की दृष्टि से इनकी *गीतांजलि* ने अनेक हिंदी रचनाओं को प्रभावित किया है।

रस—*'रस्यते अनेनेति रसम्'* अर्थात् 'जिससे हृदय द्रवीभूत होकर रसने लगे, उसे रस कहते हैं।' भरतमुनि ने लिखा है कि **विभाव, अनुभाव** और **व्यभिचारी** भाव के संयोग से रस की निष्पत्तिः होती है (*'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'*)। अर्थात् इन तीनों के संयोग से काव्य में सरसता आती है। इसी प्रकार *साहित्य दर्पण* में विश्वनाथ ने लिखा है कि विभाव, अनुभाव और संचारी-भाव से व्यक्त होकर रति आदि स्थायी-भाव मनुष्यों के लिये रसता उत्पन्न करते हैं।

रस-सिद्धांत के प्रथम प्रवर्त्तक भरतमुनि ही हैं। संभवतः काव्य में प्रथम अलंकारों को ही प्रधानता दी जाती थी। किंतु नाटकों की रसवत्ता से प्रभावित होकर आचार्यों ने फिर भरतमुनि कृत *नाट्यशास्त्र* के रस-सिद्धांत को लेकर काव्य-शास्त्र में रख दिया। आगे चलकर काव्य में रस की ही प्रधानता हो गई और इसलिये काव्य-शास्त्र में भी रस की विवेचना का बहुत बड़ा महत्त्व और स्थान हो गया। दे० *काव्य*।

रस का स्वरूप अलौकिक है, सत्य है, सहृदय-वेद्य (ज्ञेय) है, अवाच्य है, व्यंग्य है, प्रकाश-स्वरूप है और अखंड है।

काव्य में **शृंगार, हास्य, वीर, करुण, रौद्र, वीभत्स, भयानक, अद्भुत** और **शांत** ये नौ रस मान्य हैं। कोई-कोई आचार्य वात्सल्य और भक्ति को रस गिनते हैं, किंतु दूसरे आचार्यों ने इनको शृंगार के ही अंतर्गत माना है।

रस कलश—**अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'** का ब्रज-भाषा में एक रीति-काव्य (१९३१ ई०)। कवि ने नवीन भाग लाकर इस ग्रंथ को समयानुकूल बनाने का प्रयत्न किया है। इसमें प्राचीन नायिकाओं के साथ 'देश-प्रेमिका', 'धर्म-सेविका' आदि नायिकाओं का

भी वर्णन मिलता है। इस ग्रंथ की भूमिका गद्य में होने के कारण अधिक मार्मिक और विवेचनात्मक है।

रसखान (१५६०-१६३३ ई०)—दिल्ली के मुसलमान पठान सरदार, **विट्ठलनाथ** के अत्यंत कृपापात्र शिष्य, जो पहिले किसी लड़के पर आसक्त थे, पर बाद में वही भौतिक प्रेम प्रतिक्रिया के रूप में अलौकिक प्रेम में परिणत हो गया। *सुजानरसखान* और *प्रेमवाटिका* इनकी दो प्रकाशित रचनाएँ हैं।

रसखान की कविता कृष्ण-भक्तों के मर्म को स्पर्श करने वाली होती है। इनके कवित्त और सवैयों में प्रेम के सुंदर उद्गार हैं। इन्होंने एकांगी और निःस्वार्थ प्रेम को ही प्रेम का आदर्श माना है। इनकी भाषा बहुत चलती, सरल तथा सरस है। ब्रज-भाषा का जैसा चलतापन इनकी कविता में है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। भारतेंदु ने इनके लिये कहा है—'इन मुसलमान हरिजनन पैं कोटिन हिंदू वारिए।' ये ब्रज-भूमि से बड़ा प्रेम करते थे।

रसनिधि (वर्त्त० १६६० ई०)—एक रीति-कवि और *बिहारी सतसई* के अनुकरण पर *रतनहज़ारा* के रचयिता। कहीं-कहीं तो इन्होंने बिहारी के वाक्य तक रख लिये हैं। इसके अतिरिक्त इन्होंने और भी बहुत-से दोहे बनाए। *अरिल्ल और माँझो* नामक इनका एक संग्रह भी खोज में मिला है। ये शृंगार रस के कवि थे। अपने दोहों में इन्होंने फारसी कविता के भाव भरने और कौशल दिखाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया है।

रसनोपमा—दे० *उपमा*।

रसरत्न—पुहकर कवि का एक प्रेम-काव्य (१६१६ ई०), जिसमें रंभावती और सूरसेन की प्रेम-कथा कई छंदों में प्रबंध-काव्य की साहित्यिक पद्धति पर लिखी गई है। शुद्ध भारतीय परंपरा में होने से हिंदी-साहित्य में इसे विशेष स्थान प्राप्त है।

रसलीन, सैयद गुलाम नबी—बिलग्राम (हरदोई) निवासी एक रीति-कवि। *अंगदर्पण* (१७३७ ई०) तथा *रसप्रबोध* (१७४१) के रचयिता। अपनी सूक्तियों के चमत्कार के लिये ये बड़े प्रसिद्ध हैं। 'अमी हलाहल मद भरे सेत स्याम रतनार' वाला प्रसिद्ध दोहा इन्हीं का है। लोग इसको भूल से **बिहारी** का समझते हैं।

रसवत्—एक अर्थालंकार जिसमें रस किसी दूसरे रस या भाव का बन जाए। उ०—जैति-जैति योगेंद्र मुनि कुंभज महा अनूप, / देखे जाके चुलुक में कच्छप-मत्स्य-सरुप। यहाँ पूर्वार्ध में मुनि-विषयक जो रति भाव है, वह उत्तरार्ध में स्थित अद्भुत रस का अंग बन गया है।

रस संप्रदाय—भरत के अनुसार रस संप्रदाय का मूलभूत सूत्र है—'*विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः*' (विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है)। भरत के परवर्ती टीकाकारों ने इस सूत्र की विभिन्न व्याख्याएँ की हैं और इस कारण रस के आस्वादन के प्रकार में विभिन्न चार प्रमुख मत खड़े हो गये हैं—

१ भट्ट लोल्लट अपने *उत्पत्तिवाद* में रस को विभावादि का कार्य मानते हैं तथा इसे विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से उत्पद्यमान स्वीकार करते हैं।

२ शंकुक अपने *अनुमितिवाद* में रस से विभावादियों का अनुमापक, अनुमाप्य संबंध स्वीकृत करके उनके द्वारा रस की अनुमिति मानते हैं।

३ भट्ट नायक अपने *भुक्तिवाद* में रस से विभावादि का भोजक-भोज्य संबंध स्वीकार करते हैं तथा उसे सिद्ध करने के लिये अभिधा से अतिरिक्त भावकत्व तथा भोजकत्व व्यापार भी मानते हैं।

४ अभिनवगुप्त अपने *अभिव्यक्तिवाद* में सुषुप्त स्थायी भावों का विभावादिकों द्वारा अभिव्यक्त होकर आनंदमय रस रूप प्राप्त करना मानते हैं। उनका मत अपेक्षाकृत अधिक मनोवैज्ञानिक होने के कारण आलंकारिकों में सर्वाधिक आहृत हुआ है। रसों की संख्या के लिये दे० *रस*।

रसाभास—१ जहाँ रस-वर्णन में अनौचित्य हो, नायक-नायिका की अपने अनुरूप पात्र को छोड़ नीच के प्रति रति या अनेक की एक के प्रति रति आदि के वर्णन में शृंगार रसाभास होगा। गुरु आदि पूजनीयों का उपहास, ब्राह्मणादि के वध में उत्साह का वर्णन होने पर क्रमशः रौद्राभास, हास्याभास और वीराभास होंगे, क्योंकि ऐसे स्थलों में स्थायीभाव के आलंबन ऐसे व्यक्ति हैं जो औचित्य की दृष्टि से ठीक नहीं। २ जब इन मनोचित स्थायी भावों का वर्णन पशु-पक्षियों आदि में किया जाता है, तो वह भी रसाभास होता है। उ०—नदी उमंगि अंबुधि कहृ धाई। / संगम करे तलाब तलाई॥ यहाँ शृंगार रसाभास है।

रसिक गोविंद (र०का० १७६३-१८३३ ई०)—जयपुर निवासी, एक रीति-कवि। *रामायण-सूचनिका*, *रसिक-गोविन्दानंद-घन*, *लछमन-चन्द्रिका*, *अष्टदेश भाषा*, *पिंगल*, *समय प्रबंध*, *कलिजुगरासो*, *रसिक गोविंद* तथा *युगल-रसमाधुरी* के रचयिता। इन्होंने काव्यांगों का अत्यंत विस्तृत विवेचन किया है। रीतिकाल में यही एक ऐसे आचार्य हुए हैं, जिन्होंने लक्षण गद्य में दिये और रस, शब्द शक्ति आदि का शास्त्रीय विवेचन करते हुए अपने पूर्ववर्ती संस्कृत-आचार्यों के मतों का भी उल्लेख किया। ये ब्रज-भाषा के साहित्यिक गद्य के सर्वप्रथम लेखक भी कहे जा सकते हैं।

रसिकदास (आ० का० १६४३ ई०)—वृंदावन निवासी, एक राधावल्लभी वैष्णव कवि। *पूजा विलास* के रचयिता।

रसिकप्रिया—**केशवदास** का एक ग्रंथ (१५६१ ई०) जो रस परक है। इसमें इन्होंने परिपाटी के अनुसार दांपत्य रति भाव को ही लेकर उसके कई भेद दिखाए हैं और शृंगार रस के आलंबन आदि का विस्तार से वर्णन किया है। रचना बड़ी प्रौढ़ है।

रसिक बिहारी बनीठनी जी (मृत्यु १७६५ ई०)—**नागरीदास** की पत्नी एक कवयित्री, जो कृष्ण-भक्ति संबंधी कविता करती थीं।

रसिक सुमति (वर्त्त० १७२८ ई०)—एक रीति-कवि और *अलंकार चंद्रोदय* (संस्कृत ग्रंथ, *कुवलयानंद* के आधार पर लिखित) के रचयिता। पद्य-रचना साधारणतः अच्छी है।

रहस्यवाद—रामकुमार वर्मा के अनुसार 'रहस्यवाद जीवात्मा की उस अंतर्हित प्रवृत्ति का प्रकाशन है, जिसमें वह दिव्य और अलौकिक शक्ति से अपना शांत और निश्छल संबंध जोड़ना चाहती है, और यह संबंध

(अंत में) यहाँ तक बढ़ जाता है कि दोनों में कुछ भी अंतर नहीं रह जाता। रहस्यवादियों की उद्देश्य-प्राप्ति में तीन परिस्थितियों की कल्पना की जा सकती है। *पहिली* परिस्थिति तो वह है जहाँ वह व्यक्ति-विशेष अनंत शक्ति से अपना संबंध जोड़ने के लिये अग्रसर होता है। वह संसार की सीमा को पार कर ऐसे लोक में पहुँचता है जहाँ भौतिक बंधन नहीं, जहाँ संसार के नियम नहीं, जहाँ उसे अपने शारीरिक अवरोधों (सीमाओं) की परवाह नहीं है। वह ईश्वर के समीप पहुँचता है और दिव्य विभूतियों को देखकर चकित हो जाता है। *दूसरी* स्थिति तब आती है जब आत्मा परमात्मा से प्रेम करने लग जाती है। वह प्रेम इतना प्रबल होता है कि उसके समक्ष विश्व की कोई वस्तु नहीं ठहर सकती। *तीसरी* स्थिति तब आती है जब आत्मा और परमात्मा का इतना एकीकरण हो जाता है कि फिर उनमें कोई भिन्नता नहीं रहती। रहस्यवाद की यह अनुभूति इतनी दिव्य, इतनी अलौकिक होती है कि संसार के शब्दों में उसका स्पष्टीकरण असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। यदि उसका वर्णन किया भी जाए तो प्रतीकों, रूपकों व अन्योक्तियों से पूर्ण सांकेतिक भाषा का आश्रय लेना पड़ता है, जिसके कारण विषय में अस्पष्टता एवं दुरूहता आ जाती है।' दे० *छायावाद*।

रहीम—दे० *अब्दुर्रहीम खानखाना*।

रांगेय राघव—आधुनिक प्रगतिवादी कवि, उपन्यासकार, कहानीकार और आलोचक। इनकी मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

काव्य—*मेधावी, पिघलते पत्थर, राह के दीपक*।

उपन्यास—*घरौंदे, हुज़ूर, मुर्दों का टीला, सीधा-साधा रास्ता, चीवर, प्रतिदान*।

कहानी—*पंय्याश मुर्दे, तूफ़ानों के बीच, अंगार न बुझे, इन्सान पैदा हुआ*।

आलोचना—*प्रगतिशील साहित्य के मानदंड*।

राखालदास बंद्योपाध्याय (१८८४-१९३० ई०)—बँगला भाषा के प्रसिद्ध उपन्यासकार, जिनके *करुणा* और *शशांक* नाम से दो उपन्यास अनूदित हैं।

राग—संगीत में स्वरों के विशेष प्रकार और क्रम या निश्चित योजना से बना हुआ गीत का ढाँचा। भारतीय आचार्यों ने छः राग माने हैं, परंतु इन रागों के नामों के संबंध में कुछ मतभेद है। प्रधान राग ये हैं—भैरव, मलार, मेघ, श्री, वसंत, हिंडोल, सारंग, दीपक, नर-नारायण, पंचम।

रागिनी—संगीत में किसी राग की पत्नी या स्त्री। प्रत्येक राग की पाँच या छः रागनियाँ मानी गई हैं।

राजगृह—राजगिर। मगध देश की प्राचीन राजधानी। **अजातशत्रु** के पिता बिंबिसार ने इस नगर का निर्माण किया था।

राजतरंगिणी—**कल्हण** का संस्कृत में एक ऐतिहासिक काव्य (११४८-५१ ई०, अनू०), जिसमें आदिकाल से लेकर ११५१ ई० तक के कश्मीर के प्रत्येक राजा का वर्णन है। यह वर्णन अत्यंत प्रामाणिक नहीं माना जा सकता है।

राजशेखर (ई० ७ वीं शती के पश्चात् ?)—संस्कृत-नाटककार। *कर्पूरमंजरी* (अनू०), *विद्धशालभंजिका, बाल रामायण, बाल भारत*

तथा *काव्य मीमांसा* (अनू०, काव्य के सर्वांगों पर विशद विवेचन) के रचयिता।

राजशेखर सूरि (आ० का० १३१४ ई०)—गुजरात निवासी, जैन साधु और *नेमिनाथ फाग* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

राजस्थानी—राजस्थान में बोली जाने वाली भाषा, जिसका साहित्यिक रूप डिंगल कहलाता है। *वीसलदेवरासो*, *पृथ्वीराजरासो*, *बेलि किसन रुक्मिणी री* आदि इस भाषा की मुख्य रचनाएँ हैं। "एक प्रकार से यह मध्य देश की प्राचीन भाषा का ही दक्षिण-पश्चिमी विकसित रूप है। इस विकास की अंतिम सीढ़ी गुजराती हैं, किंतु उसमें भेदों की मात्रा अधिक हो गई है।" दादूदयाल और उनके शिष्यों ने राजस्थानी के जयपुरी रूप को अपनाया था। इस उप-भाषा पर नागर अपभ्रंश का प्रभाव है।

राजहंस—एक पक्षी। कवि-प्रसिद्धि है कि वर्षा-काल में उड़ कर यह मानसरोवर चला जाता है और सरोवरों में इसका वर्णन किया जाता है।

राज्यवर्द्धन—वर्द्धनवंशी एक सम्राट् (६०५-६ ई०)।

राज्यश्री—**जयशंकरप्रसाद** का एक नाटक (१९१५ ई०)।

राज्यश्री कन्नौज-नरेश ग्रहवर्मा की रानी थी। मालव-नरेश देवगुप्त ने ग्रहवर्मा को मारकर उसकी राजधानी और राज्यश्री पर अधिकार कर लिया। राज्यश्री का भाई राज्यवर्द्धन (स्थाणवीश्वर का बड़ा राजकुमार) अपनी बहिन की सहायता के लिये गया। गौड़ाधिपति नरेंद्रगुप्त भी उसका सहायक हुआ। उसी बीच शांति भिक्षु ने विकटघोष डाकू बनकर राज्यश्री को बंदीघर से निकाल ले गया। देवगुप्त मारा गया। नरेंद्रगुप्त ने अपने स्वार्थ के लिये प्रलोभन देकर विकटघोष द्वारा राज्यवर्द्धन की हत्या करवा दी, पर अंत में उसका भी वध हो गया। दिवाकर मित्र ने राज्यश्री को डाकुओं से मुक्त किया और वह उसी महात्मा के आश्रम में रहने लगी। राज्यवर्द्धन का छोटा भाई हर्षवर्द्धन अपनी बहिन का पता लगाते हुए वहाँ पहुँचा। राज्यश्री उस समय अपने जीवन का अंत करना चाहती थी, किंतु हर्षवर्द्धन के बहुत समझाने पर उसने मानव जाति के कल्याण की कामना लेकर जीवित रहना स्वीकार किया। उसने अपने पति के घातक को भी क्षमा कर दिया। हर्षवर्द्धन और राज्यश्री ने अपनी सपत्ति दान कर दी और दोनों ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया।

इस नाटक की रचना बाण के *हर्ष चरित* और चीन यात्री यूआन च्वाँग के विवरण के आधार पर की गई है। इसमें दिखाया गया है कि राज्यश्री ने अपने दुर्भाग्य को देश के सौभाग्य में परिणत करने के लिये कितना उद्योग किया।

राधा—१ वृषभानु (दे० यथा०) गोप की कन्या और कृष्ण की प्रेयसी (*पद्म० ब्र० ७*)। कृष्ण के साथ इनकी भी पूजा होती है। कृष्णावतार के समय ये भी देवलोक से पृथ्वी पर आई (*आदि० ११*)। एक बार विष्णु ने देवलोक में विरजा नामक गोपी से रासलीला की। जब राधा को यह ज्ञात हुआ, तब ये क्रोध से उनके पास गई, किंतु वे दोनों लुप्त हो गये। कृष्ण की ये सब से प्रिय थीं और उनके वामांग से उत्पन्न हुई थीं (*ब्रह्मवै० २.१२*)। लक्ष्मी के दो स्वरूप हैं—एक राधा और

दूसरी लक्ष्मी (२.३५, *देवी भा० ६.१, आदि० ११)*।

ये ही सृष्ट्युपकारक पाँच शक्तियों में से विष्णु की एक शक्ति हैं (*देवी भा० ६.१, नारद० २.८१*)। ये संपत्ति की अधिदेवता हैं। कांता, अदिदांता, शांता, सुशीला और सर्वमंगला इनके अन्य नाम हैं। वैकुंठ में पतिसेवा में ये अतिप्रवीण हैं (*देवी भा० ६.१८*)। राधा और कृष्ण परस्पर एक दूसरे की आराधना करते हैं। *राशब्दोच्चारणाद् भक्तो राति मुक्ति सुदुर्लभाम्। धाशब्दोच्चारणाद् दुर्गं धावत्येव हरेः पदम्॥ / रा इत्यादानवचनो धा च निर्वाणवाचकः। / ततोऽवाप्नोति मुक्तिं च येन राधा प्रकीर्तिता॥* (ब्रह्मवै० २.४८)। इनकी माता का नाम कीर्त्ति था, अतः इन्हें 'कीर्त्तिकुमारी' भी कहते हैं। राधा के पर्य्याय०—राधिका, वृषभानुजा, हरिप्रिया, कीर्त्तिकिशोरी ब्रजरानी आदि। २ धृतराष्ट्र के सारथि अधिरथ की पत्नी। इसने कर्ण को पुत्रवत् पाला था।

राधाकृष्णदास (१८६५-१६०७ ई०)—भारतेंदु के फुफेरे भाई और उनके अपूर्ण नाटक *सती प्रताप* के पूर्णकर्त्ता, *दुःखिनी बाला, महारानी पद्मिनी, महाराणा प्रतापसिंह* (सब नाटक), *निःसहाय हिंदू* (उपन्यास) के रचयिता। इनके *स्वर्णलता* और *मरता क्या न करता* बँगला से अनूदित उपन्यास हैं। कुछ कविता के अतिरिक्त इन्होंने रहीम के दोहों पर कुंडलियाँ भी लिखी थीं।

राधाचरण गोस्वामी (१८५८-१६२५ ई०)—वृंदावन निवासी, 'भारतेंदु' (पत्र) के संचालक, *सुदामा, सती चंद्रावली, अमरसिंह राठौर, तन मन धन श्री गोसाईं जी के अर्पण* (सब नाटक) के रचयिता और *बिरजा, जावित्री, मृण्मयी* आदि बँगला उपन्यासों के अनुवादक। 'हरिश्चंद्र मेगज़ीन' से प्रभावित होकर ये देश-सेवा और समाज-सुधार की ओर प्रवृत्त हुए थे।

राधिका—१ तेरह नौ पर विरामा, राधिका कहिए (२२(१३,६) मा० छंद)। उ०—सब सुधि बुधि गई क्यों भूल, गई मति मारी। २ राधा का नामांतर।

राधिकारमणप्रसाद सिंह (१८६१ ई०-)—कहानी-उपन्यास लेखक और *राम-रहीम* (१६३६), *पुरुष और नारी, सावनी सभा, सूरदास, टूटा तारा, गांधी टोपी* (उपन्यास), *गल्प कुसुमावली, चुनी कलियाँ* (कहानी-संग्रह) आदि के रचयिता।

राधेश्याम कथावाचक (१८६० ई०-)—बरेली निवासी, एक नाटककार। *ईश्वर भक्ति, भक्त प्रह्लाद, वीर अभिमन्यु* (नाटक), *राधेश्याम रामायण* आदि के रचयिता। दे० *नाटक*।

रानी केतकी की कहानी—**इंशाअल्लाखाँ** (१७६४-१८१८ ई०) की एक कहानी। दे० *इंशाअल्लाखाँ, उपन्यास*।

राम—१ रामचंद्र। २ बलराम। ३ परशुराम। यद्यपि यह नाम तीनों का वाची है, तथापि इसका अधिक प्रयोग दशरथ-पुत्र रामचंद्र के लिये ही होता है। ४ कबीर आदि संतों ने राम नाम का प्रयोग तो किया है, किंतु उनका राम सगुण न होकर निर्गुण है।

राम (जन्म १६४६ ई०)—एक रीति कवि। *शृंगार सौरभ* तथा *हनुमान नाटक* के रचयिता। *कालिदास हज़ारा* में इनके कुछ कवित्त संगृहीत हैं।

राम-काव्य—**तुलसीदास, नाभादास, प्राणचंद्र चौहान, हृदयराम, विश्वनाथसिंह, रघुराजसिंह, केशवदास, अग्रदास, सेनापति, कलानिधि, राम-**

चरणदास, कृपानिवास, भगवानदास खत्री, रामगुलाम द्विवेदी, बनादस आदि द्वारा रचित साहित्य ।

राम का महत्त्व सर्वप्रथम *वाल्मीकि रामायण* में मिलता है । वाल्मीकि के राम एक महापुरुष हैं, महात्मा हैं, धीरोदात्त नायक हैं । इसके पश्चात् कवियों द्वारा राम-चरित संबंधी और भी बहुत-से ग्रंथ लिखे जाते रहे । **रामानुजाचार्य** की पाँचवीं पीढ़ी में **रामानंद** ने विष्णु अथवा नारायण के स्थान पर अवतार-रूप राम की भक्ति पर बल दिया । रामानंद का यह सिद्धांत तुलसीदास की रचनाओं का पृष्ठ-वंश बना ।

राम-काव्य का वर्ण्य-विषय विष्णु के राम-रूप की दास्य-भक्ति ही है । इस भक्ति के निरूपण में जहाँ दार्शनिक और धार्मिक सिद्धांतों की विवेचना की गई है, वहाँ राम की कथा भी अनेक रूपों में कही गई है । राम की कथा का स्वरूप अधिकतर *वाल्मीकि रामायण* और *अध्यात्म रामायण* के द्वारा निर्धारित किया गया है । इस काव्य के उत्कृष्ट कवि तुलसीदास हुए, जिन्होंने राम-चरित का दृष्टिकोण *अध्यात्म रामायण* से लेकर राम को ब्रह्म तक घोषित किया । केशवदास को छोड़ कर राम-काव्य के अन्य सभी कवियों ने तुलसीदास को अपना पथ प्रदर्शक बनाया । केशव की *रामचंद्रिका* का आधार *वाल्मीकि रामायण* है । *रामचंद्रिका* में कवि का प्रयत्न भक्ति-प्रदर्शन न कर अपना पांडित्य-प्रदर्शन रहा, इसलिये यह साहित्य में वह स्थान न पा सकी जो *रामचरितमानस* को मिला । रामभक्ति की काव्यधारा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें सब प्रकार की रचनाएँ हुईं, इसके द्वारा कई प्रकार की रचना-पद्धतियों को उत्तेजना मिली । कृष्णोपासी कवियों ने मुक्तक के एक विशेष अंग गीत-काव्य की ही पूर्ति की, पर राम-चरित को लेकर अच्छे प्रबंध काव्य रचे गये ।

राम-काव्य की रचना अधिकतर दोहा, चौपाई छंदों में हुई है । राम-काव्य की भाषाएँ अवधी और व्रज हैं । शांत और शृंगार रसों की प्रधानता है ।

वैष्णव धर्म का जैसा प्रचार उत्तर भारत में हो रहा था, वैसा ही दक्षिण में भी । वहाँ भी **तुकाराम, रामदास, एकनाथ,** भानुदास, जनार्दन, कन्होबा, जयराम, रघुनाथ आदि ने हिंदी में रचनाएँ कीं । आधुनिक युग में *वैदेही वनवास*, *साकेत* आदि में राम-चरित अंकित किया गया है । विशेष दे० कामिल बुल्के-कृत *राम-कथा* ।

रामकुमार वर्मा (१९०५ ई०-)—कवि, नाटककार और आलोचक । इनकी मुख्य रचनाएँ *अभिशाप* (१९३०), *अंजलि* (१९३१), *रूपराशि* (१९३३) (कल्पना-प्रधान ग्रंथ), *निशीथ* (१९३३), *चित्ररेखा* (१९३५, अनुभूति-प्रधान कविताएँ), *चंद्रकिरण* (१९३७), (काव्य-संग्रह), *पृथ्वीराज की आँखें* (१९२९), *रेशमी टाई* (१९४१), *चारुमित्रा* (१९४२), *सप्त किरण*, *सही रास्ता* (एकांकी संग्रह), *हिमहास* (१९४२, सुंदर गद्य-काव्य), *कबीर का रहस्यवाद*, *हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास* आदि हैं ।

ये दुःखवादी कवियों में हैं । 'ये क्षणिक सुख में भी दुःख छिपा हुआ देखते हैं, पर अपनी इस निराशा के कारण अनीश्वरवाद में नहीं पहुँच जाते ।' इनके नाटक अभिनेय हैं ।

रामगिरि (रामटेक)—नागपुर के निकट एक

पहाड़ी जहाँ **शंबूक** ने तपस्या की थी (*वा० रा० उ० ८८*)। कालिदास ने *मेघदूत* में भी इसका वर्णन किया है। तुलसीदास ने चित्रकूट को रामगिरि भी कहा है, यद्यपि चित्रकूट और रामगिरि दो भिन्न स्थान हैं।

रामगुलाम द्विवेदी (आ० का० १८१३ ई०)—मिर्ज़ापुर निवासी एक राम-भक्त कवि। *प्रबंध रामायण* तथा *विनय पंचिका* के रचयिता।

रामगोपाल (आ० का० १८०० ई०)—एक राम-भक्त कवि और *अष्टयाम* के रचयिता।

रामचंद्र—१ अयोध्या-नरेश दशरथ और कौसल्या के पुत्र (*वा० रा० बा० १८*)। ये विष्णु के सातवें अवतार माने जाते हैं। बाल्यावस्था में ही विश्वामित्र इन्हें और लक्ष्मण को यज्ञरक्षार्थ अपने आश्रम में ले गये, जहाँ इन्होंने अनेक राक्षसों तथा **ताड़का** आदि का वध किया। वहाँ से दोनों भाई जनकपुरी गये (२७-४६)। मार्ग में राम ने **अहल्या** का उद्धार किया। जनकपुरी में शिव का धनुष तोड़कर इन्होंने सीता से विवाह किया (७३)। लौटते समय **परशुराम** का इनसे विवाद हुआ (७५-७६)। कुछ समय पश्चात् दशरथ ने इनके राज्याभिषेक की घोषणा की (*वा० रा० अयो० ३-४*), पर मंथरा और कैकेयी के षड्यंत्र से ये १४ वर्ष के लिये वन भेज दिये गये (*११*)। वन में सीता और लक्ष्मण भी इनके साथ थे (*३०-३१*)। प्रयाग में ये भरद्वाज से मिले (५४-५५)। बाद में ये **चित्रकूट** में रहने लगे (५६)। भरत ने इन्हें अयोध्या लौट आने का अनुरोध किया, किंतु ये नहीं लौटे (*११२*)। रावण की बहिन **शूर्पणखा** ने इनसे प्रणय-याचना की, जिसे इन्होंने अस्वीकार कर दिया। लक्ष्मण ने शूर्पणखा के नाक-कान काटकर उसे विरूप कर दिया (*वा० रा० अर० १७-१८*)। शूर्पणखा के कहने से खर और दूषण अपनी सेना के साथ इनसे युद्ध करने आए, पर वे सभी मारे गये (२५-३०)। शूर्पणखा की प्रार्थना पर **मारीच** की सहायता से रावण सीता को हर ले गया (५६)। राम-लक्ष्मण सीता की खोज में निकले। दे० *जटायु*। मार्ग में राम-लक्ष्मण ने कबंध का वध किया, जिसने मरते समय इन्हें सुग्रीव से सहायता लेने का परामर्श दिया (६६-७२)। राम ने सुग्रीव के भाई **बालि** का वध किया (*वा० रा० कि० १६*) और सुग्रीव ने सीता को खोजने में सहायता की (४०)। हनुमान ने लंका पहुँच कर सीता का पता लगाया (*वा० रा० सुं० ३३*)। **नल** और **नील** की सहायता से समुद्र पर पुल बाँध कर राम लंका पहुँचे (*वा० रा० यु० २१-२२*) और युद्ध में कुंभकर्ण (६७), मेघनाथ (९१), रावण (*१११*) आदि का वध कर सीता का उद्धार किया। १४ वर्ष समाप्त होने पर राम अयोध्या लौटे, जहाँ प्रजा ने इनका राज्याभिषेक किया (*१३०-३१*)। दे० *रामायण*। राम-कथा मुख्य रूप से *म० व० २७३-९१, पद्म० पा०* तथा प्रसंग रूप से *भा० ९.१०-११ अग्नि० ५-११, नृसिंह० ४७-५२*) आदि में है। रामचंद्र के पर्य्याय०—राम, दाशरथि, रघुपति, रघुनंदन, सीतापति, रावणारि, खरारि, जानकीवल्लभ आदि। २ (र० का० १७८३ ई०)—एक कवि और *चरणचंद्रिका* (पार्वती के चरणों का वर्णन) के रचयिता।

रामचंद्र शुक्ल (१८८४-१९४१ ई०)—हिंदी-साहित्य के प्रसिद्ध इतिहासकार, आलोचक, निबंधकार, कवि। *हिंदी-शब्द-सागर* के एक संपादक, डा० **श्यामसुंदरदास** के पश्चात् काशी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष, काशी

नागरी प्रचारिणी सभा की पत्रिका के संपादक। *हिंदी-साहित्य का इतिहास* (१९२९) (प्रथम आलोचनात्मक इतिहास), *त्रिवेणी* (तुलसीदास, जायसी और सूरदास पर आलोचनात्मक निबंध), *चिंतामणि (विचार वीथी* के निबंध तथा 'काव्य में प्राकृतिक दृश्य', 'काव्य में रहस्यवाद' और 'काव्य में अभिव्यंजनावाद' निबंधों का संग्रह), *बुद्ध-चरित* (एडविन आर्नाल्ड की *लाइट ऑफ़ एशिया* के आधार पर एक प्रबंध-काव्य) आदि के रचयिता।

ये हिंदी के गद्य-लेखकों और समालोचकों में अग्रगण्य हैं। इन्होंने विचारात्मक निबंधों का जो आदर्श बतलाया है, वह इनकी शैली में पूर्णतया चरितार्थ होता है। इन्होंने ब्रज-भाषा के साथ खड़ी बोली में भी कविता की है। प्रकृति को इन्होंने अपनी सहचरी माना है। इनका कथन है कि प्रकृति का वर्णन केवल उद्दीपन-रूप में ही नहीं, किंतु आलंबन रूप में भी करना चाहिये और अपने वर्णन को ऐसा बनाना चाहिये जिसमें पूरा संश्लिष्ट चित्र उतर सके। विशेष दे० शिवनाथ-कृत *आचार्य रामचंद्र शुक्ल*, गुलाबराय, विजेंद्र-कृत *आलोचक रामचंद्र शुक्ल*।

रामचंद्रिका—**केशवदास** की बुंदेलखंडी मिश्रित ब्रज-भाषा में एक रचना (१६०१ ई०), जिसका विषय राम-कथा है। यह *वाल्मीकि रामायण* पर आधारित है। इसपर *प्रसन्नराघव*, *हनुमन्नाटक*, *नैषध चरित*, *कादंबरी* आदि अनेक संस्कृत ग्रंथों का प्रभाव पड़ा है। कथा ३९ प्रकाशों में विभाजित की गई है।

इसकी कथावस्तु में सूक्ति-सौष्ठव स्थान-स्थान पर दृष्टिगोचर होता है, पर चरित-चित्रण और प्रबंधात्मकता का अभाव है। कवि ने इसमें अपने आचार्यत्व का प्रदर्शन खूब किया है। इसमें न तो कोई दार्शनिक या धार्मिक आदर्श है, न कोई भक्ति-भावना या लोक-शिक्षा का रूप। इसलिये यह रचना *रामचरितमानस* की तरह लोक-प्रिय न हो सकी। छंदों का परिवर्तन भी इतनी शीघ्रता से किया गया है कि कथा का तारतम्य बहुत-कुछ भंग हो गया है। कथा की दृष्टि से भी प्रसंगों का नियमित विस्तार नहीं है।

रामचरण (१७१९-९८ ई०)—सोड़ाग्राम (जयपुर) निवासी, 'रामसनेही मत' के प्रवर्तक। *सुख विलास*, *अमृत उपदेश*, *जिज्ञासा बोध*, *विश्राम बोध*, *समता निवास*, *राम रसायण बोध*, *अनुभव विलास* (बड़े ग्रंथ), *शब्द प्रकाश* आदि १२ छोटे ग्रंथों के रचयिता। इन्होंने निर्गुण और सगुण धारा का भेद मिटा कर दोनों के एकीकरण का प्रयत्न किया है।

रामचरणदास (आ० का० १७९९ ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि। *दृष्टांत बोधिका*, *कवितावली रामायण*, *पदावली*, *रामचरित्र* तथा *रस मालिका* के रचयिता।

रामचरित उपाध्याय (१८७२-१९४३ ई०)—आज़मगढ़ निवासी, एक कवि। *राष्ट्रभारती*, *देवदूत*, *देव सभा*, *देवी द्रौपदी*, *भारत भक्ति* (काव्य), *रामचरित चिंतामणि* (प्रबंध-काव्य) आदि के रचयिता।

रामचरितमानस—**तुलसीदास** का अवधी भाषा में एक महाकाव्य (१५७४ ई० ?) जो *रामायण* के नाम से प्रसिद्ध है।

इसमें रामचंद्र की कथा सात कांडों में लिखी गई है। पद्यों की संख्या लगभग दस हज़ार है। इसमें दोहा और चौपाई छंदों की प्रधानता है। *मानस* की कथा के लिये तुलसी ने अनेक ग्रंथों का आधार लिया है, जिनमें

अध्यात्म रामायण, *वाल्मीकि रामायण*, *हनुमन्नाटक*, *प्रसन्नराघव* और *श्रीमद्भागवत* मुख्य हैं। *रामचरितमानस* की कथा के लिये दे० *राम*, *सीता*।

तुलसीदास के इस महाकाव्य में जीवन के समस्त अंग पूर्ण रूप से प्रदर्शित किये गये हैं। कथा के साथ-साथ दार्शनिक और धार्मिक सिद्धांतों का बहुत स्पष्टता से निरूपण किया है। *वाल्मीकि रामायण* में राम एक महापुरुष हैं और *अध्यात्म रामायण* में वे संपूर्णतः ईश्वर हैं। तुलसी ने अधिकतर *अध्यात्म रामायण* का आदर्श ही स्वीकार किया है, यद्यपि उन्होंने उसमें अपने मौलिकता का भी समावेश कर दिया है। इस प्रकार यह राम को परब्रह्म प्रतिपादित करने के उद्देश्य से लिखा गया भक्ति-काव्य है।

मानस में पात्रों का निर्वहण और चरित्र-चित्रण सब से प्रधान है। कवि ने प्रत्येक पात्र का चरित्र इस प्रकार रखा है कि वह अपनी श्रेणी के लिये आदर्श रूप है। चरित्र-चित्रण में तुलसी का उद्देश्य लोक-शिक्षा है। इन आदर्शों के साथ तुलसी ने स्वाभाविकता और मनोवैज्ञानिकता को भी हाथ से नहीं जाने दिया है। कला और शिक्षा का इतना सुंदर समन्वय अन्यत्र बहुत कम मिलता है।

मानस में काव्य के सभी गुण हैं। रसों का वर्णन सफलतापूर्वक किया गया है। भाव-तीव्रता और काव्य-सौंदर्य के लिये अलंकारों का प्रयोग यथास्थान हुआ है। समास-दोष, प्रतिकूलाक्षर और अर्थ-दोष के अंतर्गत न्याय विरुद्ध दोष आदि भी *मानस* में कहीं-कहीं हैं। किंतु रचना में जहाँ अपरिमित गुण हैं, वहाँ काव्य के एक दो दोष नगण्य हो जाते हैं।

मानस तुलसी के सब ग्रंथों में अधिक लोकप्रिय है, पर इसका पाठ कहीं-कहीं शुद्ध प्रतीत नहीं होता। विशेष दे० रामदास गौड़-कृत *रामचरितमानस की भूमिका*।

रामदास (१६०८-६१ ई०)—एक प्रसिद्ध महाराष्ट्री भक्त, राजनीति वेत्ता, रामदासी पंथ के प्रवर्त्तक, *दशबोध* (अनू० *हिंदी दासबोध*) के रचयिता। इनका प्रारंभिक नाम नारायण था। इन्होंने रामदास नाम से वैष्णव भक्ति का प्रचार किया। इन्होंने **शिवाजी** को बहुत प्रभावित किया। इसलिये इनका नाम समर्थ गुरु रामदास हुआ। इनके उत्साह भरे उपदेश ने महाराष्ट्र को शक्ति से समन्वित कर मुसलमानी सत्ता के सामने निर्भीक और साहसी बना दिया था।

रामधारीसिंह 'दिनकर' (१६०८ ई०-)—प्रसिद्ध आधुनिक कवि। जन्म सिमरिया मुंगेर, बिहार)। इनकी भावनाओं का मूल. कवि के अपने शब्दों में, *पथिक*, *भारत भारती*, १६२१ के असहयोग आंदोलन आदि में है। इनकी मुख्य रचनाएँ—*रेणुका*, *हुँकार*, *सामधेनी* *रसवंती*, *द्वंद्वगीत*, *बापू*, *धूपछाँह*, *रश्मि रथी*, *मिट्टी की ओर* और *संस्कृति के चार अध्याय* हैं।

रेणुका (१६३५)—के मुख्य भाव प्रकृति-प्रेम, अतीत के प्रति मोह, देश-भक्ति और निवृत्ति हैं। *हुँकार* (१६३६) और *सामधेनी* (१६४६) में ओजपूर्ण कविताओं का संग्रह है। *रसवंती* (१६४०) में जीवन के कोमल पक्ष का स्पर्श किया है, जिसमें नारी के विभिन्न रूपों का चित्रण है। *द्वंद्वगीत* (१६४०) में दार्शनिक चिंतन और राग तथा विराग के बीच द्वंद्व का चित्रण हुआ है। *कुरुक्षेत्र* (१६४६) लिखा तो प्रबंध-काव्य के रूप में है, किंतु इसमें युद्ध की मीमांसा अधिक है। युद्ध और शांति, हिंसा और अहिंसा, प्रवृत्ति और निवृत्ति, हृदय और

मस्तिष्क आदि की जो विवेचना इस काव्य में है, उसमें भारतीय संस्कृति और समाज-दर्शन का सुंदर समन्वय है। यह कवि की अबतक की रचनाओं में श्रेष्ठ मानी जाती है। *बापू* (१९४६) का गांधी-विषयक काव्यों में अपना विशिष्ट स्थान है। *धूपछाँह* (१९४६) में केवल छः कविताएँ मौलिक हैं, शेष अनुवाद हैं। *रश्मि रथी* (१९५२) कथा-काव्य में कर्ण के चरित्र के रूप में उपेक्षित और दलित मानवता के प्रति कवि की भावनाएँ और सहानुभूति अभिव्यक्त हुई है। *मिट्टी की ओर* इनका आलोचनात्मक ग्रंथ है।

'दिनकर' पर राष्ट्रियता की छाप अधिक है। इनका करुणार्द्र हृदय धनी और पूंजीपतियों की शोषण नीति से व्यथित हो जाता है। इनके प्राकृतिक वर्णन में देश-प्रेम की भावना प्रधान है।

रामनरेश त्रिपाठी (१८९० ई०-)—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *मिलन* (१९१८), *पथिक* (१९२१), *स्वप्न* (१९२९) (खंड-काव्य), *घाघ और भड्डरी*, *ग्रामीण गीत*, *कविता कौमुदी*(संपादित, सात भागों में एक बृहत् काव्य-संग्रह), जिसके विभिन्न खंडों में हिंदी, उर्दू, संस्कृत, बँगला आदि भाषाओं के प्रतिनिधि कवियों का विस्तृत परिचय और उनकी चुनी हुई कविताओं का संग्रह), *जयंत* (१९३४, नाटक) आदि हैं। इन्होंने *रामचरितमानस* की टीका भी लिखी है जो बड़ी प्रसिद्ध है।

इनकी कविता देश-भक्ति की भावनाओं से परिपूर्ण और मानव हृदय में सत्प्रवृत्तियों को अंकुरित करने वाली है। *स्वप्न* में देश-प्रेम और त्याग के उच्च आदर्श हैं और आशावाद का अपूर्व संदेश है। इनकी भाषा में संस्कृत पदावली का सौंदर्य है।

रामनाथ (आ० का० १८४३ ई०)—पटियाला के महाराजा नरेश के समकालीन एक राम-भक्त कवि। *रसभूषण*, *महाभारत गाथा* तथा *जानकी पचीसी* के रचयिता।

रामपालसिंह (जन्म १८४९ ई०)—कालाकाँकर के नरेश, इंग्लैंड से प्रकाशित होने वाले 'हिंदोस्थान' (इसमें हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों रहती थीं) के संचालक। भारत लौटने पर इन्होंने 'हिंदोस्थान' को दैनिक हिंदी पत्र बनाया।

रामपुर—**अयोध्या** का नामांतर।

रामप्रिया शरण (आ० का० १७०३ ई०)—जनकपुर निवासी, एक राम-भक्त कवि और *सीतायण* वा *सीताराम प्रिया* के रचयिता।

रामरूप (आ० का० १७५० ई०)—**चरणदास** के शिष्य एक संत और *बारहमासा* (एक प्रसिद्ध ग्रंथ) के रचयिता।

रामलला नहछू—**तुलसीदास** का अवधी भाषा में एक काव्य (१५८६ ई० ?)।

भारतवर्ष के पूर्वीय प्रांतों में बारात के पहिले नहछू कराने की प्रथा है। नहछू विवाह की एक रस्म है, जिसमें वर की हजामत बनती है, नाखून काटे जाते हैं और उसे महावर आदि लगाई जाती है। तुलसीदास की यह रचना इस अवसर पर गाने के लिये उपयुक्त है। इसमें वर के लिये राम, वर की माता के लिये कौसल्या, वर के पिता के लिये दशरथ आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं। यह २० छंदों की एक छोटी-सी रचना है। इसमें शृंगारिकता अधिक है।

रामलीला—राम के चरित्र का अभिनय, जो

विजयदशमी के दिनों में उत्तर भारत के अधिकांश भागों में होता है।

रामसिंह—नवलगढ़-नरेश, एक रीति-कवि। *अलंकार-दर्पण, रस-निवास* (१७६१ ई०) तथा *रस-विनोद* (१८०३) के रचयिता।

रामसिंह मुनि (आ०का०ल० १००० ई० ?)—एक जैन रहस्यवादी कवि तथा *पाहुड़ दोहा* (पाखंड खंडन आदि वर्णन) के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

रामाज्ञा प्रश्न—**तुलसीदास** का अवधी तथा ब्रज-भाषा में एक ग्रंथ, जिसमें ३४३ छंद हैं।

इसमें राम-कथा का वर्णन सात सर्गों में विभाजित है। काव्योत्कर्ष और प्रबंधात्मकता का इस ग्रंथ में अभाव है। यह ग्रंथ शकुन विचारने के लिये बनाया गया है। रचनाकाल १६१२ ई० माना जा सकता है।

रामानंद (वर्त्त० १३८६-१५२३ ई०)—वैष्णव धर्म के एक प्रसिद्ध आचार्य, काशी के स्वामी राघवानंद के शिष्य और उत्तराधिकारी। *वैष्णव-मताब्ज-भास्कर* तथा *श्री रामार्चन पद्धति* (दोनों संस्कृत-ग्रंथ) के रचयिता। *योग चिंतामणि*, *रामरक्षा स्तोत्र* आदि पुस्तकें भी इनकी लिखित कही जाती हैं।

इन्होने विष्णु अथवा नारायण के स्थान पर अवतार रूप राम की भक्ति, जटिल कर्म-कांडों की अपेक्षा सरल भक्ति की साधना, वर्णाश्रम व्यवस्था को मानते हुए भक्ति-क्षेत्र में मनुष्यमात्र की समानता और संस्कृत के स्थान पर हिंदी को उपदेश की भाषा बनाने को प्रधानता दी। इन्होंने धर्म के स्वरूप को अत्यंत व्यापक और लोक-प्रिय बना दिया। सारे भारत का पर्य्यटन कर इन्होंने अपने सिद्धांतों का प्रचार किया। ये जहाँ भी जाते थे, राममंत्र की दीक्षा देते थे। इन्होंने **कबीर** आदि मुसलमानों तथा **रैदास** आदि अछूतों को भी वैष्णव धर्म में आश्रय दिया। इनके संप्रदाय में कबीर जैसे निर्गुणवादी और तुलसी जैसे सगुणवादी सम्मिलित हैं। **पीपा, सेना, रैदास, मलूकदास** आदि सभी संत रामानंद के ऋणी हैं।

रामानुजाचार्य (१०१७-११३७ ई०)—वैष्णव धर्म के एक प्रसिद्ध आचार्य। जन्म श्रीपेरुंपूटूर (मद्रास), मृत्यु श्रीरंगम् (तिरुचिनापल्ली)। *वेदार्थ-संग्रह; श्री भाष्य, उपनिषद् भाष्य* और *गीता भाष्य* इनकी रचनाएँ हैं। इन्होंने भारत की दो बार यात्रा की।

इन्होंने संसार की सत्यता स्थापित कर विशिष्टाद्वैत (विशेषण-युक्त अद्वैत) का प्रतिपादन किया। ये जीव और जगत् को ब्रह्म के विशेषण मानते हैं और संसार को मिथ्या नहीं कहते (दे० शंकराचार्य)। *श्री भाष्य* में इन्होंने जगत् की सत्यता और ईश्वर की सगुणता का पांडित्य-पूर्ण विवेचन किया है। इन्होंने भक्ति पर अधिक बल दिया और नारायण की उपासना प्रतिपादित की है। यद्यपि ये शूद्रों का भी आदर करते थे, तथापि आचार्य के नाते इनके सिद्धांत जाति-पाँति के पोषक थे। रामानुजीय शिष्य-परंपरा की पाँचवीं पीढ़ी में **रामानंद** हुए थे।

रामायण—**रामचंद्र** के चरित्र से संबंध रखने वाला ग्रंथ।

संस्कृत में राम-कथा पर आश्रित अनेक ग्रंथ हैं, जिनमें से वाल्मीकि-कृत *रामायण* सब से प्राचीन, प्रामाणिक और प्रसिद्ध है। तुलसीदास-कृत <u>*रामचरितमानस*</u> का बोध

भी इसी 'रामायण' शब्द से होता है। *अध्यात्म रामायण* और *अग्निवेश रामायण* भी अन्य प्रसिद्ध रामायण हैं। हिंदी में अनेक कवियों ने *रामायण* लिखी हैं। **वाल्मीकि**-कृत *रामायण* (अनू०) में २४१०० श्लोक हैं जो ७ कांडों में विभाजित हैं। *बालकांड* में राम का बाल-जीवन अंकित है; *अयोध्याकांड* में अयोध्या का वर्णन तथा राम का वनवास; *अरण्यकांड* में राम का वन में जीवन और सीता-हरण; *किष्किधाकांड* में **बालि** का वध तथा सुग्रीव का राज्याभिषेक; *सुंदरकांड* में हनुमान द्वारा लंका-दहन; रामादि का लंका में प्रवेश; *युद्धकांड* (*लंकाकांड*) में राम से रावण का युद्ध, रावण की पराजय, राम का सीता सहित अयोध्या में आगमन और अभिषेक; *उत्तरकांड* में सीता का वनवास, **कुशलव** की उत्पत्ति, राम, सीता और कुशलव का मिलन, सीता का पृथ्वी में समा जाना और राम का स्वर्ग को गमन।

वाल्मीकि-कृत *रामायण* आदि-काव्य के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी रचना तृतीय अथवा चतुर्थ शती ई० पू० में हुई प्रतीत होती है। पर प्रथम तथा अंतिम कांड और अन्य कांडों में भी कहीं-कहीं कुछ अंश द्वितीय शती ई० के प्रतीत होते हैं। भारत के सांस्कृतिक तथा धार्मिक जीवन पर *रामायण* की बड़ी गहरी छाप है। विशेष दे० कामिल बुल्के-कृत *राम-कथा*।

रामायण महानाटक—दे० *प्राणचंद्र चौहान*।

रामेश्वरप्रसाद शुक्ल 'अंचल' (१९१५ ई०-)—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *मधूलिका* (१९३८), *अपराजिता* (१९३९), *किरणवेला* (१९४१) और *करील* (काव्य-संग्रह) हैं। 'इनकी कविता में वासना, तृष्णा और इनसे अतृप्ति होने पर असंतोष और विद्रोह-भावना है। अब ये शोषित एवं पीड़ित मानवों का पक्ष लेकर क्रांति की ज्वाला प्रज्वलित करना चाहते हैं।' इन्होंने 'करील' को शोषित का प्रतीक माना है।

रामेश्वरम्—**सेतुबंध**। यहाँ पर रामलिंगेश्वर का प्रसिद्ध मंदिर है।

रायमल्ल पांडे—एक राम-भक्त कवि। तुलसी-दास-कृत *हनुमद्बाहुक* के ढंग पर *हनुमानचरित* (१६३९ ई०) के रचयिता।

रावण—विश्रवा और **कैकसी** का पुत्र तथा लंका का राजा। इसकी पत्नी का नाम **मंदोदरी** था। **मेघनाद** इसका सब से अधिक वीर पुत्र था। **कुंभकर्ण** इसका वीर भाई और **अहिरावण** इसका परम मित्र था। इसने दस सहस्र वर्ष तक तप किया। प्रत्येक सहस्र वर्ष पर इसने अपने एक-एक मस्तक को हवन कुंड में आहुत कर दिया। इसपर ब्रह्मा प्रसन्न हुए और इसे वर दिया कि मनुष्य के अतिरिक्त तुम्हारा कोई वध न कर सकेगा (*वा० रा० उ० १०*)। इसने **कुबेर** को लंका से भगा दिया (*११*) और यम (२२) आदि को पराजित कर दिया। एक बार **कार्तवीर्य** ने युद्ध में इसे बंदी बना लिया था, पर पुलस्त्य के कहने से इसे छोड़ दिया (*३२-३३*)। **बालि** ने भी इसे अपनी काँख में दबा लिया था (*३४*)। एक बार इसने कैलास पर्वत को उठाने की चेष्टा की। शिव ने बाएँ पैर के अंगूठे से उस पर्वत को दबा दिया, जिससे इसकी भुजाएँ दब गईं और यह पीड़ा से चिल्लाने लगा। 'रव' करने (चिल्लाने) से इसका नाम रावण पड़ा। शिव ने दया करके इसे छोड़ दिया और इसे चंद्रहास नामक एक तलवार भी दी (*१६*)। दे० *नंदी*। **शूर्पणखा** के विलाप करने पर (*वा० रा०*

अर० ३४) इसने पंचवटी में आकर **मारीच** की सहायता से सीता-हरण किया। मार्ग में इसने पक्षिराज **जटायु** का वध किया (४२-५६, ६७-६८)। सीता का हरण तो रावण ने कर लिया, किंतु **नलकूबर** के शाप से उनका कुछ अनिष्ट न कर सका (दे० *रंभा*)। राम ने सुग्रीव और हनुमान की सहायता से लंका पर आक्रमण कर दिया। रावण के धर्मात्मा भाई विभीषण, रावण से अपमानित हो, राम से जा मिले। घोर युद्ध के उपरांत राम ने रावण का वध कर दिया (*वा० रा० यु० १००-१११*)। रावण के पर्य्याय०—दशवदन, दैत्येंद्र, दशकंध, लंकेश, निशिचरपति, दशकंठ, दशमाथ, दशग्रीव, दशानन, यातुधानेश।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा—१९३६ ई० में नागपुर में 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' के अवसर पर भाषा प्रचार के उद्देश्य से स्थापित। हिंदी प्रचारकों को तैयार करने के लिये राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने 'राष्ट्रभाषा अध्यापन मंदिर' वर्धा की स्थापना की। अन्य प्रांतों में भी इस प्रकार की संस्थाओं ने जन्म लिया और तभी से ये संस्थाएँ हिंदी के प्रसार में योग दे रही हैं। इन सभाओं की ओर से अहिंदी-भाषी नागरिकों में हिंदी की योग्यता को बढ़ाने के लिये कुछ परीक्षाएँ भी समय-समय पर होती रहती हैं। भारत की यही ऐसी संस्था है, जिसने भारत के बाहर पूर्वी अफ्रीका, मारिशश, फ़िजी आदि विदेशों में अनेक परीक्षाकेंद्र खोल कर हिंदी का प्रचार किया है। समिति का अपना पुस्तकालय, वाचनालय, भवन और प्रेस भी है। 'राष्ट्र-भाषा' और 'राष्ट्रभारती' दो साहित्यिक पत्र भी समिति की ओर से प्रकाशित होते हैं।

रास—गोपों की प्राचीनकाल की एक क्रीड़ा, जिसमें वे सब घेरा बाँध कर नाचते थे। कृष्ण-भक्त कवियों ने अनेक 'रास' लिखे हैं। इन सब में कृष्ण का गोपियों के साथ क्रीड़ा करना वर्णित है।

रासपंचाध्यायी—**नंददास** (र० का० ल० १५६८ ई०) का ब्रज-भाषा में एक प्रसिद्ध काव्य, जिसमें कृष्ण की रासलीला पाँच अध्यायों में वर्णित है। *प्रथम* अध्याय में कृष्ण गोपियों की बात मानकर कुंज में विहार करते हैं और फिर थोड़ी देर के लिये अंतर्धान हो जाते हैं, *द्वितीय* में गोपिकाएँ कृष्ण को प्रत्येक कुंज में खोजती हुई लता-वृक्षों से कृष्ण का पता पूछती हैं। यह वर्णन बहुत ही सरस और करुणा से ओत-प्रोत है। *तृतीय* अध्याय में गोपिकाएँ कृष्ण से पुनः दर्शन देने की याचना करती हैं, *चतुर्थ* में कृष्ण पुनः प्रकट होते हैं, *पंचम* में रासलीला का सुंदर वर्णन है।

इस ग्रंथ का आधार मुख्यतया *भागवत* है। शृंगार, करुण और शांत रसों का इस ग्रंथ में बड़ा सुंदर वर्णन है। करुण रस का जैसा वर्णन इस ग्रंथ में हुआ है, ऐसा हिंदी-साहित्य में अन्यत्र बहुत कम है। इसमें माधुर्य और प्रसाद ये दो गुण बहुत उच्च श्रेणी के हैं। इस काव्य में पद-योजना बहुत सुंदर है। अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा अलंकारों का विस्तार और रोला तथा दोहा छंदों का स्वच्छंद प्रवाह है। रचना में ब्रज-भाषा का प्रवाह बहुत ही स्वाभाविक तथा सरस है। वर्णन इतने यथार्थ और स्वाभाविक हैं कि चित्र आँखों के सामने नाचने लगते हैं।

रासो—डिंगल भाषा या पुरानी हिंदी में लिखित काव्य-ग्रंथ। इसमें किसी राजा का चरित्र, युद्ध वीरता, प्रेम-विषयक वर्णन रहता

है। जैसे—*पृथ्वीराजरासो, बीसलदेवरासो* आदि। कुछ लोग 'रासो' शब्द का संबंध 'रहस्य' से बतलाते हैं। पर *बीसलदेवरासो* में काव्य के अर्थ में 'रसायण' शब्द बार-बार आया है। रामचंद्र शुक्ल का मत है कि इसी 'रसायण' शब्द से होते-होते 'रासो' हो गया।

राहु—एक कल्पित ग्रह। इसने सूर्य और चंद्रमा आदि देवताओं के बीच बैठ कर चोरी से **मोहिनी** के हाथों **अमृत** पी लिया था। यह अमृत इसके कंठ तक ही पहुँचा था कि विष्णु ने इसकी ग्रीवा काट दी। इसका धड़ से ऊपर का भाग राहु (जो अमृत पीने से अमर है) और नीचे का केतु कहलाता है। क्योंकि सूर्य और चंद्रमा ने इसकी यह चोरी विष्णु को बतलाई थी, इसलिये यह सूर्य और चंद्र को ग्रसता है, जिससे 'सूर्यग्रहण' और 'चंद्रग्रहण' होते हैं (*भा० ८.६*)। राहु के पर्य्याय०—विधुंतुद, तम, स्वर्भानु, सैंहिकेय, सिंहिकासुत, असुर।

राहुल—**गौतम बुद्ध** और यशोधरा का पुत्र। इसके जन्म के सातवें दिन गौतम ने गृह-त्याग कर दिया था। सात वर्ष की अवस्था में यह बुद्ध के समीप जाकर बुद्ध-संघ में सम्मिलित हुआ और बीस वर्ष की अवस्था में बौद्धभिक्षु बन गया।

राहुल सांकृत्यायन (१८९३ ई०-)—पाली भाषा तथा बौद्ध साहित्य के विद्वान्, उपन्यासकार और लेखक। जन्म ज़िला आज़मगढ़। ये संस्कृत, पाली, अंग्रेज़ी, बँगला आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता हैं। इन्होंने हिंदी की अमूल्य सेवा की है। ये अनेक बार तिब्बत गये और वहाँ से बौद्ध ग्रंथ भी लाए। रूस में लेनिनग्राड विश्वविद्यालय में ये प्रोफेसर भी रहे। इन्होंने यूरोप की यात्रा भी की। इनकी मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

पुरातत्त्व निबंधावली, हिंदी काव्य धारा, सोवियत भूमि (२ भाग) *मेरी जीवन यात्रा* (२ भाग) *दर्शन दिग्दर्शन; जय यौधेय, सिंहसेनापति* (दोनों उपन्यास), *तीन नाटक, घुमक्कड़ शास्त्र, भागो नहीं बदलो, वोल्गा से गंगा, बाईसवीं सदी* आदि।

विस्तृत अध्ययन और गंभीर अनुसंधान के आधार पर इन्होंने प्रचलित परंपराओं का अतिक्रमण करके हिंदी-साहित्य को कई शताब्दी पूर्व पहुँचा दिया है। ये एक प्रगतिवादी लेखक हैं। इनके उपन्यासों में कल्पना के आधार पर चिर अतीत के मानव जीवन के यथार्थ चित्रण का यत्न किया गया है। *सिंह सेनापति* में इन्होंने प्राचीन वातावरण में गणतंत्र राज्यों के सहारे मार्क्सवादी सिद्धांतों का उद्घाटन किया है।

रिपोर्ताज—सामाजिक, आर्थिक और विशेषतः राजनीतिक परिस्थिति के विषय में सूचना देने वाला एक लेख। यह सरकारी या अखबारी रिपोर्टों से सर्वथा भिन्न है। इसमें लेखक का निजी उत्साह रहता है, जो वस्तुगत सत्य पर बिना किसी प्रकार का आवरण डाले उसको प्रभावमय बना देता है। छोटी-छोटी घटनाओं को देकर लेखक पाठक के मन पर एक सामूहिक प्रभाव डालने का प्रयत्न करता है।

हिंदी में रांगेय राघव, प्रभाकर माचवे, शिवदानसिंह चौहान आदि रिपोर्ताज-लेखक उल्लेखनीय हैं।

रिहर्सल—नाटक आदि के अभिनय का पूर्वाभ्यास।

रीति—दंडी के अनुसार विशिष्ट पदों की

रचना रीति है। वामन ने *विशेषोगुणात्मा* कह कर गुण-मंडित पद-रचना को रीति बताया। आनंदवर्द्धन ने पदों की सम्यक् शोभन-रचना को रीति नाम से कथित किया। विश्वनाथ ने शरीर के अंगों के परस्पर अनुकूल संघटन के समान रसादि का उपकार करने वाली पद संघटना को रीति कहा। साहित्य-शास्त्र में 'रीति' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ८ वीं शती में वामन द्वारा *काव्यालंकार सूत्रवृत्ति* में हुआ। उससे पूर्व कहीं-कहीं इस अर्थ में 'मार्ग' शब्द प्रयुक्त हुआ था। भामह ने तत्कालीन दो काव्य-पद्धतियों—वैदर्भी तथा गौड़ी—की चर्चा की, किंतु उन्होंने इसके लिये 'मार्ग' शब्द का प्रयोग नहीं किया और न उसका लक्षण ही दिया। दंडी ने अवश्य 'मार्ग' शब्द का प्रयोग किया है, पर उसका लक्षण देने की आवश्यकता उन्होंने भी नहीं समझी। इसके बाद वामन ने गुणमयी रीति को काव्य की आत्मा बतलाते हुए 'रीति' शब्द का प्रयोग किया, जो इतना अधिक लोकप्रिय हुआ कि इसने 'मार्ग' शब्द को बिलकुल पदच्युत ही कर दिया।

रीति-काव्य—केशवदास, चिंतामणि त्रिपाठी, बिहारीलाल, मतिराम, देव, पद्माकर आदि द्वारा रचित साहित्य।

कृष्ण-काव्य में शृंगार और भक्ति का ऐसा मिश्रण हो गया था कि वे एक दूसरे से पृथक् नहीं हो सकते थे। पहिले के कवियों ने राधा-कृष्ण का वर्णन भक्ति भाव के आलंबन के लिये किया, किंतु बाद के कवियों ने इनके आधार पर अपनी उच्छृंखल वासनाओं को खुल कर खेलने की छुट्टी देदी। राधा-कृष्ण शृंगारिक कविता के ही आलंबन हो गये। कविता *स्वांतः सुखाय* न रह कर उन विषयी राजाओं की वासना-तृप्ति का साधन मात्र बन गई, जिन्होंने मुसलमानी सत्ता को स्वीकार कर विलासिता की मदिरा में आत्म-ग्लानि को भुला दिया था। रीति-कवि शृंगार रस को ही रसराज मानने लगे। इधर पांडित्य-प्रदर्शन व आदर प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा के कारण कवियों ने संस्कृत-ग्रंथों का अध्ययन तथा अनुकरण किया। लक्ष्य-ग्रंथों के पश्चात् कवियों में लक्षण-ग्रंथों के लिखने की स्वाभाविक प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। इस प्रकार रीति-काल में साहित्य-निर्माण के साथ-साथ रस, अलंकार आदि काव्यांगों पर विवेचना हुई। इस काल में भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष का प्राधान्य रहा। कवित्त और सवैया छंदों की प्रधानता रही। बिहारी ने दोहा-निर्माण की कला को चरमोत्कर्ष प्रदान किया। रीति-काव्य की भाषा ब्रज और अवधी का मिश्रण है।

इस काल की कुछ न्यूनताएँ हैं। काव्यांगों के विवेचन के साथ शब्द की शक्ति पर यथोचित विवेचन न हो सका। पद्यमय होने के कारण इन ग्रंथों में साहित्य के अंगों का वैसा विवेचन न हो सका जैसा संस्कृत ग्रंथों में पाया जाता है। रीति-ग्रंथ राजाओं और उनके दरबारियों के लिये लिखे गये। अतः उनका मूल उद्देश्य काव्य का विवेचन नहीं रह गया था, प्रत्युत शृंगारिक और आलंकारिक कविता के लिये पृष्ठ-भूमि तैयार करना था। नाटक-शास्त्र के विवेचन का अभाव रहा। काव्य के विषयों का क्षेत्र बहुत ही संकुचित हो गया और कवियों में कवि-परंपरा की लीक पर चलने की प्रवृत्ति हो गई।

इतना अवश्य है कि रीति-कवियों ने शृंगार के संकुचित क्षेत्र में पारिवारिक जीवन

को बाँध कर उसमें सौंदर्य-दर्शन की चेष्टा की और वे जीवन के उस अंग को पर्याप्त प्रकाश में ले आए। विशेष दे० नगेंद्र-कृत *रीति काव्य की भूमिका*, राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी-कृत *रीतिकालीन कविता एवं शृंगार रस का विवेचन*।

रीति-संप्रदाय—एक संप्रदाय। इसके प्रवर्त्तक वामन हैं, जिन्होंने रीति को ही काव्य की आत्मा स्वीकार किया है। पद संघटना-कौशल (रीति) गुणों पर आश्रित रहने के कारण इसे 'गुण संप्रदाय' भी कहते हैं। दे० *रीति*।

रुक्मांगद—देवपुर-नरेश वीरमणि का पुत्र। इसने राम के अश्वमेध के घोड़े तथा उसके रक्षक शत्रुघ्न को पकड़ लिया था। उनको मुक्त करने के लिये राम को रुक्मांगद तथा इसके संरक्षक शिव से युद्ध करना पड़ा था (*पद्म० पा० ३६-४१*)।

रुक्मिणि—विदर्भ-नरेश भीष्मक की पुत्री और **रुक्मी** की बहिन। नारद द्वारा कृष्ण के गुण सुनकर ये कृष्ण पर मुग्ध हो गई थीं। रुक्मी जरासंध के पक्ष में था। इसलिये वह रुक्मिणी का विवाह कृष्ण से न कर चेदि के राजा कृष्ण के फुफेरे भाई, **शिशुपाल** से करना चाहता था। रुक्मिणी ने कृष्ण के पास द्वारिका में एक गुप्त संदेश भेजा। तदानुसार रुक्मिणी-स्वयंवर के दिन कृष्ण विदर्भ आए और इनको हर ले गये। ये लक्ष्मी की अवतार थीं। इनके प्रद्युम्न नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ (*ह० वं० २·५६-६१, भा० १०.५२-६१*)।

रुक्मी—रुक्मिणी का भाई। कृष्ण द्वारा रुक्मिणीहरण होने पर इसने कृष्ण से युद्ध किया था। कृष्ण इसका वध करने लगे थे, किंतु रुक्मिणी की प्रार्थना पर इसे विरूप करके ही छोड़ दिया। इसकी पौत्री रोचना का विवाह अनिरुद्ध से हुआ था। विवाह के अवसर पर रुक्मी ने कपट से द्यूत क्रीड़ा की और बलराम की निंदा भी की। इसपर बलराम ने रुक्मी का वध कर दिया (*भा० १०.५२-५४,६१, ह० वं० २.६१*)।

रुद्र—शिव का एक रूप। कहा जाता है कि इसी रूप में शिव ने कामदेव को भस्म किया था, दक्ष के यज्ञ का नाश किया था और उमा, गंगा आदि के साथ विवाह किया था।

रुस्तम—फारस का एक प्रसिद्ध प्राचीन पहलवान। अब यह शब्द किसी बहुत बड़े वीर को सूचित करने के लिये प्रयुक्त होने लगा है।

रूपक—१ वह काव्य जिसका अभिनय किया जाता है। इसके दस भेद हैं—**नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग, समवकार, वीथी, अंक** और **ईहामृग**। इसके १८ अन्य साधारण भेद (**उपरूपक**) हैं। २ एक अर्थालंकार। इसके मुख्य दो भेद हैं—

१ *तद्रूप*—जहाँ उपमेय में उपमान का आरोप करने पर भी उन्हें पृथक्-पृथक् कहा जाए। उ०—अमिय झरत चहुँ ओर अरु, नयन ताप हरिलेत। / राधा-मुख यह अपर शशि, उदित सदा सुख देत॥ यहाँ 'अपर शशि' पद द्वारा 'राधा के मुख'—उपमेय को प्रसिद्ध 'चंद्रमा' उपमान से पृथक् कहा गया है तथा 'मुख' को अमृत बरसाने वाला और ताप-हारक कह कर 'चंद्रमा' का कार्य करने वाला कहा गया है। इसमें 'अपर', 'अन्य' आदि शब्दों का प्रयोग आवश्यक है।

२ *अभेद*—में बिना किसी प्रकार के निषेध के उपमान और उपमेय के अभेद का कथन किया जाए। उ०—मुखचंद्र—अर्थात् मुख

ही चंद्र है। यहाँ 'मुख' उपमेय में 'चंद्र' उपमान का आरोप किया गया है। 'मुख' और 'चंद्रमा' में भेद होने पर भी अभेद का कथन किया गया है।

रूपक-गीति—रूपकों के रूप में अध्यांतरिक गीति-काव्य की गंभीर तथा अध्यात्मिक अनुभवों की व्यंजना वाली शैली। हिंदी में सियारामशरण गुप्त-कृत *गूढ़ाशय* एक रूपक-गीति है।

रूपकातिशयोक्ति—दे० *अतिशयोक्ति*।

रूपघनाक्षरी—रूपघनाक्षरीहुँ गुरु लघु नियम न बत्तिस वरण कर रचिये चरन चारि (३२ (८,८,८,८) अक्षरों के चार तुकांत पादों से बनने वाला मुक्तक व० दंडक छंद, अंत ग ल)। उ०—बेर बेर बेर लै सराहैं बेर बेर बहु रसिक बिहारी देत बंधु कहँ फेर फेर।

रूपनारायण पांडेय (१८९३ ई०-)—अनुवादक और कवि। द्विजेंद्रलाल-कृत *दुर्गादास*, *उस पार*, *नूरजहाँ*, *सीता*, *पाषाणी* आदि नाटकों के अनुवादक, *पराग* (काव्य-संग्रह) आदि के रचयिता। ये कई वर्षों तक 'माधुरी' के संपादक रहे।

रूपमाला—रत्न दिसि कल रूपमाला अंत सोहै गा ल (२४ (१४,१०) मा० छंद, अंत ग ल)। इसे मदन भी कहते हैं। आरंभ में रगण आवश्यक-सा है। उ०—सविता विराज दोई, दिग्पाल छंद सोई।/ सो बुद्धि मंत प्राणी, जो रामशरण होई॥

रूपसाही—पन्ना निवासी एक रीति-कवि और *रूपविलास* (१७५४ ई०) के रचयिता।

रूम—एशियाई टर्की या तुर्की देश का नाम। यथा—चारि दिसा महि दंड रचो है रूम साम बिच दिल्ली—*कबीर*।

रूमी—**रूम** देश का निवासी। यथा—हबशी रूमी और फिरंगी—*जायसी*।

रेखता—१ उर्दू भाषा में एक प्रकार की ग़ज़ल, जो पिंगल के विचार से **दिग्पाल** छंद में होती है। २ उर्दू भाषा का आरंभिक रूप और नाम।

रेडियो नाटक—रेडियो से प्रसारित किये जाने वाला नाटक। इसमें नाटक दृश्य-काव्य से श्रव्य-काव्य बन जाता है और बहुत कुछ ध्वनि-प्रभाव पर निर्भर रहता है। उदयशंकर भट्ट (*एकला चलो रे*, *कालिदास*) विष्णु प्रभाकर, भारतभूषण अग्रवाल, उपेंद्रनाथ 'अश्क' आदि ने सुंदर रेडियो-नाटक लिखे हैं।

रेणुका—जमदग्नि की पत्नी और परशुराम की माता। एक दिन ये सरोवर में स्नान करने गईं, तो वहाँ चित्ररथ को अपनी पत्नी के साथ जलक्रीड़ा करते देख, स्वयं भी वैसी ही क्रीड़ा करने की इच्छा करने लगीं। जमदग्नि को जब यह ज्ञात हुआ, तब उन्होंने अपने पाँचों पुत्रों को इनको मारने की आज्ञा दी। परशुराम ने पिता की आज्ञानुसार इनका वध कर दिया। पिता ने प्रसन्न होकर परशुराम से वर माँगने को कहा। परशुराम ने एक वर यह भी माँग लिया कि उनकी माता जीवित हो जाए। अतः रेणुका पुनर्जीवित हो गईं (*म० व० ११६, भा० ६.१५-१६, विष्णुधर्म० ११.३६*)।

रेवती—रेवत-पुत्र (रैवत) ककुद्मीची की पुत्री और बलराम की पत्नी।

रैदास—दे० *रविदास*।

रोबिन्सन क्रूसो—**डिफो** का एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ी उपन्यास (१७१९ ई०, अनू०), जिसमें क्रूसो का जीवन और उसके साहसपूर्ण कार्य वर्णित हैं।

रोमपाद (लोमपाद)—**अंग** देश के राजा। राजा दशरथ की शांता नामक पुत्री इनके पास पोष्य-पुत्री के रूप में रहती थी। ऋष्यश्रृंग (दे० यथा०) के वरदान से इन्हें चतुरंग नामक एक पुत्र प्राप्त हुआ (*भा० ६.२३*)।

रोला—ग्यारह तेरह यती मत्त चौबीस रच रोला (२४(११,१३) मा० छंद)। कई आचार्यों का मत है कि अंत में दो गुरु होने चाहियें, परंतु ऐसा होना अनिवार्य नहीं। उ०—जीती जाती हुई, जिन्होंने भारत-बाजी, / निज बल से मल मेट, विधर्मी मुगल कुराजी। विशेष—जब रोला के चारों पादों में ग्यारहवीं मात्रा लघु होती है, तब उसे काव्यछंद कहते हैं। रोला के चार पाद और **उल्लाला** के दो पाद मिलने से **छप्पय** नामक छंद बन जाता है। इसी प्रकार दो पाद दोहे के और शेष चार पाद रोला के मिलने से **कुंडलिया** नामक छंद बन जाता है।

रोहिणी—१ **वसुदेव** की पत्नी और बलराम (दे० यथा०) की माता। ये कंस के भय से **नंद** के घर रहती थीं। २ दक्ष की पुत्री और चंद्रमा की सब से प्रिय पत्नी।

रोहित—दे० *रोहिताश्व*।

रोहिताश्व—राजा हरिश्चंद्र (दे० यथा०) के पुत्र का नाम।

रौद्र—मान-भंगादि से उत्पन्न होने वाला, लाल वर्ण और रुद्र देवता वाला रस। क्रोध स्थायी-भाव, अपराधी आलंबन, अपराध उद्दीपन; नेत्र रक्तता, भृकुटि भंग, ओठ चर्बन, कठोर भाषण, गर्जन, तर्जनादि अनुभाव, मद अमर्ष आदि इसके संचारी-भाव हैं। वीर रस में भी यही सब आलंबनादि होते हैं, किंतु रौद्र में क्रोध स्थायी रहता है और वीर में उत्साह। उ०—अधर चब्ब गहि गब्ब अति, बनि रावण को काल। / दृग कराल मुख लाल करि, दौरेउ दशरथलाल॥ यहाँ रावण आलंबन, क्रोध-स्थायी, आँखें लाल होना आदि अनुभाव, और आवेग आदि संचारी भाव हैं।

ल

लंका—१ सिंहल द्वीप। २ सिंहल (लंका) द्वीप में लंका नामक नगर। देवताओं के शिल्पी **विश्वकर्मा** ने इसके बहुमूल्य भवनों का निर्माण **कुवेर** के लिये किया था। बाद में रावण ने इसपर अपना अधिकार कर लिया।

लंकिनी—एक राक्षसी जिसे **हनुमान** ने लंका में प्रवेश करते समय घूँसों से मार दिया था।

लक्षणा—शब्द की वह शक्ति, जो शब्द के मुख्यार्थ का बोध हो जाने पर, मुख्यार्थ से संबद्ध अन्य अर्थ को रूढ़ि या प्रयोजन के कारण प्रकट करती है।

लक्ष्मण—१ राजा दशरथ और सुमित्रा के पुत्र। सीता-स्वयंवर और राम-वनवास के समय ये भी रामचंद्र के साथ थे। इनका विवाह सीरध्वज जनक की पुत्री **उर्मिला** से हुआ था (*वा० रा० बा० १८, ७३*)। इन्होंने शूर्पणखा के नाक-कान काटे थे। लंका-युद्ध में इन्होंने मेघनाद का वध किया (*वा० रा० यु० ९१*)। रावण ने इन्हें 'शक्ति' से मूर्च्छित कर दिया था (*१०१*)। यद्यपि ये उग्र स्वभाव के थे,

तथापि राम के ये अनन्य भक्त थे। ये शेषनाग के अवतार माने जाते हैं। इनके चंद्रकेतु और अंगद दो पुत्र थे। दे० *रामचंद्र*। लक्ष्मण के पर्य्याय०—सौमित्र, शेष, अनंत, रामानुज। २ (आ० का० १८५० ई०)—अयोध्या निवासी एक राम-भक्त कवि। *रामरत्नावली* के रचयिता।

लक्ष्मणसिंह, राजा (१८२६-६५ ई०)—आगरा निवासी। कई भाषाओं के ज्ञाता और सरकारी अनुवादक। बाद में ये बाँदा में डिप्टी कलेक्टर के पद पर नियुक्त हुए। १८७० में इनको राजा की उपाधि मिली। ये बुलंदशहर के भी डिप्टी कलेक्टर बनाए गये, जिस पद से इन्होंने १८८१ में अवकाश ग्रहण किया।

इन्होंने *बुलंदशहर का इतिहास* अंग्रज़ी, हिंदी और उर्दू में लिखा, *ताज़ीरातेहिंद*, *शकुंतला*, *मेघदूत* तथा *रघुवंश* का हिंदी में अनुवाद किया। आगरे से 'प्रजा हितैषी' नामक एक साहित्यिक पत्र भी निकाला।

इन्होंने हिंदी का स्वत्व स्थापित करने तथा उसको हिंदू संस्कृति के अनुकूल संस्कृत-गर्भित बनाने का प्रयत्न किया। ये अधिकतर संस्कृत के तत्सम शब्दों का व्यवहार करते थे। इनके मत में 'हिंदी और उर्दू की बोली न्यारी न्यारी हैं।' इन्होंने राजा **शिवप्रसाद** की हिंदी भाषा संबंधी नीति का विरोध किया था।

लक्ष्मणसेन पद्मावती कथा—दामौ कवि का एक प्रबंध-काव्य (१४५६ ई०), जिसकी कथा चित्तौड़ की पद्मिनी और लक्ष्मणसेन से संबद्ध है। काव्य की भाषा राजस्थानी है।

लक्ष्मणा—दुर्योधन की पुत्री। स्वयंवर के समय कृष्ण-पुत्र सांब ने इसका हरण किया था (*भा० १०.६८.१*)।

लक्ष्मी—धन की अधिष्ठात्री देवी, जो विष्णु की पत्नी मानी जाती हैं। **समुद्रमंथन** से निकले चौदह रत्नों में ये भी एक थीं। ये विष्णु को मिली थीं। ये अकेली या क्षीरसागर-शायी विष्णु के चरण दबाती हुई दिखाई जाती हैं। दे० *श्रीवत्स*। लक्ष्मी के पर्य्याय०—कमला, पद्मा, पद्मालय, पद्मासना, रमा, हरि-प्रिया, श्री, इंदिरा, माया, मा, समुद्रजा, क्षीर-सागरकन्यका आदि।

लक्ष्मीनारायण—१ (आ० का० १५८० ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि। *प्रेम-तरंगिणी* के रचयिता। २ (१६२५ ई०-)—आधुनिक लेखक। *धरती की आँखें* और *बया का घोंसला और साँप* (दोनों उपन्यास) के रचयिता।

लक्ष्मीनारायण मिश्र (१६०३ ई०-)—नाटककार, कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *संन्यासी* (१६३१), *राक्षस का मंदिर*, *राजयोग* (१६३४, समस्यात्मक), *सिंदूर की होली* (समस्यात्मक), *गरुड़ध्वज* (इसमें शकों के पश्चात् आर्य-संस्कृति की पुनः स्थापना की चर्चा है); *वत्सराज* (इसमें वत्सराज **उदयन** की कीर्त्ति को अमर बनाया है) (नाटक), *अंतर्जगत्* तथा *तपोवन* (काव्य-संग्रह) हैं। इनके प्रथम दो नाटकों में व्यक्ति की समस्याएँ समाज की समस्याएँ बन जाती हैं। इनमें नारी-समस्या को प्राधान्य मिला है। ये अपने को बुद्धिवादी कहते हैं।

लक्ष्मीबाई (मृत्यु १८५८ ई०)—झाँसी के अधिपति परलोकगत गंगाधर राव की विधवा रानी। गंगाधर राव की मृत्यु के पश्चात् लॉर्ड डल्हौज़ी ने इनके राज्य को अंग्रेज़ी सरकार में मिला लिया। १८५७ के विद्रोह के समय इन्होंने विद्रोही सेना के साथ मिलकर अंग्रेज़ी सेना के साथ युद्ध किया। युद्ध में ये बहुत वीरता से लड़ीं और लड़ते-लड़ते मारी गईं।

लच्छीराम भट्ट (जन्म १८४१ ई०)—अमोढ़ा (बस्ती) निवासी एक रीति-कवि, जिन्होंने अपने आश्रयदाताओं के नाम पर *प्रेमरत्नाकर, प्रतापरत्नाकर, मनिसिंहाष्टक, लक्ष्मीश्वररत्नाकर, रावणेश्वरकल्पतरु, कमलानंदकल्पतरु* इत्यादि ग्रंथ लिखे।

लज्जाराम महता—उपन्यासकार। *धूर्त रसिकलाल* (१९०२ ई०), *आदर्श हिंदू* (१९१५) आदि पाँच उपन्यासों के रचयिता। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार ये वस्तुतः उपन्यासकार नहीं, पुराने अखबार-नवीस हैं।

लयात्मक छंद—जिन चरणों (पदों-पादों) या दलों की गणना केवल लयों के आधार पर हो। विशेष दे० *मुक्तक छंद*।

ललकदास (आ० का० १८१३ ई०)—लखनऊ निवासी एक राम-भक्त कवि *सत्योपाख्यान* के रचयिता। ये जाति से जुलाहे थे।

ललित किशोरी (र० का० १८५६-७३ ई०)—लखनऊ निवासी, हित संप्रदाय के एक कृष्ण-भक्त कवि। इनके बहुत से पद और गज़लें मिलती हैं।

ललित माधुरी (र० का० १८५६-७३ ई०)—लखनऊ निवासी, हित संप्रदाय के एक कृष्ण-भक्त कवि। इनके बहुत से पद और गज़लें मिलती हैं।

ललीर (आ० का० १५५१ ई०)—तिरहुत निवासी एक कवि। *महाभारत* पर एक *डंगो पर्व* नामक पुस्तक के रचयिता।

लल्लूलाल (लल्लू जी लाल) (१७६३-१८२५ ई०)—आगरा निवासी। फोर्ट विलियम कॉलिज, कलकत्ता में हिंदी के शिक्षक, कई पुस्तकों के उर्दू-गद्य और ब्रज-भाषा-पद्य में अनुवादक और *प्रेम सागर* (*श्रीमद्भागवत* की दशम स्कंध की कथा का वर्णन) के रचयिता। १८१७ में इन्होंने *राजनीति* के नाम से *हितोपदेश* की कहानियाँ (जो पद्य में लिखी जा चुकी थीं) ब्रज-भाषा गद्य में लिखीं। *माधवविलास* और *सभाविलास* नामक ब्रज-भाषा पद्य के संग्रह ग्रंथ भी इन्होंने प्रकाशित किये थे। इनकी *लाल-चंद्रिका* नामक *बिहारी सतसई* की टीका भी प्रसिद्ध है। इन्होंने एक मुद्रणालय भी खोला था। इनकी भाषा ब्रज मिश्रित खड़ी बोली है। वाक्य कहीं-कहीं बड़े हो गये हैं और मुहावरों का प्रयोग कम है। तुक और अनुप्रास का बाहुल्य-सा है। **गंग** कवि और इनकी भाषा में इतना ही अंतर है कि गंग ने फारसी, अरबी के भी कुछ प्रचलित शब्द रखे हैं और इन्होंने ऐसे शब्दों का बहुत कम प्रयोग किया है। इनकी भाषा में ब्रज-भाषा का अधिक पुट है। ये खड़ी बोली-गद्य के चार प्रधान प्रतिष्ठापकों में से एक हैं।

लव—राम का कनिष्ठ पुत्र। दे० *कुशलव*।

लवकुश—राम के लव और कुश नामक पुत्र। यद्यपि इनमें कुश ज्येष्ठ पुत्र था, तथापि ये 'लवकुश' के नाम से ही अधिक प्रसिद्ध हैं।

लवणासुर—मधु दैत्य का पुत्र एक असुर। जबतक इसके पास शंकर का त्रिशूल था, तबतक इसका कोई वध नहीं कर सकता था। शत्रुघ्न ने इसका वध उस समय किया, जब यह त्रिशूल-रहित था (*वा० रा० उ० ६७-६९*)।

लाँगफेलो (१८०६-८२ ई०)—एक अमरीकी कवि। इनकी *इवेंजेलिन* नामक कविता अनूदित है।

लाक्षागृह—लाख का वह घर जिसे दुर्योधन ने पांडवों को भस्म कर देने की इच्छा से

बनवाया था, किंतु पांडव इसमें से बच निकले थे (दे० *विदुर; म० आ० १४८*) । दे० *वारणावत* ।

लाट—एक प्रचीन देश का नाम जहाँ अब भड़ौच, अहमदाबाद आदि नगर हैं। यह गुजरात का एक भाग है। कहा जाता है कि लाट देश के नागर ब्राह्मणों ने ही नागरी लिपि का आविष्कार किया। दे० *देवनागरी* ।

लाटानुप्रास—दे० *अनुप्रास* ।

लाटिका—साहित्य में एक प्रकार की रचना या रीति, जिसमें वैदर्भी और पांचाली दोनों ही रीतियों का कुछ कुछ अनुसरण किया जाता है। इसमें छोटे-छोटे पद और छोटे-छोटे समास हुआ करते हैं।

लाटी—दे० *लाटिका* ।

लालकवि (आ० का० १६५७-१७०७ ई० के मध्य)—मऊ निवासी, एक वीर-कवि। *छत्रप्रकाश* (छत्रसाल की वीरता का वर्णन) के रचयिता। ऐतिहासिक तथ्यों तथा प्रबंध-काव्योचित गुणों के सर्वांगीण समावेश के कारण *छत्रप्रकाश* का हिंदी-साहित्य में विशेष स्थान है। इस ग्रंथ से बुंदेलों के इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इनके *विष्णुविलास* और *राज्य-विनोद* दो अन्य ग्रंथ भी कहे जाते हैं। इनकी भाषा में स्वाभाविक ओज है और इस कारण वह बड़ी हृदय-ग्राहिणी है।

लालचंद (लक्षोदय)—मेवाड़ के महाराजा जगतसिंह (१६२८-५२ ई०) की माता जांबवती के प्रधान श्रावक हंसराज के भाई। *पद्मिनी चरित्र* (प्रबंध काव्य) के रचयिता। इनकी इस रचना में रत्नसेन और पद्मिनी की कथा वर्णित है। इसकी कथा *पद्मावत* की कथा से भिन्न है।

लालदास—१ (आ० का० १५२८ ई०)—रायबरेली निवासी एक कृष्ण-भक्त कवि। *हरिचरित्र* तथा *भागवत दशम स्कंध भाषा* के रचयिता। २ (आ० का० १६४३ ई०)—अलवर निवासी एक संत और लालदासी पंथ के प्रवर्त्तक। इनके उपदेश इनकी *बानी* में संगृहीत हैं। ३ (आ० का० १६४३ ई०)—बरेली निवासी एक राम-भक्त कवि। *अवध विलास* के रचयिता।

लावनी—एक छंद जिसमें ३० (१६,१४) मात्राएँ होती हैं। इसके अंत में गुरु लघु का कोई विशेष नियम नहीं है। उ०—गुणी जनों की मंत्रौषधि से, चट पट उसका विष उतरे, / अपने मंत्रों में गुणियों का, सर्वनाश यह किंतु करे ॥

लिखित—दे० *शंख* ।

लीला—१ मुनि मुनि कला, पुनि दस कला, हरि लीला सुखदा (२४ (७, ७, १०) मा० छंद, अंत सगण)। २ भू तगि लीला लखौ (भ त ग=७ व० छंद)। उ०—भाँति गई रावरी। बीर नहीं भूपरी।

लुइपा (वर्त्त० ८३० ई० ?)—एक प्रसिद्ध वज्रयान-सिद्ध कवि, उड़ीसा-नरेश दारिकपा तथा उनके मंत्री डेंगीपा के गुरु। दे० *सिद्ध साहित्य* ।

लुंबिनी—कपिलवस्तु के पास एक उपवन, जहाँ गौतम बुद्ध ने जन्म लिया था।

लुक़मान—एक बड़े विद्वान्, जिन्होंने नीति की बहुत-सी कहानियाँ और बातें लिखी हैं।

यूनानी लोग इन्हीं को ईसप कहते हैं। इनका जन्म अफ्रीका में हुआ था।

लुप्तोपमा—दे० *उपमा*।

लेश—एक अर्थालंकार जहाँ दोष का गुण के या गुण का दोष के रूप में वर्णन किया जाए।

दोष देख गुण—
कोऊ बचत न सामुहें सरजा सों रन साजि। / भली करी पिय समर तें जिय ले आये माजि।

गुण देख दोष—
कैद परत है सारिका मधुरी बानि उचारि।

लैम, चार्ल्ज (Lamb, Charles) (१७७५-१८३४ ई०)—एक अंग्रेज़ी आलोचक, नाटककार और उत्कृष्ट निबंधकार। इनकी *टेल्ज़ फ्रॉम शेक्सपियर* का *शेक्सपियर के मनोहर नाटक* नाम से अनुवाद है।

लैला—अरब के एक अमीर की कन्या, जो **मजनूं** से प्रेम करती थी। मजनूं से इसका विवाह न होने पर यह घुट-घुट कर मर गई।

लोकगीत—जन-समूह में प्रसिद्ध बोलचाल की बोलियों में अलिखित (मौखिक) गीत। अब इनका लिखित रूप भी उपलब्ध होने लगा है। **रामनरेश त्रिपाठी** ने इनके संकलन की ओर सर्वप्रथम कार्य किया है। ये गीत *कविता कौमुदी* के पंचम भाग में संगृहीत हैं।

लोकोक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें लोकोक्ति का प्रयोग होता है। उ०—कवि ठाकुर जाहिं लगीं कसकैं नहिं सो कसकै उर आनत है। / बिन अपने पांय बिबाई गए, कोउ पीर पराई न जानत है।

लोचनप्रसाद पांडेय (१८८६ ई०-)—कवि, नाटककार और लेखक। *प्रवासी, मेवाड़-गाथा, माधव-मंजरी, पद्य-पुष्पांजलि* (काव्य), *दो मित्र* (उपन्यास), *छात्र दुर्दशा, ग्राम्य विवाह-विधान, प्रेम-प्रशंसा गृहस्थदशा दर्पण* (नाटक) आदि के रचयिता।

लोपामुद्रा—अगस्त्य की पत्नी। अपने पितरों की दुर्दशा देख अगस्त्य ने विवाह करने का निश्चय किया। जब उन्हें पृथ्वी पर विवाह के लिये कोई योग्य कन्या न मिली, तब इन्होंने स्वयं एक कन्या का निर्माण किया विदर्भराज ने इस कन्या का पालन-पोषण किया (*म० व० ९४*)। युवा होने पर अगस्त्य ने इससे विवाह कर लिया। अगस्त्य ने **इल्वल** का वध किया और उसकी संपूर्ण संपत्ति इन्हें प्राप्त हो गई। इनके पुत्र का नाम दृढस्य था (*९६-९९*)।

लोमपाद—दे० *रोमपाद*।

लोहचुंबक न्याय—"लोहा और चुंबक"। लोहे और चुंबक के समान दो वस्तुओं के आकर्षण को प्रकट करने के लिये इस न्याय का प्रयोग होता है।

व

वंशपत्रपतिता—साजिय वंश पत्र पतिता, भरन भन लगा (भ र न भ न ल ग=१७ (१०, ७) व० छंद)। उ०—भीरन भीन लोग रहहीं, अहनिसि सुख सों। साजिय वंशपत्रपतिता, विकल जु दुख सों।

वंशस्थविलम्—सुजान वंशस्थविलं जता जरा (ज त ज र=१२ व० छंद)। उ०—वसंत ने, सौरभ ने, पराग ने, / प्रदान की थी, अतिकांत

भाव से। / वसुंदरा को, पिक को, मिलिंद को / मनाज्ञता, मादकता, मदांधता ॥

वंशीवट—वृंदावन में बरगद का वह वृक्ष, जिसके नीचे कृष्ण वंशी बजाया करते थे।

वकुल (बकुल)—एक पुष्प जिसके विषय में कवि-प्रसिद्धि है कि यह सुंदरियों की मुख-मदिरा से कुसुमित हो जाता है। इसे मौलसिरी भी कहते हैं।

वक्रोक्ति—१ किसी बात को एक विदग्धता और सौंदर्यपूर्ण घुमाव-फिराव के साथ कहना। जैसे राम ने सुग्रीव से कहा था, कि वह मार्ग संकुचित नहीं है जिससे बालि गया, अर्थात् तुमको भी मार डाला जा सकता है। कुंतक ने वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा माना है। दे० *वक्रोक्ति संप्रदाय*। २ एक अर्थालंकार (कोई-कोई इसे शब्दालंकार भी मानते हैं), जिसमें वक्ता के कथन में अर्थ वक्रता पूर्ण हो या वक्रता से लिया जाए। उ०—को तुम? हम हैं हरि अरी! वानर को नहिं काम। यहाँ हरि का अर्थ विष्णु भी है और वानर भी, परंतु यहाँ वक्ता ने विष्णु के अर्थ में कहा और श्रोता (राधा) ने वानर के अर्थ में लिया। इसके दो भेद हैं—

काकुवक्रोक्ति—में स्वर भेद से अर्थ दूसरा हो जाता है। उ०—मैं सुकुमारि, नाथ बन योगू। / तुमहिं उचित तप, मो कहँ भोगू॥ यहाँ मैं, नाथ, तुमहिं, तप, मो कहँ और भोगू पर बल देने से अर्थांतर हो जाता है।

श्लेषवक्रोक्ति—में उच्चरित पदों का अर्थ भिन्न होता है। यह भिन्नता कहने में हो या समझ लेने में हो। उ०—गौरव शालिनी प्यारी हमारी सदा तुम्हीं इक इष्ट अहौ। शंकर के पार्वती को गौरवशालिनी कहने पर पार्वती ने कहा, न तो मैं गो हूँ, न अवशा और न अलिनी हूँ,' तब आप मुझे ऐसा क्योंकर संबोधन करते हैं।

वक्रोक्ति संप्रदाय—एक संप्रदाय जिसके प्रवर्त्तक आचार्य कुंतक हैं। कुंतक ने वक्रोक्ति (दे० यथा०) को ही काव्य का जीवन माना है *(वक्रोक्तिः काव्यजीवितम्)*। भामह ने **अतिशयोक्ति** को वक्रोक्ति नाम से पुकारा था तथा बताया था कि कवि को इसमें यत्न करना चाहिये क्योंकि इसके बिना और कौन उपादेय अलंकार है? दंडी ने वक्रोक्ति में **श्लेष** के द्वारा सौंदर्य उत्पन्न होता हुआ बताया है। कुंतक द्वारा की गई उदात्त तथा व्यापक कल्पना में ध्वनि का अंतर्भाव-सा हो गया है। किंतु कुंतक के पीछे यह संप्रदाय अधिक विकसित न हो सका। दे० *काव्य*।

वचनिका राठौर रतनसिंह जी री महेस दासौत री—खिड़ियो जगो का एक डिंगल-काव्य (ल० १६५८ ई०), जिसमें रतलाम के रतनसिंह की वीरता का वर्णन है।

वज्रयान—बौद्धों की महायान शाखा से प्रभावित **मंत्रयान** शाखा का वह परिवर्तित रूप, जिसमें भैरवी चक्र के रूप में सदाचार की अवहेलना हुई और मद्य और मैथुन का प्रवेश हुआ। दे० *सिद्ध साहित्य*।

वटे यक्ष न्याय—"वट पर यक्ष निवास"। 'वट वृक्ष पर भूत रहता है' ऐसा सब कहते हैं, परंतु प्रत्यक्ष किसी ने भी नहीं देखा। अर्थात् केवल सुनी सुनाई बात कहना।

वत्स—इलाहाबाद के पश्चिम में एक प्रदेश। यहाँ राजा उदयन राज्य करता था। इस देश की राजधानी कौशांबी थी। रामायणकाल में इसकी उत्तरीय सीमा गंगा नदी थी।

वत्सासुर—एक दैत्य जिसे कंस ने कृष्ण को मारने के लिये भेजा था। यह बछड़े के रूप में गौओं में मिल गया। कृष्ण ने इसका वध कर दिया (*भा० १०.११*)।

वन—जंगल। मथुरा या व्रज मंडल में १२ वन इस प्रकार थे—मधुवन, तालवन, कुमुदवन, वृंदावन, खदिरवन, कामयकवन, बहुलावन, महावन, बिल्ववन, लोहवन, भांडीरवन और भद्रवन। *वराह० १५३* में तालवन, कुमुदवन और बहुलावन के स्थान पर क्रमशः विष्णु-स्थान, कुंडवन और बकुलवन लिखे हैं। कुरुक्षेत्र के सात वन इस प्रकार हैं—कामयक, अदिति, व्यास, फलकी, सूर्य, मधु और सीत। हिमालय के वन नंदन, चैत्रनाथ आदि हैं।

वरशाण—मथुरा ज़िले में भरतपुर के निकट एक ग्राम, जहाँ राधा के पिता वृषभानु रहते थे। दे० *अष्टियाम*।

वरसलपुर गढ़ विजय—एक डिंगल काव्य (१७१२ ई०), जिसमें बीकानेर के महाराजा सुजानसिंह की वीरता का वर्णन है। रचना साधारण है। इसके लेखक अज्ञात हैं।

वराह—विष्णु के अवतार। एक बार हिरण्याक्ष पृथ्वी को घसीट कर पाताल में ले गया। पृथ्वी के उद्धार के लिये विष्णु ने वराहावतार धारण कर, उस असुर का वध किया। पृथ्वी को दाँत पर रखकर वे बाहर ले आए और शेषनाग के मस्तक पर रख दिया (*ह० वं० १.४०, भा० ३.१३*)।

वरुण—पश्चिम दिशा, जल और नागलोक के अधिपति एक देवता। दे० *अष्टावक्र*। वरुण के पर्य्याय०—यादसांपति, प्रचेता, पाशी, जलेश, अप्पति, पाथपति आदि।

वर्ग—संस्कृत भाषा में स्पर्श व्यंजन वर्णों को पाँच वर्गों में निम्न प्रकार विभाजित कर दिया गया है—

कवर्ग—क, ख, ग, घ, ङ। इनका उच्चारण जिह्वा के स्पर्श से कंठ से होता है।

चवर्ग—च, छ, ज, झ, ञ। इनका उच्चारण कंठ से कुछ आगे आकर तालु से होता है।

टवर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण। इनका उच्चारण कुछ आगे चलकर मूर्द्धा से होता है।

तवर्ग—त, थ, द, ध, न। इनका उच्चारण जिह्वा का दाँतों में स्पर्श से होता है।

पवर्ग—प, फ, ब, भ, म। इनका उच्चारण होंठों के स्पर्श से होता है।

वर्णवृत्त—दे० *वर्णिक छंद*।

वर्णिक छंद—वर्ण (अक्षरों) की गणना के आधार पर गिने जाने वाले छंद। साधारणतः इनको वृत्त भी कहते हैं, पर विशेषतः वर्णवृत्त संस्कृत के चार समान पादों वाले वर्णिक छंद को कहते हैं।

वलि—दे० *बलि*।

वल्लभाचार्य (१४७९-१५३० ई०)—एक एक प्रधान प्रवर्त्तक। ये तेलुगु प्रदेश के विष्णु स्वामी मतावलंबी एक भक्त के पुत्र थे। इन्होंने छोटी अवस्था में अनेक विद्वानों को वाद-विवाद में पराजित कर दिया था। कृष्णदेव राय की सभा में ये 'महाप्रभु' नाम से घोषित किये जाते थे। इनके मुख्य ग्रंथ *पूर्व-मीमांसा भाष्य* (इसका बहुत थोड़ा-सा अंश मिलता है), *उत्तर-मीमांसा या ब्रह्मसूत्र भाष्य (अणुभाष्य)* (इसे विट्ठलनाथ ने लिखकर पूरा किया था।

इनके शुद्धाद्वैतवाद का प्रतिपादक यही प्रधान दार्शनिक ग्रंथ है), *श्रीमद्भागवत* की सूक्ष्म टीका (अप्राप्त) तथा सुबोधिनी टीका (इसका कुछ ही अंश मिलता है), *तत्त्वदीपनिबंध* तथा सोलह छोटे-छोटे प्रकरण ग्रंथ के रचयिता।

इनके मतानुसार कृष्ण ही परब्रह्म हैं। वे अपनी आविर्भाव-तिरोभाव शक्ति से जगत् के रूप में परिणत होते हुए भी उससे निर्लिप्त या दूर रहते हैं। वे सच्चिदानंद-स्वरूप हैं, किंतु जड़ जगत् में केवल उनका सत्-स्वरूप, जीवों में सत् और चित् स्वरूप तथा ब्रह्म में सत्, चित् और आनंद तीनों रूप प्रकट रहते हैं। इसलिये जीव और जगत् भी मायात्मक या मिथ्या नहीं हैं। माया से रहित या शुद्ध होने से ही उसे शुद्धाद्वैत कहते हैं। इन्होंने गोपाल-कृष्ण की वात्सल्य भाव से उपासना बतलाई। ब्रह्म (कृष्ण) के लोक को व्यापी बैकुंठ, और गोलोक को उस व्यापी बैकुंठ का एक खंड माना है। इसके अंतर्गत वृंदावन, यमुना, गोवर्द्धन, निकुंज आदि सभी नित्य हैं और इनमें कृष्ण अलक्षभाव से गोचारण रासक्रीड़ा किया करते हैं। इस नित्यलीला में जीव यदि प्रविष्ट हो पाता है, तो उसे परमगति प्राप्त होती है। जीव का इसमें प्रविष्ट होना भगवान् की कृपा ही से होता है। ये भगवदनुग्रह को पोषण या पुष्टि मानते थे। इसीसे इनका संप्रदाय पुष्टि-मार्ग कहलाया। **शंकराचार्य** ने जहाँ निर्गुण को ही ब्रह्म का पारमार्थिक रूप कहा था और सगुण को व्यावहारिक या मार्मिक बतलाया था, वहाँ इन्होंने उस भाव को उलट कर सगुण को असल पारमार्थिक और निर्गुण को उसका अंशतः तिरोहित रूप कहा है। इन्होंने अपने संप्रदाय में केवल प्रेमलक्षण भक्ति को अंगीकृत किया है।

वल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ ने कृष्ण-लीला गान करने को आठ कवियों का चुनाव किया, जो **अष्टछाप** के नाम से प्रसिद्ध हुए।

वल्लभाचार्य ने भारत के बहुत से भागों में पर्य्यटन और विद्वानों से शास्त्रार्थ करके अपने मत का प्रचार किया था। अंत में कृष्ण की जन्मभूमि में जाकर इन्होंने अपनी गद्दी स्थापित की। इनकी गद्दी के उत्तराधिकारी 'महाराज' कहलाते थे। कुछ महाराजों के समय में रास-मंडलियों में अनाचार होने लगा, जिसका बुरा प्रभाव हिंदू-समाज पर पड़े बिना न रह सका।

वसंत—१ वर्ष की छः ऋतुओं में से प्रधान और प्रथम ऋतु, जिसके अंतर्गत चैत और बैशाख के मास माने गये हैं। २ एक राग जो अर्द्धरात्रि के पश्चात् गाया जाता है।

वसंततिलका—जानो वसंततिलका तु भजौ जगौ गा (त भ ज ज ग ग=१४ (८, ६) मा० छंद)। उ०—श्री रामचंद्र यह संतत शुद्ध सीता, / ब्रह्मादि देव सब गावत शुभ्र गीता। इसके अन्य नाम सिंहोन्मत्ता, उद्धर्षिणी आदि भी हैं।

वसंत पंचमी—माघ शुक्ल पंचमी। इस दिन विद्या तथा कला की अधिष्ठात्री देवी **सरस्वती** का पूजन होता है। इस दिन वसंत और **रति** सहित **कामदेव** की भी पूजा करने का विधान है, और वसंत राग के सुनने का फल है।

वसिष्ठ—मित्रावरुण और उर्वशी के पुत्र एक प्रसिद्ध ऋषि *(बृहद्दे० ५.१३४)*। ये **ऋग्वेद** के सप्तम मंडल के द्रष्टा हैं *(ऋ० ७.१८.३३)*। इनका और विश्वामित्र का परस्पर द्वेष रहता था *(बा० रा० बा० ५१)*। इंद्र की कृपा

में ये सर्वलोकों के पुरोहित थे (*गो० ब्रा० २.२.१३*)। इनकी पत्नी का नाम **अरुंधती** था। कामधेनु के लिए इनका **विश्वामित्र** से विवाद हुआ था। इनकी गणना सप्तर्षियों में होती है। दे० *वसु*। इनका एक आश्रम आबू पर्वत पर था। वसिष्ठ के पर्याय०—वैरंचि, ब्रह्मसू, ब्रह्मर्षि।

वसु—आठ देवता, जिन्हें वसिष्ठ के शापवश पृथ्वी पर जन्म लेना पड़ा। दे० *अष्टवसु, गंगा*।

वसुदेव—राजा शूरसेन के पुत्र, कृष्ण-बलराम के पिता और कंस के बहनोई। जब ये उत्पन्न हुए थे, तब देवताओं ने नगाड़े बजाए थे। इसलिये इन्हें आनकदुंदुभि भी कहते हैं (*भा० १०.१*)। कंस ने अपनी चचेरी बहिन देवकी और वसुदेव को बंदी बना लिया था। दे० *कृष्ण*। वासुदेव की रोहिणी, भद्रा, मदिरा आदि पत्नियाँ थीं।

वस्तु—नाटक, उपन्यास, काव्य आदि में घटनाओं का ढाँचा या उनकी योजना। यह दो प्रकार की होती है—एक *आधिकारिक* अर्थात् मुख्य (जिसमें मुख्य पात्रों से संबंध रखने वाली कथा का मुख्य विषय हो) और दूसरी *प्रासंगिक* अथवा गौण (जिसमें नायक-नायिका से संबंध न रहकर अन्य पात्रों से रहता है और वह कथाभाग मूलकथा की गति को बढ़ाने के लिये होता है)। *रामायण* में राम की कथा आधिकारिक है; सुग्रीव की कथा प्रासंगिक है। प्रासंगिक कथा दो प्रकार की होती है—पताका (जब प्रासंगिक कथा का प्रसंग आधिकारिक कथा के साथ अंत तक चलता रहे) और प्रकरी (जब प्रासंगिक कथा बीच में ही रुक जाए)। यदि कथावस्तु का आधार इतिहास, पुराण या परंपरागत-जन-श्रुति हो, तो उसे *प्रख्यात* कहते हैं; यदि कल्पना हो तो *उत्पाद्य*; यदि इतिहास और कल्पना दोनों का मिश्रण हो, तो *मिश्र* कहते हैं।

वहिर्लापिका—दे० *बहिर्लापिका*।

वह्निधूम न्याय—कार्य को देखकर कारण का अनुमान करना, जिस प्रकार धुएँ को देखकर अग्नि के अस्तित्व का अनुमान किया जाता है।

वाचक—१ जब कोई शब्द अपने मुख्य अर्थ को प्रकट करता है, तब वह उसका वाचक कहलाता है। २ उपमालंकार में तुल्य, समान, सा, सी, से, ज्यों, जैसा, जैसे, जिमि, यथा, लौं, तूल, सम आदि शब्द सादृश्य के वाचक होते हैं। इन्हें भी संक्षेप में 'वाचक' कह दिया जाता है।

वात संग्रह—राजस्थान की प्रचलित १०५ गद्यमय कहानियों का संग्रह (लि० का० १७६६ ई०), जिसमें अनेक प्रेम-कहानियाँ भी हैं।

वातापि—एक असुर। यह भेड़ बन जाता था और इसका भाई इल्वल (आतापि) इसे मारकर ब्राह्मणों को खिला देता था। जब ब्राह्मण लोग खा चुकते, तब वह इसका नाम लेकर पुकारता था और यह ब्राह्मणों का पेट फाड़कर निकल आता था। इस प्रकार इन दोनों भाइयों ने बहुत-से ब्राह्मणों का वध किया था। एक बार अगस्त्य मुनि के साथ भी ऐसा ही हुआ। पर जब इल्वल ने इसे पुकारा, तब पता लगा कि मुनि इसे पहिले ही पचा चुके हैं। पीछे मुनि ने इल्वल को भी अपने उदर में पचा लिया (दे० *लोपामुद्रा, म० व० ६६*)।

वात्स्यायन—न्याय-दर्शन पर भाष्य (जो 'वात्स्यायन भाष्य' के नाम से प्रसिद्ध है) और

कामसूत्र के प्रणेता एक प्रख्यात मुनि। इनके ये दोनों ग्रंथ क्रमशः दार्शनिक और कामशास्त्र के विषय में अत्यंत मौलिक तथा प्रामाणिक समझे जाते हैं।

वामन—१ विष्णु के एक अवतार, जिनका शरीर बावन अंगुल का था। दे० *बलि*। २ (वर्त्त० ई० ८ वीं शती)—संस्कृत के एक आचार्य। *काव्यालंकार सूत्रवृत्ति* (अलंकार-शास्त्र) के रचयिता।

वारणावत—हस्तिनापुर के निकट एक ग्राम। दुर्योधन ने **लाक्षागृह** यहीं बनवाया था। इस ग्राम का वर्त्तमान नाम बर्णव है। यह ग्राम मेरठ से १९ मील उत्तर-पश्चिम की ओर है *(म० आ० १४३-४८)*।

वाराणसी—बनारस। वरणा और असि नदियों के संगम पर स्थित होने से इसका यह नाम पड़ा *(वामन० ३)*। इससे पूर्व यह नगर गंगा और गौमती के संगम पर था *(म० अनु० ३०)*। यह काशी देश की राजधानी था *(वा० रा० उ० ४८)*। बुद्ध के समय में काशी राज्य कोसल राज्य के अंतर्गत था। एक मतानुसार प्रतिष्ठान-नरेश पुरूरवा के वंशज काश या काशीराज ने काशी की स्थापना की थी। यह एक पीठ है जहाँ **सती** का बायाँ हाथ गिरा था। हिंदुओं का यह प्रसिद्ध तीर्थ है और उनका विश्वास है कि यहाँ मृत्यु होने से मुक्ति प्राप्त होती है। संस्कृत शिक्षा का यह प्रमुख केंद्र माना जाता है। **पर्य्याय०—काशी, आनंदवन, आनंद-**कानन, महाश्मशान आदि।

वालखिल्य—दे० *बालखिल्य*।

वाल्मीकि—संस्कृत के आदि कवि और *रामायण* के रचयिता। जन्म से ये ब्राह्मण थे, परंतु किरातों के साथ रहते-रहते धर्म-कर्म सब भूल कर ये यात्रियों को लूटकर अपने कुटुंब का भरण-पोषण करने लगे। ऋषियों के उपदेश से इन्होंने एक ही स्थान पर कई वर्षों तक तप किया। यहाँ तक कि दीमकों ने इनके शरीर को ढक लिया। ऋषिगण जब लौटे, तब उन्होंने इन्हें ब्रह्मर्षि वाल्मीकि कहकर उठाया *(स्कंद० ५.१.२४. ७.१.२७८)*। एक बार ये भरद्वाज के साथ नदी पर स्नान करने गये। वहाँ इन्होंने देखा कि एक व्याध ने एक मैथुनासक्त क्रौंच पक्षी के युगल में से एक को मार दिया है। यह दशा देखकर इनके मुख से सहसा '*मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः / यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥*' यह छंदोबद्ध शापवाणी आविर्भूत हुई। अकस्मात् यह अनुष्टुप् वृत्त में थी। शाप देने के पश्चात् ये चिंताग्रस्त थे कि ब्रह्मा ने इन्हें रामचरित्र लिखने की प्रेरणा की *(वा० रा० बा० २)*। इन्होंने राम द्वारा त्यक्ता सीता (दे० यथा०) को अपने आश्रम में आश्रय दिया और *रामायण* की रचना करके वह राम-पुत्र लव-कुश (दे० *कुशलव*) को पढ़ाई। इन्होंने ही लवकुश और सीता की भेंट राम से करवाई थी। इनका **आश्रम कानपुर से १४ मील बिठूर नामक** स्थान पर था। आश्रम के संमुख एक प्राचीन तीर भी मिला है। **पर्य्याय०—आदिकवि, वल्मीकोद्भव, प्राचेतस्, मैत्रावरुणि।**

***वाल्मीकि रामायण*—दे० *रामायण*।**

वासंती—माता नौ मैं गंग, सरस राजै वासंती (म त न म ग ग=१४ (६, ८) व० छंद)। उ०—माता ! मैं गंग, चरण तोरे त्रैकाला।

वासवदत्ता—दे० सुबंधु।

वासुकि—कश्यप और कद्रू के पुत्र और नागराज। इन्हीं के आदेश से आस्तीक ने **जनमेजय** से नागयज्ञ बंद करवाया था। इनकी बहिन मनसा का विवाह **जरत्कारु** ऋषि से हुआ था। **समुद्रमंथन** के समय इन्होंने नेती का कार्य किया था।

वासुदेव—वसुदेव के पुत्र, कृष्ण। डा० भंडारकर का अनुमान है कि वासुदेव भक्ति संप्रदाय के प्रवर्त्तक का नाम था......... और वह अन्य तीनों (अर्थात् संकर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध) के साथ किसी पहिले युग में भी वर्त्तमान रह चुका था (भंडारकर: *वैष्णविज्म शैविज्म ऐंड माइनर रेलिजस सिस्टम्ज़ पृष्ठ १०-१४*)। वासुदेव का किसी विशेष धर्म व संप्रदाय का उपास्यदेव होना छठी शती ई० पू० के प्रसिद्ध वैयाकरण **पाणिनि** के एक सूत्र (*वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन्*, ४.३.९८ पर पातंजल *महाभाष्य*) से भी सिद्ध होता है। जो भी कुछ हो, कालांतर में कृष्ण और वासुदेव दोनों मिलकर एक वासुदेव-कृष्ण हो गये। प्रारंभ में वासुदेव-कृष्ण के मत का प्रचार 'संभवतः मथुरा प्रदेश में' ही था। दूसरी शती ई० पू० में वह मत वर्त्तमान ग्वालियर तक फैल गया और उसके अनुयायियों में विदेशी लोग तक सम्मिलित होने लगे। इसी प्रकार ई० पू० २ री शती के ही, राजस्थान में पाये गये, 'घसुंडी शिलालेख' से भी यह विदित होता है कि ईसा के जन्म के पहिले से ही इसका प्रचार पश्चिम की ओर होने लगा था और नासिक के निकट पाये गये 'नानाघाट शिलालेख' से प्रकट होता है कि इसका विस्तार दक्षिण भारत की ओर भी होता जा रहा था (रायचौधुरी : *अर्ली हिस्टरी ऑफ् दि वैष्णव सेक्ट पृष्ठ १८-१९*)। पूर्व के लोग तबतक इससे प्रायः अपरिचित ही थे। इसी कारण, इस ओर और मगध प्रदेश में गौतम बुद्ध एवं महावीर के मतों का प्रचार सुगमता से हुआ (भंडारकर: *वै० शै० पृष्ठ १२*)।

विंदुसर—गंगोत्री से दो मील दक्षिण में रुद्र हिमालय पर स्थित एक सरोवर, जहाँ भगीरथ ने तप किया था। पृथ्वी पर स्वर्ग से उतरते समय गंगा के जो बिंदु गिरे थे, उन से यह सर बना था।

विंध्याचल—विंध्य पर्वत। दे० *अगत्स्य*।

विकर्ण—धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो बड़ा न्यायशील था।

विकल्प—एक अर्थालंकार जिसमें दो विरुद्ध बातों का एक ही काल में और एक ही स्थान में रहना असंभव होने के कारण विरोध दिखलाया गया हो—या तो यह होगा, नहीं तो वह। उ०—दिसि-दिसि कूजहि कोकिला, फूले रुचिर रसाल। / दूरि करेगा विरह दुःख, कै गोपाल कै काल।

विकस्वर—एक अर्थालंकार जिसमें विशेष वाक्य का सामान्य से समर्थन कर पुनः विशेष वाक्य लाया जाता है। उ०—मधुप ! मोह मोहन तज्यो, यह स्यामन की रीति। / करो आपने काम लों, तुम्हें भाँति सों प्रीति॥—*मतिराम*। यहाँ प्रथम चरण में विशेष वाक्य, दूसरे में सामान्य और द्वितीयार्थ में फिर विशेष वाक्य है।

विक्टोरिया—इंगलैंड की महारानी (१८३७-१९०१ ई०)।

विक्रमशिला—बौद्ध धर्मावलंबी बंगाल और बिहार के पाल शासकों द्वारा ई० ८ वीं शती में स्थापित एक बौद्ध विश्वविद्यालय। एक

मतानुसार यह मठ कहलगाँव (कोलगोंग) के ४ मील उत्तर में तथा भागलपुर के समीप चंपा के २४ मील पूर्व में पाथरघाटा नामक स्थान पर था।

विक्रमादित्य—उज्जयिनी के एक प्रसिद्ध प्रतापी राजा, जो बड़े विद्या-प्रेमी, कवि, उदार, गुणग्राहक और दानी कहे जाते हैं। यह भी कहा जाता है कि इनकी राजसभा में बड़े-बड़े विद्वान् और कवि रहा करते थे, जो 'नवरत्न' कहलाते हैं। इनके संबंध में अनेक प्रकार की दंतकथाएँ प्रचलित हैं। विक्रमी संवत् इनका चलाया हुआ कहा जाता है। विक्रमी संवत् ई० सन् से ५७ वर्ष पूर्व प्रारंभ हुआ था। कुछ इतिहासकार **चंद्रगुप्त द्वितीय** को ही विक्रमादित्य मानते हैं।

विक्रमी संवत्—दे० *विक्रमादित्य*।

विचित्र—एक अर्थालंकार जिसमें किसी फल की सिद्धि के लिए विपरीत यत्न किया जाता हो। उ०—क्यों नहिं गंगा को सुमिरि, दरस परस सुखलेत। / जाके तट में मरत नर, अमर होने के हेत॥

विचित्रवीर्य—शांतनु और सत्यवती के पुत्र। **अंबिका** और **अंबालिका** इनकी पत्नियाँ थीं। ये क्षयरोग से निस्संतान मर गये। दे० *व्यास*।

विजय–विष्णु का एक पार्षद। दे० *जयविजय*।

विजयपालरासो—**नल्लसिंह भट्ट** (१२९८ ई०) का एक काव्य, जिसमें करौली-नरेश विजय-पाल के युद्धों का ओजपूर्ण वर्णन है। ग्रंथ साधारण कोटि का है। इसकी भाषा अपभ्रंश है।

विजयसेन सूरि (ग्रा० का० ल० १२३१ ई०)—जैन ग्रंथकार। *रेवंतगिरि रासा* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

विजयादशमी—आश्विन शुक्ला दशमी को मनाया जाने वाला हिंदुओं का एक बड़ा त्योहार। राजा लोग वर्षा-समाप्ति के पश्चात् इसी दिन दल-बल के साथ विजय-यात्रा के लिए बाहर निकलते थे। रामचंद्र ने लंका पर इसी दिन आक्रमण किया था। अर्जुन ने भी विराट की गौओं के हेतु इसी दिन कौरव-सेना पर चढ़ाई की थी। दे० *अज्ञातवास*।

विजात—ल आदि चौदह कल विजात (१४, मा० छंद, आदि ल) उ०—लहौ विद्या विजाती की, कि जैसे लह स्वजाती की। इसे प्रतिमा और विजाता भी कहते हैं।

विज्ञान गीता—**केशवदास** की एक पुस्तक (१६१० ई०), जो *प्रबोधचंद्रोदय* के ढंग पर लिखी गई है। यह एक आध्यात्मिक ग्रंथ है।

विट्ठलनाथ (जन्म १४५८ ई०)—वल्लभाचार्य (दे० यथा०) के पुत्र और शिष्य, **पुष्टिमार्ग** के संत और **अष्टछाप** के संस्थापक। *शृंगार रस मंडन*, *यमुनाष्टक* तथा *नवरत्न सटीक* के रचयिता। इन्होंने ब्रज-भाषा के प्रचार के लिये जो कार्य किया, वह हिंदी-साहित्य में सदैव स्मरणीय रहेगा। ये ब्रज-भाषा-गद्य के महत्त्वपूर्ण लेखक हैं। विशेष दे० दीनदयालु गुप्त-कृत *अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय*।

वितस्ता—पंजाब में झेलम नदी।

विदर्भ—बरार तथा खानदेश प्रदेश का प्राचीन नाम। **रुक्मिणी** के पिता भीष्मक यहीं राज्य करते थे।

विदिशा—दशार्ण देश की राजधानी। इस नगर का वर्त्तमान नाम भिलसा है। यह नगर भोपाल से ३० मील उत्तर-पूर्व की ओर है।

विदुर—व्यास तथा विचित्रवीर्य की पत्नी अंबिका की दासी से उत्पन्न पुत्र। यद्यपि ये धृतराष्ट्र के मंत्री थे, तथापि ये पांडवों का हित सर्वदा चाहते थे। पूर्वजन्म में ये यमधर्म-राज थे (दे० *मांडव्य*)। ये अत्यंत न्यायपरायण तथा सत्यवादी थे *(म० आ० १०६-८)*। इन्होंने पांडवों की अनेक बार रक्षा की (दे० *लाक्षागृह*)। इन्होंने धृतराष्ट्र को जो उपदेश दिया, वह 'विदुरनीति' के नाम से प्रसिद्ध है *(म० उ० ३३-४०)*।

विदुला—**सौवीर** देश की महारानी। एक बार सिंधु-नरेश ने इनके राज्य पर आक्रमण कर दिया। इनका पुत्र **संजय भयभीत हो गया,** किंतु इन्होंने क्षत्रिय धर्म का उपदेश देकर उसे युद्ध के लिये प्रोत्साहित किया। संजय अपने राज्य की रक्षा करने में सफल हुआ *(म० उ० १३३-३६)*। कुंती ने युधिष्ठिर को युद्ध में प्रवृत्त करने के लिये विदुलापुत्रसंवाद सुनाया था।

विदूषक—फूलों तथा ऋतुओं के नाम वाला (जैसे कुसुमक, वसंतक आदि), क्रिया, देह, वेष, भाषा आदि से दूसरों को हँसाने वाला, कलह-प्रेमी, खाने-पीने आदि मतलब की बात को कभी न भूलने वाला एक नाटकीय पात्र। यह मध्यम प्रकार का शृंगार-सहायक है। संस्कृत नाटकों में जो हास्य का तत्त्व रहता था, वह प्रायः इसी पात्र में केंद्रस्थ होता था। अंग्रेज़ी नाटकों का 'क्लाउन' या 'फ़ूल' इसी की नक़ल बताई जाती है। संस्कृत नाटकों में विदूषक ब्राह्मण होता था और अधिकतर यह पेटू हुआ करता था। जयशंकर प्रसाद-कृत *स्कंदगुप्त* नाटक में मुद्गल नामक विदूषक आता है।

विदेह—तिरहुत। सीता के पिता राजा जनक यहीं राज्य करते थे। दरभंगा ज़िले के अंतर्गत जनकपुर में राजा जनक की राजधानी थी। जनकपुर में वे स्थान दिखाए जाते हैं, जहाँ हल चलाते हुए जनक ने सीता को प्राप्त किया था, राम ने शिव-धनुष तोड़ा था और सीता का विवाह हुआ था। विदेह को मिथिला भी कहते थे।

विद्याधर—१ (वर्त्त० ई० १३ वीं शती)—कवि। इनके किसी ग्रंथ (जिसके कुछ पद्य मिलते हैं) में किसी राठौर सम्राट् (संभवतः जयचंद) के प्रताप और पराक्रम का वर्णन किया गया है। २ दे० *वृत्रासुर*।

विद्यापति (आ० का० १४०३ ई० ?)—विसपी (दरभंगा) निवासी, तिरहुत-नरेश शिवसिंह के आश्रित एक कवि। *कीर्त्तिलता, कीर्त्तिपताका, पदावली* **(अंतिम मैथिली भाषा में) तथा ११ संस्कृत ग्रंथों के रचयिता। इनकी भाषा** में अपभ्रंश से आगे बढ़कर लोक-भाषा की ओर झुकाव है।

इनके शिव संबंधी पद तो भक्ति से ओत-प्रोत हैं, किंतु राधा-कृष्ण संबंधी पदों में भक्ति कम है, शृंगार अधिक है। 'राधा-कृष्ण के प्रेम का शृंगारिक वर्णन एक साधारण भौतिक प्रेम का रूप ले लेता है, यद्यपि मानसिक पक्ष का नितांत अभाव नहीं है। **बिहारी** की भाँति इन्होंने वयःसंधि आदि के बड़े कवित्वमय वर्णन किये हैं। काव्य-चमत्कार की ओर इनका विशेष ध्यान रहा है। फिर भी इन्हें शृंगारिक कवि नहीं कहा जा सकता। इनमें भक्ति-भावना

थी (इनके पदों को सुनकर चैतन्य महाप्रभु भक्ति के आवेश में लोट-पोट हो जाते थे), पर उसपर श्रृंगार-भावना ने विजय पा ली थी।'

विद्यापति अपने समय के बड़े सफल कवि थे। गीत-काव्य लिखने के कारण ये 'अभिनव जयदेव' भी कहलाते हैं। इन्हें 'मैथिल कोकिल' भी कहते हैं। बंगाल में भी इनकी पदावली का प्रचार प्रचुर परिमाण में रहा है। बंगाली लोग इनकी भाषा को बंगाली के अंतर्गत बतलाते हैं और हिंदी भाषा भाषी इनके पदों को हिंदी-साहित्य का अंग मानते हैं। यद्यपि बिहारी होने के कारण इनकी कविता में कुछ बँगलापन अवश्य है, तथापि अधिकांश शब्द-भंडार हिंदी का ही है। दे० शिवनंदन ठाकुर-कृत *महाकवि विद्यापति*, उमेश मिश्र-कृत *विद्यापति*।

विद्युन्माला—मों में गंगा विद्युन्माला (म म ग ग=८ (४, ४) व० छंद)। उ०—मों में गंगा! थारी भक्ति। बाढ़ै ऐसी दीजे शक्ती।

विद्युन्माली—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जिसे सुषेण ने मारा था।

विद्युल्लेखा—दो मा विद्युल्लेखा (म म=६ व० छंद)। उ०—मैं माटी ना खाई। झूठे ग्वाला माई।

विधाता—(२८ (१४, १४) मा० छंद)। इसमें पहिली, आठवीं और पंद्रहवीं मात्राएँ लघु होती हैं। उ०—लहौ विद्या लहौ रत्नै, लखौ रचना विधाता की।

विनता—दक्ष की एक कन्या और कश्यप की एक पत्नी। एक बार कश्यप के वरदान से इनके दो अंडे उत्पन्न हुए। ५०० वर्ष बीत जाने पर भी अंडो से बच्चे नहीं निकले। अधीर हो विनता ने अंडों को फोड़ डाला। एक में से अंगहीन अरुण निकला। उसने निकलते ही अपनी माँ को शाप दिया कि ५०० वर्ष तक तुम्हें कद्रू (दे० यथा०) की दासी होकर रहना पड़ेगा। शाप देकर अरुण आकाश में उड़ गया और सूर्य का सारथि बन गया। दूसरे अंडे से गरुड़ निकला। इसने अपनी माता को दासीत्व से मुक्त करने के लिये कद्रू-पुत्रों से कोई उपाय पूछा। कद्रू-पुत्रों ने इसे अमृत लाने के लिये कहा। देवताओं को पराजित करके गरुड़ स्वर्ग से अमृत लाया और अपनी माता का उद्धार किया (म० आ० २१-३४)।

विनय चंद्र सूरि (आ० का० १२०० ई०)—गुजराती जैन साधु। *मल्लिनाथ महाकाव्य, पार्श्वनाथ चरित, कल्पनिरुक्त, नेमिनाथ चउपई* और *उवएस माला कहाणय छप्पय* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

विनयपत्रिका (विनयावली)—**तुलसीदास** का ब्रजभाषा में एक गीति-काव्य (१६०६ ई०), जिसकी पद-संख्या २७९ है।

कलियुग से सताए जाने पर तुलसीदास ने अपने कष्ट-निवारणार्थ राम से प्रार्थना-पत्र के रूप में इसकी रचना की थी। इसके आधे से अधिक पद शिव, हनुमान, गणेश, सूर्य और दुर्गा की स्तुति में कहे गये हैं। भक्त को अपनी प्रार्थना में इन देवताओं से सहायता की आशा है। संगीत का आधार होने के कारण वृत्तियों का सजीव रूप है। यह रचना बड़ी उत्कृष्ट समझी जाती है। 'इसकी भाषा बड़ी पांडित्यपूर्ण और संस्कृत-गर्भित है, देवताओं की स्तुति में संस्कृत का पुट कुछ अधिक है। निजी विनय के पदों में अपेक्षा-कृत सरलता है।'

विनोक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें किसी वस्तु के अभाव के कारण कोई पदार्थ सुंदर

या न-सुंदर हो जाने का वर्णन किया जाए। यहाँ 'असुंदर' न कहकर 'न-सुंदर' कहने का अभिप्राय यह है कि वह वस्तु स्वभाव से तो सुंदर ही है, किंतु किसी दूसरी वस्तु के प्रभाव में सुंदर लगती नहीं। यथा चाँद के बिना चांदनी। यहाँ चांदनी स्वयं तो अच्छी है, किंतु चाँद के अभाव में उसकी शोभा नहीं रहती।

विनोद रस—सुमति हंस का एक काव्य (लि० का० १६७० ई०), जिसमें विक्रमादित्य के पुत्र जयसेन और सेठ श्रीदत्त की पुत्री लीलावती की प्रेम-कथा है।

विनोदशंकर व्यास—आधुनिक कहानी-लेखक। इनकी मुख्य रचनाएँ *तूलिका* (१६२८ ई०), *भूली बात, धूप-दीप* (कहानी-संग्रह), *मधुकरी* (दो भाग, इसमें प्रधान लेखकों की चुनी हुई कहानियाँ हैं), *कहानी कला* (ज्ञानचंद्र के साझे में) आदि हैं। इनकी कहानियों में भाव-प्राधान्य है, अतः वे **जयशंकर प्रसाद** की कहानियों की श्रेणी में आती हैं।

विप्रचरण—भृगु (दे० यथा०) मुनि के पाद-प्रहार का विष्णु की छाती पर चिह्न।

विप्रलंभ—शृंगार रस के दो प्रधान भेदों में से एक। इसे वियोग भी कहते हैं। दे० *शृंगार*।

विभाव—वे जो सहृदयों के हृदय में रति, हास आदि किसी स्थायी-भाव को उत्पन्न करते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—*आलंबन* (स्थायी-भाव की उत्पत्ति में जो मुख्य कारण हों) और *उद्दीपन* (जो उसके सहायक या पोषक कारण हों)।

विभावना—एक अर्थालंकार जिसमें बिना हेतु कार्योत्पत्ति बताई जाती हो। इसके दो भेद हैं—

प्रथम विभावना—में कारण के अभाव में भी कार्योत्पत्ति होती है। उ०—साहि तनै सिवराज की, सहज टेव यह ऐन। / अन रीझे दारिद हरै, अन खीझे अरि-सैन॥ यहाँ शिवाजी के रीझे बिना दरिद्र-हरण, बिना खीझे शत्रु-नाश हुआ है।

द्वितीय विभावना—में कारण की अपूर्णता में कार्योत्पत्ति होती है। उ०—आक धतूरे के फूल चढ़ाए ते रीझत हैं तिहुं लोक के साईं। यहाँ थोड़े में कार्य होना श्रद्धा का कारण है।

विभीषण—विश्रवा और कैकसी के पुत्र और रावण के अनुज (*वा० रा० उ० ६*)। इन्होंने रावण से सीता को लौटा देने के लिये कहा था। रावण से अपमानित हो ये रामचंद्र की शरण में आए थे (*वा० रा० यु० १६*)। इन्हीं के परामर्श से राम रावण का वध कर सके थे (*३७*)। तभी से यह लोकोक्ति प्रचलित है 'घर का भेदी लंका ढावे।' रावण-वध के पश्चात् राम ने इन्हीं को लंका का राज्य दिया था (*११५*)। इन्होंने राम को पुष्पक विमान भेंट किया था (*१२४*)।

विमर्श संधि—दे० *संधि*।

वियोग—विप्रलंभ का दूसरा नाम। दे० *शृंगार*।

वियोगी हरि (१८६६ ई०-)—कवि। हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के मंत्री और 'सम्मेलन पत्रिका' के संपादक। इनकी मुख्य रचनाएँ *वीर सतसई* (१६२७, भारत के नये-पुराने सभी वीरों की प्रशंसा), *कवि कीर्त्तन, अनुराग वाटिका, प्रेम पथिक* (काव्य) *छद्मयोगिनी, वीर हरदौल* (नाटकीय रचनाएँ), *मेरा नवीन प्रवाह* (आत्म-कथा) आदि हैं। इन्होंने भक्ति का पाठ पढ़ाते हुए भी *वीर सतसई* लिखकर ब्रज-भाषा में भी

राष्ट्रिय भावों का संचार किया। ये वैष्णव धर्म से भी बहुत प्रभावित हैं। कविता संबंधी आदर्शों में इन्होंने **भारतेंदु** का अनुकरण किया है।

विरंचि-सुत—ब्रह्मा के पुत्र, **नारद**।

विरजा—कृष्ण की एक प्रेमिका-सखी। ईर्ष्यावश **राधा** ने इसे नदी हो जाने का शाप दिया था। क्षारसमुद्रादि अष्ट समुद्र इनके पुत्र हैं (*ब्रह्मवै० ४.२*)।

विराट—मत्स्य देशाधिपति। **अज्ञातवास** के समय पांडव इन्हीं के यहाँ रहे थे। भीम द्वारा कीचक-वध होने पर त्रिगर्त-नरेश सुशर्मा और दुर्योधन ने इनपर आक्रमण कर दिया, किंतु अर्जुन ने कौरव-सेना को मथ डाला और इनकी गौओं का उद्धार किया (*म० वि० ३०-३४*)। महाभारत-युद्ध में ये पांडवों की ओर से लड़े और युद्ध के पंद्रहवें दिन द्रोण द्वारा मारे गये (*म० द्रो० १८६*)। इनकी कन्या उत्तरा का विवाह अभिमन्यु से हुआ था।

विराट्—ब्रह्म का वह स्थूल स्वरूप, जिसके अंदर अखिल विश्व समाविष्ट है। *भगवद्गीता* के अनुसार कृष्ण ने अपना विराट् रूप अर्जुन को दिखाया था। **बलि** को भी वामनावतार ने अपना विराट् रूप दर्शाया था।

विराध—एक दैत्य जो जव और शतह्लदा का पुत्र था। यह सीता को उठाकर ले गया था। राम-लक्ष्मण ने इसे गड्ढे में डाल दिया था। पूर्वजन्म में यह तुंबुरु नामक गंधर्व था, पर कुवेर के शापवश राक्षस बन गया था (*वा० रा० अर० २*)।

विरूपा (वर्त्त० ८३० ई० ?)—एक वज्रयान-सिद्ध कवि। दे० *सिद्ध साहित्य*।

विरोचन—भक्त प्रह्लाद के पुत्र और **बलि** के पिता। ये बड़े भक्त और दानशील राजा थे। विष्णु ने ब्राह्मण-वेष धारण कर, इनका जीवन हरण कर लिया था (*नारद० २.३२*)।

विरोधाभास—एक अर्थालंकार जिसमें जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य का विरोध न होने पर भी विरोध-सा प्रतीत होता है। उ०—वेदना में भी है उल्लास। / अश्रु में प्रतिबिंबित है हास॥ / पूर्त्ति का अभाव आभास। / चिरंतन है ध्रुव विश्व विकास॥ यहाँ पहिले विरोध-सा प्रतीत होता है, किंतु विकास-क्रम के चक्र से उसका समाधान हो जाता है।

विवस्वत्—सूर्य का नामांतर।

विशाख—**जयशंकर प्रसाद** का एक नाटक (१९२१ ई०)।

कश्मीर-नरेश नरदेव के राज्य में विशाख नामक एक ब्राह्मण सुश्रवा नामक एक नाग सरदार की पुत्री चंद्रलेखा से प्रेम करता था। सुश्रवा की समस्त भूमि राजा ने छीनकर बौद्ध विहार को दे दी, और वह चंद्रलेखा और इरावती नामक अपनी दोनों पुत्रियों के साथ किसी तरह दिन काटने लगा। घटनाक्रम के अनुसार कानीर विहार के बौद्ध महंत सत्यशील ने चंद्रलेखा के सौंदर्य पर मुग्ध होकर उसे अपने विहार में बंदिनी बना लिया। विशाख के प्रयत्न से वह मुक्त हुई, पर राजा नरदेव स्वयं उसपर आकर्षित हो गया। अंत में प्रजा के विद्रोह ने राजा का सुधार किया। विशाख चंद्रलेखा के साथ गृहस्थ बनकर सुख से जीवन बिताने लगा।

यह नाटक **कल्हण**-कृत *राजतरंगिणी* के आधार पर निर्मित हुआ है। प्रायः सभी पात्र इतिहास से लिये गये हैं।

विशाखदत्त—दे० *मुद्राराक्षस* ।

विशिष्टाद्वैत—दे० *रामानुजाचार्य* ।

विशेष—एक अर्थालंकार जिसमें बिना आधार के आधेय, थोड़े परिश्रम से बहुत प्राप्ति या एक ही वस्तु के एक ही समय अनेक स्थानों में होने का वर्णन किया जाता हो । इसके तीन भेद हैं—

१ उ०—बिनु बारिद बिजुरी बिना, बारि लसत जुग मीन । / बिधु ऊपर तम तोम है निरखी रीति नवीन ॥ २ उ०—कपि तव दरस सकल दुःख बीते । / मिले आजु मोहि राम पिरीते । ३ उ०—पाय चुके फल चारिहू, करत गंगजल मान ।—*पद्माकर* ।

विशेषोक्ति—एक विरोधमूलक अर्थालंकार, जिसमें हेतु होने पर भी फलाभाव बताया जाता हो । उ०—दोष न नैननि को कछु उपजी बड़ी बलाय । / नीर भरे नित प्रति रहें, तऊ न प्यास बुझाय ।।—*बिहारी* । यहाँ जल रहने पर भी प्यास न बुझने से विशेषोक्ति है ।

विश्रवा—पुलस्त्य के पुत्र । इड़विड़ा (द्रविड़ा) से इन्हें कुवेर, और केशिनी (कैकसी) से रावण, कुंभकर्ण और विभीषण नामक पुत्र प्राप्त हुए (*भा० ४.१*) ।

विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक (१८९१-१९४६ ई०)—कहानी-लेखक और उपन्यासकार । इनकी मुख्य रचनाएँ *चित्रशाला* (दो भाग), *मणिमाला* (कहानी-संग्रह), *माँ*, *भिखारिणी* (उपन्यास) आदि हैं । इनकी कहानियाँ अधिकतर सामाजिक हैं । इनकी बहुत-सी कहानियों में शहरी जीवन के अच्छे चित्र आए हैं । कहानियाँ वार्त्तालाप-प्रधान हैं और उनमें मानसिक वृत्तियों का विश्लेषण बहुत अच्छा है । *माँ* में दो माताओं द्वारा अपने-अपने पुत्रों पर पड़े हुए प्रभावों की तुलना है । *भिखारिणी* में दिखाया गया है कि भावों की उच्चता उच्च वर्ग का ही एकमात्र अधिकार नहीं है । 'ये प्रेमचंद की अपेक्षा भावुक अधिक थे और भावों के संचारित करने की कला में भी निपुण थे ।'

विश्वकर्मा (त्वष्टा)—प्रभास वसु के पुत्र एक देवता । ये देवों के लिये विमान और भवनों का निर्माण करते थे । इन्होंने विष्णु को सुदर्शन चक्र, शंकर को त्रिशूल और इंद्र को वज्र बनाकर दिये (*पद्म० सृ० ८*) । धृतराष्ट्र के लिये इंद्रप्रस्थ (*म० आ० २२७.५६ कुं०*), कृष्ण के लिये द्वारिका (*भा० १०.५०*) तथा वृंदावन (*ब्रह्मवै० ४.१७*) और इंद्र के लिये लंका (*वा० रा० उ० ५*) भी इन्होंने बनाई । **तिलोत्तमा**, रुद्र के रथ और दधीचि की हड्डी के वज्र (*भा० ६.१०*) की भी सृष्टि इन्होंने की थी । इनका रचित एक वास्तुशास्त्र भी है (*मत्स्य० २५१*) ।

विश्वनाथ कविराज (आ० का० १६६५ ई०)—संस्कृत-आचार्य और *साहित्य दर्पण* (प्रसिद्ध साहित्य-शास्त्र) के रचयिता । *साहित्य दर्पण* साहित्य के संबंध में एक प्रामाणिक और प्रसिद्ध ग्रंथ माना जाता है । छंद को छोड़कर इसमें साहित्य के प्रायः सभी विषयों का समावेश है । पठन-पाठन में इसका बहुत अधिक प्रचार है । हिंदी-साहित्य पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा है ।

विश्वनाथसिंह, महाराज (आ० का० १७३३ ई०)—रीवा-नरेश, कवियों के आश्रयदाता और स्वयं कवि । विविध विषयों पर लिखे इनके *रामायण*, *गीतारघुनंदन प्रामाणिक*, *कबीर बीजक की टीका*, *विनयपत्रिका की टीका*, *परमतत्त्व* आदि ३२

ग्रंथों में *आनंद रघुनंदन* (नाटक) का स्थान महत्त्वपूर्ण है। ये सगुण रामोपासक होते हुए भी निर्गुण वाणी के प्रति आस्था रखते थे।

विश्वरूप—त्वष्टा के पुत्र। ये देवों के पुरोहित और विरोचन के भागिनेय थे। यज्ञ में ये देवों को तो प्रत्यक्ष रूप से और असुरों को अप्रत्यक्ष रूप से आहुति देते जाते थे। इसपर इंद्र ने इनका वध कर दिया। इस प्रकार इंद्र को ब्रह्महत्या लगी (*तै० सं० २.५.१*)।

विश्वामित्र—एक प्रसिद्ध ब्रह्मर्षि जो गाधि के पुत्र थे। दे० *ऋचीक*। एक बार ये वसिष्ठ के आश्रम में गये। **कामधेनु** की सहायता से वसिष्ठ ने इनका खूब सत्कार किया। इनके माँगने पर जब वसिष्ठ ने इन्हें कामधेनु नहीं दी, तब इन्होंने उसे बलपूर्वक लेना चाहा। वसिष्ठ ने धेनु द्वारा सृष्टि की गई सेना से इनको पराजित कर दिया। इसपर इन्होंने तप द्वारा दिव्य अस्त्र प्राप्त कर, वसिष्ठ से पुनः युद्ध किया, किंतु वसिष्ठ के ब्रह्मदंड के संमुख इनको फिर पराजित होना पड़ा। फिर इन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के लिये कठोर तप किया। **त्रिशंकु** और **शुनःशेप** के कारण इनकी तपस्या में विघ्न पड़ा। इंद्र द्वारा भेजी गई **मेनका** और **रंभा** ने इनकी तपस्या भंग की। इन्होंने फिर तपस्या प्रारंभ की और इस बार ब्राह्मणत्व प्राप्त करने में ये सफल हो गये (*वा० रा० बा० ५१-६५*)। एक बार वसिष्ठ-रूपधारी धर्म ने इनकी परीक्षा ली थी और इन्हें १०० वर्ष तक धर्म की प्रतीक्षा करनी पड़ी थी (*म० उ० १०६*)। कालांतर में वसिष्ठ के साथ इनकी मित्रता हो गई। राजा **हरिश्चंद्र** की परीक्षा लेने के लिये इन्होंने उन्हें बड़ा कष्ट दिया था। राम-लक्ष्मण को इन्होंने अस्त्रविद्या की शिक्षा दी थी। ताड़का-वध के अनंतर राम-लक्ष्मण को ये जनकपुरी ले गये थे (दे० *राम*)। इनका एक आश्रम बिहार के अंतर्गत शाहबाद जिले में बक्सर नामक स्थान पर था। यहीं पर ताड़का-वध हुआ था। दूसरा आश्रम कुरुक्षेत्र में स्थानु तीर्थ के संमुख था। विश्वामित्र के पर्य्याय०—कौशिक, गाधिसूनु, गाधेय।

विषम—एक अर्थालंकार जिसमें अनमेल वस्तुओं वा घटनाओं का वर्णन हो। इसके तीन भेद हैं—

प्रथम विषम—उ०—कहाँ सीप मुक्ता कहाँ, कहाँ कमल कहँ पंक। / कहँ कस्तूरी मृग कहाँ, बिधि बुधि है सकलंक॥

द्वितीय विषम—उ०—या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहिं कोय। / ज्यौं ज्यौं बूड़ै स्याम रंग, त्यों त्यों उज्ज्वल होय॥

तृतीय विषम—उ०—जीतिबे को आए भृगुनंद रघुनंदन को, / जीत गये आपु भये रीते बीरताई सो॥

विषम मात्रा छंद—चारों पादों में एक-सी समानता न रखने वाले मात्रिक छंद।

विषमवृत्त—चारों पादों में परस्पर कोई समानता न रखने वाले वर्णिक छंद।

विष्कंभक—दे० *अर्थोपक्षेपक*।

विष्णु—सृष्टि का पालन-पोषण करने वाले एक प्रधान देवता। इनके २४ अवतार इस प्रकार हैं—ब्रह्मा (**सनक, सनंदन, सनातन** और **सनत्कुमार** नामक चार ब्राह्मणों के रूप में), **वराह, नारद, नरनारायण, कपिल, दत्तात्रेय,** यज्ञ, ऋषभ, **पृथु, मत्स्य, कच्छप, धन्वंतरि, मोहिनी, नृसिंह, वामन, परशुराम, वेदव्यास, राम, बलराम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि,** हंस और **हयग्रीव**। **इनमें मुख्य १० इस प्रकार हैं—**

वराह, मत्स्य, कच्छप, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। इनकी पत्नी **लक्ष्मी** है। इनकी नाभि से एक कमल निकला, जिससे ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। भृगु ने ब्रह्मा, शिव और इनकी परीक्षा लेकर इन्हें ही श्रेष्ठ घोषित किया था (दे० *भृगु*)। ये चतुर्भुजी हैं। इनके शंख का नाम पांचजन्य, चक्र का नाम सुदर्शन, गदा का नाम कौमोदकी, खड्ग का नाम नंदक, धनुष का नाम शारङ्ग और वाहन का नाम वैनतेय है। क्षीरसागर में ये शेषनाग पर विश्राम करते हैं, जहाँ लक्ष्मी इनके चरण दबाती है। नारायण, कृष्ण, वैकुंठ, माधव, जनार्दन, हरि, मुकुंद, श्रीवत्सलांछन, कैटभजित, विश्वंभर, वनमाली, पुरुषोत्तम, शौरि, त्रिविक्रम, चतुर्भुज, पद्मनाभ, चक्रपाणि, उपेंद्र, गोविंद, गरुडध्वज, पीतांबर, अच्युत, शारङ्गी, हृषीकेश, केशव, दैत्यारि, दामोदर, शेषशायी आदि इनके एक सहस्र नाम हैं।

विष्णु शर्मा—दे० *पंचतंत्र*।

विष्णुस्वामी (वर्त्त० १२४३-१३१८ ई०)—*गीता, वेदांत सूत्र* और *भागवत पुराण* के भाष्यकार। **मधवाचार्य** के शिष्य होते हुए भी **शुद्धाद्वैतवाद** के मूलप्रवर्त्तक ये ही कहे जाते हैं। आगे चलकर इन्हीं के सिद्धांतों को **चैतन्य महाप्रभु, वल्लभाचार्य** आदि ने स्वीकार किया था। इन्होंने कृष्ण के साथ राधा को भी भक्ति में प्रधान स्थान दिया है।

वींझरे अहीर री बात—बीझरो अहीर और उसकी बहिन ननँद की डिंगल में गद्यमय प्रेम-कथा (लि० का० १७६० ई०)। इसके लेखक अज्ञात हैं।

बीजल विजोगण री कथा—एक गद्यमय प्रेम-कथा (लि० का० १७६६ ई०)।

वीटू भोमौ—दे० *महाराज रतनसिंह जी री कविता*।

वीथी—रूपक का एक प्रधान भेद। यह एकांकी है। इसमें एक कल्पित नायक होता है। आकाशभाषित के सहारे विचित्र उक्ति-प्रयुक्ति द्वारा विशेषतः शृंगार को तथा साधारणतः और रसों को भी सूचित किया जाता है। इसमें मुख और निर्वहण संधियाँ (दे० *संधि*) होती हैं और पाँचों **अर्थ-प्रकृतियाँ**। इसके तेरह अंग होते हैं, जो वीथ्यंग कहे जाते हैं।

वीप्सा—एक शब्दालंकार जहाँ प्रभाव-सृष्टि के लिये शब्द दुहराए जाएँ। उ०—फैलि-फैलि फूलि-फूलि, फलि-फलि हूलि-हूलि / झपकि-झपकि आई कुंजै चहुं कौंद ते।—*देव*।

वीभत्स—घृणित वस्तु से उठने वाली ग्लानि से प्रकट होने वाल, लाल वर्ण और महाकाल देवता वाला रस। जुगुप्सा स्थायी-भाव; घृणित वस्तु आलंबन; उसकी घृणित दशाएँ उद्दीपन; थूकना, आँख मीचना आदि आनुभाव; मोह, आवेगादि इसके सचारी-भाव हैं। उ०—फाड़ि नखन शव आंतड़िनि, रुधिर मवाद निकारि। / लेपति अपने मुखन पै हरसि प्रेत-गन नारि॥ यहाँ शव आलंबन, आंतड़ी चीरना उद्दीपन, आँखें मीचना, नाक सिकोड़ना अनुभाव, आवेग आदि संचारी और जुगुप्सा स्थायी-भाव है।

वीर—१ अत्यंत उत्साह से उत्पन्न होने वाला, उत्तम पात्र में आश्रित, हेम वर्ण और महेंद्र देवता वाला रस। उत्साह स्थायी-भाव; शत्रु आदि आलंबन; शत्रु की चेष्टाएँ उद्दीपन;

रोमांचादि अनुभाव; हर्ष, गर्वादि इसके संचारी-भाव हैं। इसके चार भेद हैं—दानवीर, धर्मवीर, युद्धवीर और दयावीर। मम्मट ने केवल युद्धवीर को ही रस का नायक माना है, किंतु कुछ अन्य आचार्यों ने दानवीर आदि को भी ग्रहण कर लिया है। २ एक छंद। दे० *आल्हा*। ३ दिल्ली निवासी एक रीति-कवि। *कृष्ण चंद्रिका* (१७२२ ई०) के रचयिता।

वीर-गाथा-काव्य—दलपतविजय, नरपति नाल्ह, चंदवरदाई (?), **जगनिक, भट्टकेदार, मधुकर कवि, शारङ्गधर, नल्लसिंह भट्ट** आदि द्वारा रचित साहित्य। आश्रयदाताओं की प्रशंसा, उनके युद्धों, विवाहों तथा उनके आखेट आदि का वर्णन, वीररस के साथ शृंगार का पुट, युद्धों का सुंदर एवं सजीव वर्णन, कल्पना का प्राचुर्य, इतिहास की अपेक्षा कल्पना की मात्रा अधिक, विषय के अनुकूल ओजमयी भाषा (विशेषकर **डिंगल**) का प्रयोग आदि इस साहित्य की विशेषताएँ हैं। यह साहित्य प्रबंध-काव्य और वीर-गीतों के रूप में मिलता है। प्रबंध-काव्य के रूप में *खुमान रासो* और *पृथ्वीराज रासो* प्रसिद्ध हैं। यह साहित्य तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति का प्रतिबिंब है। भारत पर मुसलमानों के आक्रमण प्रारंभ हो गये थे। केंद्रिय शक्ति के अभाव में देश में पृथक्-पृथक् राज्यवंश अपनी-अपनी सत्ता के प्रसार में लगे हुए थे। उस समय कन्नौज, दिल्ली, अजमेर, अन्हलवाड़ा (गुजरात) आदि राजधानियाँ ही प्रधान क्रियास्थली थीं। इनके राजाओं में प्रायः पारस्परिक विग्रह होते रहते थे। पारस्परिक प्रतिद्वंद्विता और झगड़े का कारण प्रायः स्त्रियाँ ही होती थीं।

इस साहित्य का महत्त्व इस बात में है कि इसने प्रारंभिक काल के हिंदी-साहित्य के एक बड़े अंश का निर्माण किया। साथ ही वीर-गाथाओं में सूफी आदि कवियों को प्रेम-कथाओं के बीज विद्यमान हैं। किंतु खेद है कि इस साहित्य के ग्रंथों की प्रतियाँ मूलरूप में दुष्प्राप्य हैं। अतएव उनके विषय में निश्चित रूप से अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

वीरभद्र—शिव का एक गण। **दक्ष** का यज्ञ विध्वंस करने के लिये शिव ने इसे अपनी जटा से उत्पन्न किया था (*भा० ४.५, स्कंद० १.१.३*)।

वीरभान—१ (आ० का० १६०३ ई०)—नारनौल (पंजाब) निवासी एक संत और 'साध' या 'सतनामो पंथ' के प्रवर्त्तक। इस पंथ ने १६७२ में एक बलवे का रूप धारण कर लिया था। अंत में औरंगजेब की सेना ने २००० सतनामियों को रणक्षेत्र में मारकर इस पंथ को बहुत निर्बल कर दिया था। २ डिंगल के एक कवि। *राजरूपक* (१७४६ ई०, जोधपुर-नरेश अभयसिंह और अहमदाबाद के सूबेदार सरबलंदखाँ के युद्ध का वर्णन) के रचयिता।

वीरमायण—डाढ़ी जाति के एक अज्ञात कवि का डिंगल में एक काव्य, जिसमें राव वीरमजी राठौड़ (शासन-काल १३७८ ई०) के शौर्य का वर्णन है।

वीरसिंहदेव चरित—**केशवदास** (१५५५-१६१६ ई०) का एक साधारण काव्य, जिसमें वीरसिंह के चरित का थोड़ा-सा अंश है और बीच-बीच में दान, लोभ आदि के संवाद भरे पड़े हैं।

वीसलदेवरासो—**नरपति नाल्ह** का डिंगल में एक प्रेमपूर्ण गीति-काव्य (११५५ ई०)।

इस काव्य के प्रथम खंड में अजमेर-नरेश विग्रहराज चतुर्थ उपनाम वीसलदेव का राजा

भोज की पुत्री राजमती से विवाह, द्वितीय में राजमती के व्यंग्य पर वीसलदेव की उड़ीसा की ओर रण-यात्रा, तृतीय में राजमती का वियोग और चतुर्थ खंड में भोजराज का आकर अपनी कन्या को ले जाना, और वीसलदेव का पुनः राजमती को ले आने का वर्णन है।

इस काव्य में वीर रस की अपेक्षा शृंगार रस की प्रधानता है। शृंगार रस के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का इसमें प्रदर्शन हुआ है। भाषा यद्यपि अपने असंस्कृत रूप में है, तथापि उसमें साहित्यिक सौंदर्य की छटा यत्र-तत्र है। बीच-बीच में साहित्यिक पिंगल भाषा के मिलाने का भी प्रयत्न किया गया है। कुछ फ़ारसी, अरबी और तुर्की शब्दों का भी समावेश है।

इस ग्रंथ का रचनाकाल विवादग्रस्त है, क्योंकि धारा-नरेश भोजराज का समय वीसलदेव से १०० वर्ष से भी अधिक पहिले का है।

बृंद (जन्म १६४३ ई०)—मारवाड़ निवासी, कृष्णगढ़-नरेश राजसिंह के गुरु एक कवि। *वृंद सतसई* (प्रसिद्ध नीति संबंधी ग्रंथ, जिसके दोहे अत्यंत लोक-प्रिय हैं), *शृंगार-शिक्षा* तथा *भाव-पंचाशिका* आदि के रचयिता। इनकी बहुत-सी उक्तियाँ लोकोक्तियाँ बन गई हैं।

वृंदा—कालनेमि और स्वर्ण की कन्या *(शिव० रुद्र यु० १४)* और जालंधर (दे० यथा०) की पत्नी।

वृंदावन—मथुरा में एक प्रसिद्ध तीर्थ, जहाँ कृष्ण ने अपनी अधिकांश बाल-लीलाएँ की थीं। पर पुराणोक्त वृंदावन आधुनिक वृंदावन से भिन्न प्रतीत होता है *(भा० १०.११, ३६, ४१, विष्णु० ५.६, १७-१८)*। दे० *मधु*। वृंदावन के पर्य्याय०—मधुवन, वृंदाकानन, गोकुल, ब्रज-भूमि, लीलाभूमि आदि।

वृंदावनलाल वर्मा (१८९० ई०-)—प्रसिद्ध उपन्यासकार। जन्म झाँसी। इनके प्रपितामह झाँसी-राज्य के दीवान थे, जो रानी लक्ष्मीबाई की ओर से लड़ते-लड़ते मारे गये थे। बुँदेल-खंड के प्रति इनकी विशेष आस्था है। इनकी मुख्य रचनाएँ *गढ़ कुंडार* (१९३०, इसमें बुँदेल-खंड की चौदहवीं शती की राजनीतिक स्थिति का अच्छा चित्रण है), *कुंडली चक्र*, *विराटा की पद्मिनी* (१९३६), *झाँसी की रानी* (१९४६, इसमें कल्पना की अपेक्षा वास्तविकता और ऐतिहासिकता अधिक है), *संग्राम*, *कचनार*, *कभी न कभी* (इसमें दो मज़दूरों के पारस्परिक मैत्री-भाव का चित्रण है, प्रसंगवश मज़दूर-जीवन की कठिनाइयों का भी वर्णन है), *मृगनयनी* (१९५०, एक सुंदर ऐतिहासिक उपन्यास, जिसमें मृगनयनी जैसी एक आदर्श नारी का चित्रण है), *अमरबेल* (आधुनिक विषय पर) (उपन्यास) आदि हैं। इनके अनेक नाटकों में *हंस मयूर* (इसमें शकों के पश्चात् आर्य-संस्कृति की पुनः स्थापना की चर्चा है) का अच्छा स्थान है।

इनके उपन्यासों में इतिहास और कल्पना का बड़ा सुंदर सामंजस्य है। लेखक सूक्ष्म निरीक्षण के आधार पर वातावरण को बड़े मनोयोग के साथ चित्रित करता है और उसमें स्थानीय रंग ले आता है।

वृकासुर—दे० *भस्मासुर*।

वृत्ति—नाटकों में विषय के विचार से वर्णन करने की शैली, जो चार प्रकार की कही गई

है और जो भिन्न-भिन्न रसों के लिये उपयुक्त मानी गई है। यथा—*कैशिकी वृत्ति*, शृंगार रस के लिये; *सात्वती वृत्ति*, वीर रस के लिये; *आरभटी वृत्ति*, रौद्र और बीभत्स रस के लिये; और *भारती वृत्ति*, सब रसों के लिये। जहाँ अच्छी वेषभूषा वाली नायिका, बहुत-सी स्त्रियाँ और नृत्य-गीत, भोग-विलास आदि का वर्णन हो, उसे कैशिकी; जहाँ वीरता, गानशक्ति, दया, सरलता आदि का वर्णन हो, उसे सात्वती; जहाँ माया, इंद्रजाल, संग्राम, क्रोध आदि का वर्णन हो, उसे आरभटी; और जहाँ संस्कृत-बहुल कथोपकथन हो, उसे भारती वृत्ति कहते हैं। इन चारों वृत्तियों के भी कई अवांतर भेद हो गये हैं।

वृत्यनुप्रास—दे० *अनुप्रास*।

वृत्रासुर—एक असुर। पहिले यह चित्रकेतु राजा था, जो नारद के उपदेश से शेष भगवान् की आराधना कर विद्याधर बन गया। एक बार कैलास पर्वत पर पार्वती को शिव की गोद में बैठा देखकर यह हँस पड़ा। इसपर पार्वती ने इसे राक्षस होने का शाप दिया। अतः यह वृत्रासुर हुआ। जब इंद्र ने **विश्वरूप** का वध कर दिया, तब त्वष्टा ने यज्ञ करके वृत्रासुर को उत्पन्न किया। इसने स्वर्ग में जाकर इंद्र को युद्ध के लिये आह्वान किया। इसका वध करने के लिये इंद्र को दधीचि ऋषि की हड्डियों का वज्र बनाना पड़ा था (*पद्म० उ० ६*)। इंद्र द्वारा वध किये जाने पर यह पार्वती के शाप से मुक्त हुआ (*भा० ६.१०-१७*)।

वृद्धक्षेत्र—दे० *जयद्रथ*।

वृषपर्वा—कश्यप और दनु का पुत्र, एक पराक्रमी असुराधिपति। इसने शुक्राचार्य की सहायता से देवताओं को पराजित कर दिया था। इसकी कन्या शर्मिष्ठा का विवाह **ययाति** से हुआ था।

वृषभान कुँवरि (र० का० १७२८-४७ ई०)—ओरछा राज्य की महारानी, एक कवयित्री। इनकी कृष्ण-भक्ति संबंधी *भक्ति विरुदावली*, *औरंगचंद्रिका* तथा *दानलीला* पुस्तकें प्राप्त हुई हैं।

वृषभानु—व्रज के एक गोपराज। ये यज्ञ के लिये पृथ्वी को शुद्ध कर रहे थे कि राधा इन्हें दिखाई दी। राधा को ये अपने घर ले आए (*पद्म० ब्र० ७*)।

वृषभासुर—दे० *अरिष्टासुर*।

वेणीसंहार—दे० *भट्टनारायण*।

वेतालपंचविंशति—जंभलदत्त का संस्कृत में २५ कथाओं का एक संग्रह (१२०० ई०, अनू० *वेताल पचीसी*) जो गद्यमय है। इसका एक संस्करण शिवदास-कृत (१२००) गद्य-पद्य दोनों में है।

एक योगी विक्रमादित्य की सहायता से वेताल-साधना करना चाहता था। विक्रमादित्य वेताल को एक वृक्ष से उतार कर अपने साथ ले गया। मार्ग में वेताल उसे एक कथा सुनाता था, जिसमें एक प्रश्न पूछा जाता था। उसके प्रश्न का उत्तर देने के लिये ज्योंही विक्रम बोलता था, वेताल अंतर्धान होकर उसी वृक्ष पर पहुँच जाता था। इस प्रकार वेताल ने २५ कथाएँ सुनाईं।

वेताल पचीसी—दे० *वेतालपंचविंशति*।

वेद—भारतीय आर्यों के सर्वप्रधान और सर्वमान्य धार्मिक ग्रंथ, जिनकी संख्या चार है। इनके नाम ये हैं—*ऋग्वेद*, *यजुर्वेद*, *सामवेद* और *अथर्ववेद*। पौराणिकों के अनुसार वेदों के तीन

मुख्य भाग हैं, जो संहिता, ब्राह्मण और आरण्यक या उपनिषद् कहलाते हैं। संहिता शब्द का अर्थ संग्रह है; वेदों के संहिता भाग में स्तोत्र, प्रार्थना, मंत्र-प्रयोग, आशीर्वादात्मक सूक्त, यज्ञ-विधि से संबंध रखने वाले मंत्र, अरिष्ट आदि की शांति के लिये प्रार्थनाएँ आदि सम्मिलित हैं। वेदों का यही अंश मंत्र भाग भी कहलाता है। ब्राह्मण भाग में एक प्रकार से बड़े-बड़े गद्य-ग्रंथ आते हैं, जिनमें अनेक देवताओं की कथाएँ, यज्ञ संबंधी विचार और भिन्न-भिन्न ऋतुओं में होने वाले धार्मिक कृत्यों के व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक महत्त्व का निरूपण है। वनों में रहने वाले यति, संन्यासी आदि परमेश्वर, जगत् और मनुष्य इन तीनों के संबंध में जो विचार किया करते थे, वे उपनिषदों और आरण्यकों में संगृहीत हैं। इन्हीं में प्राचीनतम तत्त्वज्ञान भरा हुआ है। *ईशोपनिषत्* जिसपर अन्य उपनिषदों का आधार है, *यजुर्वेद* का अंतिम अध्याय है, इसलिये इसे वेदांत भी कहते हैं। व्याख्या तथा कहीं-कहीं पाठ-भेद के कारण संहिताओं के जो रूप प्राप्त हुए हैं, वे शाखा कहलाते हैं, और इस प्रकार प्रत्येक वेद की कई-कई शाखाएँ हो गई हैं। चारों वेदों से निकले चार **उपवेद** हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंद ये छः वेदों के अंग या वेदांग कहलाते हैं। भारतीय आर्य वेदों को अपौरुषेय और ईश्वर-कृत मानते हैं। कहा जाता है कि वेदों का वर्त्तमान रूप में संग्रह और संकलन **व्यास** ने किया था। वेदों के रचना काल के संबंध में विद्वानों में बहुत अधिक मतभेद है। मैक्समूलर आदि कई पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि वेदों की रचना ईसा से प्रायः हज़ार-डेढ़ हज़ार वर्ष पहिले उस समय हुई, जब आर्य लोग आकर पंजाब में बसे थे। परंतु लोकमान्य तिलक ने ज्योतिष संबंधी तथा अन्य कई आधारों पर वेदों का समय ईसा से लगभग ४५०० वर्ष स्थिर किया है।

वेदव्यास—दे० *व्यास*।

वेदांग (र० का० १००० ई० पू०-४०० ई०)—वह साहित्य जिसे वेदों के उच्चारण, अर्थ, विषय आदि समझाने के लिये रचा गया। वेदांग छः हैं—शिक्षा, छंदस्, व्याकरण, निरुक्त, कल्प और ज्योतिष।

वेदांत—१ ब्राह्मण ग्रंथों के अंतिम भाग (उपनिषद् तथा आरण्यक), जिनमें आत्मा, ईश्वर, जगत् आदि का सूक्ष्म विवेचन किया गया है। २ छः दर्शनों में से एक, जिसमें ब्रह्म के स्वरूप पर दार्शनिक दृष्टि से विचार किया गया है। इसपर **अद्वैतवाद**, **विशिष्टाद्वैतवाद**, **द्वैतवाद**, **शुद्धाद्वैतवाद** आदि संप्रदायों की दृष्टि से भिन्न-भिन्न मध्यकालीन आचार्यों ने अनेक भाष्य किये हैं। तुलसीदास की रचनाओं पर भी वेदांत का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है, यद्यपि इसमें उन्होंने भक्ति को प्रधानता दी है।

वेन—**अंग** देश का एक अत्याचारी राजा। प्रजा के कल्याण के लिये ऋषियों ने इसे शाप दिया कि तुम्हारी मृत्यु हो जाए। राजा की मृत्यु से जब अराजकता फैल गई, तब ऋषियों ने इसके शरीर को मथा। पहिली बार मथने से एक कपिलवर्ण का पुरुष निकला, जिसकी संतान निषाद कहलाई। दूसरी बार शरीर मथने से **पृथु** का जन्म हुआ (*ह० वं० १.४-५, भा० ४.१४-१५*)।

वेलि किसन रुक्मणी री—**पृथ्वीराज** का डिंगल भाषा में एक काव्य (१५८० ई०)। इसमें

३०५ पद्य हैं। इस काव्य में **रुक्मिणी** की बाल्यावस्था, युवावस्था, **शिशुपाल** से उनके विवाह का विचार, रुक्मिणी का कृष्ण के प्रति प्रेम और पत्र-लेखन, कृष्ण का मंदिर में रुक्मिणी से मिलाप, रुक्मिणी-हरण, शिशुपाल और **रुक्मि** से युद्ध और उनकी पराजय, कृष्ण का रुक्मिणी सहित द्वारिका-गमन और दोनों का विवाह, रुक्मिणी और कृष्ण का मिलन, षड्ऋतु वर्णन, प्रद्युम्न-जन्म तत्पश्चात् प्रद्युम्न-पुत्र अनिरुद्ध का वर्णन, कामधेनु के रूप में 'वेलि' की प्रशंसा और कवि की आत्म-प्रशंसा का वर्णन है।

इस काव्य की भाषा में सौंदर्य के साथ प्रवाह है। कविता में संगीत भी है। *वेलि* की विशेषता यही है कि इसमें भक्ति की भावना के साथ श्रृंगार की रसीली साधना है। इसमें भक्ति और रीति-काल की प्रवृत्तियों का एक स्थान पर सम्मिलन है। राजस्थान में इसे पंचम वेद के रूप में आदर प्राप्त हुआ है।

वैकुंठ—विष्णु का धाम।

वैतरणी—एक पौराणिक नदी, जो यम के द्वार पर मानी जाती है। इसका जल बहुत गर्म और दुर्गंधयुक्त है। पापियों को यह नदी पार करने में बहुत कष्ट होता है। जिसने अपनी जीवितावस्था में गो-दान किया हो, वह उस गौ की पूँछ पकड़कर सहज पार उतर जाता है। **सती** के विलाप में शिव के अश्रुओं से इस नदी की उत्पत्ति हुई मानी जाती है।

वैताली—कल मनु धरि आदि तीसरे। औ सोला सम रे लगा सही। / विषम छ उपरे ल गा धरौ। वैताली बसु पै समै वही (विषम चरणों में १४ और सम चरणों में १६ मात्राएँ, विषम चरणों में छः मात्राओं के उपरांत र ल ग, और सम चरणों में आठ मात्राओं के उपरांत वही र ल ग होते हैं)।
उ०—हर हर भज जाम आठहूँ। जंजालहिं तजिकै करौ यही। / तन मन धन दे लगा सबै। हर धामहिं जइहौ सखा सही॥ इसके छः भेद हैं।

वैदर्भी—काव्य, नाटक में एक रीति या शैली, जिसमें माधुर्य व्यंजक वर्णों का प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रायः अनुस्वारयुक्त शब्द और छोटे समास आते हैं। यह करुण, श्रृंगार और हास्य रसों के लिये उपयोगी मानी गई है।

वैदिक भाषा—संस्कृत भाषा का उपलब्धीय-मान वह प्राचीनतम रूप, जो वेदों में पाया जाता है। पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार इसमें समय-समय पर बहुत परिवर्तन हुए। कहा जाता है कि **ऋग्वेद** और **अथर्ववेद** की भाषा में तो अंतर है ही, स्वयं **ऋग्वेद** के भी भिन्न-भिन्न भाग एक ही प्रकार की भाषा में नहीं हैं।

वैदेही वनवास—**अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'** का एक महाकाव्य (१९४० ई०)।

इसपर शांतिमय उपायों द्वारा हृदय-परिवर्तन की गांधीवादी नीति का प्रभाव है। रामचंद्र प्रजा को संतुष्ट करने में इस नीति का पालन करते हैं। इसमें वैदेही (सीता) को धोखे से वन में नहीं छोड़ा जाता, प्रत्युत सीता को लोकापवाद की बात बता दी जाती है, जिसपर वे प्रजा की प्रसन्नता के लिये स्वयं वनवास ग्रहण करती हैं। *वैदेही वनवास* के वर्णन बड़े संश्लिष्ट और आकर्षक हैं। इसमें प्रकृति-चित्र अत्यंत सुंदर हैं। इसकी भाषा संस्कृत-गर्भित है, पर *प्रिय-प्रवास* की भाषा से कुछ कम। इसमें संस्कृत छंदों का प्रयोग नहीं किया गया है।

वैराग्य संदीपिनी—**तुलसीदास** का अवधी भाषा में ६२ छंदों का एक छोटा-सा काव्य (१६१२ ई० ?), जिसमें संत-महंतों के लक्षरण दिये गये हैं। इस काव्य से ऐसा प्रतीत होता है कि तुलसीदास का संबंध बैरागी संप्रदाय से रहा था। कुछ विद्वान् संपूर्ण पुस्तक को तुलसीदास द्वारा रचित नहीं मानते।

वैवस्वत—सातवें मनु (दे० यथा०) का नाम। आजकल इन्हीं का अधिकार है।

वैशंपायन—व्यास के शिष्य एक ऋषि। व्यास की आज्ञा से इन्होंने **जनमेजय** को *महाभारत* की कथा सुनाई थी। दे० *याज्ञवल्क्य*।

वैशाली—मुज़फ्फरपुर जिले में हाजीपुर नामक स्थान के १८ मील उत्तर में एक प्रसिद्ध प्राचीन नगरी। इसे विशाल-नगरी या विशालपुरी भी कहते थे। यहाँ का लिच्छवी राजवश इतिहास-प्रसिद्ध है।

व्यंग्य-गीति—वह गीति-काव्य जिसमें मनुष्य की दुर्बलताओं का उपहास किया जाए। यह उपहास प्रायः सुधार के दृष्टिकोरण से होता है। इन गीतों का विषय साधाररण भी हो सकता है और गंभीर भी। हिंदी-साहित्य में व्यंग्य-गीति का अत्यंत अभाव है। 'दयाराम के आम' या 'औरंगज़ेब की हथिनी' कुछ अच्छे उदाहरण कहे जा सकते हैं। नाथूराम शर्मा 'शंकर' का *गर्भ-रंडा रहस्य* एक सुंदर व्यंग्य प्रबंध-काव्य है। हरिशंकर शर्मा के *चिड़िया घर* में उच्चस्तर की व्यंग्य-गीतियाँ हैं।

व्यंजना—शब्द की वह शक्ति जिससे वाच्यार्थ या लक्ष्यार्थ (अर्थात् अभिधा या लक्षरणा शक्ति से निकलने वाले अर्थों) के अतिरिक्त कुछ विशेष अर्थ निकले। यह दो प्रकार की मानी गई है—शब्द-गत या शाब्दी और अर्थ-गत या आर्थी।

व्यतिरेक—एक अर्थालंकार जिसमें उपमान की अपेक्षा उपमेय में कुछ और भी विशेषता या अधिकता का वर्णन होता हो। उ०—सिय मुख सरद कमल सम किमि कहि जाय। / निसि मलीन यह निसि दिन वह बिगसाय॥ यहाँ सीता के मुख में कमल की अपेक्षा विशेषता दर्शायी गई है। इसके तीन भेद हैं—

१ *अधिक व्यतिरेक*—उ०—कहै कवि 'दूलह' निहारे चकचौंधी लाग, / कुंदन सो रूप पै सुगंध सरसानो है॥—*दूलह*।

२ *सम व्यतिरेक*—उ०—घनस्याम ही मैं बसै जगर मगर होति, / दामिनी और कामिनी कहई भेद जान्यो है। यहाँ दामिनी और कामिनी हैं तो पृथक्, किंतु दोनों सम भाव से जगमगा रही हैं।

३ *न्यून व्यतिरेक*—उ०—रस भीजे हम तुम जलज रहियत रोग समोय; / पै तुम को नित मित्र सुख, सपनेहु हमहिं न होय। यहाँ कमल को मित्र (सूर्य) का सुख है, किंतु हमें मित्र का सुख नहीं है।

व्यभिचारी-भाव—संचारी भाव (दे० यथा०) का अन्य नाम।

व्याघात—एक अर्थालंकार। इसके दो भेद हैं—

१ *प्रथम व्याघात*—में जिस साधन से किसी ने कुछ किया हो, उसी साधन से दूसरा उसे अन्यथा कर देता है। उ०—तुम कहती निसि-नाथ के लखत नसत संताप; / याही ते दूनो बढ़त लखि बिरहानल ताप।

२ *द्वितीय व्याघात*—में स्वभावतः जो जैसा करने वाला कहा गया हो, उससे विपरीत

कार्य होता है। उ०—लोभी धन संचय करै, दारिद को डर मानि। / 'दास' यहै डर मानि कै, दान देत है दानि ॥

व्याजस्तुति—एक अर्थालंकार जिसमें वाच्य-निंदा से स्तुति व्यंग्य होती है और वाच्य-स्तुति से निंदा व्यंग्य होती है। क्रमशः उ०—१ कहत कौन रण में तुम्हें, धीर वीर सरदार। / लखि रिपु बिन् हथियार जो डारि देत हथियार ॥ २ तै जयसिंहहि गढ़ दए सिव सरजा जस हेत। / लीनैं कैयक बार में, बार न लागी देत ॥

व्यायोग—रूपक का एक प्रधान भेद। इसमें अंक एक, स्त्री पात्रों का अभाव और वीर रस प्रधान होता है।

व्यास—पराशर और **सत्यवती** के पुत्र एक ऋषि, जिनका जन्म यमुना-द्वीप में हुआ। ये बहुत कुरूप थे। काला होने से कृष्ण और द्वीप में उत्पन्न होने से इनका नाम द्वैपायन पड़ा। इसलिये इन्हें 'कृष्ण द्वैपायन' भी कहते हैं (*म० आ० ६३*)। बदरिकाश्रम में तप करने से इन्हें 'बदरायण' भी कहा जाता है। इन्होंने **अंबिका** और **अंबालिका** से नियोग कर क्रमशः धृतराष्ट्र और पांडु को तथा अंबिका की एक दासी से सहवास कर विदुर को जन्म दिया। **घृताची** नाम की अप्सरा से इन्हें शुकदेव नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। *महाभारत*, *अध्यात्म रामायण* और १८ पुराण इन द्वारा रचित माने जाते हैं। वेदों का संकलन करने से इन्हें 'वेदव्यास' भी कहते हैं। इनका आश्रम बदरीनाथ के निकट मनल ग्राम में था। पर्य्याय०—द्वैपायन, वेदव्यास, पाराशर्य, सत्यवतीसुत।

व्योमासुर—एक असुर जो ग्वाल-बाल का वेष बनाकर ग्वाल-बालों को उठा ले गया था। कृष्ण ने इसका वध कर, ग्वाल-बालों को मुक्त किया (*भा० १०.३७*)।

व्रजभार दीक्षित (आ० का० १६०३ ई०)—वल्लभाचार्य के अनुयायी, जिन्होंने *वल्लभख्यात* की टीका व्रज-भाषा-गद्य में लिखी।

श

शंकर शैल—कैलास पर्वत।

शंकराचार्य (७८८-८२० ई०)—एक प्रसिद्ध वेदांती आचार्य, तत्त्वदर्शी एवं तर्कशिरोमणि। जन्म कालडी, ज़िला मलबार। मंडन मिश्र आदि कर्मकांडियों से शास्त्रार्थ कर इन्होंने अपने *ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या* के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। ये **अद्वैतवाद** के प्रवर्त्तक हैं। दे० *रामानुजाचार्य*। इन्होंने संपूर्ण भारत का भ्रमण किया और शास्त्रार्थ कर विद्वानों को पराजित किया। पुरी, बदरीनाथ, गोवर्द्धन और शृंगेरी में इन्होंने मठ स्थापित किये। ३२ वर्ष की अल्प आयु में ही इनका देहांत हो गया और अपने ग्रंथों के कारण ये जगत्प्रसिद्ध हो गये थे। इन्होंने वेदांत सूत्रों पर भाष्य किया है जो इनकी प्रगाढ़ विद्वत्ता का परिचायक है। ईशादि प्रधान उपनिषदों पर तथा *भगवद्गीता* पर भी इनके विद्वत्तापूर्ण भाष्य उपलब्ध हैं।

शंख—एक स्मृतिकार। शंख और लिखित दो भाई बड़े तपस्वी थे। एक बार लिखित ने बिना किसी से पूछे भाई के आश्रम के फल-फूल तोड़ लिये। शंख ने उसे राजा से दंड माँगने के लिए कहा। लिखित के आग्रह करने पर राजा ने उसके हाथ कटवा दिये। पर जब लिखित देवताओं और पितरों का

तर्पण करने लगा, त्यों ही भाई के तप के प्रभाव से उसके हाथ ठीक हो गये (*म० शां० २३*)।

शंखचूड़—१ दंभ का पुत्र एक दैत्य। दे० *तुलसी*। २ कुबेर का एक सेवक, जिसने गोपियों को हर ले जाने का प्रयत्न किया था। कृष्ण ने इसकी मणि छीन ली थी (*भा० १०.३४*)।

शंखासुर—एक दैत्य जिसने वेदों को चुरा कर समुद्र में छिपा दिया था। मत्स्यावतार धारण कर विष्णु ने वेदों की रक्षा की (*पद्म० उ० ६०-६१*)।

शंडामर्क—शंड और मर्क नामक दो दैत्य, जो असुरों के पुरोहित थे। सोम के लोभ से ये देवों की पंक्ति में जा बैठे, किंतु वहाँ इन्हें अपमानित कर भगा दिया गया (*तै० सं० ६.४.१०*)।

शंबरारि—शंबरासुर का शत्रु, कामदेव। यथा—शंबर ज्यों शंबरारि दुःख देह को दहै। *केशव*।

शंबरासुर—दे० *प्रद्युम्न*।

शंबुक—दे० *शंबूक*।

शंबूक—एक तपस्वी शूद्र, जिसके तप के कारण एक ब्राह्मण-पुत्र अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ था। राम ने इसका वध कर मृत ब्राह्मण पुत्र को पुनर्जीवित कर दिया था (*वा० रा० उ० ७६*)। इसका आश्रम नागपुर के उत्तर में रामटेक (रामगिरि) नामक स्थान पर था।

शंभुनाथ मिश्र, प्रथम (र० का० १७४६ ई०)—असोधर-नरेश भगवंतराय खीची के आश्रित एक रीति-कवि। *रस कल्लोल*, *रसतरंगिणी* तथा *अलंकारदीपक* के रचयिता। इस नाम के दो कवि और हुए हैं—एक १८१० में और दूसरे १८४४ में।

शक संवत्—दे० *शालिवाहन*।

शकटासुर—एक दैत्य। कंस ने कृष्ण के वध के लिये इसे भेजा था, पर यह स्वयं ही कृष्ण द्वारा मारा गया (*भा० १०.७*)।

शकुंतला—मेनका (दे० यथा०) और विश्वामित्र की पुत्री। मेनका इन्हें मालिनी नदी के तीर पर कण्व ऋषि के आश्रम के समीप छोड़कर स्वर्ग लौट गई। शकुंत पक्षियों ने इनकी रक्षा की थी, अतः इनका नाम 'शकुंतला' पड़ा। **कण्व** ने इनका पालन-पोषण किया था। एक बार राजा दुष्यंत मृगया खेलते हुए कण्व-आश्रम में पहुँच गये। वहाँ उनका इनसे गांधर्व विवाह हो गया। दुष्यंत हस्तिनापुर लौट गये। शकुंतला ने एक पुत्र को जन्म दिया। बहुत समय बीत गया, पर दुष्यंत लेने नहीं आए। अंत में युवराज के अभिषेक के लिये ये अपने पुत्र भरत (दे० यथा०) के साथ दुष्यंत के पास गईं, किंतु लोकापवाद के कारण दुष्यंत ने इन्हें ग्रहण नहीं किया। उसी समय आकाशवाणी हुई कि 'हे राजन्! यह पुत्र तुम्हारा ही है।' दुष्यंत ने शकुंतला और भरत को स्वीकार किया। शकुंतला की कथा कुछ भिन्न रूप से अनेक ग्रंथों में मिलती है। दे० *म० आ० ६८-७४, भा० ६.२०, वायु० २.३७.१३१, पद्म० स्व०, श० ब्रा० १३.५.४.१३, अभिज्ञानशाकुंतल*।

शकुनि—गांधारराज सुबल का पुत्र, दुर्योधन का मामा और मंत्री, जो बड़ा दुष्ट था। इसकी ही धूर्तता से युधिष्ठिर द्यूत में हार गये और परिणाम-स्वरूप पांडवों को १२ वर्ष वनवास और १ वर्ष **अज्ञातवास** करना पड़ा (*म० वि० ५०.३६ कुं०*)। महाभारत-युद्ध में यह सहदेव के हाथ से मारा गया था (*म० श० २७.६ कुं०*)। कौरव-कुल के विनाश का मुख्य कारण यही था। आज भी 'शकुनि' शब्द ऐसे दुष्ट

व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है, जिसकी सम्मति से कार्य करने पर सर्वनाश हो जाने की आशंका हो।

शक्ति—१ रचौ लघु आदि शक्ति अंत स र न (१८ मा० छंद, आदि ल, अंत स र न)। उ०—दुती चौगुनी पंच शक्ती सरन, कहाँ जाउं तजि अब तोरे चरन। २ किसी पीठ की अधिष्ठात्री देवी जिसकी उपासना करने वाले शाक्त कहलाते हैं।

शची (शचि)—दे० *पुलोमजा*।

शतक—सौ का समूह। यथा—*नीतिशतक*।

शतधन्वा—एक योद्धा जिसे कृष्ण ने **सत्राजित्** के वध के अपराध में मारा था (*भा० १०.५७*)।

शतरूपा—स्वायंभुव मनु की पत्नी, जिनका जन्म ब्रह्मा के वामांग से हुआ था। इन्हें सरस्वती भी कहते हैं। मनु ने शतरूपा से पाँच संतानें उत्पन्न कीं। उनमें प्रियव्रत और उत्तानपाद—दो पुत्र थे तथा आकूति, देवहूति और प्रसूति—तीन कन्याएँ थीं (*भा० ३.१२*)।

शतानंद—राजा जनक के एक पुरोहित (*वा० रा० बा० ५१*)। ये **गौतम** और **अहल्या** के पुत्र थे।

शत्रुघ्न—दशरथ और सुमित्रा के पुत्र, और लक्ष्मण के अनुज (*वा० रा० बा० १८*)। एक अन्य मत से दशरथ की चौथी रानी सुवेषा के पुत्र (*पद्म० पा० ११६*)। इन्होंने **लवणासुर** का वध किया था। इनका विवाह निमि-पुत्री श्रुतकीर्त्ति से हुआ था।

शनि—छाया के गर्भ से सूर्य के औरस पुत्र (*विष्णुधर्म० १. १०६*)। अपनी पत्नी के शाप से इनकी दृष्टि क्रूर हो गई थी। ज्योतिषशास्त्र में इनका प्रभाव बुरा माना जाता है। दे० *श्रीवत्स*। शनि के पर्य्याय०—शनैश्चर, मंद, छायासुत, सौरि, रविनंदन आदि।

शब्द (शबद, सबद)—कबीर, नानक आदि संतों के बनाये हुए पद।

शब्द-शक्ति—शब्दों के अर्थों को प्रतीत कराने वाले व्यापार को ही शब्द-शक्ति कहते हैं। अर्थ तीन प्रकार के होते हैं—*वाच्य, लक्ष्य* और *व्यंग्य* जो क्रमशः **अभिधा, लक्षणा** और **व्यंजना** नाम की शब्द-शक्तियों के आधार पर समझे जाते हैं।

शब्दालंकार—दे० *अलंकार*।

शमीक—शृंगी ऋषि के पिता। **परीक्षित्** ने इन्हीं के कंठ में मृत सर्प डाल दिया था। इसपर **शृंगी** ने उन्हें **तक्षक** द्वारा डसे जाने का शाप दिया था (*म० आ० ४१, भा० १.१८*)।

शरतचंद्र चट्टोपाध्याय (१८७६-१९३८ ई०)—बँगला भाषा के प्रसिद्ध उपन्यासकार और कहानीकार। इनके सब उपन्यासों और इनकी सब कहानियों का अनुवाद हिंदी में हो चुका है। इनकी अनूदित रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—*श्रीकांत, पथ के दावेदार, चरित्र हीन, परिणीता, शेष प्रश्न, शेष का परिचय, देना पावना, लेन देन, शुभदा, सविता, विजय, विप्रदास, देवदास, पंडित जी, गृहदाह, दत्ता, विराज बहु, देहाती दुनिया, समाज का अत्याचार, बड़ी दीदी, मझली दीदी, छुटकारा, बिंदुवासिनी, कुसुम, छोटा भाई, छोटी माँ, बैकुंठ का वसीयतनामा, ब्राह्मण की बेटी, पाँच कहानियाँ, बचपन की कहानियाँ, शरत साहित्य ३० भाग*।

शरद्वान्—दे० *कृपाचार्य*।

शरभंग—एक ऋषि। विराध राक्षस का वध करके रामचंद्र इनके आश्रम में गये थे। अपनी तपस्या के बल से ये सीधे ब्रह्मलोक चले गये (*वा० रा० अर० ५*)।

शरभ—राम की सेना का यूथपति, एक वानर (*वा० रा० यु० २६*)।

शर्मिष्ठा—दैत्य-नरेश वृषपर्वा की पुत्री, जिसे देवयानी (दे० यया०) की दासी बनना पड़ा था (*दे० ययाति*)।

शल—कंस के एक मल्ल का नाम (*भा० १०.४४*)।

शल्य—मद्रदेशाधिपति। यह **माद्री** का भाई और पांडवों का मामा था। दुर्योधन ने इसको अपने पक्ष में कर लिया था। महाभारत-युद्ध में यह कर्ण का सारथि (*म० क० २६ कुं०*) और युद्ध के अठारहवें दिन कौरवों का सेनापति था (*म० श० १,५-६ कुं०*)। यह युधिष्ठिर द्वारा मारा गया (१६ कुं०)।

शल्व—दे० *शाल्व*।

शवरपा (सवरपा) (वर्त्त० ७८० ई० ?)—एक वज्रयान सिद्ध कवि, **सरहपा** के शिष्य और **लूइपा** के गुरु। दे० *सिद्ध साहित्य*।

शवरी—रामचंद्र को जूठे बेर खिलाने वाली एक भगवद्भक्त भीलनी। यह चख कर मीठे-मीठे बेर राम के लिये रख लेती थी। राम की अनुज्ञा से यह चिता में प्रवेश कर स्वर्ग चली गई (*वा० रा० अर० ७४*)।

शशिनाथ—दे० *सोमनाथ*।

शांत—वैराग्य से उत्पन्न होने वाला, उत्तम प्रकृति, कुंद-इंदु के समान श्वेत वर्ण, और श्री नारायण देवता वाला रस। निर्वेद स्थायी-भाव; ब्रह्म और नश्वर संसार आलंबन, तपोवन, गंगादि पवित्र स्थान, साधु सत्संगादि उद्दीपन, रोमांचादि अनुभाव; हर्ष, स्मृति और मति आदि इसके संचारी भाव हैं। शांत रस में सुख, दुःख, चिंता, द्वेष, राग, इच्छा आदि का नितांत लोप रहता है। उ०—मलयानिल अरु गुरु गरल, तिय कुंतल अहिदेह। / स्वपच रु विधि को भेद तजि, मम थिति भई अछेह॥ यहाँ संसार की अनित्यता आलंबन, सब में समान दृष्टि अनुभाव, मति आदि संचारी और शम स्थायी-भाव है।

शांतनु—एक चंद्रवंशी राजा जो **भीष्म** और **विचित्रवीर्य** के पिता थे। दे० *गंगा, सत्यवती*।

शांतिपा (वर्त्त० ६५० ई० ?)—एक वज्रयान-सिद्ध-धर्मप्रचारक कवि। ये अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान् थे। दे० *सिद्ध साहित्य*।

शातवाहन—दे० *शालिवाहन*।

शारङ्गधर (आ० का० १३०० ई०)—प्रसिद्ध *शारङ्गधर-पद्धति* (सुभाषित ग्रंथ) के रचयिता। इन्होंने अपने अनेक पद्यों में संस्कृत के साथ-साथ तत्कालीन देश-भाषा को भी परिमार्जित कर आकर्षक बनाया था। कहा जाता है कि इन्होंने हम्मीररासो नामक एक वीर-काव्य भी रचा था, जो अभी तक अप्राप्त है।

शारङ्गधर पद्धति—दे० *शारङ्गधर*।

शार्दूलविक्रीड़ित—मैं साजौं सततै गुरु सुमिरिकै, शार्दूलविक्रीड़ितै (म स ज स त त ग= १६ (१२,७) व० छंद)। उ०—काले कुत्सित कीट का कुसुम में कोई नहीं काम था, / काँटे से कमनीयता कमल में क्या है न कोई कभी।

शालग्राम—१ गंडक नदी के समीप एक स्थान, जहाँ जड़भरत और पुलह ऋषि ने तपस्या की थी। २ विष्णु की एक मूर्त्ति जो पत्थर की होती है। यह गंडक नदी में पाई जाती है। दे० *तुलसी*।

शालिनी—मा ता ता गा गा मिली शालिनी है (म त त ग ग=११ (४,७) व० छंद)। उ०—वीथी वीथी साधु को संग पैये। / संगै-संगै कृष्ण की कीर्त्ति गैये।

शालिभद्र सूरि (वर्त्त० ११८४ ई०)—जैन साधु और *बाहुबलि रासा* के रचयिता। दे० *जैन साहित्य*।

शालिवाहन—शक जाति के एक प्रसिद्ध राजा, जिनके नाम (?) से शक संवत् है। शक संवत् ईसवी सन् के ७८ वर्ष पश्चात् आरंभ हुआ था। टाड के *राजस्थान* के अनुसार शालिवाहन गजनी के राजा 'गज' के पुत्र थे। पिता की मृत्यु के उपरांत ये पंजाब चले आए और पंजाब पर अपना अधिकार कर लिया। इन्होंने शालिवाहन नामक नगर भी बसाया था। इनकी राजधानी प्रतिष्ठानपुर (पैठन, औरंगाबाद) थी। प्रतिष्ठानपुर में इन्होंने विक्रमादित्य को पराजित किया था। उस समय यह नगर व्यापार-वाणिज्य का प्रधान केंद्र था। यहाँ की जनता यूनान और मिश्र से व्यापार आदि करती थी।

शाल्व—१ एक म्लेच्छाधिपति (*म० श० २०*)। काशिराज की कन्या अंबा (दे० यथा०) इसी से विवाह करना चाहती थी। महाभारत-युद्ध में यह कौरवों की ओर था। इसका वध सात्यकि द्वारा हुआ (*म० श० २०*)। २ कुरुक्षेत्र के निकट एक प्रदेश। सत्यवती के श्वशुर द्युमत्सेन यहाँ राज्य करते थे। इस प्रदेश में जोधपुर, जयपुर और अलवर के कुछ भाग थे।

शास्त्र—१ वे धार्मिक या शिक्षा ग्रंथ जो लोगों के हित और अनुशासन के हेतु रचे गये हैं। चार वेद, उनके छः अंग, अर्थशास्त्र, दर्शन-शास्त्र, पुराण, चार उपवेद, विज्ञान ये सब पृथक्-पृथक् शास्त्र कहे जाते हैं। २ २० मा० छंद, अंत ग ल। उ०—मुनी के लोक लहिये शास्त्र आनंद। / सदा चितलाय भजिये नंद के नंद।

शास्त्रीयतावाद (*Classicism*)—प्राचीन साहित्य और कला के वे सिद्धांत व लक्षण, जिनमें कल्पना की अपेक्षा बुद्धि पर बल, विचारों का पुरानी रीति से वर्णन, परंपरागत भाषा तथा छंद, आकार की सुंदरता आदि पर बल दिया जाता है। इसकी प्रतिक्रिया स्वच्छंदतावाद (*Romanticism*) के रूप में हुई।

शाहजहाँ—मुग़लवंशी भारत-सम्राट् (१६२८-५८ ई०)।

शाहबाज़ बुलंद गेसूदराज़ बंदा नवाज़ (१३२१-१४२२ ई०)—खड़ी बोली-गद्य के एक प्रारंभिक लेखक और *मिराज़-उल आशक़ान* (सूफ़ी सिद्धांतों का निरूपण) तथा *हिदायतनामा* (अप्राप्त) के रचयि .

शिखंडिनी—दे० *शिखंडी*।

शिखंडी—द्रुपद का एक नपुंसक पुत्र, जिसकी ओट में होकर अर्जुन ने भीष्म का वध किया था। भीष्म की प्रतिज्ञा थी कि वे किसी स्त्री पर बाण न चलावेंगे। शिखंडी का वध अश्वत्थामा ने किया था (*म० सौ० ५,८*)।

शिखरिणी—यमी ना सो भूला, गुण गणनि गा गा शिखरिणी (य म न स भ ल ग=१७ (६,११) व० छंद)। उ०—छटा कैसी प्यारी, प्रकृति तिय के चंद्र मुख की, / नया नीला ओढ़े, बसन चटकीला गगन का।

शिखरी (शिखरा)—एक गदा जो विश्वामित्र ने रामचंद्र को दी थी।

शिखिध्वज—दे० *मयूरध्वज।*

शिवि—एक राजा जो अपनी दयालुता और दानशीलता के लिये प्रसिद्ध हैं। इन्होंने बाज (इंद्र) से कबूतर (अग्नि) को बचाने के लिये अपना सारा शरीर अर्पण कर दिया था। विष्णु की याचना करने पर इन्होंने अपने पुत्र को अपने हाथ से काटकर उन्हें समर्पित कर दिया। विष्णु इनपर प्रसन्न हुए और इनके पुत्र को पुनर्जीवित कर दिया (*म० व० १३०-३१*)।

शिरनेत—गढ़वाल या श्रीनगर के आस-पास का प्रदेश। यथा—सुनी सिधाय शिरनेतन देशु—*तुलसी*।

शिव—एक प्रसिद्ध देवता जो सृष्टि का संहार करने वाले कहे गये हैं। इनके सिर पर **गंगा,** मस्तक पर चंद्रमा और तृतीय नेत्र, कंठ में सर्प और नर-मुंड की माला, तथा सारे शरीर पर भस्म है। ये व्याघ्र-चर्म ओढ़े हुए और वामांग में अपनी पत्नी **पार्वती** को लिये हुए हैं। इनके पुत्र **गणेश** तथा स्कंद, गण भूत-प्रेत, प्रधान अस्त्र त्रिशूल और वाहन बैल (**नंदी**) है। इनके धनुष का नाम पिनाक है। ये **कामदेव** का दहन करने वाले, **दक्ष** का यज्ञ नष्ट करने वाले तथा **समुद्रमंथन** से निकले **हलाहल** विष को पान करने वाले हैं (दे० *नीलकंठ*)। इनका **तांडव** नृत्य प्रसिद्ध है। इनका निवास-स्थान **कैलास** है। लोक में इनके लिंग का पूजन होता है (दे० *शिवलिंग*)। दे० शत्रुघ्न, त्रिपुर, ज्वर, तारकासुर और भस्मासुर। विशेष दे० *शिव०*। शिव के पर्य्याय०—शंभु, ईश, पशुपति, महादेव, शूली, महेश्वर, ईश्वर, शर्व, शंकर, चंद्रशेखर, भव, भूतेश, जटाधर, खंडेपरशु, गिरीश, हर, पिनाकी, कपर्दी, श्रीकंठ, शितिकंठ, वामदेव, विरूपाक्ष, त्रिलोचन, धूर्जटि, स्थाणु, उमापति, त्रिपुरारि, रुद्र, गंगाधर, नंदीश्वर, भूतनाथ, नीलकंठ, क्रतुध्वंसी, स्मरहर, नटराज, अष्ट-मूर्त्ति, महानट, चंद्रमौलि, गौरीपति, कैलास-नाथ, भोलानाथ, दिगंबर, काशीनाथ, अर्द्ध-नारीश आदि।

शिवदास— १ *वेतालपंचविंशति* (१२०० ई०, गद्य-पद्यमय) और *कथार्णव* (चोरों और मूर्खों की कथाएँ) के संस्कृत में रचयिता। २ दे० *अचलदास खीची री वचनिका।*

शिवपूजन सहाय (१८९३ ई०–)—उपन्यासकार। इनकी मुख्य रचना *देहाती दुनिया* (१९२६) है। इनकी भाषा शुद्ध मुहावरेदार और भावों के अनुकूल है। भाषा में माधुर्य और ओज है। शैली परिष्कृत, तर्कपूर्ण तथा परिमार्जित है।

शिवप्रसाद सितारेहिंद, राजा (१८२३-९५ ई०)—काशी निवासी, कई भाषाओं के ज्ञाता और स्कूल इन्स्पेक्टर (१८५६)। हिंदी में पाठ्य पुस्तकों का अभाव देखकर इन्होंने विभिन्न विषयों पर लगभग ३५ पुस्तकें लिखीं। इनके प्रयत्न से हिंदी का भी स्कूलों में प्रवेश हुआ। बनारस से इन्होंने 'बनारस अखबार' नामक पत्र निकाला और उसके द्वारा हिंदी-प्रचार करने का प्रयत्न किया। इनकी भाषा में फारसी, अरबी के शब्दों का अधिक प्रयोग होता था और इसी कारण वह उर्दू के अधिक निकट थी। राजा साहिब शुद्ध हिंदी भी लिख सकते थे (जैसे *राजा भोज का सपना* में), पर इन्होंने उर्दूमय हिंदी लिखना ही अधिक श्रेयस्कर समझा। पर ऐसा करने में हिंदी के स्वतंत्र अस्तित्व के खो जाने की आशंका थी। **भारतेंदु** तथा राजा **लक्ष्मणसिंह** ने इनकी इस नीति का विरोध किया था।

अंग्रेज़ी सरकार ने इनकी राज्य-भक्ति और सेवाओं से प्रसन्न होकर इन्हें 'सितारे हिंद' और 'राजा' की उपाधियाँ दी थीं।

शिवमंगलसिंह 'सुमन'—आधुनिक कवि और *हिल्लोल* (१९३९ ई०), *जीवन के गान* (१९४१) (काव्य-संग्रह) तथा *मास्को अब भी दूर है* (कविता) आदि के रचयिता।

शिवराज-भूषण—**भूषण** का एक अलंकार-ग्रंथ, जिसमें शिवाजी की प्रशंसा फुटकर छंदों द्वारा उदाहरणों के रूप में की गई है।

शिवलिंग—शिव का लिंग या पिंडी जिसका पूजन होता है। अनेक जातियों में उत्पादक शक्ति के रूप में इसकी पूजा होती है। एक बार स्वायंभुव मनु ने यज्ञ किया। उसमें यह वाद उपस्थित हो गया कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव में कौन श्रेष्ठ हैं। निर्णय करने के लिये भृगु (दे० यथा०) सर्वप्रथम कैलास पर्वत पर गये। वहाँ शिव पार्वती के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। भृगु ने उन्हें लिंगत्व प्राप्त होने का शाप दिया। तब से शिवलिंग की पूजा होती है (पूर्ण कथा के लिये दे० *भृगु, भा० १०.८९*)।

शिवलोक—शिव का लोक, कैलास। यथा—
दिया जो मन शिवलोक महँ उपना सिंहलद्वीप।
—*जायसी*।

शिवसहायदास—जयपुर निवासी, एक रीति-कवि और *शिवचौपाई* (१८५२ ई०) तथा *लोकोक्तिरस कौमुदी* के रचयिता।

शिवसिंह-सरोज—**शिवसिंह सेंगर** द्वारा लिखित हिंदी-साहित्य का एक बड़ा इतिहास (१८७८ ई०), जिसमें लगभग १००० कवियों साहित्य के इतिहास-ग्रंथों में इसका विशेष स्थान है। इस ग्रंथ का निर्माण प्राचीन संग्रहों के आधार पर हुआ है।

शिवसिंह सेंगर (जन्म १८२१ ई०)—*शिवसिंह-सरोज* के रचयिता और *ब्रह्मोत्तर खंड* व *शिवपुराण* के गद्य में अनुवादक।

शिवाजी (१६२७-८० ई०)—भोंसलेवंशीय सुविख्यात महाराष्ट्र दलपति और दक्षिण में स्वाधीन महाराष्ट्र राज्य के प्रतिष्ठाता। १६७४ में इन्होंने एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना की थी। तब से इनका नाम 'छत्रपति शिवाजी महाराज' पड़ा। इन्होंने अनेक बार मुग़ल-सम्राट् औरंगज़ेब से लोहा लिया। महाकवि **भूषण** ने इनकी प्रशंसा की है।

शिवानंद (आ० का० १८२१ ई०)—एक राम-भक्त कवि और *श्रीरामध्यान मंजरी* के रचयिता।

शिवा-बावनी—**भूषण** की वीररसपूर्ण कविताओं का एक संग्रह, जिसमें अधिकांश छंद शिवाजी की प्रशंसा के हैं।

शिशुपाल—चेदि देश का राजा जो पूर्व जन्म में हिरण्यकशिपु और रावण था। प्रतिज्ञानुसार कृष्ण ने इसके १०० अपराध क्षमा कर दिये थे, किंतु १०१ वाँ अपराध करने पर इसका वध कर दिया था (*म० स० ४०-४५, भा० १०.७४*)। दे० *रुक्मिणी*।

शिशुपाल वध—**माघ** (वर्त्त० ल० ८०० ई०) का संस्कृत में एक महाकाव्य (अनू०)। इसका कथानक *महाभारत* से लिया गया है। इसमें युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में चेदि-नरेश शिशुपाल के वध की कथा बड़े कौशल के साथ वर्णित है। इसकी कथा २० सर्गों के १६५० श्लोकों में है। संस्कृत महाकाव्य की बृहत्त्रय में इसका स्थान तृतीय है (प्रथम

स्थान *रघुवंश* को और द्वितीय स्थान *किरातार्जुनीय* को प्राप्त है)।

शीरी—दे० *फरहाद*।

शुंभनिशुंभ—शुंभ और निशुंभ नामक दो दैत्य। ये दोनों भाई थे। इन्होंने स्वर्ग पर अधिकार कर लिया था। जब दुर्गा ने महिषासुर का वध किया, तब इन्होंने दुर्गा को मारने का निश्चय किया। चंड और मुंड नामक दो राक्षस भी इनसे मिल गये। धूम्रलोचन और रक्तबीज भी इनके साथ थे। दुर्गा ने इन सब का वध कर दिया (*देवी भा० ५.२१-३१ आदि*)।

शुक—रावण का मंत्री (*वा० रा० यु० २५*)। पूर्व-जन्म में यह एक ब्राह्मण था, पर अगस्त्य के शापवश रावण का सेवक बना। शापानुसार राम के दर्शन से यह शापमुक्त हुआ।

शुकदेव—व्यास और घृताची के पुत्र (*स्कंद० ६.१४७-४८*), जो बड़े वीतराग, वक्ता और ज्ञानी थे। अरणिमंथन के समय घृताची शुक बन गई थी, अतः इन्हें शुकदेव कहते हैं। इन्होंने राजा परीक्षित् की मृत्यु से पूर्व उन्हें मोक्ष धर्म का उपदेश दिया था (*भा० १.१६*)।

शुक्राचार्य—भृगु के पुत्र, दैत्यों के गुरु और देवयानी (दे० यथा०) के पिता एक ऋषि (दे० *ययाति*)। बृहस्पति-पुत्र कच ने इनसे संजीवनी-विद्या सीखी थी। पर्य्याय०—दैत्य-गुरु, उशना, भार्गव आदि।

शुद्धाद्वैत—दे० *वल्लभाचार्य*।

शुद्धोदन—गौतम बुद्ध के पिता एक शाक्य राजा।

शुनःशेप—अजीगर्त नामक एक निर्धन ब्राह्मण के मध्यम पुत्र। ये राजा हरिश्चंद्र द्वारा आयोजित यज्ञ में रोहिताश्व के स्थान पर बलिदान के लिये अपने पिता द्वारा १०० गौओं के बदले बेच दिये गये थे। विश्वामित्र की आज्ञा से जब इन्होंने वरुण की स्तुति की, तब वरुण ने इनका उद्धार किया। विश्वामित्र ने इन्हें पोष्यपुत्र के रूप में स्वीकार किया (*ऐ० ब्रा० ७.३, ब्रह्म० १०४*)।

शूद्रक—१ (तीसरी शती ई० पू० ?)—प्रसिद्ध प्रकरण *मृच्छकटिक* के संस्कृत में रचयिता। २ दे० *शंबूक*।

शून्यवाद—बौद्ध मत में एक वाद, जिसके अनुसार हमारे प्रत्यक्ष ज्ञान के विषय घट, पट आदि की ज्ञान से अतिरिक्त कोई बाहर पृथक् सत्ता नहीं है। इस सिद्धांत के अनुसार जीव, ईश्वर आदि की कोई सत्ता नहीं है। बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन ने इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया है।

शूरसेन—१ मथुरा के एक प्रसिद्ध राजा, जो कृष्ण के पितामह थे। २ मथुरा के आस-पास के प्रदेश का नाम, जहाँ शूरसेन का राज्य था। इस प्रदेश की राजधानी मथुरा थी।

शूर्पणखा—विश्रवा और कैकसी की पुत्री और रावण की बहिन एक राक्षसी (*वा० रा० उ० ६*)। राम-वनवास के समय यह राम पर मुग्ध हो राम से विवाह करना चाहती थी। राम के संकेत पर लक्ष्मण ने इसके नाक-कान काट लिये थे (*वा० रा० अर० १७-१८*)। प्रतिशोध-स्वरूप रावण ने सीता-हरण किया (*३३-३४,५६*)। इसका विवाह कालकेयाधिपति विद्युज्जिह्व से हुआ था (*वा० रा० उ० १२*), किंतु विधवा होने से यह खर के पास दंडकारण्य में रहती थी।

शृंगवेरपुर—इलाहाबाद के २२ मील उत्तर-

पश्चिम में सिंग्रौर नामक नगर, जहाँ रामचंद्र के समय में निषादराज गुह की राजधानी थी।

श्रृंगार—रति नामक स्थायी-भाव से विकसित या अंकुरित होने वाला, श्रृंग (कामोद्भव) का कारणभूत, उत्तम प्रकृति, श्यामवर्ण, और विष्णु देवता वाला रस। नायक और नायिका इसके आलंबन-विभाव हैं। रति या प्रीति को उत्पन्न करने वाले चंदन, पुष्प, भ्रमर, कोकिल आदि पदार्थ चंद्र, चंद्रकामयी-निशा, वसंत ऋतु, पुष्प वाटिका आदि स्थान और समय; शीतल समीर आदि विधान इसके उद्दीपन विभाव हैं। सानुराग भाव-पूर्ण दृष्टि, भ्रकुटि-भंगिमा आदि इसके अनुभाव, उग्रता, आलस्य, जुगुप्सा आदि को छोड़कर अन्य निर्वेदादि इसके संचारी-भाव हैं। इसके दो भेद हैं—

१ *संभोग श्रृंगार*—इसमें प्रेमानुरक्त नायक और नायिका के पारस्परिक दर्शन-स्पर्श का वर्णन किया जाता है। यह कहीं नायिकारब्ध और कहीं नायकारब्ध होता है। उ०—सोई सविध सकी न करि, सफल मनोरथ मंजु। / निरखति कछु मींचे नया, प्यारी पिय मुख कंजु॥ यहाँ नायक-नायिका आलंबन हैं, एकांत शयन उद्दीपन है, नेत्र बंद करना अनुभाव, और लज्जा, उत्कंठा आदि संचारी-भाव तथा रति स्थायी-भाव है। परस्पर दर्शन-स्पर्श आदि का वर्णन है।

२ *विप्रलंभ श्रृंगार*—जहाँ उत्कट अनुराग (रति) होने पर भी प्रिय समागम नहीं होता। इसमें चिंता, इच्छा या अभिलाषा, स्मृति, गुण-कथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मृति दशायें होती हैं। उ०—ललन चलन सुनि पलन में, आय गयो बहु नीर। / अधखंडित बीरी रही, पीरी परी सरीर॥ यहाँ नायिका आलंबन, उसका परदेशगामी नायक विषयक रति स्थायी; यात्रा समाचार आदि उद्दीपन, अश्रुपात, बीड़े का मुख का मुख में ही रह जाना, शरीर पीला पड़ना अनुभाव; और जड़ता, विषाद आदि संचारी-भाव हैं। उत्कट रति-अभिलाषा होने पर भी आसन्न वियोग वर्णित है। इसके पाँच मुख्य भेद हैं—१ अभिलाषा-हेतुक या पूर्वानु-राग (गुण, श्रवण, चित्र, स्वप्न या प्रत्यक्ष दर्शन से अनुराग उत्पन्न होना); २ ईर्ष्या-हेतुक (मान-गुमान से पार्थक्य होना); ३ विरह-हेतुक (गुरु-जन-लज्जा से पृथक् रहना); ४ प्रवास (प्रेमी का अन्यत्र चला जाना); ५ शाप-हेतुक; (शाप से वियोग होना)। उपर्युक्त दोहा प्रवास का उदाहरण है।

श्रृंगी—शमीक के पुत्र एक ऋषि। इनके शाप से **परीक्षित्** को **तक्षक** ने डसा था (*भा० १.१८*)।

शेक्सपियर (Shakespeare) (१५६४-१६१६ ई०)—अंग्रेज़ी कवि और नाटककार। इनके अधिकांश नाटक *भूलभुलैया, भ्रमजालक, मनमोहन का जाल, रोमियो-जूलियट, प्रेम लीला, रिचार्ड द्वितीय, वेनिस का बाँका-दुर्लभ बंधु, वेनिस का व्यापारी, ऐज़ यू लाइक इट, हैमलेट, ओथेलो, मैकबेथ, राजा लियर, शरद्ऋतु की कहानी* और *जयंत* नाम से अनूदित हैं।

शेख़चिल्ली—एक कल्पित मूर्ख व्यक्ति, जिसके संबंध में बहुत-सी विलक्षण और हास्य रसात्मक मूर्खतापूर्ण बातें कही जाती हैं। ये हवाई क़िले बनाने के लिये भी प्रसिद्ध हैं।

शेखनबी (आ० का० १६१९ ई०)—ज़िला जौनपुर निवासी, एक सूफ़ी-कवि और ज्ञान द्वीप के रचयिता।

शेख फ़रीद (जन्म ११७३ ई०)—कोठीवाल

निवासी एक संत, जिनकी रचनाएँ हिंदी में भी हुई। दे० *शेख फ़रीदसानी*।

शेख फ़रीदसानी (१४५३–१५५२ ई०)—एक संत, जिनका असली नाम शेख इब्राहीम था। गुरु नानक ने इनसे भेंट की थी। इनके पद *ग्रंथ साहब* में मिलते हैं।

शेफालिका (हारसिंगार)—एक झाड़। कवि-प्रसिद्धि है कि इसके पुष्प रात्रि को झड़ते हैं।

शेरशाह—सूरवंशी एक शासक (१५४०-४५ ई०)।

शेष—कश्यप और कद्रू के पुत्र सर्पराज, जिनके सहस्र फनों पर पृथ्वी ठहरी है। इनका नाम अनंत भी है। **क्षीरसागर** में विष्णु इन्हीं के ऊपर शयन करते हैं (*भा० १०.३.४८*)। लक्ष्मण और बलराम इन्हीं के अवतार कहे गये हैं। ये ज्योतिष और छंदशास्त्र के आचार्य कहे जाते हैं।

शेषनाग—दे० *शेष*।

शैतान—दे० *इबलीस*।

शैलगंगा—**गोवर्द्धन पर्वत** की एक नदी, जिसमें कृष्ण ने सब तीर्थों का आवाहन किया था।

शैव्या—राजा **हरिश्चंद्र** की पत्नी का नाम।

शोक-गीत—संक्षिप्त गीतियाँ जो युद्ध, प्रेम और मृत्यु जैसे विविध विषयों से संबंधित शोक और विलाप को, विशेषतः मृत-बंधु की स्मृति को, व्यक्त करती हैं। हिंदी में जयशंकर प्रसाद का आँसू इस दिशा में एक सुंदर रचना है। इसके बाद सुमित्रानंदन पंत आदि अनेक कवियों ने करुण गीत लिखे हैं।

शोण—दे० *सोन*।

शौरसेनी—एक प्राकृत भाषा, जिसका प्रचार देश के मध्यभाग में होने से और ब्रजमंडल से विशेष संबंधित होने से शौरसेनी (शूरसेन के अधिकृत देशों की भाषा) नाम पड़ा। जब इस भाषा ने भी साहित्यिक रूप धारण कर लिया, तब जन-समुदाय की भाषा शौरसेनी अपभ्रंश कहलाई। शौरसेनी अपभ्रंश एक प्रकार से उत्तर भारत की व्यापक भाषा थी। इसी से ही ब्रज-भाषा की उत्पत्ति हुई।

श्यामनारायण पांडे (१९१० ई०-)—कवि। इनकी मुख्य रचना *हल्दीघाटी* (१९४१, महाकाव्य, इसमें हल्दीघाटी के युद्ध का वर्णन है) है। इसमें सांप्रदायिकता की अपेक्षा स्वातंत्र्य-भावना और साम्राज्यवाद से मुक्ति पाने की इच्छा अधिक है। भाषा में प्रवाह है और उसमें गति के साथ भड़कीले चित्र उपस्थित हो जाते हैं। इनका *जौहर* नामक काव्य भी अत्यंत प्रसिद्ध है।

श्यामसुंदरदास (१८७५–१९३७ ई०)—ये काशी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष रहे थे। अंग्रेज़ी राज्य ने इन्हें 'रायसाहब' और 'रायबहादुर' की उपाधियाँ दी थीं। **नागरी-प्रचारिणी सभा** के संस्थापकों में ये भी एक थे। इनकी मुख्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

संपादित—*हिंदी-शब्द-सागर*, *वैज्ञानिक-कोश*, *हिंदी कोविदरत्नमाला* (दो भाग), *मनोरंजन पुस्तकमाला* (कई भाग), *पृथ्वीराजरासो*, *नासिकेतोपाख्यान*, *छत्र प्रकाश*, *वनिता-विनोद*, *इंद्रावती* (भाग १), *हम्मीररासो*, *शकुंतला नाटक*, *रामचरितमानस*, *दीनदयाल गिरि ग्रंथावली*, *राजा लक्ष्मणसिंह-कृत मेघदूत* और *परमालरासो*।

मौलिक—*साहित्यालोचन*, *भाषा विज्ञान*, *हिंदी भाषा का विकास*, *गद्यकुसुमावली*, *गोस्वामी तुलसीदास*,

भारतेंदु हरिश्चंद्र, हिंदी-भाषा और साहित्य तथा *रूपक रहस्य*। इन्होंने अनेक निबंध भी लिखे।

काशी विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण करते समय विश्वविद्यालय ने इन्हें डी० लिट्० की उपाधि देकर सम्मानित किया था।

श्यनी—कश्यप और ताम्रा की एक कन्या, जो पक्षियों की माता मानी जाती है। यह गरुड़ की पत्नी थी (*ब्रह्मांड० ३.७.४४६*)।

श्रद्धा—१ वैवस्वत मनु की पत्नी। २ दक्ष प्रजापति की पुत्री और धर्म की पत्नी (*म० आ० ६७.१४ कुं०*)।

श्रद्धा कामायनी—एक सूक्तद्रष्ट्री (*ऋ० १०.१५१*)।

श्रद्धानंद, स्वामी (१८५६–१९२६ ई०)—आर्यसमाज के प्रमुख नेता, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक, *कल्याणमार्ग का पथिक* (आत्म-चरित), *मुक्ति सोपान, हिंदू संगठन* आदि के रचयिता। स्वामी जी स्वयं एक आचार्य, लेखक, वक्ता और संपादक के रूप में हिंदी के प्रमुख स्तंभ रहे हैं। ये **हिंदी साहित्य सम्मेलन** के भागलपुर अधिवेशन के प्रधान भी बनाए गये। इनके द्वारा संपादित 'सद्-धर्म प्रचारक' अपने समय का प्रसिद्ध हिंदी साप्ताहिक पत्र था। इन द्वारा संस्थापित 'गुरुकुल कांगड़ी' में हिंदी के माध्यम से अर्थ-शास्त्र, विज्ञान, चिकित्सा आदि सभी विषयों की उच्च से उच्च शिक्षा दी जाती है।

श्रद्धाराम फुल्लौरी (मृत्यु १८८१ ई०)—फुल्लौर (पंजाब) निवासी एक पंडित और *सत्यामृतप्रवाह, उपदेश संग्रह, एक आत्म जीवन चरित्र* (अप्राप्त), *भाग्यवती* (सामाजिक उपन्यास) आदि हिंदी पुस्तकों के रचयिता। यह अपने समय के हिंदी-हितैषी और प्रौढ़ गद्य-पद्य के लेखक थे।

श्रवणकुमार—एक वैश्य मुनि और शूद्रा माता के पुत्र, जो अपने माता-पिता की भक्ति के लिये प्रसिद्ध हैं। एक दिन रात्रि के समय ये अपने प्यासे माता-पिता के लिये एक नदी में जल का घड़ा भर रहे थे। जल भरने के शब्द को किसी पशु के जल पीने का शब्द समझ कर राजा दशरथ ने शब्दवेधी तीर चला दिया, जिससे इनकी मृत्यु हो गई। इसपर इनके पिता ने दशरथ को शाप दिया कि तुम्हारी मृत्यु भी पुत्र-शोक से होगी (*वा० रा० अयो० ६३-६४*) दे० *अयोध्या*।

श्रव्यकाव्य—काव्य के दृश्य और श्रव्य नामक भेदों में से एक। जो कुछ भी पढ़ा-सुना जाए, श्रव्य कहलाता है। दे० *काव्य*।

श्रावस्ती—अवध के अंतर्गत गोंडा ज़िले में रापती नदी के किनारे सहेत-महेत नामक स्थान। यह नगरी उत्तर-कोसल की राज-धानी थी। यह बलरामपुर से १० मील और अयोध्या के ५८ मील उत्तर में थी। इसे श्रवस्त नामक एक सूर्यवंशी राजा ने बसाया था। राम ने यह नगरी अपने पुत्र लव को दी थी। बुद्ध के समय यह प्रसेनजित् की राजधानी थी।

श्री—१ लक्ष्मी। २ सरस्वती। ३ वैष्णवों के एक संप्रदाय का नाम। ४ एक राग विशेष। ५ प्रत्येक पाद में एक गुरु वाला उक्ता जाति का समवृत्त छंद।

श्रीकृष्ण गीतावली—**तुलसीदास** का ब्रज-भाषा में एक ग्रंथ (१५७१ ई० ?), जिसमें ६१ स्फुट पदों का संग्रह है।

इसमें कृष्ण-चरित्र का वर्णन किया गया है। जब यह ग्रंथ लिखा गया होगा, तब कवि पर ब्रज-भाषा और कृष्ण-काव्य का अत्यधिक प्रभाव अवश्य होगा। तुलसी ने

कृष्ण-चरित्र वर्णन में मर्यादा का ध्यान रखा है।

श्रीधर—एक डिंगल-कवि और *रणमल छंद* (१३६७ ई०, ईडर के राठौर राजा रणमल की वीरता का वर्णन) के रचयिता।

श्रीधर पाठक (१८५६-१६२८ ई०)—कवि। *एकांतवासी* (गोल्डस्मिथ-कृत *हर्मिट* का लावनी की तर्ज़ पर खड़ी बोली में अनुवाद), *श्रांत पथिक* (गोल्डस्मिथ-कृत *ट्रैवलर* का रोला छंद में अनुवाद), *ऊजड़ गाँव* (गोल्डस्मिथ-कृत *डिज़र्टिड विलेज* का ब्रज-भाषा में अनुवाद), *काश्मीर-सुषमा* आदि के रचयिता।

ये प्रकृति के परमोपासक थे। इनकी *काश्मीर-सुषमा* में आलंबन रूप में प्रकृति-वर्णन है। राष्ट्रिय भावना से ओत-प्रोत इनके गीत *भारत गीत* में संगृहीत हैं। इन्होंने कई प्रकार के नवीन छंदों की रचना की है; कुछ अतुकांत छंद भी लिखे हैं। ये खड़ी बोली-कविता के प्रवर्त्तक कहे जा सकते हैं।

श्रीधर या **मुरलीधर** (जन्म १६८० ई०)—प्रयाग निवासी एक रीति-कवि। *जंगनामा* (फर्रुखसियर और जहाँदार के युद्ध का वर्णन), *नायिका-भेद* तथा *चित्र काव्य* के रचयिता।

श्रीनिवासदास (१८५१-८७ ई०)—दिल्ली निवासी, भारतेंदु-मंडली के अच्छे लेखक। *रणधीर और प्रेममोहिनी*, *तपती संवरण*, *संयोगिता स्वयंवर*, *प्रह्लाद चरित्र* (नाटक) तथा *परीक्षा गुरु* (शिक्षा संबंधी) के रचयिता।

श्रीपति—कालपी निवासी एक रीति-कवि। *काव्य सरोज* (१७२० ई०), *कल्पद्रुम*, *रस-सागर*, *अनुप्रास-विनोद*, *विक्रम विलास*, *सरोज कलिका* और *अलंकार गंगा* के रचयिता। इन्होंने काव्यांगों का निरूपण विशद रूप से किया है।

श्री भट्ट (आ० का० १५६५ ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि। *युगलशतक* के रचयिता।

श्रीमद्भागवत—दे० *भागवत*।

श्रीवत्स—१ सत्ययुग के एक राजा। एक दिन लक्ष्मी और शनि ने आकर श्रीवत्स से पूछा कि आप निर्णय करें कि हम दोनों में से कौन श्रेष्ठ है। संयोग से राजा के संमुख दो आसन थे। सोने के आसन पर लक्ष्मी बैठी थी और चाँदी के आसन पर शनि। राजा ने कहा कि आप अपने आसनों को देखकर मेरा निर्णय समझ लें। इसपर शनि कुपित होकर चले गये। शनि के कोप से राजा का सारा धन-वैभव नष्ट हो गया। राज्य छोड़कर श्रीवत्स और उनकी रानी चिंता पैदल ही विदेश के लिये निकल पड़े। एक छल से चिंता भी श्रीवत्स से छीन ली गई। राजा और रानी को अनेक कष्ट सहने पड़े। नियत अवधि समाप्त होने के बाद शनि ने आकर श्रीवत्स से क्षमा माँगी और कहा कि आपकी कीर्त्ति अक्षय रहेगी। २ विष्णु की छाती पर भृगु के चरण-प्रहार का चिह्न।

श्रीशैल—कृष्णा नदी के तीर पर एक पर्वत। मल्लिकार्जुन का मंदिर इसी पर्वत पर स्थित है। इसका संबंध नाथ संप्रदाय से है।

श्रीहठीजी (र० का० १७८० ई०)—हित-हरिवंश की शिष्य-परंपरा के कवि। *राधा-सुधा-शतक* के रचयिता।

श्रीहर्ष (ई० १२ वीं शती का उत्तरार्ध)—कन्नौज-नरेश जयचंद के राजकवि और *नैषध चरित* (अनू०, महाकाव्य, नल-दमयंती

के प्रेम और विवाह का वर्णन) के संस्कृत में रचयिता।

श्रुतकीर्त्ति—राजा जनक के भाई कुशध्वज की कन्या और शत्रुघ्न की पत्नी *(वा० रा० बा० ७३)*।

श्रुति—वेद को श्रुति भी कहा जाता है, क्योंकि इसे शिष्य अपने गुरु से सुनकर ग्रहण करते थे। सहस्र वर्षों तक यह परंपरा चलती रही।

श्रुतिकटु—टवर्ग आदि की प्रधानता के कारण कानों को अप्रिय लगने वाला काव्य दोष। इसे दुःश्रवत्व भी कहते हैं।

श्रुत्यनुप्रास—दे० *अनुप्रास*।

श्लेष—एक शब्दालंकार तथा एक अर्थालंकार, जिसमें अभिधा से ही अनेकार्थों की प्रतीति होती है। श्लिष्ट (अनेकार्थ वाले) पदों से—वर्ण, प्रत्यय, लिंग, प्रकृति, पद से विभक्ति, वचन और भाषा के श्लिष्ट होने से—अनेक अर्थों का निरूपण शब्द-श्लेष होता है। अर्थ-श्लेष स्वभावतः एकार्थ शब्दों से अनेकार्थ निकालने में होता है। शब्द को तोड़कर दो अर्थ निकालने से भंग या सभंग श्लेष होता है, और बिना तोड़े दो अर्थ निकालने से अभंग श्लेष। यथा—भोगी ह्वै, रहत विलसत अवनी के मध्य, / कनकन जोरैं, दान-पाठ कर वार है। यहाँ 'भोगी ह्वै रहत' में दाता पक्ष में भोग भोगता हुआ रहता है और सूम पक्ष में साँप बनकर रहता है। इसलिये यहाँ 'भोगी' में अभंगश्लेष है। दूसरी पंक्ति में 'कनकन जोरैं' में दाता पक्ष में कनक (सोना) नहीं जोड़ता और सूम पक्ष में कणकण जोड़ता है—ये दो अर्थ 'कनकन' शब्द को दो तरह तोड़कर निकाले गये हैं, अतः यहाँ सभंग श्लेष है। ये दोनों ही शब्द श्लेष के उदाहरण हैं, क्योंकि यहाँ पर इनके स्थान पर दूसरे पर्य्यायवाची शब्द 'साँप' या 'अणु-अणु' रख देने से दो अर्थ नहीं निकलते। अर्थ श्लेष में ऐसा नहीं होता, क्योंकि वहाँ स्वभावतः एकार्थ शब्द से दो अर्थ निकल जाते हैं—यथा—नर की अरु नल नीर की, गति एकै करि जोइ। / जेतो नीचो ह्वै चलै, पे तौ 'ऊँचो होइ'॥ यहाँ 'नीचे ह्वै' और 'ऊँचो होइ' पदों के स्थान पर चाहें कुछ भी पर्य्यायवाची रख दिये जाएँ, यही दोनों अर्थ निकलते रहेंगे।

श्वफल्क (सुफलक)—**अक्रूर** के पिता *(भा० ६.२४)* जो बड़े पुण्यात्मा थे। ये जिस देश में रहते थे, वहाँ किसी प्रकार का कष्ट न होता था। जब ये काशी गये, तब वहाँ अकाल समाप्त हो गया। काशिराज ने अपनी पुत्री गांदनी का विवाह इनसे कर दिया (१०.५७)।

ष

षंडामार्क—शुक्राचार्य के पुत्र और प्रह्लाद के गुरु। ये अत्यंत कठोर स्वभाव के थे।

षट्चक्र—**सुषुम्णा** नाड़ी की छः स्थितियाँ छः चक्रों के रूप में इस प्रकार हैं—मूलाधार (गुह्य स्थान के समीप), स्वाधिष्ठान (लिंग-स्थान के समीप), मणिपूरक (नाभि-स्थान के समीप), अनाहत (हृदय-स्थान के समीप), विशुद्ध (कंठस्थान के समीप), आज्ञा (दोनों भौहों के बीच)।

प्रत्येक चक्र की सिद्धि योगी की दिव्य अनुभूति में सहायक होती है।

षट्दर्शन—न्याय, सांख्य, वैशेषिक, योग, वेदांत और मीमांसा।

षट्ऋतुवर्णन—वंसत आदि छः ऋतुओं का वर्णन। हिंदी-कवियों ने अनेक *ऋतुवर्णन* लिखे हैं।

षोडश शृंगार—सोलह शृंगार। ये इस प्रकार हैं—अंग में उबटन लगाना, स्नान करना, स्वच्छ वस्त्र धारण करना, बाल सँवारना, काजल लगाना, भाल पर तिलक लगाना, सेंदुर से माँग भरना, महावर देना, माथे पर बिंदी लगाना, चिबुक पर काला तिल लगाना, मेहँदी लगाना, अरगजा आदि सुगंधित द्रव्य लगाना, आभूषण पहनना, पुष्पहार धारण करना, पान खाना और मिस्सी लगाना।

स

संकर—एक मिश्रालंकार जिसमें अनेक अलंकार एक ही स्थान पर संबंध-सहित रहते हैं, जो नीर-क्षीरवत् मिले हुए होते हैं। मम्मटादि आचार्यों ने इसके तीन भेद माने हैं—

१ *अंगी-अंग-भाव संकर*—में एक अलंकार मुख्य होता है, और अन्य उसके अंग। उ०—हौं रीझी, लखि रीझिहौ छबिहि छबीले लाल, / सोनजुही-सी होति दुति मिलत मालती-माल। —*बिहारी*। यहाँ मुख्य अलंकार **तद्गुण** है, जो अंगी है। उसका समर्थन करने से उपमा अंग है। आभा सोनजुही (पीला फूल) के समान होती है। इस कथन में धर्मलुप्तोपमा है। मालती (श्वेत पुष्प) की आभा उसके शरीर की सुनहली शोभा से मिल जाने से सोनजुही-सी पीली हो गई, जिससे तद्गुण अलंकार प्राप्त हुआ। सोनजुही के रंग की समानता प्रकट करने से उपमा तद्गुण का पोषण करती है, जिससे वह अंगी तद्गुण का अंग मानी गई है।

२ *संदेह संकर*—में अमुक अलंकार है या अमुक, ऐसा संदेह बना ही रहता है। उ०—फिर-फिर चित उत ही रहत, छुटी लाज की लाव; / अंग-अंग छवि-भौर में भयो भौर की नाव। —*बिहारी*। यदि यहाँ सखी-वचन सखी से मानिये, तो मुख्य अलंकार रूपक होता है, और यदि वही वचन नायक से मानें, तो **पर्यायोक्ति** द्वितीय बैठती है। सखी-वचन किस से है, इसके निर्णय का कोई साधन दोहे में नहीं है।

३ *एकवाचानुप्रवेश संकर*—में एक ही पद से कई अलंकार निकलते हैं। उ०—हे हरि, दीन-दयाल, हौं यह माँगौं सिर नाय; / तुव पद-पंकज आसरै मन-मधुकर लगि जाय। यहाँ पद-पंकज इस एक ही शब्द में रूपक तथा **छेकानुप्रास** दोनों अलंकार निकलते हैं।

संकलन-त्रय—यूरोपीय नाट्य-शास्त्र में निर्दिष्ट कार्य संकलन, काल और स्थान की एकता। कार्य संकलन की एकता का अर्थ है कि अनावश्यक दृश्य या चरित्र न रखे जाएँ और सब घटनाएँ एक केंद्र से संघटित रहें। काल-एकता का अर्थ है कि अभिनय में वस्तुतः लगने वाला समय २४ घंटे के निकटतम हो। स्थान-एकता का अर्थ है कि अभिनय एक नगर या ऐसे स्थान में हो, जहाँ कार्यवश सभी आवश्यक पात्र आ सकें। आधुनिक हिंदी नाटकों में इनके पालन करने की ओर भी प्रवृत्ति हो चली है।

संचारी-भाव—वे भाव जो स्थायी-भाव के साथ-साथ रहें। ये भाव लहर की भाँति उठते हैं और विलीन हो जाते हैं। रस के स्थायी-भाव के साथ कई संचारी आ सकते हैं और एक ही संचारी कई रसों में पाया जा सकता है। इसलिये इसको व्यभिचारीभाव भी कहते हैं, क्योंकि इसका संचार विविध स्थानों में होता है। ये भावगण स्थायी-भावों के अनुकूल तथा विरोधी भी होते हैं। ये ३३ हैं—*निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, उग्रता, मोह, विबोध, स्वप्न, अपस्मार, गर्व, मरण, अलसता, अमर्ष, निद्रा, अवहित्था, उत्सुकता, उन्माद, शंका, स्मृति, मति, व्याधि, संत्रास, लज्जा, हर्ष, असूया, विषाद, धृति, चपलता, ग्लानि, चिंता और वितर्क।*

संजय—धृतराष्ट्र के मंत्री। इन्हें व्यास से दिव्य दृष्टि प्राप्त थी, जिससे ये हस्तिनापुर में बैठे-बैठे महाभारत-युद्ध की कुरुक्षेत्र में होने वाली घटनाएँ देखते रहते थे और उन्हें नेत्र-विहीन धृतराष्ट्र को सुनाते थे। ये कृष्ण के यथार्थ रूप को पहचानते थे। ये बड़े सत्यवादी, बुद्धिमान और निर्भीक थे। दे० *विदुला*।

संजीवनी—एक औषधि। कहा जाता है कि इसके सेवन से मृत मनुष्य भी जीवित हो उठता है। दे० *द्रोणाचल*।

संज्ञा—सूर्य की पत्नी, यमुना और यम की माता। सूर्य के प्रचंड तेज को न सह सकने के कारण ये अश्विनी का रूप धारण कर तपस्या करने लगीं और अपनी छाया को सूर्य के पास छोड़ गईं। सूर्य को छाया से तपती (सावीर्ण) और शनि नामक दो संतानें प्राप्त हुईं। जब सूर्य को वास्तविक स्थिति का ज्ञान हुआ, तब वे अश्व-रूप धारण कर संज्ञा के पास गये और **अश्विनीकुमारों** को उत्पन्न किया (*मत्स्य० ११, विष्णु० ३.५*)। कहीं-कहीं संज्ञा का नाम प्रभा भी मिलता है।

संत साहित्य—संत-कवियों (**कबीर, नानक, दादूदयाल, नामदेव, धर्मदास, सुंदरदास, रविदास, मलूकदास, अक्षर अनन्य आदि**) द्वारा रचित साहित्य।

हज़ारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार कबीर आदि संतों की वाणियों की बाह्य रूपरेखा संपूर्णतया भारतीय है और बौद्ध धर्म के अंतिम सिद्धों (वज्रयान-सिद्धों) और नाथपंथी योगियों के पद आदि से उसका सीधा संबंध है। सर्वत्र वे ही भाव, भाषा, अलंकार-छंद तथा पारिभाषिक शब्द कबीर के मार्गदर्शक हैं। कबीर की ही भाँति ये साधक नाना मतों का खंडन करते थे, सहज और शून्य में समाधि लगाने को कहते थे और गुरु-भक्ति करने का उपदेश देते थे। फिर भी संत-काव्य पर मुसलमानी प्रभाव यथेष्ट पाया जाता है। मूर्त्ति-पूजा की अवहेलना और जाति-बंधन का बहिष्कार संतमत ने जिस बड़ी उग्रता से किया, वह पहिले कभी नहीं हुआ था। यह देन अंशतः इस्लाम की है। हिंदू तथा इस्लाम धर्म में सामंजस्य स्थापना के हेतु संत परंपरा में निराकार और अमूर्त्त ईश्वर का आश्रय लिया गया, किंतु ईश्वर का यह रूप बहुत अस्पष्ट और दुरूह है। एक ओर तो प्रेम और भक्ति इतनी तेज़ी से उमड़ रही है कि किसी के चरणों में अपना सर्वस्व न्योछावर करने की भावना जाग उठी है, और दूसरी ओर अदृश्य, अगम्य, निराकार का रूप है। निराकार ईश्वर के सहारे उत्कट प्रेम और भक्ति की धारा नहीं बहाई जा सकती।

संत-काव्य में जिन सिद्धांतों की चर्चा हुई है, वे वहाँ अनेक बार दोहराए गये हैं। वे

सिद्धांत इस प्रकार हैं—१ ईश्वर एक है। वह निराकार और निर्गुण है। २ मूर्ति-पूजा व्यर्थ है। उससे ईश्वर की व्यापकता सीमित हो जाती है। ३ रूढ़िवाद और मिथ्या आडंबर हेय हैं। ४ गुरु का महत्त्व ईश्वर से भी अधिक है। ५ जाति-भेद का कोई बंधन नहीं है। ईश्वर की भक्ति में सभी समान हैं। ६ संत लोग साधारण धर्म को तो मानते थे, किंतु सांप्रदायिकता या वर्णाश्रम धर्म के पक्ष में न थे। वे वैयक्तिक साधना पर अधिक बल देते थे।

संतों की भाषा बहुत अपरिष्कृत है। उसमें पूर्वी हिंदी, राजस्थानी और पंजाबी का प्रयोग है। भावों का प्रकाशन मुख्य है और भाषा गौण। शांत और शृंगार (वियोग) रस प्रधान हैं। पदों और दोहों का प्राधान्य है, जिनके विशिष्ट नाम 'शब्द' और 'साखी' हैं। विशेष दे० परशुराम चतुर्वेदी-कृत *संत काव्य*, *उत्तरी भारत की संत परंपरा* व *हिंदी संत काव्य*, भुवनेश्वर मिश्र-कृत *संत साहित्य*, त्रिलोकीनाथ दीक्षित-कृत *संत दर्शन*।

संदीपन—दे० *सांदीपन*।

संदेह—एक अर्थालंकार जिसमें कोई वस्तु देखकर भी उसके ठीक या सत्य होने की शंका का उल्लेख होता हो। उ०—सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है। / सारी ही कि नारी है कि नारी ही कि सारी है।

संधि—अवस्थाओं (दे० यथा०) और अर्थ-प्रकृतियों (दे० यथा०) का मेल कराने वाली संधियाँ। ये संधियाँ एक-एक अवस्था की समाप्ति तक चलती हैं और उनके अनुकूल अर्थप्रकृतियों से योग कराती हैं। ये पाँच हैं—*मुख*, *प्रतिमुख*, *गर्भ*, *विमर्श* (अवमर्श) और *निर्वहण* (उपसंहार)। **प्रारंभ** नाम की अवस्था के साथ योग होने से जहाँ अनेक रसों और अर्थों के द्योतक बीज की उत्पत्ति होती है, वहाँ मुख-संधि होती है। प्रतिमुख-संधि में बीज अंकुरित होता हुआ दिखाई देता है। यह घटनाक्रम को आगे चलाती है। गर्भ-संधि में अंकुरित बीज का विस्तार और भी अधिक दिखाई पड़ता है। इसमें **प्राप्त्याशा** और **पताका** का योग रहता है। विमर्श-संधि में **नियताप्ति** और **प्रकरी** का योग रहता है और नई बाधा उपस्थित होती है। निर्वहण-संधि में **कार्य** और **फलागम** का योग होकर नाटक पूर्णता को प्राप्त होता है।

संध्या भाषा—रामकुमार वर्मा ने *हिंदी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास* में संध्या भाषा के विभिन्न अर्थों पर विचार करते हुए इस भाषा को अपभ्रंश की अंतिम अवस्था माना है। दे० *सिद्ध साहित्य*।

संपाति—कश्यप और विनता का पुत्र तथा जटायु का अग्रज। वानर जब सीता की खोज में गये थे, तब यह विंध्य पर्वत पर पड़ा मिला था। इसने सीता का पता दिया था (*वा० रा० कि० ५६-६३*)।

संबंधातिशयोक्ति—दे० *अतिशयोक्ति*।

संबोध—एक अंग्रेज़ी अलंकार, जिसमें किसी व्यक्ति या मानवीकृत विचार को संबोधित किया जाता है। आधुनिक हिंदी-कविता में इसका बहुत प्रचलन है। यथा—ओ चिंता की पहली रेखा, / अरी विश्व वन की व्याली। —*प्रसाद*।

संबोधन-गीत—किसी वस्तु-विशेष को संबोधित कर कवि द्वारा दिया गया अपने भावों और

विचारों का कवित्वमय और संगीतपूर्ण उद्गार। हिंदी में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की 'यमुना के प्रति' आदि गीतियाँ प्रमुख हैं।

संभावना—एक अर्थालंकार जिसमें कुछ सिद्ध के लिये कुछ संभावना हो। उ०—जो तुम अवत्यौ मुनि की नाईं। / पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं।। यहाँ यदि परशुराम मुनि के रूप में आए होते, तो लक्ष्मण उनका पदरज सिर पर धारण कर लेते।

संभोग—श्रृंगार (दे० यथा०) के दो भाग में से एक। इसे संयोग भी कहते हैं।

संयोग—संभोग का दूसरा नाम। दे० *श्रृंगार*।

संवरण—दे० *तपती*।

संवेदनावाद—शब्दों की नाद-शक्ति के सहारे कविता और संगीत को पास लाने वाली शैली। यथा—कंकण किंकिणि नूपुर ध्वनि सुनि—*तुलसी*, और धड़ धद्धरं धड़धद्धरं भड़भब्भरं भड़भब्भरं—*सूदन*।

संसृष्टि—एक मिश्रालंकार जिसमें एक ही स्थान पर **तिलतंदुल न्याय** से परस्पर निरपेक्ष मिश्रण होता हो। इसके तीन भेद हैं—

१ *शब्दालंकार संसृष्टि*—मार सुमार करी खरी डरी-डरी अकुलाय; / हरि, हरिए बलि बिरह चलि मुख-सुखमा दरसाय। —*बैरीसाल*। यहाँ मार, (सु) मार, डरी-डरी, हरि हरि में यमकानुप्रास है।

२ *अर्थालंकार-संसृष्टि*—वाके नामहिं के सुने होति सौति-दुति मंद; / चख-चकोर कीजै सखी, लखि राधा-मुख-चंद। यहाँ पहिले चरण में **चपलातिशयोक्ति** तथा दूसरे में **रूपक** है। दोनों एक ही छंद में होकर भी पृथक हैं।

३ *शब्दार्थालंकार-संसृष्टि*—लग्यो सुमन, ह्वै है सुफल, आतप रोस निवारि; / बारी, बारी आपनी सींचि सुहृदयता-बारि। —*बिहारी*। यहाँ बारी (नवयौवना तथा खेत) बारी में भिन्न-भिन्न अर्थ होने से यमकानुप्रास है। सुमन (अच्छा मन, फूल) शब्द श्लिष्ट होने से छंद में श्लेषालंकार है। यही दशा सुफल (सुंदर फल, सफलता) की है। आतप रोस तथा सुहृदयता बारि में समताभेदरूपक होने से छंद में शब्दार्थलिंकार-संसृष्टि है।

संस्कृत—"वैदिक भाषा व्याकरण के नियमों से पूर्णतया जकड़ी हुई न थी। उसमें एक शब्द के कई रूप थे, जिससे प्रतीत होता है कि उसका तात्कालिक बोल-चाल की भाषा से विशेष संपर्क था। जब शिष्ट लोगों के व्यवहार की भाषा अलग होकर नियमबद्ध हो गई, तब वह संस्कृत अर्थात् संस्कार की हुई या संशोधन की हुई कहलाई। उसमें एकरूपता आ गई और वह सारे देश की भाषा बन गई, किंतु उसके साथ-साथ उसका विकास भी बंद हो गया।" भाषा को एकरूपता देने तथा व्याकरण के ढाँचे में बाँधने वालों में पाणिनी (६०० ई० पू०) का नाम उल्लेखनीय है।

संस्मरण—आत्म-कथा के रूप में लिखे गये स्मृति-लेख। हिंदी में **बनारसीदास चतुर्वेदी** (*संस्मरण, रेखा चित्र*), पद्मसिंह शर्मा कमलेश (*उनसे मैं मिला*), **महादेवी वर्मा** (*अतीत के चल-चित्र*) आदि के संस्मरण उल्लेखनीय हैं।

सखी—चौदह सखी म वा य अंता (१४ मा० छंद, अंत म वा य)। उ०—कुल भुवन सखी रचि माया, चह माया पतिहिं लुभाया।

सगण—दे० *गण*।

सगर—एक सूर्यवंशी राजा, जिनकी पत्नी

सुमति से इन्हें साठ हज़ार पुत्र प्राप्त हुए। एक बार इन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया। स्वर्ग-राज्य छिन जाने के भय से इंद्र ने इनका घोड़ा पकड़ कर कपिल के आश्रम में बाँध दिया। घोड़े को कपिल-आश्रम में देखकर सगर-पुत्रों ने कपिल को अपराधी कहा। कपिल ने क्रुद्ध होकर सगर-पुत्रों को भस्म कर दिया। दे० *असमंजस, अंशुमान्, गंगा, भगीरथ*।

सगुण—१ सत्व, रज और तम तीनों गुणों से युक्त साकार ब्रह्म का रूप। २ वह संप्रदाय जिसमें परमेश्वर को सगुण मानकर उसके अवतारों की पूजा होती है। मध्यकाल से उत्तरीय भारत में भक्ति मार्ग के दो भिन्न संप्रदाय हो गये थे। एक ईश्वर के निर्गुण निराकार रूप का ध्यान करता हुआ मोक्ष की प्राप्ति की आशा करता था; और दूसरा ईश्वर का सगुण रूप राम, कृष्ण आदि अवतारों में मानकर उनकी पूजा कर मोक्ष की इच्छा रखता था। पहिले मत के कबीर, नानक आदि मुख्य प्रचारक थे और दूसरे के तुलसी, सूर आदि।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'—दे० *अज्ञेय*।

सतनामी पंथ—दे० *वीरभान*।

सतसई—वह ग्रंथ जिसमें सात सौ पद्य हों। हिंदी-साहित्य में इस शब्द से प्रायः सात सौ दोहे ही समझे जाते है। यथा—*बिहारी सतसई*।

सती—दक्ष प्रजापति और प्रसूति की पुत्री (पद्म० सृ० २६), और शिव की पत्नी (स्कंद० ६.७७)। एक बार दक्ष ने यज्ञ किया, पर उसमें सती और शिव को निमंत्रित नहीं किया। फिर भी पिता का घर समझ कर सती चली आईं, किंतु दक्ष ने इनका अपमान किया। इसपर ये यज्ञ-कुंड में कूद पड़ीं। दे० *वीरभद्र*। सती के शव को लिये-लिये शिव संपूर्ण भारत-वर्ष में घूमें और जहाँ-जहाँ सती के अंग व आभूषण गिरे, वे पीठ कहलाए। इस प्रकार ५२ पीठ हैं। अगले जन्म में ये पार्वती बनीं (*वायु० १.३०, कालि० १८, शिव० रुद्र० स० २५*)।

सत्यकाम जाबाल—एक मुनि जिनकी माता का नाम जबाला था। गुरुकुल में प्रविष्ट होते समय इन्होंने अपने गुरु से स्पष्ट कह दिया था कि मेरी माता कहती है कि उसे मेरे पिता के कुल व गोत्र का पता नहीं। इनके इस सत्य भाषण से प्रसन्न होकर, गुरु ने इन्हें अपना शिष्य बना लिया था (छां० उ० ४.४-६)।

सत्यनारायण कविरत्न—(१८८४-१९१८ ई०)—आगरा निवासी एक कवि। *भ्रमरदूत* (अपूर्ण काव्य), मेकाले-कृत *होरेशस* (खंड-काव्य), **भवभूति**-कृत *उत्तररामचरित* और *मालती माधव* नाटकों के अनुवादक। *रामतीर्थ, तिलक, गोखले* आदि की प्रशस्तियों के रचयिता। *हृदय तरंग* में इनकी कविताएँ संगृहीत हैं।

इनकी भाषा में इतना माधुर्य है कि लोग इनको 'ब्रज-कोकिल' भी कहते हैं। इन्होंने प्रेम और शृंगार की कविता की है, किंतु **रसखान** और **भारतेंदु** के समान बड़े मर्यादित रूप में। इनका **प्रकृति-वर्णन** निजी निरीक्षण से उत्पन्न हृदयोल्लास का फल है। इन्होंने ब्रज-भाषा की कविता में भी राष्ट्रिय भावनाओं का समावेश किया है। *भ्रमरदूत* में देश की दयनीय दशा का बड़ा सुंदर चित्रण है। इनकी कुछ कविताओं में वैयक्तिक जीवन की करुणा और राजनीतिक व्यंग्य भी रहता है। इनके अनुवादों में मौलिकता का आभास होता है।

सत्यभामा—सत्राजित् (दे० यथा०) की पुत्री और कृष्ण की एक रानी (*भा० १०.५६*)। कृष्ण के नरकासुर से युद्ध के समय ये उनके साथ थीं। इन्हीं के लिये इंद्र से युद्ध करके कृष्ण स्वर्ग से **पारिजात** लाए थे (*१०.५९, ह० वं० २.६४-७१*)।

सत्ययुग—चार युगों में से प्रथम, जो १७२८००० वर्ष का माना गया है। राजा हरिश्चंद्र इसी युग में वर्त्तमान थे।

सत्यवती—(मत्स्यगंधा)—एक धीवर कन्या। कुमारावस्था में इसने पराशर ऋषि के संबंध से **व्यास** को जन्म दिया था (*म० आ० ६३*)। राजा शांतनु से विवाह होने पर इसके चित्रांगद और **विचित्रवीर्य** दो पुत्र उत्पन्न हुए। दे० *भीष्म*।

सत्यवान्—शाल्व-नरेश द्युमत्सेन के पुत्र, जिन्हें इनकी पत्नी सावित्री (दे० यथा०) ने अपने पातिव्रत्य के बल से पुनर्जीवित करवा दिया था।

सत्येंद्र (१९०७ ई०-)—**आधुनिक नाटककार** और लेखक। *मुक्तियज्ञ* (महाराज छत्रसाल के संबंध में एक वीर-रसात्मक नाटक), *कुणाल*, *विक्रम का आत्ममेध*, *प्रायश्चित्त* (नाटक) आदि के रचयिता। इनके नाटक अभिनेय होते हुए भी साहित्यिक हैं।

सत्राजित्—एक यादव जिसने सूर्य की तपस्या से स्यमंतक मणि प्राप्त की थी। मणि के खो जाने पर इसने कृष्ण पर चोरी का आरोप लगाया। जब कृष्ण ने मणि ढूँढ़ कर ला दी, तब यह लज्जित हुआ और इसने अपनी पुत्री **सत्यभामा** का विवाह कृष्ण से कर दिया (*भा० १०.५६*)।

सदन (आ० का० १३५० ई०)—सेहवान (सिंध) निवासी एक संत, जो जाति से कसाई थे। ये **शालग्राम** की पत्थर की मूर्त्ति को पूजते थे और उसी से मांस तोल कर बेचते थे। इनकी कविता थोड़ी होते हुए भी भक्ति का महत्त्व रखती है।

सदल मिश्र (१७६४-१८४९ ई०)—बिहार निवासी। फोर्ट विलियम कॉलिज, कलकत्ता के शिक्षक और *नासिकेतोपाख्यान* (हिंदी-गद्य में) के रचयिता। इस ग्रंथ का हिंदी-गद्य-इतिहास में विशेष स्थान है। इन्होंने भाषा को व्यवहारोपयोगी बनाया है। इनकी भाषा में खड़ी बोली का रूप अधिक दिखाई देता है, पर वह कुछ बिहारीपन लिये हुए है। खड़ी बोली-गद्य के चार प्रमुख प्रतिष्ठापकों में से ये एक हैं।

सदासुखलाल (१७४६-१८२४ ई०)—दिल्ली निवासी, ईस्ट इंडिया कंपनी के एक उच्च अधिकारी। ये उर्दू और फ़ारसी के कवि भी थे। ६५ वर्ष की अवस्था में नौकरी छोड़कर ये तीर्थवास करने प्रयाग चले गये। इन्होंने सुबोध भाषा में *श्रीमद्भागवत* का उल्था किया जो *सुखसागर* के नाम से प्रसिद्ध है। पूर्वी प्रांत में रहने वाले हिंदुओं की बोलचाल की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों का पुट देकर इन्होंने उसे साहित्यिक रूप दिया। भाषा में कुछ पंडिताऊपन है। खड़ी बोली-गद्य के चार प्रधान प्रतिष्ठापकों में ये प्रमुख है।

सदैवछ सावलिंगा रा दूहा—किसी अज्ञात लेखक का एक डिंगल-काव्य (लि० का० १६५३ ई०), जिसमें मूंगीपटण-राजकुमार सदैवछ और राज्य के मंत्री की पुत्री सावलिंगा की प्रेम-कथा है।

सनंदन—दे० *सनकादि*।

सनक—दे० *सनकादि*।

सनकादि—सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार और सनत्सुजात, जो ब्रह्मा के मानसपुत्र थे (*भा०३.१२.४, ४.८.१*)। कहीं-कहीं सनत्कुमार और सनत्सुजात को एक पुत्र मानकर चार पुत्र ही कहे गये हैं। ये विष्णु (दे० यथा०) के अवतार माने जाते हैं (*१.३*) इन्होंने पृथु, धृतराष्ट्र, शुकदेव और भीष्म को अध्यात्म विद्या का उपदेश दिया था। विष्णु के **जय, विजय** नामक द्वारपालों द्वारा इन्हें विष्णु के पास जाने से रोकने पर, इन्होंने उन्हें राक्षस बनने का शाप दिया था। एक बार हंस (परमात्मा) ने इन्हें पराविद्या का सारतत्त्व समझा कर इनका ज्ञानगर्व दूर किया था।

सनत्कुमार—दे० *सनकादि*।

सनातन—दे० *सनकादि*।

सप्तद्वीप—पुराणानुसार सात द्वीप, जो इस प्रकार हैं—जंबु, कुश, प्लक्ष अथवा गोमेद, शाल्मलि, क्रौंच, शाक, पुष्कर।

सप्तपुरी—सात पुरी, जो इस प्रकार हैं—अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, काँची, अवंती और द्वारिका।

सप्तर्षि—सात ऋषियों का मंडल। *श० ब्रा०* के अनुसार गौतम, भरद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप और अत्रि, *महाभारत* के अनुसार मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलह, क्रतु, पुलस्त्य और वसिष्ठ ये सप्तर्षि माने जाते हैं।

सप्तसागर—पुराणानुसार सात सागर जो इस प्रकार हैं—लवण, क्षीर, सुरा, घृत, इक्षु, दधि, स्वादु।

सप्तसिंधु—पंजाब। आर्य लोग पहिले-पहिले यहीं आकर बसे थे। कुछ लोगों का अनुमान है कि सप्तसिंधु में रहने के कारण आर्य लोग बाद में 'हफ़्त हेंदु' अर्थात् हिंदू कहलाए। सप्त-सिंधु (नदी) ये हैं—इरावती, चंद्रभागा, वितस्ता, विपाशा, शतद्रु, सिंधु और सरस्वती अथवा काबुल।

सबलसिंह चौहान—(र० का० १६५५-१७२४ ई०)—एक कवि। *रूपविलास* तथा *छंदशास्त्र* के रचयिता, *महाभारत* और कालिदास कृत *ऋतुसंहार* के अनुवादक इनकी भाषा बहुत सरल और सुबोध है।

सम—एक अर्थालंकार जिसमें अनुरूपता के कारण योग्य वस्तु की प्रशंसा होती हो। उ०—लो यह गंगा अनुरूप जलनिधि में मिल गई। इसके तीन भेद हैं—

१ *प्रथम सम*—में संबंधियों के योग्य संबंध का वर्णन हो। उ०—चिर जीवो जोरी, जुरै क्यों न सनेह गंभीर; / को घटिये वृषभानुजा, ये हलधर के वीर।

२ *द्वितीय सम*—में कारण के साथ कार्य का अनुकूल वर्णन हो। उ०—मधुप ! बालपन ही पियो, दूध पूतना केर। / ताही ते दासी रुची, यामें कछु न फेर॥

३ *तृतीय सम*—में जिसके लिये उद्यम किया जाए, वह बिना बाधा के सिद्ध हो। उ०—राधा पूजी गौरजा, भर मोतीडाँ थाल। / मथुरा पायौ सासरो, बर पायौ गोपाल॥

सममात्रा छंद—चारों पादों में समान मात्राओं वाले छंद। एक मात्रा से लेकर ३२ मात्राओं

तक इन छंदों की ३२ जातियाँ हो जाती हैं। दे० दंडक।

समवकार—रूपक का एक प्रधान भेद। इसमें तीन अंक, बारह तक नायक (जिनको फल अलग-अलग मिलता है), देव और दानवों की कथा तथा वीर रस प्रधान होता है।

समवृत्त—चारों पादों में समान वर्ण संख्या, समान गुरु लघु क्रम और समान गणों वाले वर्णिक छंद। एक अक्षर से लेकर २६ अक्षर तक इन वृत्तों की २६ जातियाँ हो जाती हैं। दे० दंडक।

समालोचना—साहित्य के गुण-दोषों की संक्षिप्त विवेचना पहिले कुछ आलोचनात्मक सूक्तियों ('सूर सूर तुलसी ससी, उडुगन केशवदास', 'नंददास जड़िया और कवि गड़िया') से हुआ करती थी। धीरे-धीरे इसका विकास हुआ। किसी की आलोचना करने का अर्थ दोष निकालना या टिप्पणी करना-सा हो गया है, पर समालोचना केवल दोष निकालना नहीं है। योग्य समालोचक गुण भी कम नहीं परखता। गुलाबराय के अनुसार समालोचना के भेद इस प्रकार हैं—१ निर्णयात्मक (*judicial*) समालोचना—यह साहित्य-शास्त्र के नियमों के आधार पर पुस्तक के गुण-दोष निरूपण कर उसे अच्छा या बुरा ठहराती है। महावीर-प्रसाद द्विवेदी और मिश्रबंधुओं की आलोचनाएँ अधिकांश में इसी प्रकार की हैं। २ व्याख्यात्मक (*Inductive*) समालोचना—इसमें आलोचक सहृदयतापूर्वक कवि की अंतरात्मा में प्रवेश कर उसके आदर्शों के अनुकूल उसकी व्याख्या करता है। उसका कार्य पाठक और लेखक के बीच एक दुभाषिये का है। प्राचीन टीकाएँ इसी प्रकार की आलोचनाएँ होती थीं। रामचंद्र शुक्ल-कृत तुलसीदास, सूरदास और जायसी की आलोचनाएँ इसी श्रेणी में आती हैं। ३ ऐतिहासिक (*Historical*) समालोचना—इसमें लेखक का मूल स्रोत ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि परिस्थितियों में खोजा जाता है। ४ मनोवैज्ञानिक (*Psychological*) आलोचना—इसमें मनोविश्लेषण के सहारे लेखक के मन की भीतरी तहों तक पहुँचने का प्रयत्न किया जाता है। नगेंद्र, अज्ञेय आदि की आलोचनाओं में यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। तुलनात्मक (*Comparative*) समालोचना—इसमें 'एक ही प्रकार के दो कवियों की व्यापक रूप से तुलना कर दोनों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला जाता है, अथवा दो विभिन्न कवियों की एक ही विषय की कविताओं की तुलना कर उनका मूल्यांकन किया जाता है। कभी-कभी एक कवि की विभिन्न कृतियों की तुलना की जाती है।' ५ प्रभावात्मक (*Impressionistic*) आलोचना—इसमें आलोचक अपने ही ऊपर पड़े हुए प्रभावों को महत्त्व देता है। वह शास्त्र का आधार नहीं लेता है, वरन् अपनी रुचि को मुख्यता देता है। अब मार्क्सवादी आलोचना का प्रचार हो रहा है। प्रगतिवादी आलोचक कला की अपेक्षा किसान, मज़दूरों, दलितों और शोषितों की भौतिक आवश्यकताओं को मुख्यता देते हैं। वे वर्गहीन समाज की स्थापना करना चाहते हैं। इस कोटि के आलोचकों में राहुल सांकृत्यायन, शिवदान-सिंह चौहान, रामविलास शर्मा, प्रकाशचंद्र गुप्त, भगवतशरण उपाध्याय आदि हैं।

हिंदी में आधुनिक समालोचना का सूत्रपात हरिश्चंद्र-युग में हुआ है (दे० *बदरीनारायण चौधरी* 'प्रेमघन,')। हरिश्चंद्र-युग के पश्चात् कुछ समालोचनाएँ पुस्तक-रूप में लिखी गई हैं। महावीरप्रसाद द्विवेदी ने

कालिदास की निरंकुशता में कालिदास के ग्रंथों की निर्णयात्मक रीति से समालोचना लिखी और *विक्रमांकदेव चरित चर्चा* और *नैषध चरित चर्चा* में परिचयात्मक समालोचना के उदाहरण उपस्थित किये। मिश्रबंधुओं ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ *हिंदी नवरत्न* में हिंदी के नवरत्नों का मूल्य निर्धारित करने का प्रयत्न किया। उन्होंने बिहारी का देव से नीचा स्थान देकर एक विवाद खड़ा कर दिया। पद्मसिंह शर्मा ने *बिहारी सतसई की भूमिका* नामक ग्रंथ में बिहारी का पक्ष लिया। कृष्णबिहारी मिश्र ने *देव और बिहारी* नामक ग्रंथ में देव का पक्ष लिया। भगवानदीन ने बिहारी का पक्ष प्रबल करने के लिये *बिहारी और देव* नामक पुस्तक लिखी। आजकल समालोचना-साहित्य में खूब वृद्धि हो रही है। कवियों और लेखकों पर आलोचनात्मक ग्रंथ निकल रहे हैं (प्रस्तुत ग्रंथ में कवियों और लेखकों के शीर्षकों के पीछे उनपर लिखे गये आलोचनात्मक साहित्य का निर्देश कर दिया गया है)। आलोचना के सिद्धांतों पर भी अनेक ग्रंथ निकल चुके हैं। इनमें श्यामसुंदरदास-कृत *साहित्यालोचन*, रामचंद्र शुक्ल-कृत *चिंतामणि* (भाग २), गुलाबराय-कृत *सिद्धांत और अध्ययन* तथा *काव्य के रूप*, नलिनीमोहन सान्याल-कृत *समालोचना तत्त्व*, सुधांशु-कृत *काव्य में अभिव्यंजनावाद*, इलाचंद्र जोशी-कृत *साहित्य सर्जना*, पुरुषोत्तमलाल श्रीवास्तव-कृत *आदर्श और यथार्थ*, शिवदानसिंह चौहान-कृत *प्रगतिवाद* आदि उल्लेखनीय हैं। प्राचीन ढंग की रस और अलंकार पुस्तकों के अतिरिक्त संस्कृत के काव्य शास्त्र संबंधी ग्रंथों के अनुवाद भी निकल चुके हैं।

समासोक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें कार्य, लिंग या विशेषणों की समानता के कारण किसी प्रस्तुत वर्णन से अप्रस्तुत का ज्ञान होता हो। यह दो प्रकार से होता है।

१ *कार्य साम्येन*—उ०—तच्यों आँच अति विरह की, रह्यो प्रेम रस भीजि। / नैननि के मग जल बहै, हियौ पसीजि पसीजि॥ —*बिहारी*। यहाँ प्रस्तुत विरह-वर्णन तथा अश्रुमोचन वर्णन से बलात् अर्थ निकालने की प्रतीति होती है।

२ *लिंग साम्येन*—उ०—नहिं पराग, नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल; / अली कली ही सों विंध्यो, आगे कौन हवाल॥ —*बिहारी*। यहाँ अलि और कली पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग वाची होने से नायक-नायिका वृत्तांत निकला।

समुच्चय—एक अर्थालंकार जिसमें कई भावों के साथ उदित होने अथवा कई कारणों से एक ही कार्य होने का वर्णन हो। इसके दो भेद हैं—

१ *प्रथम समुच्चय*—उ०—चकित चितव मुंदरी पहिचानी। हरष विषाद हृदय अकुलानी। यहाँ आश्चर्य, हर्ष, विषाद और व्याकुलता सब भाव एक ही साथ उदय हुए।

२ *द्वितीय समुच्चय*—में किसी कार्य के होने के लिये एक हेतु (पर्याप्त रूप से) वर्तमान है ही, पर साथ ही साथ अन्य हेतु भी उपस्थित कहे जाएँ। उ०—गंगा गीता गायत्री, गनपति गरुड़ गोपाल। / प्रातकाल जे नर भजें, ते न परें भव-जाल॥ यहाँ गंगा, गीतादि उपर्युक्त कारणों में से कोई एक कारण भवजाल से छुड़ाने के लिये पर्याप्त है, पर बहुतों का वर्णन किया गया है।

समुंदर— दे० *सरसी*।

समुद्रगुप्त—गुप्तवंशी भारत सम्राट् (३३५ ?-७५ ई०)।

समुद्रमंथन—अमृत की प्राप्ति के लिये देवताओं और असुरों ने समुद्र को मथा। नागराज वासुकि ने नेती का कार्य किया। मंदर पर्वत की मथानी बनाई गई, जिसे विष्णु ने कच्छप अवतार धारण कर अपनी पीठ पर रखा। मंथन से ये चौदह रत्न प्राप्त हुए—**हलाहल** विष, **धन्वंतरि**, **रंभा**, वारुणी (सुरा), **उच्चैःश्रवा**, कौस्तुभ मणि (यह विष्णु को मिली), **अमृत**, **ऐरावत**, **कल्पवृक्ष**, पारिजात, शंख, **कामधेनु**, **चंद्रमा** तथा **लक्ष्मी** *(विष्णु० १.६, वायु० २.३०, भा० ८.५-६, म० आ० १७, पद्म० उ० २६०, ह० वं० ३.३०)।*

सम्मन १ (जन्म १७७७ ई०)—मल्लावाँ (हरदोई) निवासी एक रीति-कवि। *पिंगल काव्य भूषण* (१८२२) के रचयिता। इनके नीति संबंधी दोहे गिरिधर की कुंडलियों की भाँति बहुत लोक-प्रिय हैं। २ एक भक्त कवि, जिसने साधुओं की सेवा के लिये अपने पुत्र को मार दिया था। साधुओं ने इसके पुत्र को फिर जीवित कर दिया था।

सम्मेलन-पत्रिका—**हिंदी साहित्य सम्मेलन**, प्रयाग की त्रैमासिक पत्रिका, जो सम्मेलन की स्थापना के समय (१६१० ई०) से प्रकाशित हो रही है। सम्मेलन का साहित्य-मंत्री इसका प्रधान संपादक होता है। वियोगी हरि, धीरेंद्र वर्मा आदि इसके संपादक रह चुके हैं।

सरदार (र० का० ल० १८४३ ई०)—काशी-नरेश के आश्रित एक रीति-कवि। *वाग्विलास*, *साहित्य-सरसी*, *तुलसी भूषण*, *शृंगार-संग्रह*, *राग रत्नाकर*, *साहित्य सुधाकर*, *रामलीला प्रकाश* तथा *मनोहर काव्य* के रचयिता। *बिहारी सतसई*, *सूर के दृष्टिकूट* तथा केशवदास की *रसिकप्रिया* और *कविप्रिया* पर भी इन्होंने टीकाएँ लिखी थीं। ये बहुत ही साहित्य-मर्मज्ञ कवि थे।

सरमा—कश्यप और क्रोधा की पुत्री। इसके पुत्र यमराज के अनुचर हैं *(ब्रह्मांड० ३.७.३१२)*।

सरयू—घाघरा नदी। अयोध्या नगरी इसी नदी के तीर पर बसी हुई है।

सरस—दो पाँच कल दो पाँच कल, क्रम से चतुर्दश—रच सरस (१४(७,७) मा० छंद)।

सरसी—सोरह ग्यारह यति ग ल अंता सरसी छंद प्रमाण (२७(१६,११) मा० छंद, अंत ग ल)। उ०—काम क्रोध मद लोभ मोह की, पंच रंगी कर दूर। / एक रंग तन मन वाणी में भर ले तू भरपूर॥ इसे कबीर और समुंदर भी कहते हैं।

सरस्वती—१ ब्रह्मा की पत्नी और विद्या तथा वाणी की अधिष्ठात्री देवी। ज्ञानशक्ति, सावित्री, गायत्री और वाक् इनके अन्य नाम हैं। इनका वाहन हंस है। इनके हाथ में वीणा रहती है। लक्ष्मी से इनका सदैव बैर रहता है। पर्याय०—शारदा, वीणापाणि, वाक आदि। २ एक प्राचीन नदी जो कुरुक्षेत्र के निकट है। ३ अफ़ग़ानिस्तान में हेलमंद नदी। ४ सिंधु नदी का प्राचीन नाम। ५ १८६६ ई० में बनारस से प्रकाशित हिंदी की साहित्यिक गति-विधि की सब से प्राचीन मासिक पत्रिका। प्रथम दो वर्ष तक इसके पाँच संपादक रहे। तीसरे वर्ष **श्यामसुंदरदास** ने इसका संपादन किया। बाद में **महावीरप्रसाद द्विवेदी** ने इसे अधिक लोक-प्रिय बनाया। इसके बाद इसके संपादकों में पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी उल्लेखनीय हैं। इस पत्रिका में कहानी-कविता आदि के अतिरिक्त प्रधानतः

सामयिक समस्याएँ और जानकारी बढ़ाने वाले लेख छपते हैं।

सरहपा (आ० का० ७६० ई०)—वज्रयान शाखा के प्रथम और प्रमुख कवि, जो नालंदा निवासी थे। इनके लिखे **अपभ्रंश** में ३२ ग्रंथ कहे जाते हैं, जिनमें *दोहा कोष* की विशेष प्रसिद्धि है। प्राचीन हिंदी के संबंध में **राहुल सांकृत्यायन** की खोज के आधार पर इन्हें हिंदी का प्रथम लेखक तथा आदि कवि कहा जा सकता है (दे० पुंड)। बौद्धों की परंपरा में होने के कारण इन्हें 'राहुल भद्र' और वज्रयानी होने के कारण 'सरोज वज्र' भी कहते हैं। दे० *सिद्ध साहित्य*।

सरोवर—सरोवर बारह माने जाते हैं जो इस प्रकार हैं—मंद, शैलोद, बिंदुसर, अच्छोद, लाहित, मानस, सायन, विष्णुपद, चंद्रप्रभा, पयोद, उत्तर-मानस और रुद्रकांता।

सर्वदमन—शकुंतला और दुष्यंत के पुत्र। इन का अन्य नाम **भरत** है।

सर्वसुख शरण (आ० का० १८०० ई०)—एक राम-भक्त कवि। *बारहमासा विनय* तथा *तत्त्वबोध* के रचयिता।

सर्वान्तेज (Cervantes) (१५४७-१६१६ ई०)—एक स्पेनिश उपन्यासकार और नाटककार। डॉन क्विकसॉट (*Don Quixote*) (उपन्यास, अनू० *विचित्र वीर*) आदि के रचयिता।

सवैया—२२ वर्णों से लेकर २६ वर्णों तक के समवृत्त छंदों का एक साधारण नाम। इसलिये हंसी, मंदारमाला, मदिरा, सुरेंद्रवज्रा, वागीश्वरी, मत्तगयंद, चकोर, शैलसुता, गंगोदक, दुर्मिल, मुक्तहरा, किरीट, वाम, अरसात, सुंदरी, कुंदलता आदि सभी इसी कोटि में आते हैं।

ससिनाथ—दे० *सोमनाथ*।

सहकार (आम)—एक वृक्ष। कवि-प्रसिद्धि है कि सुंदरियों के मुखश्वास से यह कुसुमित हो जाता है।

सहज पंथ—गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय का एक निम्न वर्ग। इसमें भजन, साधना के लिये पहिले एक नवयौवन-संपन्न सुंदर परकीया रमणी की आवश्यकता होती है।

सहज-मार्ग—वज्रयान-सिद्धों का एक सिद्धांत, जिसमें जीवन की स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर विश्वास किया जाता है।

सहजानंद (जन्म १७८० ई०)—अयोध्या निवासी एक संत और 'स्वामीनारायणी पंथ' के प्रवर्तक। इनके पंथ का साहित्य अधिकतर गुजराती भाषा में है।

सहजोबाई (आ० का० १७४३ ई०)—मेवात निवासिनी। संत **चरणदास** की शिष्या। इनकी कविता में प्रेम और गुरु-भक्ति की बड़ी सरस भावनाएँ हैं।

सहदेव—पांडु के क्षेत्रज तथा अश्विनीकुमार और **माद्री** के औरस पुत्र (*म० आ० १२४*)। ये गौ-पालन व कृषि विद्या के विशारद थे (दे० *अज्ञातवास*)।

सहस्रबाहु—दे० *कार्तवीर्य*।

सहस्रार्जुन—दे० *कार्तवीर्य*।

सहृदय—काव्य के नित्य अनुशीलन-अभ्यास या अध्ययन-चिंतन से जिनका मनोमुकुर नितांत विशद हो जाता है तथा जो वर्णनीय वस्तु के साथ तन्मय होने की योग्यता रखते हैं।

सहोक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें 'सह', 'संग', 'साथ' आदि शब्दों का व्यवहार होता हो तथा अनेक कार्य साथ ही होते दिखाए जाते हों। उ०—सज्जन जन के संग ते विमल होत है चित्त। विशेष—अनेक मनोरम बातों का रखना भी इसका लक्षण माना गया है तथा इसे **अतिशयोक्ति** पर आधारित कहा गया है। इसमें कहीं-कहीं **श्लेष** की भी पुट रहती है और कार्य-कारण के पौर्वापर्यविपर्य रूप की अतिशयोक्ति भी रहती है। इसमें अनौपम्य भाव का रहना अनिवार्य है, संग, साथ आदि केवल इसके वाचक पद हैं।

सांदीपन—एक प्रसिद्ध मुनि, जिन्होंने कृष्ण बलराम को वेद, उपनिषद्, धनुर्वेद, राजनीति आदि की शिक्षा दी थी। इनके पुत्र का देहांत हो गया था। कृष्ण इनके मृत पुत्र को यमराज से ले आए थे (*भा० १०.४५*)।

सांब—कृष्ण और जांबवती का एक पुत्र (*भा० १०.६१.११*)। इसने दुर्योधन-पुत्री लक्ष्मणा का हरण किया था। बाद में इसका उससे विवाह हो गया (*भा० १०.६८*)। एक बार इसने गर्भवती स्त्री का वेष धारण करके ऋषियों से पूछा कि मेरे गर्भ से पुत्र होगा कि पुत्री। कुपित हो दुर्वासा ने शाप दिया कि तुम्हारे लोहे का मूसल उत्पन्न होगा, जिससे समस्त यदुकुल नष्ट हो जाएगा। राजा उग्रसेन ने उस मूसल को पीस कर समुद्र में डाल दिया, जिससे समुद्र के किनारे 'एरका' नामक घास उत्पन्न हो गई। यही घास फिर मूसल बन गई, जिससे यादव एक दूसरे को मारकर मर गये। मूसल पीसते समय एक टुकड़ा नहीं पिस सका था। जरा नामक एक बहेलिये ने इस टुकड़े से अपने बाण की नोंक बनाई। इसी बाण से कृष्ण का अंत हुआ (*म० मौ० १-८, भा० ११.१,३०-३१*)।

साईदान (आ० का० ११२३-४८ ई०)—एक लेखक जिनके विषय में खोज हो रही है। इनकी रचना भी अप्राप्त है।

साकेत—**मैथिलीशरण गुप्त** का एक महाकाव्य (१९३२ ई०)।

इसका नामकरण अयोध्या के प्राचीन नाम पर किया गया है। साकेत ही इसकी कथा का केंद्र रहा है। रामचंद्र के विवाह के पूर्व की घटनाएँ उर्मिला के विरह-गान में स्मृति-रूप से वर्णित हैं और वनवास के पश्चात् की कथाएँ कुछ तो हनुमान द्वारा कहलवा दी गईं हैं और कुछ वसिष्ठ ने योगबल से अयोध्यावासियों को दिखा दी हैं। इस काव्य में लक्ष्मण और उर्मिला के चरित्र को प्रधानता दी गई है, तो भी उनका जीवन राम के ही आश्रित है। यह विषय *रामचरितमानस* में पूर्णतया छूट गया था। *साकेत* में कैकेयी के चरित्र को *रामचरितमानस* की अपेक्षा ऊँचा उठाया गया है। इसमें राम ब्रह्म होते हुए भी मनुष्य हैं। उन्होंने संसार में देवताओं के हित की अपेक्षा मानवता के प्रसार के लिये अधिक प्रयास किया है। *साकेत* ने वर्त्तमान युग के प्रबंध-काव्य संबंधी अभाव को दूर किया है। काव्य का नवम सर्ग विरह-वर्णन के बाहुल्य के कारण भाव-प्रधान हो गया है। *साकेत* में गांधीवाद के विगत विद्रोह और सरल जीवन का पर्याप्त प्रभाव है। यह काव्य 'मंगलाप्रसाद' पारितोषिक द्वारा सम्मानित हो चुका है। विशेष दे० नगेंद्र-कृत *साकेत—एक अध्ययन*, कन्हैयालाल सहल-कृत *साकेत के नवम सर्ग का काव्यवैभव*।

साखी—निर्गुणोपासक कवियों के उपदेशात्मक दोहे।

सात्यकि—एक यादव जिसने महाभारत-युद्ध में कौरवपक्षीय शाल्व (*म० श० २०*), भूरिश्रवा और कृतवर्मा का वध किया था।

सात्वती वृत्ति—दे० *वृत्ति*।

सात्विक गुण—नायकों के सत्व समुद्भूत आठ गुण होते हैं—१ शोभा, २ विलास, ३ माधुर्य, ४ गांभीर्य, ५ धैर्य, ६ तेज, ७ ललित और ८ औदार्य। ये गुण रसों के अनुभव के बाद उत्पन्न होने वाले स्तंभ आदि आठ सात्विक भावों से भिन्न हैं। सात्विक भाव स्त्री और पुरुष दोनों में समान रूप से होते हैं, जबकि सात्विक गुण केवल पुरुषों में ही पाए जाते हैं।

सादी (आ० का० ल० १२०० ई०)—प्रसिद्ध फ़ारसी-कवि और *गुलिस्ताँ* (अनू० *नीतिवाटिका*), *बोस्तान* (अनू०) आदि के रचयिता।

साधन—दे० *मैनसात*।

साधारण धर्म—जिस सादृश्य-साधर्म्य रूपी गुण की उपमेय और उपमान दोनों में समानता बताई जाती हो, जैसे सुंदरता, कोमलता आदि।

सापह्नवातिशयोक्ति—दे० *अतिशयोक्ति*।

सायण (ई० १४ वीं शती)—दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध भाष्यकार। ये विजयनगर के सम्राट् बुक्क प्रथम के प्रधान मंत्री थे। इन्होंने सब वेदों तथा ब्राह्मणों और तैत्तिरीय संहितादि का भाष्य किया।

सारंग—विष्णु के धनुष का नाम।

सार—१ एक अर्थालंकार जिसमें वस्तुओं का उत्तरोत्तर उत्कर्ष या अपकर्ष दिखलाया जाता हो। उ०—सीतल चंदन लोक में, ताते सीतल चंद, / ताहू ते सीतल महा, सतसंगति सुख कंद। २ सोलह बारह कल यति देकर सार ललित ग ग अंते (२८(१६,१२) मा० छंद, अंत ग ग)। उ०—धनि बृंदावन धनि वंसीवट, धनि सब गोपी ग्वाला।

सारनाथ—बनारस के चार मील उत्तर-पश्चिम में एक प्रसिद्ध स्थान, जो हिंदुओं, बौद्धों और जैनियों का प्रसिद्ध तीर्थ है। यही प्राचीन मृगदाव है, जहाँ से बुद्ध ने अपना उपदेश (धर्मचक्र प्रवर्त्तन) आरंभ किया था। यहाँ खुदाई होने पर कई बौद्ध स्तूप, बौद्ध मंदिरों के ध्वंसावशेष तथा कितनी ही हिंदू, बौद्ध और जैन मूर्त्तियाँ पाई गई हैं। इसके अतिरिक्त अशोक का एक स्तंभ भी यहाँ पाया गया है।

सारस्वत—१ हस्तिनापुर के उत्तर-पश्चिम में एक प्रदेश और नगर, जो सरस्वती नदी के तट पर था। २ अजमेर के निकट पुष्कर नामक झील।

सावित्री—मद्र-नरेश अश्वपति की पुत्री और सत्यवान् की पत्नी, जो अपने पातिव्रत्य के लिये प्रसिद्ध हैं। इन्होंने शाल्व देश के निर्वासित अंधे राजा द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान् से विवाह करने का निश्चय किया। नारद के यह कहने पर भी कि 'सत्यवान् केवल एक वर्ष ही जीवित रहेगा', इन्होंने अपना निश्चय नहीं बदला। सत्यवान् की आयु समाप्त हो जाने पर यमराज उन्हें लेने आए। जब यम सत्यवान् को ले जा रहे थे, तब ये उनके पीछे-पीछे चलने लगीं। यम ने सत्यवान् की जीवन-रक्षा के अतिरिक्त इनसे कोई भी वर

माँगने के लिये कहा। इन्होंने एक वर से अपने अंधे श्वशुर के लिये आँखें माँगीं और उनका नष्ट हुआ राज्य लौटाने को कहा। दूसरे वर से अपने पिता के लिये १०० पुत्र और तीसरे से अपने लिये भी १०० पुत्र माँगे। यमराज ने इन्हें ये वर दे दिये। सत्यवान् के बिना जीवित किये सावित्री को पुत्र नहीं प्राप्त हो सकते थे, अतः यमराज ने सत्यवान् को जीवित कर दिया (*म० व० २९३-९९, मत्स्य० २०७-१३, देवी भा० ६.२६-२८*)।

साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली—भारत सरकार द्वारा १९५४ ई० में स्थापित एक संस्था। इस संस्था के उद्देश्य इस प्रकार हैं—१ सभी भारतीय भाषाओं द्वारा जो साहित्यिक कार्य चल रहा है, उसके विषय में जानकारी वाली सामग्री प्रकाशित करना; २ प्रत्येक भाषा से चुने हुए प्राचीन और नवीन श्रेष्ठ ग्रंथों का अनुवाद अन्य भारतीय भाषाओं में कराना; ३ विदेशी श्रेष्ठ ग्रंथों का अनुवाद सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में कराना। अकादेमी की पत्रिका का नाम 'इंडियन लिटरेचर' (*Indian Literature*) है। हिंदी कार्यक्रम विषयक नीति-निर्धारण हज़ारीप्रसाद द्विवेदी करते हैं।

साहित्य दर्पण—**विश्वनाथ कविराज** (१३६५ ई०) का संस्कृत में एक अत्यंत प्रसिद्ध और प्रामाणिक साहित्य-ग्रंथ (अनू०)।

साहित्य लहरी—**सूरदास** का एक ग्रंथ (१५५० ई०), जो *सूरसागर* की कथावस्तु का रूपांतर है। इसमें *सूरसागर* के कुछ पदों का संकलन भी है।

साहित्य-शास्त्र—साहित्य की आलोचना, उसके निर्माण के नियम, छंद, अलंकार, रस, गुण, दोष आदि बताने वाला शास्त्र वा ग्रंथ। इसको 'काव्यांग निरूपक ग्रंथ' या 'रीति-ग्रंथ' भी कहते हैं।

सिंधु—१ सिंध नदी। २ सिंध प्रदेश। आभीर लोग उत्तर सिंध में रहते थे। इन्हीं लोगों ने अर्जुन से यादव स्त्रियाँ छीनी थीं। ३ 'इंडिया' का नाम जो सिंधु शब्द से निकला है। दे० *सप्तसिंधु*।

सिंधुविष—**हलाहल** विष। यह **समुद्रमंथन** से निकला था।

सिंहल—भारत के दक्षिण में एक द्वीप, जिसे **लंका** भी कहते हैं।

सिंहासन द्वात्रिंशिका या *विक्रम चरित*—३२ कल्पित कथाओं का एक संग्रह (१०१८-६३ ई० के बाद, अनू० *सिंहासन बत्तीसी* राजा विक्रमादित्य के सिंहासन की ३२ पुतलियाँ धारा के राजा भोज से एक-एक कथा कहकर उड़ जाती हैं। यह रचना संस्कृत-गद्य में है।

सिंहासन बत्तीसी—दे० *सिंहासन द्वात्रिंशिका*।

सिंहिकसूनु—**सिंहिका** का पुत्र, राहु।

सिंहिका—कश्यप और दिति की कन्या, राहु की माता एक राक्षसी, जो समुद्र में रहकर उड़ते हुए जीवों की परछाईं देखकर ही उनको खींच कर खा लेती थी। लंका जाते समय हनुमान ने इसका वध किया था (*वा रा० सं० १.१=२-९६*)।

सिकंदर (३५६-३२३ ई० पू०)—एक प्रसिद्ध यूनानी सम्राट्, जिसने ३२७-२६ ई० पू० में भारत पर आक्रमण किया था।

सिणढायच फटेराम—दे० *महाराजा गजसिंह जी रौ रूपक*।

सिद्ध—योग या तप से सिद्धि प्राप्त महात्मा।

सिद्धराज जयसिंह—गुजरात-शासक (१०९३-११४२ ई०)।

सिद्ध साहित्य—बौद्धों की **महायान** शाखा से प्रभावित **वज्रयान** शाखा के सिद्ध-कवियों (**सरहपा, शबरपा, भुसुकपा, लुइपा, विरूपा, डोंबिपा, दारिकपा, गुंडरीपा, कुकुरिपा, कण्हपा तिलोपा, तंतिपा, धर्मपा,** आदि) द्वारा दूहों (दोहों) में रचित साहित्य।

इस साहित्य की भाषा जन-समुदाय की भाषा का आश्रय लिये हुए अपभ्रंश की उस अवस्था का संकेत करती है, जिसमें प्राचीन हिंदी के चिह्न विकसित होने लगे थे। इसलिये कि ये सिद्ध अधिकतर नालंदा और विक्रमशिला में रहे, उनकी भाषा बिहार की जनता द्वारा बोली जाने वाली अर्द्धमागधी अपभ्रंश के निकट की भाषा है। अतः उनकी भाषा में जन-बोली मगही का आभास देखा जाता है। इस भाषा को संध्या भाषा का नाम भी दिया गया है। अतः प्राचीन हिंदी-काव्य का सब से प्राचीन रूप हम को इस साहित्य में मिलता है। प्राचीन हिंदी के संबंध में **राहुल सांकृत्यायन** ने बहुत कुछ खोज की है। उसी के आधार पर उन्होंने **सरहपा** नामक एक सिद्ध को हिंदी का प्रथम लेखक और आदि कवि माना है।

सिद्धों के सहजिया संप्रदाय में मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को महत्ता देकर एक प्रकार के स्वच्छंदतावाद का प्रतिपादन हुआ। गोरखपंथ इसी स्वच्छंदतावाद की प्रतिक्रिया में चला। उसने वज्रयान की अश्लीलता और बीभत्सता को कुछ कम कर दिया था। वज्रयान सिद्ध और नाथपंथी योगियों ने कबीर आदि संतों को अनेक रूपों में प्रभावित किया (दे० *संत साहित्य*)। उसके हठयोग की प्रतिक्रिया सूर, तुलसी में दिखाई देती है। अतः सिद्ध साहित्य के अध्ययन से हम सिद्ध संप्रदाय, नाथ संप्रदाय और संत संप्रदाय में एक ऐसी विकासोन्मुख विचार-परंपरा पाते हैं, जिससे हमारे इतिहास की धार्मिक रचनाओं पर यथेष्ट प्रकाश पड़ता है। साथ ही शताब्दियों से आने वाली धार्मिक और सांस्कृतिक विचार-धारा का भी इस साहित्य में स्पष्ट उल्लेख दिखाई पड़ता है। विशेष दे० राहुल सांकृत्यायन-कृत *हिंदी काव्य धारा* व *पुरातत्त्व निबंधावली*, धर्म वीर भारती-कृत *सिद्ध साहित्य*।

सिद्धार्थ—दे० *गौतम बुद्ध*।

सियारामशरण गुप्त (१८९५ ई०-)—कवि। **मैथिलीशरण गुप्त** के अनुज। इनकी मुख्य रचनाएँ *आर्द्रा* (१९२८, करुणापूर्ण कथात्मक कविताएँ), *दूर्वादल* (१९२९), *विषाद* (१९२९, भाव-प्रधान रचानाएँ) *पाथेय* (१९३४, आशीर्वादपूर्ण विचारात्मक कविताएँ), *मृण्मयी* (१९३६), *बापू* (१९३८), *उन्मुक्त* (१९४१, इसमें अहिंसावाद का उपदेश है), *नोआखली* (१९४७, नोआखली के हत्याकांड का विरोध), *नकुल* (१९४७, *महाभारत* की एक कथा पर आश्रित) (काव्य और काव्य-संग्रह), *गोद*, *नारी* (उपन्यास), *पुण्यपर्व* (नाटक), *मौर्य विजय*, *मानुषी* (कहानी-संग्रह) आदि हैं। इनपर गांधीवाद का प्रभाव है।

सिसरो (१०६-४३ ई० पू०)—रोम के एक प्रसिद्ध लातीनी भाषा के लेखक, जिनकी एक रचना *मित्रता* नाम से अनूदित है।

सीतल (आ० का० ई० १८ वीं शती)—शाहबाद निवासी, **हरिदास** के संप्रदाय के अनु-

यायी एक कवि। *गुलज़ार चमन* (चार भाग) के रचयिता। ये फारसी और संस्कृत के भी पंडित थे। काव्यचमत्कार इनकी रचना की विशेषता है। इनकी कविता से खड़ी बोली कविता को बहुत प्रोत्साहन मिला।

सीता—मिथिला-नरेश सीरध्वज जनक की पुत्री। स्वयंवर में इन्हें रामचंद्र ने जीता था (*वा० रा० बा० ६७*)। राम-वनवास के समय ये भी उनके साथ थीं। वहाँ इन्हें रावण हर ले गया था (*वा० रा० अर० ४६–५६*)। राम ने रावण आदि राक्षसों का वध कर इन्हें पुनः प्राप्त किया था। युद्ध-समाप्ति पर राम ने जब इनके चरित्र के संबंध में शंका की, तब इन्होंने अग्नि में प्रवेश कर परीक्षा दी थी (*वा० रा० यु० ११६*)। राम के साथ ये भी अयोध्या लौटीं। लोकापवाद के कारण राम ने इन्हें वन भेज दिया (*वा० रा० उ० ४५–४६*), जहाँ इनके कुश और लव दो पुत्र उत्पन्न हुए (दे० *कुशलव*, ६६)। अश्वमेध के अवसर पर वाल्मीकि के आदेश से सीता राम के संमुख आईं, पर वहाँ इन्होंने घोषणा की कि हे माता पृथ्वी! यदि मैं आजीवन पतिव्रता रही हूँ, तो आप अपनी गोद में मुझे स्थान दें। पृथ्वी फटी और सीता उसमें प्रवेश कर गईं (९३-९७)। पर्य्याय०—जानकी, वैदेही, भूतनया, रामप्रिया, भूमिजा आदि।

सीताराम (१८५८–१९३६ ई०)—'अवध' (पत्र) के संपादक, *मेघदूत*, *कुमारसंभव*, *उत्तररामचरित* आदि अनेक संस्कृत-ग्रंथों के, और **शेक्सपियर** के लगभग सभी नाटकों के अनुवादक। ये 'भूप' नाम से कविता करते थे। इनके अनुवादों में मूल के अर्थ का बहुत कुछ निर्वाह है।

सुंद—दे० *सुंदोपसुंद*।

सुंदर (आ० का० १६३१ ई०)—ग्वालियर निवासी एक रीति-कवि। *सुंदर श्रृंगार* के रचयिता। शाहजहाँ ने इन्हें 'कविराज' और फिर 'महाकविराज' की उपाधि दी थी। *बारहमासा* और *सिंहासन बत्तीसी* ये दो पुस्तकें भी इनकी कही जाती हैं।

सुंदर कुँवरिबाई (जन्म १७३४ ई०)—एक कवयित्री जिनकी कृष्ण-भक्ति संबंधी ११ पुस्तकें उपलब्ध हैं।

सुंदरदास (१५९६–१६८९ ई०)—जन्म द्यौसा (जयपुर)। दादूदयाल के शिष्य। १६०६ से लेकर ३० वर्ष तक इन्होंने काशी में रहकर वेद, पुराण, शास्त्र आदि का गंभीर अध्ययन किया। ये हिंदी, पंजाबी, गुजराती, मारवाड़ी, संस्कृत और फारसी भाषाओं पर समान अधिकार रखते थे। *सुंदर-विलास* इनका प्रधान ग्रंथ है। *दशों दिशाओं के सवैया*, *ज्ञान समुद्र* और *सुंदरदास के पद* इनकी अन्य प्रमुख रचनाएँ हैं। निर्गुण शाखा में ये ही एक ऐसे कवि हैं, जो साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। श्रृंगार रस को छोड़कर प्रायः सभी रसों पर इनकी सूक्तियाँ प्राप्त हैं। ये काव्य-रीति से भी परिचित थे। इनकी रचना कवित्त, सवैयों में अधिक हुई है। इन्होंने चित्र-काव्य, छत्र-बंध, नाग-बंध आदि भी लिखे हैं। कविता में यमक और अनुप्रास, शब्दालंकार और उत्तमोत्तम अर्थालंकार भी मिलते हैं। इनकी रचनाएँ साहित्यिक और सरस हैं, भाषा भी परिमार्जित है। विशेष दे० त्रिलोकीनारायण-कृत *सुंदर दर्शन*।

सुंदर सिणगार—ग्वालियर निवासी महाकविराय का डिंगल में एक काव्य-शास्त्र (१६३१ ई०)।

सुंदरी—१ सगण जब आठ मिलें उनमें गुरु सुंदरि सुंदर छंद बने तो (८ स, ग=२५ व० छंद)। उ०—सबसों गहि पाणि मिले रघु-नंदन भेंटि कियो सबको सुख भागी। २ नभ भरी विधु भासन सुंदरी (न भ भ र=१२ व० छंद)। उ०—नभ भरी विधु भासन आगरी। मुख प्रभा बहु भूषित नागरी।

सुंदोपसुंद—सुंद और उपसुंद दो राक्षस। ये दोनों बल में अद्वितीय थे। इनको मोहित करने के लिये स्वर्ग से तिलोत्तमा नामक अप्सरा भेजी गई, जिसके लिये दोनों भाइयों में युद्ध हुआ और दोनों ने एक दूसरे का वध कर दिया (*म० आ०* २०६-१२)। दे० *सुंदोपसुंद-न्याय*।

सुंदोपसुंद न्याय—तिलोत्तमा के लिये सुंद और उपसुंद नामक दो दैत्यों में फूट पड़ गई थी, जिसके कारण परस्पर लड़कर दोनों नष्ट हो गये। जहाँ आपस में लड़कर दोनों पक्षों के नाश का वर्णन अभीष्ट होता हो, वहाँ इस न्याय का प्रयोग होता है।

सुकेश—विद्युत्केश राक्षस का पुत्र, जिसका विवाह एक गंधर्व से हुआ था। इसके माल्य-वान्, सुमाली और माली नामक तीन पुत्र थे (*वा० रा० उ०* ४-५)। सुमाली की कन्या कैकसी का विवाह विश्रवा से हुआ, जिसके रावण, कुंभकर्ण और विभीषण नामक तीन पुत्र तथा शूर्पणखा नामक एक पुत्री उत्पन्न हुई।

सुखदेव मिश्र (र० का० १६६३-१७०३ ई०)—दौलतपुर (रायबरेली) निवासी एक रीति-कवि। *वृत्तविचार*, *छंदविचार*, *फाज़िलअली प्रकाश*, *रसार्णव*, *शृंगारलता*, *अध्यात्म प्रकाश* तथा *दशरथराय* के रचयिता।

सुखांत नाटक—पाश्चात्य नाटक का एक प्रकार जिसका अंत सुखमय (जैसे संयोग से) होता है। अंग्रेज़ी में इसे कॉमिडी (*Comedy*) कहते हैं।

सुग्रीव—सूर्य के पुत्र और बालि के भाई (दे० *ऋक्षराज*)। बालि ने इनकी पत्नी रुमा को हर लिया था और इन्हें किष्किंधा से बाहर निकाल दिया था। बालि के भय से ये **ऋष्यमूक** पर्वत पर रहते थे (*वा० रा० कि०* ८-११, दे० *दुंदुभि*, *मतंग*)। **कबंध** के सुझाव पर राम ने इनकी खोज की और इन्हें ऋष्यमूक पर्वत पर पाया। वहीं पर राम ने बालि के वध की और सुग्रीव ने सीता को खोज लाने की प्रतिज्ञा की (५)। बालि-वध (१६) के पश्चात् ये किष्किंधा के राजा बने और इन्होंने बालि की पत्नी तारा से भी विवाह किया (२६)। लंका-युद्ध में इन्होंने और इनकी सेना ने राम की सहायता की।

सुग्रीवी—कश्यप और ताम्रा की एक पुत्री, जो अश्वों, उष्ट्रों तथा गर्दभों की जननी मानी जाती है।

सुजान चरित्र—**सूदन** का एक वीर काव्य, जिसमें भरतपुर-नरेश सुजानसिंह (सूरजमल) की वीरता का वर्णन है। इसमें १७४५ से १७५३ ई० तक की घटनाएँ वर्णित हैं। यह ग्रंथ सात 'जंगों' तथा विविध छंदों में समाप्त हुआ है। प्रथम 'जंग' में सूरजमल का फतह अली के पक्ष में होकर अहमदशाह बादशाह के सेनापति असदखाँ का ससैन्य नाश करना, मेवाड़, माँडौगढ़ आदि की विजय करना वर्णित है; द्वितीय में आमेर-नरेश ईश्वरसिंह की ओर होकर मरहठों को पराजित करने का वर्णन है; तृतीय में बादशाही सेनापति सलावतखाँ बख्शी को परास्त करना वर्णित

है; चतुर्थ में शाही वजीर सफदरजंग मन्सूर की सेना से मिलकर वंगश पठानों पर चढ़ाई करना आदि वर्णन किया गया है; पंचम में घासहरे के बड़गूजर सरदार राव बहादुरसिंह की पराजय दिखाई गई है; षष्ट में मन्सूरजंग की सहायता से दिल्ली पर चढ़ाई, दिल्ली के बाजारों को लूटना आदि है; अंतिम 'जंग' में मरहठों और शाही सेना के साथ युद्ध की तैयारी करना आदि वर्णित है। इस प्रकार इस ग्रंथ का ऐतिहासिक महत्त्व भी बहुत कुछ है।

कवि ने युद्ध तथा सैनिकों में अपूर्व उत्साह का संचार कर देने वाली वीरोल्ला-समयी वक्तृताओं और उनके द्वारा साहसी शूर-वीरों के हृदयों की उत्ताल तरंगों का बड़ा सजीव, और ओजस्वी भाषा में वर्णन किया है। इसमें आदि से अंत तक एक मात्र वीर रस ही प्रवाहित हो रहा है। उक्त विशेषताओं के साथ-ही-साथ इसमें कुछ त्रुटियाँ भी हैं, जैसे वर्णनों का अत्यधिक विस्तार, देशवासियों, जातियों, घोड़ों, शस्त्रों तथा अस्त्रों आदि के असंख्य नामों की भरमार। इसी कारण इस ग्रंथ का साहित्यिक सौंदर्य कुछ घट गया है।

सुतीक्ष्ण—अगस्त्य के शिष्य। इन्होंने रामकुंड नामक स्थान पर तपस्या की और तीनों लोकों में गमन करने का सामर्थ्य प्राप्त किया (*स्कंद० ३.१.१८*)। वनवास के समय राम ने इनके आश्रम में दो बार निवास किया था।

सुथरादास—इलाहाबाद निवासी एक कायस्थ साधु, सुथरा संप्रदाय के प्रवर्त्तक, **मलूकदास** (१५७४-१६८२ ई०) के शिष्य और *मलूक-परिचय* के रचयिता।

सुदर्शन १ (१८९६ ई०–)—कहानी-लेखक और नाटककार। इनकी मुख्य रचनाएँ *तीर्थयात्रा, पनघट, सुदर्शन सुधा, परिवर्तन, पुष्पलता* (कहानी-संग्रह), *अंजना, ऑनरेरी मजिस्ट्रेट* (प्रहसन), *भाग्य चक्र, सिकंदर, धूपछाँह* (नाटक) आदि हैं। आजकल ये भारतीय चित्रपट के लिये लिखते हैं।

ये शहरी मध्यवर्ग के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। इनके शहरी मध्यवर्गी पात्र भी किसान और मजदूर जैसे मूक तपस्वी दिखाई पड़ते हैं। इनका *अंजना* नाटक पर्याप्त प्रसिद्ध है। *भाग्य चक्र* में प्रेम और वैराग्य का संघर्ष है। इसमें भौतिक आघात द्वारा स्मृति-भ्रंश तथा उनकी पुनर्जागृति की मनोवैज्ञानिक समस्या है। *सिकंदर* और *धूपछाँह* के चलचित्र भी बन चुके हैं। २ विष्णु या कृष्ण का चक्र। ३ एक विद्याधर, जो अंगिरा ऋषि के शाप से अजगर हो गया था। एक बार इसने नंद का पैर पकड़ लिया। कृष्ण ने अजगर को छुआ ही था कि वह एक सुंदर युवक बन गया और अपने लोक को चला गया (*भा० १०.३४*)।

सुदामा—कृष्ण के एक ब्राह्मण सखा और गुरु-भाई। ये अत्यंत निर्धन थे। जब इनकी पत्नी ने बहुत आग्रह किया कि 'कृष्ण तुम्हारा मित्र है, उससे कुछ सहायता माँगो', तब ये कुछ तंदुल (चावल) लेकर कृष्ण के पास पहुँचे। कृष्ण ने इनका स्वागत किया और इन्हें ऐश्वर्यवान् बना दिया (भा० १०.८०-८१)। इन्हें 'श्रीदामन्' और 'कुचैल' भी कहते हैं।

सुदामा-चरित्र—**नरोत्तमदास** (आ० का० १५४५ ई०) का एक काव्य, जिसमें दीन सुदामा की कृष्ण से भेंट वर्णित है। इसमें कवि ने सुदामा के रूप में उन आलसी

व्यक्तियों का चित्रण किया है जो अपने प्रमाद पर त्याग और तपस्या का परदा डालना चाहते हैं। सुदामा की पत्नी ने स्पष्ट शब्दों में सुदामा के हृदय को खोलकर रख दिया है। कृष्ण के चरित्र की महानता को दिखाना इस खंडकाव्य का उद्देश्य है। हिंदी के खंड-काव्यों में इस छोटी-सी रचना का बहुत ऊँचा स्थान है। इस ग्रंथ में ब्रज-भाषा का माधुर्य पूर्ण रूप से दिखाई पड़ता है।

सुद्युम्न—दे० *इल*।

सुधाकर द्विवेदी (जन्म १८६१ ई०)—काशी के प्रसिद्ध ज्योतिर्विज्ञानाचार्य, जिन्होंने *पद्मावत* के कुछ अंशों पर जॉर्ज **ग्रियर्सन** के साथ मिलकर भाष्य लिखा था। इन्होंने *तुलसी सुधाकर*, *नया-संग्रह*, *मानस पत्रिका*, *हिंदी-वैज्ञानिक-कोष*, *गणित* तथा बहुत से ज्योतिष ग्रंथ भी लिखे।

सुनीति—राजा **उत्तानपाद** की रानी तथा ध्रुव की माता।

सुन्न—ब्रह्मरंध्र छिद्र जो बिंदु रूप (०) होता है। इसी से **नागिनी** का संयोग होता है। इस स्थान पर ब्रह्म (आत्मा) का निवास है। योगी इसी रंध्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। इस छिद्र के छः द्वार हैं, जिन्हें नागिनी के अतिरिक्त कोई नहीं खोल सकता।

सुफलक—दे० *श्वफल्क*।

सुबंधु—संस्कृत के एक गद्य-कवि। इनका समय सप्तम शतक का प्रारंभ माना जाता है। बाण ने अपने *हर्षचरित* में इनका निर्देश किया है। इन्होंने *वासवदत्ता* (अनू०) नामक एक आख्यायिका लिखी है, जिसमें आदि से अंत तक श्लेष की भरमार है। संस्कृत के विद्वानों में कभी इनकी इस रचना का बड़ा आदर था।

सुबाहु—**ताड़का** का ज्येष्ठ पुत्र। इसका वध राम द्वारा हुआ (*वा० रा० बा० ३०.२२*)।

सुभद्रा—वसुदेव तथा देवकी की पुत्री, कृष्ण की बहिन, अर्जुन की पत्नी और अभिमन्यु की माता। अर्जुन ने इनका हरण किया था (*म० आ० २१९-२०*)।

सुभद्राकुमारी चौहान (१९०४-४७ ई०)—कवयित्री। इनकी मुख्य रचनाएँ *झाँसी की रानी* (१९२६, इस कविता में नारी-गौरव की भावना के साथ देश-प्रेम की झलक भी मिलती है), *मुकुल* (१९३१), *त्रिधारा* (काव्य-संग्रह), *सभा का खेल* (बालोपयोगी कविताएँ), *बिखरे मोती* (१९३२, कहानी-संग्रह) आदि हैं। इनकी वात्सल्य रस की कविताएँ बहुत सुंदर हैं। इनकी रचनाओं में राष्ट्रिय भावना विशेषतया उद्वेलित हुई है। इनकी भाषा सरल, स्वाभाविक और जन-साधारण के हृदय को स्पर्श करने वाली है।

सुमंत्र—राजा दशरथ का एक मंत्री और सारथि। वनवास के समय यह राम, लक्ष्मण तथा सीता को भागीरथी तक पहुँचाने गया था (*वा० रा० अयो० ५२*)।

सुमति—**सगर** की पत्नी, जिनसे साठ हज़ार पुत्र उत्पन्न हुए।

सुमति हंस—दे० *विनोद रस*।

सुमाली—रावण, कुंभकर्ण आदि का नाना। इसकी पुत्री **कैकसी** रावण आदि की माता थी।

सुमित्रा—मगधदेशाधिपति शूरसेन की पुत्री, राजा दशरथ की एक रानी तथा लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता (दे० *दशरथ*)।

सुमित्रानंदन पंत (१९०० ई०-)—प्रसिद्ध कवि। जन्म कौसानी (अलमोड़ा)। इन्होंने घर पर ही उपनिषद्, दर्शन, संस्कृत, बँगला तथा अंग्रेज़ी साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। इनके निम्नलिखित काव्य प्रकाशित हो चुके हैं—

वीणा (१९१८-१९)—कवि के अपने शब्दों में यह इनका दुधमुहाँ प्रयास है।

ग्रंथि (१९२०)—यह एक प्रेम प्रधान दुःखांत खंडकाव्य है। अतुकांत कविता का अच्छा नमूना है।

पल्लव—इसमें कलाकार का रूप अधिक है। प्राकृतिक दृश्यों में एक अपूर्व सौंदर्य की सृष्टि की गई है। 'परिवर्तन' शीर्षक कविता में प्रकृति संबंधी रहस्यवाद की भी झलक है। इसमें प्रकृति का उग्र और विध्वंसक रूप दिखाई देता है। इस कविता का विश्व साहित्य में अपना स्थान है। 'आँसू' (गीला राग) में करुण भाव उमड़ रहा है। 'बादल' में अंग्रेज़ी कवि शैली के 'क्लाउड' की छाया है, किंतु इसके चित्र भारतीय संस्कृति के अनुसार हैं। इनकी रचनाओं में वर्त्तमान दुःखवाद की भी पर्याप्त मात्रा है। इन्होंने दुःख को ही कविता का मूल माना है। ये प्रकृति में भी दुःख को व्याप्त देखते हैं, पर ऐसा सभी जगह नहीं है। इस संग्रह की भूमिका में उस समय प्रचलित गद्यात्मक शुष्क खड़ी बोली की कविता की कटु आलोचना की है और कविता को अधिक मधुर तथा व्यंजनात्मक बनाने पर बल दिया है। यहीं से हिंदी कविता में छायावाद का पदार्पण होता है।

गुंजन (१९३२) और *युगांत* (१९३६)—इन संग्रहों में कला और सौंदर्य का इतना प्राधान्य नहीं है, जितना कि *पल्लव* में। इनमें विश्व-चिंतन और दार्शनिकता बढ़ गई है। *गुंजन* में कवि ने सुख-दुःख दोनों को ही स्वीकार किया है, किंतु जीवन को इनके ऊपर स्थान दिया है। *युगांत* में मानव जगत् की मंगलाशा ओत-प्रोत है। इसमें पिछले युग के अंत का संकेत है।

युगवाणी (१९३९)—यह साम्यवाद से प्रभावित है, किंतु भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ आध्यात्मिकता और आंतरिक साम्यवाद का स्वर इसमें प्रधान है। इसमें नारी स्वातंत्र्य का भी संदेश है। इसमें नये युग का संदेश बौद्धिक भाषा में सुनाया गया है।

ग्राम्या (१९४०)—इसमें ग्राम-चित्रण है। कवि ने ग्राम्यजनता को रक्त-मांस के रूप में नहीं देखा है, एक मरणोन्मुखी संस्कृति के अवयव-स्वरूप देखा है। रूढ़ियों के शिकार होते हुए भी वे रोगग्रस्त मनुष्यों की भाँति भावुकतापूर्ण सहानुभूति के पात्र हैं। किंतु यह सहानुभूति कुछ-कुछ ऊँचे उठे हुए मनुष्य की है। *ग्राम्या* में कहारों और धोबियों के नृत्य के गतिमय तथा शब्दमय चित्र बड़े हृदयहारी बने हैं। इसमें साम्यवाद का हृदयपक्ष अच्छा है।

स्वर्ण-किरण, स्वर्ण-धूलि, मधुज्वाल, युगपथ, युगांतर, युगवाणी, उत्तरा, मानसी (१९४१ से प्रारंभ)—इनमें कवि नई संस्कृति के निर्माण के लिये आशावादी हैं। ये महात्मा गांधी तथा योगी अरविन्द की आध्यात्मिकता से प्रभावित पश्चिम के भौतिकवाद को अध्यात्मवाद से पूर्ण करना चाहते हैं। अध्यात्मवाद में ये मानवता का आधार पाते हैं।

कवि की अन्य रचनाएँ इस प्रकार हैं—

ज्योत्स्ना (१९३४)—एक नाट्य रूपक।

इसमें कल्पना का प्राधान्य है। प्राकृतिक वस्तुओं का मानवीकरण कर उनको पात्र बनाया गया है। *परी, क्रीड़ा, रानी* (नाटक), *हार* (उपन्यास), *उमर खय्याम की रुबाइयों का हिंदी अनुवाद, पाँच कहानियाँ* (१६३६) तथा *खादी के फूल* (महात्मा गांधी के देहांत के पश्चात् उन्हें श्रद्धांजलि समर्पित करने के लिये पंत और हरिवंशराय 'बच्चन' द्वारा लिखित काव्य)।

'निराला' के शब्दों में पंत हिंदी के सुकुमार कवि हैं। इन्होंने अपनी कविता में साहित्य और संगीत का संयोग किया है। इनके मुक्तक अनुकांत छंद हिंदी में एक नये युग की अवतारणा करते हैं। 'खड़ी बोली में माधुर्य और कोमलता का अभाव है', इस अपवाद को दूर करने में ये बहुत अंश तक सफल हुए हैं। ये छायावादी एवं रहस्यवादी काव्य के प्रधान स्तंभों में से एक हैं। इनकी प्रतिभा विकासशील है। पहिले ये प्रकृति के सौंदर्य में जीवन की विशेषताओं को भूल जाना चाहते थे। धीरे-धीरे इनकी प्रतिभा जीवनोल्लास की ओर झुकी। ये 'तितली और भौंरों की रंग-बिरंगी दुनिया' से निकल, कठोर जीवन की धूप-छाँह का चित्रण करने लगे और मानवोपासना की ओर अग्रसर हुए। यह मानव उपासना व्यक्तिगत न होकर मानव मात्र की हो गई है। इसमें इस युग की गौरव संबंधी भावना काम करने लगी है। ये भौतिकवाद को अध्यात्मवाद से पूर्ण करना चाहते हैं। विशेष दे० नगेंद्र-कृत *सुमित्रानंदन पंत, आधुनिक कवि* सीरीज़ में 'पंत', शचीरानी गुर्टू-कृत *सुमित्रानंदन पंत*, यशदेव-कृत *पंत का काव्य और युग*।

सुमुखी—जु लोक लगा चित राम भजैं तिन दै सु प्रसन्न सिया सुमुखी (७ ज ल ग=२३ व० छंद)। इसे मानिनी और मल्लिका भी कहते हैं।

सुमेर—दे० *सुमेरु*।

सुमेरु—१ गढ़वाल में रुद्र हिमालय, जहाँ से गंगा नदी निकलती है। यह बदरिका-आश्रम के निकट है। इसे 'पंचपर्वत' भी कहते हैं। २ एक पर्वत। कहा जाता है कि यह स्वर्ण-निर्मित है। इसके तीन शिखर हैं, जिनपर २१ स्वर्ग हैं। ३ १६ (१२,७ वा १०,६) मा० छंद, आदि ल, अंत य। तगण, रगण और जगण नहीं होना चाहिये। उ०—रवी के लोकहूँ, रचिये सुमेरु।

सुरकुमार—शूरसेन के पुत्र, वसुदेव।

सुरति—योग के भाषानुसार वह आदि ध्वनि, जिससे शब्द उत्पन्न हुआ।

सुरथ—**जयद्रथ** का पुत्र। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर जब अर्जुन ने इसकी राजधानी की ओर प्रस्थान किया, तब भय से इसका प्राणांत हो गया *(म० आश्व० ७८)*। कृष्ण ने इसे पुनर्जीवित कर दिया *(जै० अ० ६१)*।

सुरभि—दक्ष की एक कन्या और कश्यप की एक पत्नी। यह गौओं की अधिष्ठात्री देवी तथा गो-जाति की आदि जननी मानी जाती है *(म० व० ६)*।

सुरसा—एक प्रसिद्ध नागमाता, जिसने समुद्र पार करते समय हनुमान को निगल लिया था, किंतु हनुमान चातुर्य से इसके पेट से बाहर निकल आए। चलते समय इसने हनुमान को आशीर्वाद दिया था *(वा० रा० सं० १.१४१-६५)*।

सुरुचि—राजा उत्तानपाद की पत्नी और ध्रुव (दे० यथा०) की विमाता। इन्हीं के दुर्व्यवहार के कारण ध्रुव को गृह-त्याग करना पड़ा था।

सुलेमान (१०३३–९७५ ई० पू०)—यहूदियों का एक प्रसिद्ध बादशाह और पैगंबर, जिसने देवों, परियों और पशु-पक्षियों को वश में कर लिया था।

सुलोचना—१ राजा माधव की पत्नी, जो आदर्श पत्नी मानी जाती हैं (*पद्म० क्रि० ५-६*)। २ वासुकि की पुत्री और **मेघनाथ** की पत्नी। यह अपने पति के साथ सती हो गई थी (*आ० रा० सारकांड ११*)।

सुवेल—**त्रिकूट** पर्वत का नाम, जो समुद्र के किनारे लंका में था और जहाँ रामचंद्र सेना-सहित ठहरे थे।

सुषुम्ना—हठयोग के अनुसार शरीर की तीन मुख्य नाड़ियों में से एक। यह नासिका से ब्रह्मरंध्र तक गई हुई मानी जाती है। यह सर्वतेजोमयी और अग्निस्वरूपा है।

सुषेण—एक वानर जो वरुण का पुत्र, बालि का श्वशुर और सुग्रीव का वैद्य था। **लक्ष्मण** को शक्ति लगने पर इसी ने हनुमान से संजीवनी बूटी मँगवाई थी और लक्ष्मण को स्वस्थ किया था (*वा० रा० यु० १०२*)।

सूकरक्षेत्र—उत्तरप्रदेश में सोरों नामक स्थान। विष्णु ने वराहरूप में **हिरण्याक्ष** का वध यहीं किया था। तुलसीदास ने *रामचरितमानस* की भूमिका में 'सो मैंने निज गुरु संग सुनि, कथा सुसूकरखेत' कहकर इस स्थान का निर्देश किया है। दे० *तुलसीदास*।

सूक्ति—उपदेशात्मक चमत्कृत रचना। इसमें रस-संचार की अपेक्षा चमत्कारपूर्ण उपदेश की प्रधानता रहती है।

सूची—छंदशास्त्र में **प्रत्यय** का एक भेद, जिसके द्वारा किसी विशेष जाति के वर्णिक या मात्रिक छंदों की कुल संख्या का पता लगता है। मात्रिक सूची में पिछली दो दो (कल) मात्रा जुड़ती जाती हैं और वर्णिक सूची में आदि ही से दूने-दूने अंक होते जाते हैं।

अनुक्रम संख्या	१	२	३	४	५	६
मात्रिक सूची	१	२	३	५	८	१३
वर्णिक सूची	२	४	८	१६	३२	६४

इससे यह विदित हुआ कि ६ मात्राओं के भिन्न-भिन्न प्रकार से १३ मात्रिक छंद और ६ वर्णों के भिन्न-भिन्न प्रकार से ६४ वर्णिक छंद बन सकते हैं। इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिये।

सूजो—एक डिंगल-कवि। *राऊ जैइतसी रा छंद* (१५४३ ई० **बाबर** के पुत्र कामरान के साथ बीकानेर के राव जैतसिंह का युद्ध-वर्णन) के रचयिता।

सूत्र—कोई भी ऐसा संक्षिप्त वाक्य, जिसमें बहुत थोड़े शब्दों में बहुत अधिक भाव भर दिया जाए। जैसे पाणिनि-निर्मित व्याकरण के सूत्र, षड्दर्शनों के सूत्र आदि।

सूत्र ग्रंथ (र० का० ५००-२०० ई० पू०)—इनके तीन भेद हैं—'श्रौत' (यज्ञ संबंधी), 'गृह्य' (गृहस्थ संबंधी) और 'धर्म' (वर्णाश्रम तथा राजनियम संबंधी)। इनमें छोटे-छोटे

शब्दों और परिमित अक्षरों में विपुल ज्ञान का समावेश करने की चेष्टा की गई है।

सूत्रधार—नाटक का निर्देशक। इसका कार्य वस्तु की सूचना देना होता था। नट या नटी नामक साधारण अभिनेता भी इसके सहायक बनते थे। कहीं-कहीं नट और सूत्रधार एक ही देखे जाते हैं। वस्तुतः प्रधान नट (अभिनेता) ही सूत्रधार होता है। स्थापक तो बाद में सूत्रधार में ही मिल गया। पुराने कठपुतलियों के द्वारा होने वाले नाटकों में कठपुतलियों के सूत्र इसके हाथ में रहने के कारण इसका नाम सूत्रधार पड़ गया। बाद में यह नाटक के अभिनेताओं के मखिया का नाम हो गया। यह केवल नाटक के आमुख या प्रस्तावना में ही आता है। नवीन नाटककारों ने प्रस्तावना के साथ इसे भी समाप्त कर दिया है।

सूदन (र० का० १७६३ ई०)—मथुरा निवासी एक वीररस-कवि। इन्होंने अपने आश्रयदाता भरतपुर-नरेश सुजानसिंह (सूरजमल) के नाम पर *सुजान चरित्र* नामक एक प्रबंध-काव्य लिखा। वस्तुतः यह एक उत्तम वीर रसपूर्ण काव्य है।

सूफ़ीमत—मुसलमानों का एक धार्मिक संप्रदाय। प्रायः सभी मुसलमान आख्यान लेखक **सूफ़ी संप्रदाय के थे** (दे० *प्रेम-काव्य*)। सूफ़ी **मतानुसार ईश्वर** की कल्पना प्रियतमा के रूप **में** की जाती है। 'उपासना के व्यवहार के लिये सूफ़ी परमात्मा को अनंत सौंदर्य, अनंत शक्ति और अनंत गुणों का समुद्र मानते हैं।' प्रेम के आनंद में मग्न होना—सौंदर्य और सदाचार की मदिरा पीकर मत्त होना—सूफ़ियों की परमोपासना है। सूफ़ी मत भारतीय **अद्वैतवाद** से बहुत कुछ मिलता जुलता है। यद्यपि सूफ़ियों के लिये जगत् मिथ्या मृगतृष्णा है, ईश्वर निराकार है, तथापि वे ईश्वर का सुंदर रूप जगत् के सारे सुंदर पदार्थों में देखते हैं। साथ ही वे संपूर्ण जगत् को ईश्वर के 'प्रेम की पीर' से व्यथित देखते हैं।

इस्लाम धर्म में सांसारिक पदार्थों के उपभोग को ही आनंद माना है और स्वर्ग में भी इन्हीं वस्तुओं को प्राप्त करने की इच्छा रहती है। सूफ़ी मत में स्वर्ग में परमात्मा का दर्शन मात्र अभीष्ट है। सूफ़ियों को नमाज़-रोज़े से काम कम रहता है। अतः शुद्धि ही उनके मोक्ष का प्रधान साधन है।

सूरजराम पंडित—एक कवि। *जैमिनी पुराण भाषा* (१७४८ ई०, पुराणों के अनेक कथानकों का दोहा-चौपाई पद्धति पर संकलन) के रचयिता।

सूरति मिश्र—आगरा निवासी, एक रीति-कवि। *अलंकार-माला* (१७०६ ई०) और *अमर चंद्रिका* (*बिहारी सतसई* की टीका) के रचयिता। इन्होंने *कविप्रिया* और *रसिका प्रिया* पर विस्तृत टीकाएँ भी रची हैं। टीकाएँ ब्रज-भाषा-गद्य में हैं। इन्होंने *वेताल पंचविंशति* का ब्रज-भाषा-गद्य में अनुवाद भी किया। *रसरत्न माला*, *सरस रस*, *रस ग्राहक चंद्रिका*, *नखशिख*, *काव्य-सिद्धांत* और *रस रत्नाकर* इनकी अन्य रचनाएँ हैं। ये अच्छे साहित्य मर्मज्ञ और कवि जान पड़ते हैं।

सूरदास (१४८३-१५६३ ई० ?) (सं० १५४०-१६२० ?)—कृष्ण-काव्य के प्रतिनिधि एवं श्रेष्ठ कवि, जिनका जन्म दिल्ली निकट (बल्लभगढ़ से प्रायः दो मील) सीही नामक ग्राम में बताया जाता है। मथुरा और आगरा के मध्य रुणका (रेणुका क्षेत्र) में

इनका निवासस्थान बताया जाता है। सूरदास ने अपने को **चंदवरदाई** का वंशज कहा है। ये गौघाट (रेणुका क्षेत्र के निकट) रहा करते और भगवद्-भक्ति के गीत गाया करते थे। इनके अंधे होने के संबंध में अनेक किंवदंतियाँ हैं। कहते हैं कि जब इनके छः भाई मुसलमानों के साथ युद्ध में मारे गये, तब ये घूमते-फिरते एक कुएँ में गिर गये। सातवें दिन कृष्ण ने इन्हें दृष्टि प्रदान कर अपने दर्शन कराये। किंतु इन्होंने कृष्ण से प्रार्थना की कि मैं इन नेत्रों से अन्य किसी को देखना नहीं चाहता। अतः ये नेत्रहीन हो गये। ऐसा भी कहा जाता है कि ये एक सुंदरी को देखकर उसपर आसक्त हो गये थे। पश्चात्ताप-स्वरूप इन्होंने अपनी आँखें फुड़वा लीं। पर यह तो निश्चित है कि ये जन्मांध नहीं थे। एकबार गौघाट पर **वल्लभाचार्य** ने इनके पद सुनकर इन्हें गोवर्द्धन पर्वत पर स्थित श्रीनाथ के मंदिर में लाकर कीर्त्तन का मुखिया बना दिया। तभी से ये कृष्ण की भक्ति में तन्मय होकर नित्य नये पद बनाकर अपने प्रभु को रिझाने लगे। इन्होंने वल्लभाचार्य से पुष्टि-मार्ग में दीक्षा ली। **'अष्टछाप'** के कृष्ण-भक्त कवियों में इन्हें सर्व-प्रधान स्थान मिला है। इनके १६ ग्रंथों में *सूरसागर*, *साहित्य लहरी*, *सूरसारावली* आदि प्रसिद्ध हैं। इनमें *सूरसागर* ही प्रधान है।

महाकवि सूरदास ने हिंदी-साहित्य में सौंदर्य का अथाह सागर उँड़ेल दिया है। भाषा के विचार से सूरदास प्रथम कवि हैं, जिन्होंने ब्रज-भाषा को साहित्यिक रूप दिया। इन्होंने अपने गीति-काव्य में जिस भाषा का प्रयोग किया, वह संस्कृत मिश्रित साहित्यिक ब्रज है। वल्लभाचार्य से १५३० में दीक्षित होने से पूर्व इन्होंने शांत रस का और दीक्षित होने के उपरांत कृष्ण-लीलाओं का वर्णन किया। इन लीलाओं में वात्सल्य रस और श्रृंगार के संयोग तथा वियोग दोनों पक्षों का समावेश है। वात्सल्य रस पक्ष के अंतर्गत कृष्ण के प्रति यशोदा की प्रेम-भावना का मनोमोहक चित्र और बाल-लीलाओं का स्वाभाविक तथा रोचक चित्रण है। कृष्ण के मथुरा-गमन से पूर्व श्रृंगार का संयोग पक्ष तथा उसके पश्चात् वियोग पक्ष पुष्ट हुआ है। सूरदास की कविता में ब्रज-भाषा की स्वभावसिद्ध मधुरता तथा ललित पद-योजना के कारण माधुर्य कूट-कूट कर भरा है। इनकी कविता का एक और महत्त्व है, और वह है उसका विश्वव्यापी राग। कृष्ण की बाल-लीलाओं में तथा यशोदा के दुलार में विश्वव्यापी माता-पुत्र प्रेम संनिहित है।

सूरदास का काव्य-ज्ञान बहुत ऊँचा है। इतने सुंदर अलंकारों का साहित्य में प्रयोग अन्यत्र कम हुआ है। राधा-कृष्ण के रूप-वर्णन में उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकारों की प्रचुरता है। इन्होंने मनोवैज्ञानिकता के साथ रस का पूर्ण सामंजस्य स्थापित कर दिया है, यद्यपि इनके मनोविज्ञान का क्षेत्र केवल श्रृंगारिक जीवन तक ही सीमित है। इनकी भक्ति-भावना में कोई दार्शनिक तत्त्व नहीं है। इनके प्रारंभिक पद दास्य भाव के हैं और परवर्ती पद सख्य भाव के। तात्पर्य यह कि सूरदास हिंदी साहित्य के अमूल्य रत्न हैं। विशेष दे० रामचंद्र शुक्ल-कृत *सूरदास*, प्रभुदयाल मीतल-कृत *सूर निर्णय*, नंददुलारे वाजपेयी-कृत *महाकवि सूरदास*।

सूरदास मदनमोहन (आ० का० ल० १५४३ ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि, जिनके

कुछ स्फुट पदों के संग्रह ही मिलते हैं। कहते हैं कि इन्होंने **अकबर** के कोष के १३ लाख रुपये साधु-संतों को खिलाने-पिलाने में व्यय कर दिये थे।

सूरसागर—**सूरदास** का साहित्यिक व्रज-भाषा में एक ग्रंथ (ल० १५३० ई०), जिसमें सवा लाख पद बताए जाते हैं, किंतु प्राप्त पदों की संख्या ४१३२ है। इसमें १२ स्कंध है।

प्रथम स्कंध में विनय पद हैं, द्वितीय से अष्टम स्कंध तक विष्णु के अवतारों का तथा अन्य पौराणिक कथाओं का निरूपण है, नवम में रामावतार की कथा है। दशम स्कंध सर्वप्रधान है, क्योंकि इसमें कृष्ण-चरित्र है। इसके पूर्वार्ध में गोकुल और व्रज में विहार करने वाले बाल कृष्ण का चरित्र है, उत्तरार्ध में द्वारिका-गमन के पश्चात् की घटनाओं का वर्णन है।

मौलिकता के दृष्टिकोण से *सूरसागर* में चार प्रसंग उत्कृष्ट हैं—१ बाल कृष्ण का मनोवैज्ञानिक चित्रण, २ शृंगार रसांतर्गत ऋतु-वर्णन और नख-शिख, ३ कृष्ण-राधा का रति भाव और ४ वियोग शृंगार के अंतर्गत भ्रमरगीत।

यह ग्रंथ हिंदी-साहित्य के अमूल्य रत्नों में से एक है।

सूरसारावली—**सूरदास** का एक ग्रंथ (१५५०ई०), जिसमें *सूरसागर* की विषय-सूची है। यह ग्रंथ प्रामाणिक नहीं माना जाता।

सूर्य—१ अदिति और कश्यप के पुत्र, सुग्रीव (दे० *ऋक्षराज*) और कर्ण (दे० *कुंती*) आदि के पिता, **संज्ञा** आदि के पति। इनके रथ में सात घोड़े जुते हुए हैं। इनके सारथि अरुण हैं। सूर्य के पर्य्याय०—दिवाकर, प्रभाकर, दिनकर, भास्कर, हंस, विवस्वान्, भानु, विभावसु, पतंग, सविता, अंबरमणि, रवि, खग, आदित्य, अंशुमाली, अर्क, सूर, विरोचन, मार्तंड, पूषण, तरणि, कमलबंधु, सप्ताश्व, द्वादशात्मा, विकर्तन, जगच्चक्षु, मित्र आदि। २ मूलाधार चक्र (गुह्य स्थान के समीप) में चार दलों के बीच में एक गोलाकार स्थान, जिससे सदैव विष का स्राव होता है। इसी से निकला हुआ विष पिंगला नाड़ी द्वारा प्रवाहित होकर नाक की दाहिने ओर जाता है और मनुष्य को वृद्ध बनाता है।

सूर्यकांत, डा०—आधुनिक लेखक। *हिंदी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास*, (१९३१ ई०), *हिंदी-साहित्य की रूपरेखा*, *साहित्य मीमांसा* आदि के रचयिता।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' (१८९८-१९६१ ई०)-जन्म मेदनीपुर (बंगाल)। इन्होंने घर पर ही दर्शन, बँगला और संस्कृत-साहित्य का गंभीर अध्ययन किया। २२-२३ वर्ष की अवस्था में इनकी पत्नी का देहांत हो गया था। १९३० में श्रीरामकृष्ण मिशन में इन्होंने 'समन्वय' का संपादन किया। कलकत्ते में ये 'मतवाला' नामक पत्र के संपादक भी रहे। १९४६ में नागरी-प्रचारिणी सभा ने इनकी जयंती बड़े समारोह से मनाई थी। ये अब प्रयाग में रहते हैं, पर शरीर और मन दोनों से शिथिल हो गये हैं। इनके निम्नलिखित काव्य प्रकाशित हो चुके हैं—

परिमल (१९२९)—कवि का यह श्रेष्ठ संग्रह माना जाता है। छायावादी चेतना के साथ राष्ट्रवादी धारा का भी यह संग्रह प्रतिनिधित्व करता है। इस संग्रह में 'पंचवटी' एक दार्शनिक कविता है। 'महाराज शिवाजी का पत्र' में भावोत्तेजन मात्र है। 'यमुना के

प्रति' में अतीत की बड़ी सजीव स्मृति है। 'संध्या-सुंदरी' में संध्या की निस्तब्धता का बड़ा सुंदर वर्णन है। 'जुही की कली' में प्रकृति का सौंदर्य-वर्णन मानवीकरण के रूप में किया है। वायु को कली का नायक बनाया है। 'भिक्षुक' यथार्थवादी कविता है। 'विधवा' करुण रस प्रधान कविता है। 'बादलराग' के पद उद्बोधन के रूप में लिखे गये हैं। 'जागो फिर एक बार' कविता कवि की ओजपूर्ण वाणी का परिचय देती है। 'प्रकृति' में मानवी शक्ति पर विश्वास प्रकट किया है। 'तुम और मैं' दार्शनिक विचारों की कविता है।

अनामिका (नवीन संस्करण १९३७)—इसमें प्रेम, करुण, वीरता प्रधान कविताओं का संग्रह है। इन कविताओं में कवि के वैयक्तिक संघर्ष की छाया है। 'सम्राट् अष्टम एडवर्ड के प्रति' में कवि ने प्रेम के लिये सम्राट् के आदर्श त्याग की प्रशंसा की है। 'सरोज-स्मृति' पुत्री की मृत्यु पर एक मार्मिक दुःख गीत है। इसमें साहित्यिक समर्थता होने पर भी आर्थिक क्षेत्र में असफलता की घोषणा की है। 'राम की शक्ति पूजा' में राम की सेना चिंतित है क्योंकि अजेय रावण पर राम के बाण प्रभावहीन हो जाते हैं। राम के अंतर्द्वन्द्व को दिखलाने में कवि को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है।

गीतिका (१९३६)—स्फुट गीतों का संग्रह। इसमें साहित्य और संगीत दोनों के मिलाने का उद्योग किया गया है।

तुलसीदास—इस सुंदर काव्य के आरंभ में कवि ने आर्य जाति के पददलित होने पर बड़ा क्षोभ प्रकट किया है।

कुकुरमुत्ता—इसमें वर्ग संघर्ष की ध्वनि है। यह दलितों का प्रतीक है। 'तोड़ती पत्थर' में एक मज़दूर स्त्री का करुणामय चित्र है।

अणिमा, वेला, नये पत्ते, अर्चना (१९५०), *अपरा* (पुरानी और नई सभी कविताओं का संग्रह) आदि अन्य काव्य संग्रह हैं। कवि के अन्य ग्रंथ इस प्रकार हैं—

उपन्यास—*अप्सरा, अलका, प्रभावती, निरुपमा, उच्छृंखल, चोटी की पकड़, काले कारनामे* और *चमेली*। इन उपन्यासों में सामाजिक रूढ़ियों के प्रति बड़े तीव्र व्यंग्य हैं। प्रायः सभी रचनाओं के नायक उच्च शिक्षा प्राप्त, किंतु बेकार तथा सामाजिक बंधनों के प्रति विद्रोहशील हैं। *प्रभावती* एक ऐतिहासिक शैली का उपन्यास है।

कहानी-संग्रह—*लिली, सखी, चतुरी चमार, सुकुल की बीबी*।

रेखा चित्र—*कुल्ली भाट, बिल्लेसुर बकरिहा*।

आलोचनात्मक निबंध-संग्रह—*प्रबंध पद्य, प्रबंध प्रतिभा, प्रबंध परिचय, रवींद्र कविता कानन*। निराला जी के निबंधों मे कहीं-कहीं तीखे व्यंग्य भी हैं। निबंधों के विषय विविध हैं।

जीवनियाँ—*राणा प्रताप, भीम, प्रह्लाद, ध्रुव, शकुंतला*।

अनुवाद—*महाभारत, श्री रामकृष्ण-वचनामृत (चार भाग), परिव्राजक स्वामी विवेकानंद के भाषण, देवी चौधरानी, आनंद मठ, चंद्रशेखर, कृष्णकांत का विल, दुर्गेश नंदिनी, रजनी, युगलांगुलीय, राधारानी, तुलसी-कृत रामायण की टीका, वात्स्यायन कामसूत्र*।

ये आधुनिक रहस्यवादी धारा के एक प्रधान स्तंभ हैं। ब्रह्मवाद से प्रभावित ये अवश्य हैं, किंतु ब्रह्मलीन होकर अपने व्यक्तित्व को खो देने के पक्ष में नहीं हैं। इनमें बुद्धिवाद और रहस्यवाद दोनों का सम्मिलन हुआ है।

ये अतुकांत एवं मुक्तक छंद की कविता के कुशल कलाकार हैं। अपनी प्रकृति के अनुकूल ही 'कविता-कामिनी' को स्वच्छंदता देकर इन्होंने उसका स्वाभाविक संगीतमय सौंदर्य उद्भासित करने का प्रयत्न किया है। इनकी भाषा संस्कृत-गर्भित है। इनके काव्य में ओज की मात्रा अधिक है। इनका अलंकार-विधान बड़ा स्वाभाविक है। इन्होंने प्राचीन उपमानों का भी बड़े सुंदर ढंग से प्रयोग किया है। गंभीर दार्शनिकता और निराली प्रतिपादन शैली के कारण अनेक स्थलों पर इनके शब्द-चित्र उलझे हुए और दुरूह-से हो गये हैं। 'निराला' चहुँमुखी प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं, परंतु हिंदी-जगत् ने इन्हें कवि-रूप में अधिक स्वीकार किया है। विशेष दे० गंगाप्रसाद पांडेय-कृत *महाप्राण निराला*।

सूर्यमल्ल मिश्रण (जन्म १७१५ ई०)—बूंदी निवासी एक कवि और *वंश भास्कर* (राजपूतों और विशेषकर बूंदी के राजाओं का इतिहास) तथा *वीर सतसई* (वीर रस का एक उत्कृष्ट ग्रंथ) के डिंगल भाषा में रचयिता।

सेकसरिया-महिला-पारितोषिक — प्रति वर्ष ५००) रुपये का यह पुरस्कार किसी महिला द्वारा रचित हिंदी की मौलिक रचना पर दिया जाता है। श्री सीताराम सेकसरिया इस पारितोषिक के दाता हैं। इसका प्रारंभ १९३१ ई० से हुआ। यह पुरस्कार निम्न महिलाओं को प्राप्त हो चुका है—सुभद्राकुमारी चौहान (*मुकुल*, दूसरी बार *बिखरे मोती* पर), चंद्रावती लखनपाल (*स्त्रियों की स्थिति*), महादेवी वर्मा (*नीरजा*), रामकुमारी चौहान (*निःश्वास*), दिनेशनंदिनी डालमिया (*शबनम*), सूर्यदेवी दीक्षित (*निर्झरिणी*), तोरनदेवी शुक्ल लली (*जागृति*), सुमित्राकुमारी सिन्हा (*विहाग*), तारा पांडेय (*आभा*), चंद्रावती ऋषभसेन जैन (*नींव की 'ईंट'*), चंद्रकिरण सौनरिक्सा (*आदमखोर*), शांति (*रेखा*), उषादेवी मित्रा (*सांध्य पूर्वी*), राधादेवी गोयनका (*नारी समस्या*)।

सेतुबंध—वह पुल जिसे राम की सेना को पार उतारने के लिये नल और **नील** ने वानरों की सहायता से समुद्र पर बनाया था।

सेन (ई० १५ वीं शती)—बाँधोगढ़ (रीवा) अधिपति राजाराम के सेवक एक संत, जो जाति से नाई थे। कहते हैं कि एक बार ईश्वर ने इनका रूप धारण कर राजा की सेवा की थी। *ग्रंथ साहब* में इनकी कई सूक्तियाँ उद्धृत हैं।

सेनापति (जन्म १५८९ ई०)—अनूपशहर निवासी, एक कवि और *कवि रत्नाकर* तथा *काव्य कल्पद्रुम* के रचयिता। ये बड़े कोमल, सरस और भावुक कवि थे। यद्यपि ये वृंदावन में रहते थे, तथापि इनका हृदय रामोपासना में रमा हुआ था। भावुकता के साथ ये काव्य के चमत्कार दिखाने में भी निपुण थे। अपनी रचना में इन्होंने अनुप्रास, यमक और श्लेष अलंकारों का बड़ा चमत्कार दिखाया है। मुक्तक काव्यकारों में इनका स्थान बहुत ऊँचा है। इनकी भाषा शुद्ध साहित्यिक ब्रज है, जो सरल सजीव एवं सुगठित है। इनका षड्ऋतु-वर्णन बहुत प्रसिद्ध है। इन्होंने प्रकृति का मानवी भावों के साथ सामंजस्य स्थापित किया है। विशेष दे० रामचंद्र तिवारी-कृत *रीति-कालीन हिंदी कविता और सेनापति*, कृष्णशंकर शुक्ल-कृत *कविवर रत्नाकर*।

सेवक (१८१५-८१ ई०)—असनीवाले प्रथम

ठाकुर कवि के पौत्र एक रीति-कवि । *वाग्विलास* तथा *नखशिख* के रचयिता । इनके सवैये पर्याप्त प्रसिद्ध हैं ।

सेवासदन—**प्रेमचंद** का सर्वप्रथम मुख्य उपन्यास (१९१८ ई०) ।

अत्यंत ईमानदार पुलिस दारोग़ा कृष्णचंद्र ने विवश होकर अपनी पुत्री सुमन के विवाह के लिये रिश्वत ली, जिसके फलस्वरूप उन्हें ५ वर्ष का कारावास हुआ । पीछे से उनकी पत्नी गंगाजली ने सुमन का विवाह १५ रुपये वेतन पाने वाले गजाधर प्रसाद नामक एक विधुर से कर दिया । एक दिन सुमन के चरित्र पर संदेह होने के कारण गजाधर ने उसे घर से बाहर निकाल दिया । शहर के सुधारवादी वकील पद्मसिंह शर्मा भी सुमन को आश्रय न दे सके । अंत में सुमन के घर के सामने रहने वाली भोला नामक वेश्या ने उसे अपने कोठे पर आश्रय दिया । यह वही वेश्या थी. जिसे सुमन ने अनेक बार सभ्य पुरुषों से सम्मान पाते, मंदिरों में नृत्य करते और धार्मिक व्यक्तियों द्वारा भी सत्कृत होते देखा था । इन दृश्यों को देखकर उसे कई बार धक्का लगा था और उसके संस्कार डाँवाडोल हो उठे थे । सुमन के वेश्या बनने पर पद्मसिंह का रसिक भतीजा सदनसिंह जब उसपर मुग्ध हो गया, तब पद्मसिंह के मित्र विट्ठलदास सुधारक बनकर सुमन के पास उसके उद्धार के लिये गये । पहिले तो वह समाज के खोखलेपन पर हँस दी, किंतु बाद में समझाने पर वह एक विधवा-आश्रम में चली गई । इधर सदनसिंह का विवाह सुमन की छोटी बहिन शांता से होना था, किंतु सुमन संबंधी अपवाद सुनकर बारात वापिस चली गई । दारोग़ा कृष्णचंद्र कारावास से आ चुके थे और उन्होंने यह सब देखकर आत्म-हत्या कर ली । अपनी माता की मृत्यु के पश्चात्, शांता भी सुमन के पास चली गई, पर कुछ विरोध के कारण दोनों को विधवा आश्रम भी छोड़ना पड़ा । एक बार अचानक उन दोनों की भेंट सदनसिंह (जो मल्लाहों का सरदार बन गया था) से हो गई । सदनसिंह ने पश्चात्ताप किया और उसका विवाह शांता से हो गया । सुमन शांता के पास रहने लगी, किंतु जब उसे यहाँ से भी जाना पड़ा, तब मार्ग में उसकी भेंट स्वामी गजानंद के रूप में गजाधर प्रसाद से हो गई । उनकी प्रेरणा से उसने सेवासदन का कार्यभार स्वीकार कर लिया । यह अनाथालय वेश्याओं की कन्याओं के सुधार के लिये खोला गया था ।

इस उपन्यास में वेश्याओं की समस्या पर सुधारवादी दृष्टिकोण से ही विचार किया गया है, समस्या के मूल में जो आर्थिक कारण है उसकी ओर लेखक ने दृष्टि नहीं डाली । उपन्यास में अप्रत्यक्ष रूप से दहेज की समस्या, समाज की झूठी नैतिकता, पाखंड रूढ़िवादिता आदि अनेक प्रश्न आए हैं । उपन्यास के पूर्वार्ध में सुमन की कहानी तथा उत्तरार्ध में शांता की कहानी को प्रमुखता देकर ऐसा समन्वय लेखक नहीं स्थापित कर सका जिससे उपन्यास में धारावाहिकता बनी रह पाती ।

सैरंध्री—अज्ञातवास के समय **द्रौपदी** का नाम, जब उसने विराट के अंतःपुर में सैरंध्री का कार्य किया था ।

सोन (शोण)—अमरकंटक पर्वत से निकलने वाली गंगा की एक प्रसिद्ध सहायक नदी ।

रामायणकाल में यह नदी **गिरिव्रजपुर** की पूर्वी दिशा में बहती थी।

सोफ़ौक्लीज़ (Sophocles) (४९५-४०६ ई० पू०)—एक महान् यूनानी दुःखांत नाटककार, जिनके ७ नाटक प्राप्त हैं।

सोम—चंद्रमा का नामांतर।

सोमदेव—दे० *कथा सरित् सागर*।

सोमनाथ—१ (र० का० १७३३-५३ ई०)—भरतपुर-राजकुमार प्रतापसिंह के आश्रित एक रीति-कवि। *रसपीयूषनिधि*, *कृष्ण लीलावती*, *पंचाध्यायी*, *सुजान विलास* (*सिंहासन बत्तीसी* पद्य में) तथा *माधव-विनोद नाटक* के रचयिता। काव्यांग-निरूपण में ये **श्रीपति** और **भिखारीदास** के समान ही हैं। २ काठियावाड़ के पश्चिम तट पर स्थित एक प्राचीन नगर, जहाँ द्वादश ज्योतिर्लिंग का मंदिर है। १०२४ ई० में महमूद ग़ज़नवी ने इस मंदिर को लूटकर विध्वस्त कर दिया था।

सोमप्रभ सूरि—एक प्रसिद्ध जैन साधु। *कुमारपाल प्रतिबोध* (१२९८ ई०, संस्कृत-प्राकृत काव्य) के रचयिता। इस ग्रंथ में अपभ्रंश और प्राचीन हिंदी के उदाहरण भी मिलते हैं।

सोमराजी—य दो सोमराजी (य य=६ व० छंद)। उ०—ययू बाल देखो। सुरंगी सुभेखो।

सोरठा—सम तेरह, विषमेश, दोहा उलटा सोरठा (विषम पादों (१,३) में ११,११ मात्राएँ और सम पादों (२,४) में १३,१३ मात्राएँ होती हैं)। यह दोहा छंद का उलटा है। उ०—जिहि सुमिरत सिधि होय, गण-नायक करिवर वदन। / करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभ गुण सदन॥

सोरठा रा दूहा—किसी अज्ञात लेखक का डिंगल में एक प्रेम-काव्य (लि० का० १६५३ ई०), जिसमें बीजो और राव रूड़ो की स्त्री सोरठ के प्रेम के दोहे हैं। इसकी एक प्रति *बीजा सोरठ री बात* (लि० का० १७६५) भी है।

सोहणी री बात—सोहणी और उसके प्रेमी मलियार की गद्यमय प्रेम-कथा (लि० का० १७६० ई०)।

सोहनलाल द्विवेदी—कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *भैरवी* (इसमें सुंदर अभियान गीत हैं), *वासवदत्ता* (१९४२ ई०, काव्य-संग्रह) आदि हैं। 'ये गांधीवाद से प्रभावित राष्ट्रिय कवि के रूप में अधिक दिखाई देते हैं।'

सौनंद—**बलराम** के मूसल का नाम।

सौभीर—एक प्राचीन तपस्वी ऋषि। एक बार इनके मन में सुख भोगने की इच्छा उत्पन्न हुई। इन्होंने अयोध्यापति **मांधाता** से एक कन्या माँगी। मांधाता ने वृद्ध ऋषि को देखकर कहा—'आप मेरे अंतःपुर में जाएँ, जो कन्या आप से प्रेम करे, उससे विवाह कर लें।' ये युवा-रूप में अंतःपुर में गये तो पचासों कन्याएँ इनपर मुग्ध हो गईं। राजा ने पचासों कन्याओं का विवाह इनसे कर दिया, किंतु अपने पतन से खिन्न होकर ये पुनः ब्रह्म के ध्यान में लीन हो गये (*भा०* ९.६)।

सौराष्ट्र—काठियावाड़। रामायण-काल में सौराष्ट्र के अंतर्गत गुजरात, कच्छ और काठियावाड़ थे। इसकी प्राचीन राजधानी वल्लभी थी। गुप्त-काल में इसकी राजधानी वामनस्थलि (वर्त्तमान बंथलि) थी।

सौवीर—सिंधु नदी के आस-पास का प्राचीन प्रदेश।

स्कंद—शिव और पार्वती के पुत्र। इनका जन्म **तारकासुर** के वध के लिये हुआ था। जब ये सात दिन के थे, तब इन्होंने उसका वध किया था। इनकी पत्नी का नाम देवसेना था (*मत्स्य० १५८-५६*)। इनका वाहन मयूर था। ये देव-सेनापति भी थे। पर्य्याय०—कार्त्तिकेय, अग्निभू, गंगज, सरजन्मा, महासेन, पार्वतीनंदन, क्रौंचदारण, शक्तिधर, शिखवाहन, कुमार, स्वामि कार्तिक आदि।

स्कंदगुप्त—गुप्तवंशी भारत-सम्राट् (४५५-६७ ई०)।

स्कंदगुप्त विक्रमादित्य—**जयशंकर प्रसाद** का एक नाटक (१६२६ ई०)।

गुप्तवंशी सम्राट् कुमारगुप्त की बड़ी रानी देवकी से स्कंदगुप्त और छोटी रानी अनंतदेवी से पुरुगुप्त उत्पन्न हुए। स्कंदगुप्त इस आशा से मालव-नरेश की युद्ध में सहायता करने के लिये गया कि सेनापति पर्णदत्त समस्त सेना लेकर पुष्य मित्रों के आक्रमण से मगध को सुरक्षित रखेंगे। कुमारगुप्त ने विलासिता के कारण शासन-व्यवस्था पर ध्यान नहीं दिया। इधर अनंतदेवी पुरुगुप्त को राज्याधिकारी बनाना चाहती थी। उसके षड्यंत्र में महा-सेनापति भटार्क भी सम्मिलित हुआ, किंतु यह समाचार गुप्त रखा गया। मंत्री पृथ्वीसेन, महा-दंडनायक और महा-प्रतिहारी रोके जाने पर भी सहसा प्रासाद में प्रविष्ट हो गये। वहीं अंतर्विद्रोह न करके तीनों ने छुरा मारकर आत्महत्या कर ली। अनंतदेवी के कुचक्रों द्वारा देवकी की हत्या का षड्यंत्र रचा गया, किंतु ठीक समय पर स्कंदगुप्त के पहुंच जाने से वह सफल नहीं हुआ। स्कंदगुप्त अपनी माता के साथ उज्जयिनी चला गया। सम्राट् होने पर स्कंदगुप्त ने अपराधियों को क्षमा कर दिया। बौद्ध कापालिक प्रपंचबुद्धि श्मशान पर एक बलि देना चाहता था। विजया अपने द्वेष के कारण बहका कर देवसेना को वहाँ ले गई, किंतु स्कंदगुप्त ने उसी समय वहाँ पहुँच कर उसे बचा लिया। अनंतदेवी ने हूणों से मिलकर स्कंदगुप्त पर आक्रमण कर दिया। भटार्क ने स्कंदगुप्त से विश्वासघात किया। फलस्वरूप स्कंदगुप्त और उसकी सेना शत्रु का पीछा करते समय सहसा बाँध तोड़े जाने के कारण नदी में बह गई। स्कंद बहुत दिनों तक इधर-उधर भटकता फिरा। उसी बीच देवकी का अंत हो गया। विजया ने स्कंद से प्रेम का तिरस्कार पाकर आत्महत्या कर ली। स्कंद को विजया के रत्नगृह की प्राप्ति हुई। भटार्क ने पश्चात्ताप करते हुए आत्महत्या करनी चाही, पर स्कंद के समझाने पर उसने पुनः सेना का संकलन किया। हूणों से फिर युद्ध हुआ। स्कंद विजयी होकर आजीवन अविवाहित रहा। उसने पुरुगुप्त को युवराज नियत कर दिया।

इस नाटक में डगमगाते गुप्त-साम्राज्य के अंतिम दिनों की जर्जरित उद्दीप्त झाँकी है। स्कंदगुप्त को हूणों के आक्रमणों को विफल करने के लिये जिन प्रयत्नों और आंतरिक संघर्षों का सामना करना पड़ा, उन सब का इस नाटक में चित्रण है। यह 'प्रसाद' का उत्कृष्ट नाटक माना जाता है।

स्थानेश्वर—थानेसर का प्राचीन नाम।

स्थायी-भाव—मन के विकार (परिवर्तन) को, अथवा किसी वस्तु के देखने से या कल्पना में उस पर विचार करके मन की जो दशा हो जाती है, उसको भाव कहते हैं। जो भाव आदि से अंत तक रहें, उन्हें स्थायी-भाव कहा

जाता है । माला की गुरियों में जिस तरह सूत्र पिरोया रहता है, उसी तरह स्थायी-भाव व्याप्त रहता है । स्थायी भाव ९ हैं—*रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय* और *निर्वेद* ।

ये भाव विभाव द्वारा उद्‌बुद्ध होकर अनुभावों और संचारी भावों से पुष्ट होकर रस रूप को प्राप्त होते हैं । वात्सल्य रस (दे० *रस*) का स्थायी भाव *वत्सल* है ।

स्मरण—एक अर्थालंकार जिसमें सदृश वस्तु को देख पूर्वानभूत वस्तु की याद का वर्णन होता हो । उ०—प्राची दिसि ससि उगेहु सुहावा । / सिय मुख सरिस देखि सुख पावा ॥ यहाँ चंद्र को देखकर तत्सदृश सीता के सुख की याद आ गई है ।

स्मृति—ऋषि लोगों के संमुख जब आचार व्यवहार तथा धर्म की कोई समस्या प्रस्तुत होती थी, तब वे वेद का स्मरण कर उसके आधार पर उसका समाधान करते थे । वेद को स्मरण करने के कारण उन समाधानों के संग्रह स्मृति कहलाये । मनु का कथन भी है—*श्रुतिं पश्यंति मुनयः स्मरंति तु यथा स्मृति । / तस्मात् प्रमाणं मुनयः प्रमाणं प्रथितं भुवि ॥ (मनु० २.१६)*। मनु, याज्ञवल्क्य और नारद आदि की स्मृतियाँ प्रसिद्ध हैं । इनके विषय में यह सर्वसम्मत सिद्धांत है कि वेदानुकूल स्मृतिवचन ही प्रमाण है, अन्य नहीं ।

स्यमंतक—एक प्रसिद्ध मणि जो प्रतिदिन सुवर्ण देती थी । जिसके पास यह होती थी वह दुःख से दूर रहता था । कृष्ण को इसकी चोरी का कलंक लगा (दे० *सत्राजित*) । यह मणि सत्राजित, प्रसेन, सिंह, **जांबवंत**, कृष्ण, **सत्राजित, शतधन्वा** के पास से होती हुई अंत में सत्यभामा को मिली थी (*भा० १०.५६*) ।

स्रग्धरा—मा रा भा ना य या या मुनिवर भणिता 'स्रग्धरा' सुंदरी है (म र भ न य य य=२१ (७,७,७) व० छंद) । उ०—हे दुर्गे! विश्वधात्री ! जननि भगवती ! हे शिवे है भवानी ! / आर्ये कल्याणि वाणी ! भव भय हरिणी ! चंडी त्रैलोक्य रानी !

स्रग्विणी—रे चहौं स्रग्विणी मूर्त्ति गोविंद की (४ र=१२ व० छंद) । उ०—राम आगे चले मध्य सीता चली, / बंधु पीछे भये सोभ सोभै भली ।

स्वकीया—विनय-शील, सरल, गृह-कार्य में तत्पर और पतिव्रता स्त्री । इसके तीन भेद हैं—१ मुग्धा, २ मध्या, ३ प्रगल्भा । इनके उपभेदों को भी सम्मिलित करने पर कुल १३ भेद हो जाते हैं ।

स्वगत-कथन—'किसी पात्र के चरित्र और अभिप्राय को स्पष्ट करने के लिये प्राचीन नाटककार इस उपाय को अपनाते थे । इसमें कोई पात्र आप ही आप कुछ कहकर अपनी बात दूरस्थ श्रोताओं पर प्रकट कर देता था, जबकि वह निकटस्थ पात्रों से गुप्त रहती थी। इस उपाय की प्रतिष्ठा आकाशभाषित आदि के साथ भाण आदि एकपात्री नाटकों में चरम सीमा तक पहुँच गई । इब्सन के बाद यथार्थ-वादी नाटकों के उद्‌भव ने इस अस्वाभाविकता को दूर कर दिया । किंतु अभिव्यंजनावाद के झोंके में पात्र के आंतरिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने के लिये कुछ अप्रकट रूप में स्वगत-कथन को पुनः प्रयोग में लाया गया है । नाटककार अपनी टिप्पणी देने के इस अचूक साधन को प्रायः अपनाते रहे हैं ।'

स्वच्छंदतावाद (*Romanticism*)—सभी कलाओं में इस वाद का प्रयोग उस प्रवृत्ति के लिये होता है, जो तर्क या बुद्धि की अपेक्षा कल्पना-शक्ति को महत्त्व देती है और जो पूर्ण स्पष्टता तथा आकार की सुंदरता के शास्त्रीय आदर्शों को तिलांजली देती है। १८ वीं शती के अंत में यह वाद यूरोप में अपनी बढ़ती हुई शक्ति के साथ प्रकट हुआ। इंगलैंड में इसके कर्णधार वर्ड्ज़्वर्थ और कोलरिज थे। उन्होंने पुरानी शास्त्रीय रीतियों का परित्याग कर सरल प्राकृतिक विषयों, सहज-स्वाभाविक भाषा तथा छंदों को अपनाया। प्रकृतिवाद से इसका सीधा संबंध रहा। हिंदी में श्रीधर पाठक का नाम इस परंपरा के उन्नायकों में लिया जा सकता है।

स्वभावोक्ति—एक अर्थालंकार जिसमें किसी प्राणी व पदार्थ की क्रिया वा स्वरूप का यथावत् वर्णन किया जाए। उ०—कौसल्या जब बोलन जाई। ठुमुकि ठुमकि हरि चलहिं पराई। / धूसर धूरि भरे तनु आए, भूपति विहंसि गोद बैठाए॥

स्वयंप्रभा—मेरुसावर्णी की पुत्री और हेमा की सखी। स्वर्ग जाते समय हेमा ने अपने पति मय द्वारा निर्मित प्रासाद इसे दे दिया था। इसने अंगदादि वानरों को समुद्र पार करवाया था। राम के दर्शन करके यह स्वर्ग चली गई (*वा० रा० कि० ५०-५३*)।

स्वयंभूदेव (ई० ८ वीं शती)—जैन महाकवि तथा *पउम चरिउ* (*पद्म चरित्र, जैन राम-कथा*), *रिट्ठि णेमि चरिउ* (*अरिष्टनेमि चरित्र, हरिवंश पुराण*), *पंचामी चरिउ* (नागकुमार चरित्र) और *स्वयंभू छंद* के रचयिता। इनकी अपभ्रंश भाषा में प्राचीन हिंदी का रूप प्रतिबिंबित है। **राहुल सांकृत्यायन** की प्राचीन हिंदी के संबंध में खोज होने से पूर्व ये ही हिंदी के आदि कवि माने जाते थे। दे० *जैन साहित्य*।

स्वयंवर—प्राचीन भारत का एक प्रसिद्ध विधान, जिसमें कन्या कुछ उपस्थित व्यक्तियों में से अपने लिये स्वयं वर चुनती थी।

स्वर्ग—हिंदुओं के मतानुसार वह लोक, जिसमें पुण्य एवं सत्कर्म करने वाली आत्माएं जाकर निवास करती हैं। देवताओं और अप्सराओं का भी निवास स्थान यही है।

स्वागता—स्वागतार्थ उठ रे नभ गंगा (र न भ ग ग=११ व० छंद)। उ०—राज राज दशरत्थ तनै जू। / रामचंद्र भुवचंद्र बने जू। इसे गंगाधर तथा सुपथ भी कहते हैं।

स्वाति नक्षत्र—एक नक्षत्र। ऐसा प्रसिद्ध है कि इस नक्षत्र में जब वर्षा होती है, तब मोती उत्पन्न होते हैं और 'चातक' पक्षी की तृष्णा इसी के जल से दूर होती है।

स्वाभाविकतावाद (*Naturalism*)—१ इसके अनुसार कला या साहित्य को स्वाभाविक प्रकृति के सदृश होना चाहिये। इस प्रकार यह यथार्थवाद के समकक्ष आ जाता है। इस रूप में यह स्वच्छंदतावाद (*Romanticism*) का विरोधी है। २ विशेष रूप से वे सिद्धांत और विशेषता सूचक लक्षण जिनको ज़ोला (Zola), मोपासाँ (Maupassant) आदि १९ वीं शती के यथार्थवादी लेखकों ने स्वीकार किया अथवा चित्रित किया। उन लेखकों का उद्देश्य वास्तविकता का शाब्दिक अनुकरण था। उन्होंने साहित्य में चरित्र के विश्लेषणात्मक अध्ययन और अपने जीवन-अनुभवों के वैज्ञानिक और प्रयोगात्मक पहलू पर बल दिया। इस प्रकार

इसमें मनुष्य की मानवहित-परायणता तथा धार्मिक दृष्टिकोण के स्थान पर प्राकृतिक और स्वाभाविक दृष्टिकोण का वर्णन हुआ। इसमें वर्णनीय वस्तु वा घटना का वर्णन गंदी, भद्दी, व्यंग्यात्मक और उदासीन रीति से हुआ है। कुछ हिंदी-उपन्यासों पर इसका प्रभाव विशेष रूप से पाया जाता है।

ह

हंस—१ बतख के आकार का एक पक्षी, जो अपनी शुभ्रता और सुंदर चाल के लिये प्रसिद्ध है। कवियों में तथा साधारण जनता में इसके मोती चुगने और नीर-क्षीर विवेक करने का प्रवाद चला आता है, जो कल्पना मात्र है। इसका वर्णन जलाशयमात्र में होना चाहिये और यह वर्षा में उड़कर मानसरोवर चला जाता है। २ विष्णु के एक अवतार। ३ योग के भाषानुसार जीव, जो नव-द्वार के पिंजड़े में बंद रहता है।

हंस जवाहर—**कासिम शाह** (१७३१ ई०) का एक काव्य, जिसमें राजा हंस और रानी जवाहर की प्रेम-कथा है।

हज—मुसलमानों की **मक्के** की तीर्थ-यात्रा।

हज़ारा—हज़ार का संग्रह। यथा—*कालिदास हज़ारा* आदि।

हज़ारीप्रसाद द्विवेदी (१९०७ ई०-)—प्रसिद्ध समालोचक। काशी विश्वविद्यालय, हिंदी विभाग के वर्त्तमान अध्यक्ष। इनकी मुख्य रचनाएँ *हिंदी साहित्य की भूमिका* (१९४०), *कबीर* (१९४२), *हिंदी साहित्य*, *हिंदी साहित्य का आदि-काल*, *नाथ संप्रदाय*, *बाणभट्ट की आत्मकथा* (आत्मकथा के रूप में एक सुंदर ऐतिहासिक उपन्यास) आदि हैं।

हठयोग—योग का वह अंग, जिसमें शरीर को साधकर उसके द्वारा मन को वश में करने के लिये कठिन मुद्राओं, आसनों आदि का विधान है।

हनुमान्नाटक—दे० *हृदयराम*।

हनुमान—सुग्रीव के मंत्री एक वीर वानर, जो केसरी और अंजना (दे० यथा०) के पुत्र थे। लंका में जाकर ये सीता का पता लाए थे *(वा० रा० सुं० ३३-३६)*। लक्ष्मण को जब शक्ति लगी, तब संजीवनी बूटी ये ही लाए थे। *(वा० रा० यु० ५०, १०२)*। ये राम के परम भक्त थे। ये अपने अपार बल और वीरता के लिये प्रसिद्ध हैं। राम के समान इनकी पूजा भी भारत में सर्वत्र होती है। पर्य्याय०—पवनसुत, अंजनीकुमार, महावीर, महाबली, वज्रांगी (बजरंगी), कपिकेशरी, कपीश, जितेंद्रिय, वातात्मज, आंजनेय, रामदूत, मारुति, अक्षहंत आदि। दे० *कालनेमि*।

हम्मीर—रणथंभोरगढ़ के एक अत्यंत वीर चौहान राजा, जो १३०० ई० में अलाउद्दीन खिलजी से युद्ध करते हुए मारे गये। इनकी वीरता का वर्णन अनेक कवियों ने किया है। उन सब काव्यों में चंद्रशेखर वाजपेयी-कृत *हम्मीर हठ* प्रसिद्ध है।

हम्मीर महाकाव्य—जैन कवि **जयचंद्र** (आ० का० ल० १४०३ ई०) का राजा **हम्मीर** की प्रशंसा में लिखित एक काव्य। इस ग्रंथ में चौहानों को सूर्यवंशी लिखा है, अग्निवंशी नहीं।

हम्मीररासो—**शारङ्गधर** (१३०० ई०) की एक

अप्राप्त रचना, जिसमें रणथंभोर के महाराणा **हम्मीर** तथा **अलाउद्दीन** के विकट युद्ध का बड़ी ही ओजस्विनी भाषा में वर्णन है। जिस प्रति के आधार पर इस ग्रंथ का प्रकाशन हुआ है, वह असली नहीं है। कुछ आचार्य इस ग्रंथ को हम्मीर के मंत्री सेनापति और राजकवि **जज्जल** द्वारा १२९८ ई० के लगभग लिखित मानते हैं।

हम्मीर हठ—**चंद्रशेखर वाजपेयी** (१७९८–१८७५ ई०) का एक प्रसिद्ध वीर काव्य, जिसमें रणथंभोर (जयपुर के निकट) के राजा हम्मीरदेव तथा **अलाउद्दीन** बादशाह के युद्ध का वर्णन है। इस काव्य में वीर-दर्प की बड़ी सुंदर और ओजपूर्ण व्यंजना हुई है। इसकी जैसी सुव्यवस्थित, परिमार्जित और ओजस्वी भाषा इने-गिने ही वीर काव्यों में दिखाई देती है। कविता बड़ी मनोहर और ऊर्जस्वला है। ओज, माधुर्य और प्रसाद तीनों गुण अपने-अपने स्थान पर सुशोभित हैं। विषय के अनुसार पदावली में परिवर्तन, काव्य की अपनी विशेषता है। इस ग्रंथ के और इतिहास के वृत्तांत में इतना विरोध है कि इतिहास में तो लिखा है कि बादशाह ने हम्मीर को जीत लिया और वह युद्ध में मारा गया, पर इस काव्य में यह वर्णित है कि हम्मीर ने युद्ध में बादशाह को परास्त कर दिया और गढ़ में लौट आने पर भावीवश स्त्रियों का आत्मघात करना ज्ञात होने पर उसने स्वयं अपना सिर काट लिया। यह काव्य वास्तव में हिंदी-साहित्य का एक रत्न है।

हयग्रीव—१ **विष्णु** के एक अवतार। २ एक राक्षस जो कल्पांत में ब्रह्मा की निद्रा के समय वेदों को चुरा कर भाग गया था। विष्णु ने इस राक्षस का वध करके वेदों का उद्धार किया (*देवी भा० ९.५*)।

हरजसराय, लाला—रीति-कालीन एक जैन कवि। *देवाधिदेव रचना*, *साधुगुणमाला* तथा *देव रचना* (धार्मिक ग्रंथ) के रचयिता।

हरदौल—ओरछा के राजा जुझारसिंह (१६२६-३५ ई०) के अनुज, जो बड़े सत्य-परायण तथा भ्रातृ-भक्त थे। राजा ने इन्हें रानी से विष दिलवा कर मरवा दिया था।

हरनारायण—एक कवि और *माधवानल-कामकंदला* तथा *वैताल-पचीसी*। (दोनों १७५५ ई०) के रचयिता।

हरबख्शसिंह (आ० का० १८५० ई०)—प्रतापगढ़ निवासी, एक राम-भक्त कवि। *रामायण-शतक* तथा *राम रत्नावली* के रचयिता।

हरसेवक मिश्र (आ० का० १७४४ ई०)—ओरछा दरबार के कवि। *कामरूप की कथा* के रचयिता।

हरिकृष्ण 'प्रेमी' (१९०८ ई०–)—नाटककार और कवि। इनकी मुख्य रचनाएँ *रक्षाबंधन* (१९३८, मेवाड़ की महारानी कर्मवती हुमायूँ के पास राखी भेजकर उसे अपना भाई बनाती है और गुजरात-सुलतान बहादुर शाह से मेवाड़ की रक्षा की प्रार्थना करती है; हुमायूँ इसे स्वीकार करता है)। *स्वप्न भंग* (१९४०, शाहजहाँ के पुत्र दारा शिकोह और उसके पुत्र सिपर शिकोह का वध, रोशनआरा का औरंगज़ेब के प्रति प्रेम आदि का वर्णन) (दोनों नाटक), *स्वर्ण विहान* (१९३०), *आँखों में*, *अनंत के पथ पर* (१९३२), *जादूगरनी*, *अग्निगान* (१९४०) (सब काव्य-संग्रह) आदि हैं।

इनके नाटक साहित्यिक और अभिनेय हैं। इनके दो नाटकों में राष्ट्रिय भावना से प्रेरित हिंदू-मुसलमानों में पारस्परिक सहानुभूति उत्पन्न करने की चेष्टा की गई है। इनके नाटक समय-समय पर खेले भी गये हैं। *अग्निगान* में असंतोष की अग्नि उग्र रूप में है, किंतु कवि की क्रांति अहिंसात्मक ही है।

हरिगीतिका—सोलह दुआदस यति विरचि हरिगीतिका निर्मित करो (२८ (१६,१२) मा० छंद, अंत ल ग)। उ०—खगवृंद सोता है अतः कल-कल नहीं होता वहाँ, / बस मंद मारुत का गमन ही, मौन है खोता जहाँ।

हरिणी—न सुमिरि मुली, गावौ काहे, वृथा हरिणी कथा (न स म र स ल ग=१७ (६,४,७) व० छंद)। उ०—न सुमिर मुली, गौरीनाथा, हरी तजि आन को।

हरिदास (आ० का० १५६० ई०)—निंबार्क संप्रदाय के अंतर्गत टट्टी संप्रदाय के प्रवर्त्तक, एक प्रसिद्ध कृष्ण-भक्त और कवि, जो एक उच्च गायक, और **तानसेन** के गुरु थे। इनके पद *हरिदास जी को ग्रंथ*, *स्वामी हरिदास जी के पद*, *हरिदास जी की बानी* आदि में संगृहीत हैं। इनका काव्य संगीत में बँधा हुआ और राग-रागनियों में गाने योग्य है। ये संगीत-कला के इतने विशेषज्ञ थे कि स्वयं अकबर वेष बदल कर इनका गाना सुनने के लिये आया करते थे।

हरिद्वार—सहारनपुर ज़िले में स्थित एक प्रसिद्ध तीर्थ। यहाँ गंगा शिवालिक पहाड़ियों से निकल कर मैदान में उतरती है। हरिद्वार में हर-की-पैड़ी पर ब्रह्मकुंड है। हिंदुओं का विश्वास है कि इस कुंड में स्नान करने से मनुष्य के लिये विष्णुलोक का द्वार खुल जाता है। हरिद्वार का प्राचीन नाम गंगाद्वार था। दे० *कनखल*।

हरिभद्र सूरि (आ० का० ७००-७० ई०)—एक जैन ग्रंथकार, जिनकी मुख्य रचनाएँ *ललित विस्तरा*, *धूर्ताख्यान*, *जसहर चरिउ*, *संबोध प्रकरण* और *णेमिणेह चरिउ* हैं। **राहुल सांकृत्यायन** के मत से इनका समय ११५९ ई० है। दे० *जैन साहित्य*।

हरिराम व्यास (आ० का० १५६५ ई०)—ओरछा-नरेश मधुकर शाह के गुरु, एक कृष्ण-भक्त कवि और हरिव्यासी पंथ के प्रवर्त्तक। इनका प्रसिद्ध ग्रंथ *व्यास की बानी* है, जिसमें भक्ति पदों के साथ 'रास पंचाध्यायी' भी वर्णित है। इनकी रचना बहुत सरस है।

हरिराय (आ० का० १५५० ई०)—**वल्लभाचार्य** के मतानुयायी एक प्रमुख गद्य-लेखक। *श्री यमुनाजी के नाम*, *श्री आचार्य महाप्रभु को स्वरूप*, *श्री आचार्य महाप्रभु की द्वादश निज वार्त्ता* (सब गद्यमय) तथा *वर्षोत्सव* (पद्यमय) के रचयिता।

हरिवंशराय 'बच्चन' (१९०७ ई०-)—हालावादी कवि। उमरख़ैयाम की रुबाइयों के आधार पर ये हालावाद की धारा के प्रवर्त्तक हैं। इनकी *मधुशाला*, *मधुकलश*, *मधुबाला* आदि पुस्तकों में संसार के दुःख-सुख भुलाकर विस्मृत हो जाने की भावनाएँ पाई जाती हैं। किंतु हालावाद से इनके जीवन की अतृप्ति न बुझी और इन्हें निराशा और वेदना की ओर आना पड़ा। *एकांत संगीत* और *निशा निमंत्रण* ऐसी ही कविताओं के संग्रह हैं। *सतरंगिणी*, *हलाहल*, *मिलन यामिनी*, *प्रणय पत्रिका* (कविता संग्रह) आदि में कवि फिर आशापूर्ण जीवन की ओर आ रहे प्रतीत होते हैं। *खादी के फूल* महात्मा गांधी के पश्चात् उन्हें श्रद्धांजलि समर्पित

करने के लिये हरिवंशराय 'बच्चन' और पंत द्वारा लिखित काव्य है।

हरिवल्लभ (आ० का० १६४३ ई०)—*भगवद्गीता* के पद्यबद्ध टीकाकार।

हरिश्चंद्र—एक प्रसिद्ध सूर्यवंशी राजा, जो त्रिशंकु के ज्येष्ठ पुत्र थे। इनके संबंध में विभिन्न ग्रंथों में विभिन्न आख्यान मिलते हैं। ये अपनी सत्यवादिता एवं प्रणपालन के लिये अत्यंत प्रसिद्ध हैं। विश्वामित्र ये इनसे इनका सारा राज्य दान में ले लिया और ऊपर से दक्षिणा माँगने लगे। दक्षिणा पूरी करने के लिये राजा ने अपने को काशी के एक डोम को तथा अपनी पत्नी शैव्यकन्या तारामती और पुत्र रोहिताश्व को ब्राह्मण को बेच दिया। राजा को श्मशान घाट पर पहरा देना पड़ता था तथा शव लेकर आने वालों से कर, कफ़न आदि लेना होता था। एक दिन सर्प द्वारा डसने से रोहिताश्व की मृत्यु हो गई। अंतिम संस्कार के लिये तारामती उसके शव को लेकर उसी घाट पर आई जहाँ राजा पहरा दे रहे थे। उसके पास कर देने के लिये पैसे नहीं थे तथा कफन के स्थान पर अपनी साड़ी का आँचल फाड़ कर उसने शव को उसी में लपेट लिया था। राजा अपनी रानी तथा अपने पुत्र को पहिचान कर भी कर्त्तव्य से च्युत न हुए और उसमें से आधा कफन फड़वा कर ले लिया। इस कर्त्तव्य-परायणता से प्रसन्न हो, उसी समय भगवान् ने प्रकट होकर रोहिताश्व को जीवित कर दिया और राजा को सारा राज्य-वैभवादि लौटा दिया (*मार्कं० ७.८, देवी भा० ७.१८-२७*)। दे० *शुनःशेप (ब्रह्म० १०४)*।

हरिश्चंद्र, भारतेंदु (१८५०–८४ ई०)—काशी निवासी, कवि गोपालचंद्र (उपनाम **गिरिधरदास**) के पुत्र। ९ वर्ष की अवस्था तक इनके माता-पिता का देहांत हो चुका था। ये कई भाषाओं के विद्वान् थे। विद्या की सेवा में इन्होंने धन को पानी की तरह बहा दिया था। कालांतर में इनको मानसिक कष्ट हुआ और क्षय रोग से इनका प्राणांत हुआ। इनके १६–१७ वर्ष के साहित्यिक जीवन की रचनाएँ इस प्रकार हैं—

नाटक—*सत्य हरिश्चंद्र* (राजा **हरिश्चंद्र** की कथा पर), *चंद्रावली*, *भारत-दुर्दशा*, *नीलदेवी*, *अंधेरनगरी* (प्रहसन), *वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति* (प्रहसन), *विषस्य विषमौषधम्* (भाण), *सती प्रताप* (अपूर्ण, सावित्री ने सत्यवान् की किस प्रकार रक्षा की), *प्रेमयोगिनी*।

अनूदित नाटक—*मुद्राराक्षस*, *धनंजय विजय*, *रत्नावली नाटिका* (संस्कृत से), *कर्पूरमंजरी* (प्राकृत से), *विद्यासुंदर*, *भारत जननी*, *पाखंड विडंबन* (बँगला से), *दुर्लभबंधु* (अंग्रेज़ी से)।

काव्य—भक्ति संबंधी : ४१ ग्रंथ; शृंगारिक: *होली*, *मधुमुकुल*, *प्रेम फुलवारी*, *प्रेम प्रलाप*, *सतसई शृंगार*, राष्ट्रिय और राजभक्ति संबंधी : *विजियनी-विजय-वैजयंती*, *भारत वीणा*, *सुमनांजलि* आदि।

इतिहास—*काश्मीर कुसुम*, *महाराष्ट्र देश का इतिहास*, *अग्रवालों की उत्पत्ति*, *दिल्ली दरबार दर्पण*, *बादशाह दर्पण*, *उदयपुरोदय*, *पुरावृत संग्रह*, *चरितावली* आदि।

आख्यान और निबंध—(अधिकांश अपूर्ण) *सुलोचना*, *मदालसोपाख्यान* (पौराणिक), *शीलवती*, *लीलावती*, *हमीर हठ*, *आप बीती जग बीती* (कहानी), *परिहास पंचक*, (हास्यरस संबंधी गद्य), *परिहासिनी* (हास्यरस लेख), *नाटक* (नाट्य-शास्त्र का विवेचनात्मक ग्रंथ)।

इन्होंने कुल मिलाकर १७५ छोटी-मोटी

पुस्तकें लिखीं; ७५ ग्रंथों का संपादन या प्रकाशन किया।

ये हमारे सामने कवि, नाटककार, गद्य-लेखक आदि रूपों में आते हैं। इनकी कविता में भक्ति-काल और रीति-कालीन शृंगारिक भावनाओं के साथ नये युग की देश-भक्ति और समाज-सुधार की भावनाओं का शिलारोपण हुआ। आधुनिक काव्य पर इनका प्रभाव निम्न रूपों में दृष्टिगोचर होता है—१ साहित्यिक भाषा का जनता के साथ संपर्क, २ प्रेम में वेदना और कसक, ३ देश-भक्ति और समाज-सुधार, ४ धार्मिक सहिष्णुता। 'राधारानी के गुलाम' होते हुए भी ये विचार में पूर्ण स्वतंत्र थे और कई लेखों में इन्होंने अपनी गवेषणात्मक बुद्धि का भी परिचय दिया है। नाटक-क्षेत्र में इन्होंने नाट्यशाला को पुनर्जीवन प्रदान किया (दे० *नाटक*)। इन्होंने 'कवि वचन-सुधा', 'हरिश्चंद्र मेगजीन' (पीछे 'हरिश्चंद्र चंद्रिका') 'बाला बोधिनी' पत्रिकाएँ भी निकालीं। ये समाज सुधारक भी थे। हिंदी को ये उसका निजी रूप देना चाहते थे। हिंदी को न तो ये उर्दू बनाना चाहते थे और न संस्कृत। इनकी शैली भावानुसारिणी होती थी। मुख्यतः इनकी शैली दो प्रकार की कही जी सकती है—पहिली भावावेशपूर्ण, जिसमें तद्भव शब्दों के साथ छोटे-छोटे वाक्यों का बाहुल्य रहता है; दूसरी विचारपूर्ण या तथ्य निरूपण की शैली, जिसमें विचारों की आवश्यकता के अनुकूल संस्कृत तत्सम शब्दों का भी प्रयोग होता है। अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के बल पर इन्होंने हिंदी की जो सेवा की, उसी के कारण ये आधुनिक युग के प्रवर्त्तक कहलाते हैं। विशेष दे० ब्रजरत्नदास-कृत *भारतेंदु हरिश्चंद्र*, रामविलास-कृत *भारतेंदु युग*, लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय-कृत *भारतेंदु की विचारधारा*।

हर्ष चरित—**बाण** (वर्त्त० ६३०-४५ ई०) का संस्कृत में एक ऐतिहासिक गद्य-काव्य (अनू०), जिसमें कवि ने **हर्ष वर्द्धन** के जीवन-चरित्र के साथ-साथ अपना भी जीवन-चरित्र अंकित किया है।

हर्षदेव—उत्तर भारत के एक सम्राट् (६०६-४७ ई०)। *प्रियदर्शिका*, *रत्नावली* (अनू०; नाटिका, राजा उदयन और उनकी रानी वासवदत्ता की दासी सागरिका (रत्नावली) की प्रेम-कथा) और *नागानंद* (अनू०, रूपक, राजकुमार जीमूत वाहन और मलयवती का विवाह वर्णन) के रचयिता। इनको हर्ष वर्द्धन भी कहते हैं। प्रसिद्ध चीनी यात्री सुएनच्वाँग इन्हीं के दरबार में रहा था।

हर्ष वर्द्धन—दे० *हर्ष देव*।

हलाहल—प्रचंड विष जो **समुद्रमंथन** के समय निकला था। दे० *नीलकंठ*।

हल्दी घाटी—दे० *प्रतापसिंह, राणा*।

हसन—**अली** के एक पुत्र, जो यजीद के साथ युद्ध में मारे गये थे। इनका शोक शीया मुसलमान मुहर्रम में मनाते हैं।

हस्तिनापुर—कौरवों की राजधानी, जो वर्त्तमान ज़िला मेरठ में गंगा के निकट थी। गंगा में बाढ़ आ जाने के कारण यह नगर नष्ट हो गया था। इसलिये जनमेजय के पौत्र निचक्षु ने अपनी राजधानी **कौशांबी** बनाई।

हाकलि—त्रै चौकुल गुरु हाकलि है (१४(तीन चौकल, गुरु) मा० छंद)। उ०—पर तिय मातु समान भजै, पर धन विष के तुल्य तजै।

हातिम—एक प्राचीन मुसलमान सरदार, जो अपनी दानशीलता और उदारता के लिये प्रसिद्ध हैं।

हाफ़िज़—(मृत्यु ल० १३९० ई०)—एक प्रसिद्ध फारसी दार्शनिक और कवि।

हारिल—एक पक्षी। लकड़ी से इसे इतना प्रेम होता है कि यह एक क्षण भी उसे नहीं छोड़ सकता। इसीलिये भक्ति के आवेश में सूरदास ने कहा है—हमारे हरि हारिल की लकड़ी।

हार्डी, टॉमस (१८४०-१९२८ ई०)—अंग्रेज़ी के एक प्रसिद्ध उपन्यासकार, कवि और कहानी- लेखक, जिनका 'टेस' नामक एक प्रसिद्ध उपन्यास अनूदित है। इनकी कुछ कहानियाँ भी अनूदित है।

हालावाद—हाला (मदिरा), बाला, मधुशाला, प्याला आदि प्रतीकों द्वारा मधुचर्या का वर्णन कर अनंत की ओर संकेत करने वाली शैली। हालावादी हिंदी-साहित्य हालावादी फारसी-साहित्य से प्रभावित है। सूफी लोग अपने को रिंदा (शराबी) कहना पंसद करते थे। वे मदिरा को आध्यात्मिक मस्ती का संकेत मानते थे। फारसी के हालावादी साहित्य में उमर खय्याम का नाम बहुत प्रसिद्ध है। फिट्जेराल्ड ने उनकी रुबाइयों का अनुवाद अंग्रेज़ी में किया। हिंदी में भी इन रुबाइयों के कई अनुवाद निकले हैं। हिंदी में इस धारा के प्रवर्त्तक हरिवंशराय 'बच्चन' हैं। इनके काव्य में एक विशेष तन्मयता है। इसी के कारण इसके कई अनुकरण हुए हैं, जैसे कृष्णचंद्र की *मदशाला*, रंजन की *टीशाला* आदि। हृषीकेश चतुर्वेदी ने भी भारतीय-संस्कृति के अनुकूल विजया की प्रशंसा में *विजया-वाटिका* नामक एक छोटी पुस्तक लिखी है।

हास्य—विकृत आकार, वाणी, वेष, चेष्टा आदि से आविर्भूत होने वाला, श्वेत वर्ण और प्रथम (शिवगण) देवता वाला रस। हास स्थायी-भाव; जिसे देखकर हँसी आवे, वह आलंबन; हासोत्पादिनी चेष्टा आदि उद्दीपन; मुख-विकास नेत्र-स्फुटन आदि अनुभाव; निद्रा, आलस्यादि इसके संचारी-भाव हैं। इसके छः भेद हैं—बड़े मनुष्यों में स्मित और हसित, मध्यम लोगों में विहसित और अवहसित तथा निम्न लोगों में अपहसित और अतिहसित। नेत्रों का थोड़ा-सा विकसित होना और होंठों का थोड़ा-सा फड़कना 'स्मित' है। उक्त क्रियाओं के साथ दाँत भी दीखें तो 'हसित' है, इन सब के साथ मधुर शब्द भी हो तो 'विहसित' है, कंधे सिर आदि में कँपकँपी भी हो तो 'अवहसित' है, आँखों में पानी भी आ जाए, तो 'अपहसित' है, और इधर-उधर हाथ-पैर भी पटके जाएं तो 'अतिहसित' है। उ०—विंध्य के वासी उदासी तपोव्रत धारी महा बिनु नारि दुखारे। / गौतम तीय तरी तुलसी सो कथा मुनि के मुनि वृंद सुखारे॥ / ह्वै हैं शिला सब चंद्र मुखी परसे पद मंजुल कंज तिहारे। / कीन्ही भली रघुनायक जू करना करि कानन को पगु धारे॥ यहाँ दुखारी तपस्वी आलंबन, शिला को स्त्री बनाने वाले राम का आगमन उद्दीपन, गूढ़ स्मित अनुभाव, चपलता-हर्ष आदि संचारी और हास स्थायी-भाव है।

हाहा—कश्यप और प्राधा का पुत्र एक गंधर्व, जिसे देवल ऋषि ने संगीत में अद्वितीय माना था। दे० हूहू।

हिंडोल—एक प्रकार का राग।

हिंदी—उत्तरीय और मध्यभारत की वह भाषा, जिसके अंतर्गत **राजस्थानी, पूर्वी हिंदी, पश्चिमी हिंदी** और **मैथिली** का समावेश है।

हिंदी अनुशीलन—भारतीय हिंदी परिषद्, प्रयाग का १९४३ ई० से प्रकाशित त्रैमासिक पत्र। इसमें अनुसंधानपूर्ण निबंध ही प्रायः प्रकाशित होते हैं। इसके संपादक धीरेंद्र वर्मा, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय आदि रह चुके हैं।

हिंदी प्रचार सभा (दक्षिण भारत), मद्रास—इसके जन्मदाता महात्मा गांधी थे। सभा का कार्य इस समय लगभग ८०० केंद्रों में फैला हुआ है, जिनको प्रादेशिक राज्यों का सहयोग प्राप्त है। हिंदी परीक्षाओं में स्कूलों, कॉलिजों के छात्रों के अतिरिक्त लगभग ६००० महिलायें भी प्रतिवर्ष सम्मिलित होती हैं। सभा के प्रचार विभाग में कई सौ प्रचारक कार्य करते हैं। सभा का अपना पुस्तकालय और वाचनालय भी है। सभा के प्रकाशन विभाग से १०० से ऊपर पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। दक्षिण भारत के विश्वविद्यालयों में हिंदी को इसी सभा के यत्न से स्थान मिला है। यह दक्षिण भारत की सर्वप्रिय संस्था है।

हिंदी लिटरेचर, ए स्केच ऑव्—एडविन ग्रीव्ज़ (Edwin Greaves) का अंग्रेज़ी में हिंदी-साहित्य का इतिहास (१९१७ ई०), जो ११२ पृष्ठों में लिखा गया है। लेखक ने हिंदी-साहित्य के पाँच विभाग किये हैं।

हिंदी लिटरेचर, ए हिस्टरी ऑव्—एफ० ई० के (F. E. Keay) का हिंदी-साहित्य का इतिहास (१९२० ई०)।

हिंदी शब्दसागर—हिंदी भाषा का एक बृहत् कोष (१९२९ ई०), जिसके संपादक **श्यामसुंदरदास** थे। सहायक संपादकों के नाम इस प्रकार हैं—बालकृष्ण भट्ट, रामचंद्र शुक्ल, अमीरसिंह, जगन्मोहन वर्मा, भगवानदीन, रामचंद्र वर्मा। हिंदी का इससे बड़ा कोष अभी तक नहीं निकला है। इस कोष के केवल भाग १,२,४,५,७ प्राप्त हैं। 'नागरी-प्रचारिणी सभा' इस कोष का नवीन संस्करण निकालने के लिये इसमें संशोधन कर रही है।

हिंदी-साहित्य-इतिहास—हिंदी-साहित्य में कुछ कवियों ने अपने-अपने विषय के पूर्ववर्ती कवियों का (जैसे जायसी ने प्रेममार्गी कवियों का) तो उल्लेख किया, किंतु पूरे साहित्य का इतिहास लिखने की प्रवृत्ति कम रही है। गोकुलनाथ-कृत *चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता*, *दो सौ वैष्णवन की वार्त्ता* तथा *भक्तमाल* में कुछ कवियों की जीवनियाँ और उनकी कविताओं के मुख्य गुण आ गये हैं। उल्लेखनीय इतिहासों में गार्सैं द तासी-कृत *इस्त्वार द ला लितेरात्यूर ऐंदूई ए ऐंदुस्तानी* (अनू०, १८३९-४६ ई०), महेशदत्त शुक्ल-कृत *भाषा काव्य संग्रह* (१८७३), *शिवसिंह सरोज* (१८७८), जॉर्ज ग्रियर्सन-कृत *मॉडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑव् नॉर्दर्न हिंदुस्तान* (१८८९), श्यामसुंदरदास द्वारा संपादित *हिंदी कोविद रत्नमाला* (१९०९-१४), मिश्रबंधु-कृत *मिश्रबंधु विनोद* (३ भाग १९१३ में, अंतिम भाग १९३४ में), रामनरेश त्रिपाठी-कृत *कविता-कौमुदी* (१९१७-२६), एडविन ग्रीव्ज़-कृत *ए स्केच ऑव् हिंदी लिटरेचर* (१९१७), एफ० ई० के-कृत *ए हिस्टरी ऑव् हिंदी लिटरेचर* (१९२०) आदि हैं। पर सबसे महत्त्वपूर्ण इतिहास रामचंद्र शुक्ल-कृत *हिंदी-साहित्य का इतिहास*

(१९२९) है। इनके अतिरिक्त श्यामसुंदरदास-कृत *हिंदी भाषा और साहित्य* (१९३०), अयोध्यासिंह उपाध्याय-कृत *हिंदी भाषा और उसके साहित्य का विकास*, सूर्यकांत-कृत *हिंदी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास* (१९३०), रामशंकर शुक्ल-कृत *आधुनिक हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास* (१९३१), कृष्णशंकर शुक्ल-कृत *आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास* (१९३४), इंद्रनाथ मदान-कृत *मॉडर्न हिंदी लिटरेचर*, रामकुमार वर्मा-कृत *हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास* (भक्ति काल के अंत तक; १९३८), हज़ारीप्रसाद द्विवेदी-कृत *हिंदी साहित्य की भूमिका* (१९४०), *हिंदी साहित्य का आदिकाल*, *हिंदी साहित्य*, व्रजरत्नदास-कृत *खड़ी बोली हिंदी साहित्य का इतिहास*, (१९४१), लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय-कृत *आधुनिक हिंदी साहित्य*, श्रीकृष्णलाल-कृत *आधुनिक हिंदी साहित्य का विकास* (१९४२), नंददुलारे वाजपेयी-कृत *हिंदी साहित्य—बीसवीं शताब्दी* (१९४२), चतुरसेन शास्त्री-कृत *हिंदी भाषा और साहित्य का इतिहास* (१९४६), गुलाबराय-कृत *हिंदी-साहित्य का सुबोध इतिहास*, आदि इतिहास भी प्रकाशित हो चुके हैं।

हिंदी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग—'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की प्रेरणा से १९१० ई० में स्थापित एक संस्था। सम्मेलन का कार्य चार विभागों में बँटा हुआ है। प्रति वर्ष सहस्रों विद्यार्थी *परीक्षा विभाग* द्वारा आयोजित परीक्षाओं में बैठते हैं। सब से ऊँची परीक्षा 'साहित्य रत्न' है। *प्रचार विभाग* द्वारा प्रांतीय और जनपदीय सम्मेलनों का आयोजन होता है तथा पुस्तकालय, वाचनालय और विद्यालय स्थापित किये जाते हैं। *संग्रह विभाग* द्वारा एक पुस्तकालय है, जिसमें २० हज़ार से ऊपर पुस्तकें हैं और एक वाचनालय है, जिसमें १५० के लगभग दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र आते हैं। *साहित्य विभाग* द्वारा प्राप्त प्राचीन पुस्तकों, मौलिक ग्रंथों और अनूदित कृतियों के प्रकाशन का प्रबंध होता है। **'सम्मेलन पत्रिका'** भी निकलती है। सम्मेलन से संबद्ध भारत में दूर-दूर स्थापित ६० संस्थाएँ हैं। कई पारितोषिक दिये जाते हैं, जिनमें **'मंगलाप्रसाद'** और **'सेकसरिया महिला'** पारितोषिक प्रमुख हैं। यह हिंदी की विशेष संस्था है; इसे अनेक राष्ट्रिय नेताओं और प्रमुख साहित्यकारों का आश्रय प्राप्त हो चुका है। पुरुषोत्तमदास टंडन इस संस्था के प्रमुख कार्यकर्त्ता हैं।

हिंदुस्तानी—खड़ी बोली का वह रूप, 'जिसे न तो शुद्ध साहित्यिक ही कह सकते हैं और न ठेठ बोलचाल की बोली। इसमें तत्सम शब्दों का व्यवहार कम होता है, पर नित्य व्यवहार के शब्द देशी-विदेशी सभी काम में आते हैं। संस्कृत, फारसी, अरबी के अतिरिक्त अंग्रेज़ी ने भी हिंदुस्तानी में स्थान पा लिया है।' इसीसे एक विद्वान् ने लिखा है कि 'पुरानी हिंदी, उर्दू और अंग्रेज़ी के मिश्रण से जो एक नई ज़बान आप से आप बन गई है, वह हिंदुस्तानी के नाम से मशहूर है।' यह उद्धरण भी हिंदुस्तानी का अच्छा नमूना है। यह भाषा अभी तक बोल-चाल की बोली ही है। इसमें कोई साहित्य नहीं है। 'वास्तव में 'हिंदुस्तानी' नाम के जन्मदाता अंग्रेज़ी आफ़िसर थे। वे जिस साधारण बोली में साधारण लोगों से—साधारण पढ़े और बेपढ़े दोनों ढंग के लोगों से—बातचीत और व्यवहार करते थे, उसे हिंदुस्तानी कहने लगे।' जब हिंदी और उर्दू साहित्य-सेवा में विशेष

रूप से लग गई, तब जो बोली जनता में बच रही, उसे हिंदुस्तानी कहा जाने लगा (श्यामसुंदरदास-कृत *हिंदी भाषा और साहित्य*)। **यद्यपि** 'हिंदुस्तानी अकेडेमी' जैसी सरकारी संस्था ने इसमें साहित्य-निर्माण का यत्न किया, तथापि उसे सफलता प्राप्त न हुई, क्योंकि हिंदू लेखकों की रचनाओं में हिंदीपन अधिक था और मुसलमान लेखकों की रचनाओं में उर्दूपन अधिक था। इसी संघर्ष के युग में देश विभक्त होकर स्वाधीन हो गया। भारत राष्ट्र ने हिंदी को राजभाषा स्वीकार कर लिया।

हिंदुस्तानी अकेडेमी, प्रयाग—आवश्यक पुस्तकों के अनुवाद कराने के उद्देश्य से १९२७ ई० में स्थापित एक संस्था। प्रमुख मौलिक रचनाओं को पुरस्कृत करना और साहित्य-सेवा को प्रोत्साहन देना, उत्तम लेखकों को संस्था का सदस्य चुनना, एक बड़ा पुस्तकालय संचालित करना आदि इसके उद्देश्य हैं। प्रति वर्ष अनेक विद्वानों द्वारा साहित्यिक विषयों पर व्याख्यान दिलाए जाते हैं; कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन भी हुआ है। 'हिंदुस्तानी' नामक तिमाही पत्रिका भी प्रकाशित होती है।

हिजरी सन्—मुसलमानी सन् जो मुहम्मद के मक्के से मदीने हिजरत करने अथवा चले जाने की तिथि (६२२ ई०) से चला है।

हिडिंब—एक राक्षस। दे० *हिडिंबा*।

हिडिंबा—हिडिंब राक्षस की बहिन। इसके भाई **हिडिंब** को मारकर **भीम** ने इससे विवाह किया था। इस विवाह से भीम को घटोत्कच (दे० *यथा०*) नामक पुत्र प्राप्त हुआ था (*म० आ० १५२-५५*)।

हित तरंगिणी—दे० *कृपाराम*।

हितवृंदावनदास (जन्म १७०८ ई०)—एक कृष्ण-भक्त कवि, जिनकी वाणी *चाचा जी की वाणी* कहलाती है। इनकी वाणी का विस्तार चार लाख पदों का कहा जाता है। इन्होंने कृष्ण-लीला का बड़ा विशद वर्णन किया है। पद-योजना बड़ी लालित्यपूर्ण है, ब्रज-भाषा बड़ी सरल, प्रवाहमय और सुव्यवस्थित है। इनके छोटे-बड़े ४५-४६ ग्रंथ बतलाए जाते हैं। हित संप्रदाय के प्रमुख कवियों में इनकी गणना होती है।

हितहरिवंश (र० का० १५४३-८३ ई०)—बाद (मथुरा) निवासी एक प्रसिद्ध कृष्ण-भक्त कवि। राधावल्लभ संप्रदाय के प्रवर्त्तक और *राधासुधानिधि* के रचयिता। इनकी यह पुस्तक संस्कृत में है। इनके पदों का संग्रह *हित चौरासी* के नाम से प्रसिद्ध है। इनकी रचना बहुत सरस है। इसी कारण ये कृष्ण की 'वंशी के अवतार' कहे जाते हैं। इनके संप्रदाय में **राधा** को कृष्ण से भी अधिक प्रधानता दी गई है। **ध्रुवदास** और **हितवृंदावनदास** भी इन्हीं के संप्रदाय के थे।

हितोपदेश—**नारायण** पंडित का संस्कृत में एक नीति-कथा-ग्रंथ (लि० का० १३७३ ई०) (अनू०), जिसका आधार पंचतंत्र है। इसकी ४३ कथाओं में से २५ कथाएँ *पंचतंत्र* से ली गई हैं। इसके चार भाग हैं—मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह और संधि। दे० *लल्लूलाल*।

हिमकिरीटिनी—दे० *माखनलाल चतुर्वेदी*।

हिमतरंगिनी—दे० *माखनलाल चतुर्वेदी*।

हिमवान्—दे० *हिमालय*।

हिमालय—एक पर्वत। मेना से इन्हें क्रौंच, मैनाक दो पुत्र, और अपर्णा, एकपर्णा, एकपाटला तीन कन्याएँ प्राप्त हुईं। **अपर्णा** का विवाह महादेव से हुआ (*ह० वं० १.८*)। पर्य्याय०—नगपति, मेनाधव, उमागुरु, हिमाद्रि, अद्रिराट, मेनकाप्राणेश, हिमवान्, हिमप्रस्थ, भवानीगुरु।

हिरण्यकशिपु—कश्यप और दिति का पुत्र और हिरण्याक्ष का भाई एक दैत्यराज। दे० प्रह्लाद।

हिरण्याक्ष—कश्यप और दिति का पुत्र एक दैत्य। यह पृथ्वी को उठाकर पाताल में ले गया था। विष्णु ने वराह अवतार धारण कर पृथ्वी का उद्धार किया (*भा० ३.१८-१९*)। दे० *हिरण्यकशिपु*।

हीनयान—बौद्ध सिद्धांत की आदिम और प्राचीन शाखा, जिसके ग्रंथ पाली भाषा में हैं। बुद्ध प्रवर्त्तित आदिम धर्म तथा मत के अनुयायी पहिले श्रावकयान और प्रत्येकबुद्धयान नाम से प्रसिद्ध थे। उन लोगों के मंतव्यानुसार केवल वे ही लोग निर्वाणलाभ के अधिकारी समझे जाते थे, जिन्होंने बुद्ध के तथा उनके शिष्यानुशिष्यों के मुख से धर्मोपदेश सुना था। आगे चलकर कुछ बौद्धाचार्यों ने यह घोषणा कर दी कि संपूर्ण संसार निर्वाणलाभ का अधिकारी है, अतः सभी इस निर्वाणधर्म में दीक्षित हो सकते हैं। इस महोद्देश्य के कारण उनका संप्रदाय महायान नाम से कथित हुआ तथा हीन या संकीर्ण मार्ग के मध्य निर्वाण-तत्त्व को परिसीमित रखने के कारण पूर्वोक्त आदिम बौद्ध संप्रदाय 'हीनयान' कहलाने लगा। सम्राट् कनिष्क के समय बौद्ध समाज में 'हीनयान' और 'महायान' दो प्रधान विभाग हुए थे।

हीर—तेईस मत्त आदि गुरु अंत रगण हीर में (२३ (६,६,११) मा० छंद, आदि ग, अंत र)। उ०—काम तजौ, धाम तजौ, नाम तजौ साथहीं।

हुक्मीचंद (र० का० १७६३ ई०)—जयपुर-नरेश प्रतापसिंह के आश्रित एक डिंगल-कवि, जिनके दोहे, छप्पय आदि राजस्थान में अत्यंत लोकप्रिय हैं।

हुगो, विक्तोर (Hugo, Victor) (१८०२-८५ ई०)—प्रसिद्ध फ्रांसीसी उपन्यासकार और कवि। इनके उपन्यास *पैरिस का कुबड़ा*, *प्रेम कहानी*, *अनोखा*, *बलिदान* और *फाँसी* नामों से अनूदित हैं।

हुमायूँ—मुग़लवंशी भारत-सम्राट् (१५३०-५६ ई०)।

हुसैन—**मुहम्मद** के दामाद, जो **करबला** के मैदान में मारे गये थे। ये शीया मुसलमानों के पूज्य हैं। मुहर्रम इन्हीं के शोक में मनाया जाता है।

हूण—एक प्राचीन मंगोल जाति, जो पहिले चीन की पूर्वी सीमा पर लूटमार किया करती थी, पर पीछे अत्यंत प्रबल होकर एशिया और यूरोप के सभ्य देशों पर आक्रमण करती हुई फैली। फारस में हूण-साम्राज्य स्थापित न हो सकने से हूणों ने भारतवर्ष की ओर रुख किया। पहिले इन्होंने सीमांत प्रदेश, कपिशा और गांधार पर अधिकार किया। फिर मध्य-देश की ओर आक्रमण पर आक्रमण करने लगे। गुप्त सम्राट् कुमारगुप्त इन्हीं के आक्रमणों में मारा गया। इन आक्रमणों से तत्कालीन गुप्त साम्राज्य निर्बल पड़ने

लगा। कुमारगुप्त के पुत्र स्कंदगुप्त बड़ी योग्यता और वीरता से जीवन भर हूणों से लड़ते रहे (दे० *स्कंदगुप्त विक्रमादित्य*)। ४५७ ई० में अंतर्वेद, मगध आदि पर स्कंदगुप्त का अधिकार था। ४६५ ई० के उपरांत हूण प्रबल होने लगे और अंत में स्कंदगुप्त हूणों के साथ युद्ध करने में मारे गये। ४६६ ई० में हूणों के प्रतापी राजा तुरमानशाह (तोरमाण) ने गुप्त साम्राज्य के पश्चिमी भाग पर पूर्ण अधिकार कर लिया। इस प्रकार गांधार, कश्मीर, पंजाब, राजपूताना, मालवा और काठियावाड़ उसके शासन में आ गये। तुरमानशाह का पुत्र मिहिरगुल (मिहिरकुल) गुप्तवंशीय नरसिंहगुप्त और मालव के राजा यशोधर्मन् से ५३२ ई० में बुरी तरह पराजित हुआ और कश्मीर भाग गया। बाद में हूण लोग भी कुछ और प्राचीन जातियों के समान भारतवासियों में विलीन हो गये।

हूर—*क़ुरान* में वर्णित वे अप्सराएँ, जो पुण्यात्माओं को स्वर्ग में मिलती हैं।

हूहू—कश्यप और प्राधा का पुत्र एक गंधर्व, जो अपने को संगीत में अद्वितीय समझता था। देवल ऋषि के शाप से यह ग्राह बना। इसे गज (दे० *यथा०*) के साथ ही मुक्ति मिली थी (*भा० ८.४*)।

हृदयराम—पंजाब निवासी एक राम-भक्त कवि, जिन्होंने संस्कृत के *हनुमन्नाटक* के आधार पर भाषा *हनुमन्नाटक* (१६२३ ई०) लिखा। **तुलसीदास** के प्रभाव से राम-भक्ति संबंधी रचनाओं में *हनुमन्नाटक* की रचना महत्त्वपूर्ण है। यह रचना कवित्त और सवैयों में है।

हेतु—एक अर्थालंकार जहाँ कार्य और कारण में अभेद वर्णन किया जाए। उ०—मोहिं परम पद मुक्ति सब तब पद-रज घनश्याम। यहाँ कृष्ण-पद रज से (कारण) प्राप्त होने वाली मुक्ति (कार्य) को उसी के रूप में दिखलाया गया है। अर्थात् कार्य और कारण दोनों में एकरूपता कर दी गई है।

हेमकूट (हेमपर्वत)—**कैलास** पर्वत का एक नाम।

हेमचंद्र (१०८८-११७२ ई०)—प्रसिद्ध जैन आचार्य और वैयाकरण, जिनका गुजरात के सोलंकी राजा सिद्धराज जयसिंह और उनके भतीजे कुमारपाल के समीप बड़ा मान था। इनके लिखे ग्रंथ *सिद्ध हैम* या *हेमचंद्र शब्दानुशासन* (संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश का विशाल ग्रंथ), *कुमारपाल चरित्र* (कुमारपाल का जीवन चरित्र), *योगशास्त्र*, *प्राकृत व्याकरण*, *छंदोनुशासन* और *देशी नाममाला* कोष हैं। ये 'कलिकाल सर्वज्ञ' कहे जाते हैं। दे० *जैन साहित्य*।

हेमा—मय नामक असुर की पत्नी एक अप्सरा (*वा० रा० उ० १२*, दे० *स्वयंप्रभा*)।

हेस्टिंग्ज़, लार्ड (Hastings, Lord)—बंगाल के गवर्नर-जनरल (१८१३-२३ ई०)।

हैहय—औरंगाबाद और दक्षिण मालवा के कुछ भाग। यहाँ **कार्त्तवीर्य** राज्य करता था। इस प्रदेश की राजधानी **माहिष्मती** थी।

होमर (जन्म १०५० और ८५० ई० पू० के मध्य)—प्रसिद्ध यूनानी महाकवि और *इलियड* (अनू०) तथा *ऑडिसी* महाकाव्यों के रचयिता।

होलराय (र० का० १५८५ ई०)—एक कवि जो अपने आश्रयदाता हरिवंस राय की विरुदावली गाया करते थे। इन्होंने **अकबर**

की प्रशंसा में भी कुछ पद्य-रचना की है। **तुलसीदास** से इनका मिलन हुआ था।

होला—**होली** का त्योहार।

होलिका—**हिरण्यकशिपु** की बहिन और **प्रह्लाद** की बुआ, एक राक्षसी। हिरण्यकशिपु के कहने से यह प्रह्लाद को लेकर चिता में बैठ गई थी। यह अग्नि में न जलने वाली समझी जाती थी, पर भगवान् की दया से यह जल गई और प्रह्लाद बच गया।

होली—हिंदुओं का एक बड़ा त्योहार, जो फाल्गुन के अंत में वसंत के आरंभ पर मनाया जाता है। प्राचीनकाल में जो मदनोत्सव या वसंतोत्सव होता था, उसकी यह परंपरा है। इसके साथ **होलिका** राक्षसी की शांति का कृत्य भी मिला हुआ है। वसंत पंचमी के दिन से लकड़ियों आदि का ढेर एक मैदान में इकट्ठा किया जाता है, जो वर्ष के अंतिम दिन जलाया जाता है। इसी को होली जलाना या संवत् जलाना कहते हैं। बीते हुए वर्ष का अंतिम दिन और आने वाले वर्ष का प्रथम दिन दोनों इस उत्सव में सम्मिलित रहते हैं (दे० *धुलेंडी*)।

हौवा—पैगंबरी मतों के अनुसार सर्वप्रथम स्त्री जो पृथ्वी पर **आदम** की बाईं पसली से उत्पन्न की गई और जो मनुष्य जाति की आदि माता मानी जाती है।

GARG: SANKSHIPT OXFORD HINDI-SAHITYA PARICHAYAK
GARG: CONCISE OXFORD COMPANION TO HINDI LITERATURE